Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

SANDARB BHARATI

G.K.U. 1976

SANDHRABH BHARTI

SANDARB BHARATI

G.K.U. 1976

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

080499

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

080499

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

080499

080499

भारतीय भाषा परिषद्

कलकत्ता

अप्रैल
१९७६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय भाषा परिषद् के उद्देश्य

- भारतीय भाषाओं में पारस्परिक सहयोग-सौहार्द ।
- भारतीय भाषा-साहित्य की विलुप्त राशि की खोज और शोध ।
- विशिष्ट विषयों पर भारतीय विद्वानों की वक्तृतायें और उनका प्रकाशन ।
- भारतीय भाषाओं के मौलिक एवं अनूदित ग्रंथों का प्रकाशन ।
- भारतीय भाषाओं और अंतरराष्ट्रीय महत्व के संदर्भ ग्रन्थों का अनुवाद ।
- उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पत्रिका-प्रकाशन ।
- उपर्युक्त उद्देश्यों पूर्ति के लिए प्रेक्षागार, संदर्भ पुस्तकालय, वाचनालय, प्रकाशन विभाग, शोधकर्त्ताओं एवं साहित्यकारों के लिये शोधकक्षों और साहित्यकार-आवास की व्यवस्था ।

परामर्श मंडल

अंग्रेजी	:	श्री शमीक बनर्जी, कलकत्ता
असमिया	:	श्री बीरेन्द्र भट्टाचार्य, गुवाहाटी
उड़िया	:	डा० गोपालचंद्र मिश्र
कन्नड़	:	डा० मे० राजेश्वरय्या, मैसूर
कश्मीरी	:	डा० शिब्बन कृष्ण रैणा, पटियाला
गुजराती	:	श्री गुलाबदास ब्रोकर, बंबई
तमिल	:	श्री र० शौरिराजन, मद्रास
तेलुगु	:	श्री बालशौरि रेड्डी, मद्रास
पंजाबी	:	डा० हरभजन सिंह, दिल्ली
बंगला	:	प्रो० अलोकरंजन दासगुप्त
मणिपुरी	:	श्री नीलकंठ सिंह, इंफल.
मराठी	:	प्रो० वसंत बापट, बंबई
मलयालम	:	डा० एम० मलिक मोहम्मद, कालीकट
संस्कृत	:	डा० विद्यानिवास मिश्र, वाराणसी
सिंधी	:	श्री मोतीलाल जोतवाणी, दिल्ली
हिंदी	:	डा० प्रभाकर माचवे, बंबई

संपादक
कृष्णाचार्य

पत्राचार के लिए :– संपादक, संदर्भ भारती, भारतीय भाषा परिषद
९, कैमेक स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्व भाषा सरस्वती

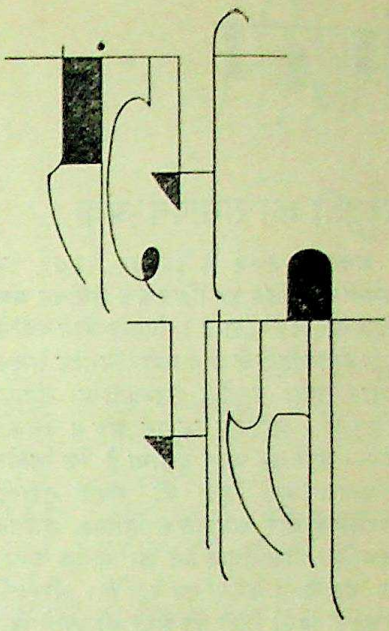

वर्ष २ : अंक २
अप्रैल १९७६

संपादकीय
सरस्वती का समापन अंक २
नये क्षितिज
भुशुण्डि रामायण ३
विदेशी कलम
संस्कृत और केल्टिक ५
पुस्तक समीक्षा
छायावादयुगीन स्मृतियाँ ६
सोक्रेटीस : उपन्यास या महाकाव्य ७
काम संबंधों का यथार्थ.... ८
तमस (उपन्यास) ९
सहधर्मी-चर्चा
मुंबई मराठी ग्रंथ संग्रहालय ११
कन्नड़ साहित्य परिषत्तु, १२
विशिष्ट प्रकाशन
अंग्रेजी, उर्दू, कन्नड़, गुजराती, तमिल, तेलुगु, पंजाबी, बंगला, मलयालम, मराठी, संस्कृत, हिंदी १४–१७
साहित्य-मंच
भारतीय हिंदी परिषद १७
जामिया मिल्लिया में मानस १८
भोपाल में रामायण संगोष्ठी १९
द्वितीय पुस्तक मेला, दिल्ली २२
पाठकीय २३
परिषद वार्ता २४

द्वैमासिक पत्रिका
वार्षिक : ६.००
एक अंक : १.००

भारतीय भाषा परिषत्

९ कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय

सरस्वती का समापन अंक

अगस्त १९७५ से दिसंबर १९७५ का **सरस्वती** का अंतिम प्रकाशित अंक **समापन अंक** घोषित कर दिया गया है। पिछले बीस वर्षों से द्विवेदी युगीन हिंदी के जीवंत और निर्भीक लेखक पं०श्रीनारायण चतुर्वेदी **सरस्वती** का संपादन कर रहे थे। आप इस समापन अंक में लिखते हैं कि—**मेरा यह चरम दुर्भाग्य है कि नियति के कारण मुझे हिंदी की सबसे पुरानी, ऐतिहासिक और समादृत साहित्यिक मासिक पत्रिका का शोक-संवाद देने का अत्यंत अप्रिय और कटु कार्य करना पड़ रहा है। सरस्वती ने जितने दिनों हिंदी की सेवा की उतने दिनों अभी तक और किसी पत्रिका ने नहीं की।.. खड़ी बोली काव्य, कहानी और गद्य के विकास में उसका अपूर्व योगदान है।**

इंडियन प्रेस के प्रबंध निदेशक (जो सरस्वती के प्रकाशक हैं) लिखते हैं—**इंडियन प्रेस** ने साहित्य की उच्च स्तर की पत्रिका द्वारा हिंदी की सेवा करने के लिए सन् १९०० में **सरस्वती** का प्रकाशन आरंभ किया था। उसके प्रकाशन में विशुद्ध सेवा-भावना थी, व्यावसायिक दृष्टि कभी नहीं रही। यह सदैव घाटे पर निकलती रही। इस घाटे की पूर्ति हम अपनी पाठ्यपुस्तकों की बिक्री की आय से करते रहे। ...हम सरकार से पत्रिका के सहायतार्थ पत्र-व्यवहार कर रहे हैं। यदि हमें सरकार से उपयुक्त प्रोत्साहन प्राप्त हुआ तो हम पत्रिका को **शीघ्र ही प्रकाशित करना पुनः शुरू करने का प्रयत्न करेंगे।**

३१ दिसं०, १९६१ ई० के दिन पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी ने ही **सरस्वती** का **हीरक जयन्ती अंक-१९००-१९५९** बड़ी सजधज से निकाला था और उसके प्रथम अवतरण में ही कहा था कि—

'सरस्वती का साठ साल तक लगातार प्रकाशन हिंदी पत्रकारिता के इतिहास की एक अपूर्व घटना है। यद्यपि यह पत्रिका एक निजी संस्था द्वारा प्रकाशित होती है और कानून की दृष्टि से उसकी संपत्ति है तथापि अपनी दीर्घकालीन और **अपूर्व सेवाओं के कारण नैतिक दृष्टि से यह हिंदी संसार की अपनी वस्तु हो गयी है।** उसे राष्ट्रीय साहित्यिक पत्रिका होने का गौरव प्राप्त हुआ है। भारतीय भाषाओं में, विशेषकर हिंदी में, पत्र-पत्रिकाएं प्रायः अल्पायु होती हैं।' आदि !

८०८ पृष्ठ के इस विराट् ग्रंथ में (जिसमें हिंदी के उन प्रतिनिधि साहित्यकारों की रचनाएँ प्रकाशित हैं जो कभी सरस्वती में छपी थीं। १०८ कवियों, ६० कहानीकारों और १०० लेखकों की कृतियाँ इसमें पुनः छपी हैं) श्री चतुर्वेदीजी ने नैतिकता का प्रश्न उठाया था। यदि सरस्वती प्रेस और सरकार के बीच कोई मार्ग नहीं निकला तो क्या **सरस्वती** सदैव के लिए समाप्त हो जायगी ? क्या हिंदी के लेखक, प्रकाशक, प्रकाशक संघ आदि के सम्मिलित प्रयत्न इस दिशा में वांछनीय नहीं हैं ? १९०० ई० से प्रकाशित **सरस्वती** हिंदी भाषा और साहित्य का मानदंड रही है। निःसंदेह विविध क्षेत्रों में हिंदी ने विगत पच्चीस वर्षों में पर्याप्त प्रगति है। किंतु १९७५ ई० में सरस्वती का अवसान संपूर्ण हिंदी जगत के लिये मात्र **शोक-संवाद** होकर नहीं रहेगा। यह दुर्घटना हिंदी के गौरव और मान की क्षति का प्रतीक भी है।

हिंदी के प्रथम आचार्य पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी १९०२-३ से लेकर लगभग ३०-३२ वर्षों तक **सरस्वती** के संपादक थे। वह ऐसे संपादक थे जो सरस्वती का शृंगार तो थे ही, न जाने कितने कवि और लेखकों का निर्माण इस आचार्य ने किया। सरस्वती के लिये वह किसके कोपभाजन नहीं बने ? इस पत्रिका के माध्यम से इंडियन प्रेस से छपी कुछ पाठ्य-पुस्तकों तक की कटु आलोचना हुई। हिंदी के बीस करोड़ भाषाभाषी क्या दैनिक घटना के समान **दिवस का अवसान समीप था** का दृश्य निर्विकार भाव से देखते रहेंगे ? सन् १९०० ई० में ही पं० सुमित्रानंदन पंत के समान कई लेखकों का जन्म सरस्वती के साथ हुआ था। इस समय जन्मे अनेक लेखकों ने अपने साहित्याकाश का प्रथम प्रभात सरस्वती के गगन पर ही उदित होते देखा था।

——:०:——

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नये-क्षितिज

भुशुण्डि रामायण

विद्वत् जगत में भुशुण्डि रामायण की खोज की जा रही थी। डा० वी० राघवन्, डा० कामिल बुल्के तथा अन्य रामकथा के स्त्रोतों के जिज्ञासु इस रामायण को प्रकाश में लाने के लिये प्रयत्न भी कर चुके थे। और अनेक समीक्षकों ने मानस पर भुशुण्डि के प्रभाव की चर्चा भी की थी। कारण, मानस में भुशुण्डि (काक) की चर्चा बार-बार आई है।

संस्कृत में वाल्मीकि रामायण के अलावा अद्भुत रामायण, आनंद रामायण और अध्यात्म रामायण मुद्रित रूप में उपलब्ध हैं तथा इनसे अन्य रामायणों की तुलना भी हो चुकी है। श्रीमती वादवील ने मानस के स्त्रोतों की चर्चा करते हुए कहा था कि 'कदाचित् वे एक ही आधार पर आश्रित हैं और यह आधार..... संभवतः यह भुशुण्डि रामायण हो ? अब डा० भगवतीप्रसाद सिंह द्वारा विस्तृत भूमिका सहित संपादित भुशुण्डि रामायण का प्रथम खंड 'पूर्व खंड' नाम से प्रकाशित है। यह भुशुण्डि रामायण ३२००० श्लोकों में और पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर खंडों में वर्णित है। यह आलोच्य खंड ९७४ मुद्रित पृष्ठों में मात्र **पूर्व खंड है। इस खंड में** रामजन्म से लेकर युवराज पद पर प्रतिष्ठित होने तक का वृत्त प्रस्तुत किया गया है। **दक्षिण खंड** में राम वनगमन से लेकर राज्याभिषेक तक और **उत्तर खंड** में राम की परिकरों एवं प्रजा के साथ नित्यधाम यात्रा का वर्णन है। इनके अतिरिक्त, जैसा कि संपादक महोदय ने ठीक ही कहा कि कहीं क्रम से, और कहीं परिस्थिति-वश क्रम का बिना ध्यान रखे चारों खंडों में रामराज्य की संपन्नता, सीता वनवास, लक्ष्मण की तिरोधान लीला, दशरथ की तीर्थयात्रा, रावण दिग्विजय यात्रा, चित्रकूट में राम की विहार-लीला, सरयू जन्मकथा, मंदाकिनी की उत्पत्ति, पादुका राज्य-वर्णन, विष्णु द्वारा मोहिनी रूप धारण आदि कथाएं क्रमबद्ध हैं।

इस क्रम में सबसे अधिक ध्यान में रखने योग्य तथ्य यह है कि राम की बाल तथा कैशोर लीलाएँ श्रीमद्भागवत के आदर्श पर ही वर्णित है। राम का नाम हटा दीजिये तो कृष्णलीला का आनंद लिया जा सकता है। सरयू के उस पार गोप-प्रदेश की कल्पना की गई है। अंग्रेजी में लिखी इस पुस्तक की भूमिका में डा० वी० राघवन् ने विस्तार से श्रीमद्भागवत के प्रभावों का परिचय दिया है। अतः इस तुलना से दो तथ्य स्पष्ट होते हैं : प्रथम तो यह कि भुशुण्डि रामायण श्रीमद्भागवत के बाद की रचना है; और द्वितीय तथ्य यह है कि राम की मधुराभक्ति का आरंभ बहुत कुछ इसी रामायण से होता है। मानस की रचना के बाद मधुराभक्तिपरक जिन टीकाओं का एवं अयोध्या में सखी संप्रदाय आदि का मूल स्रोत या मुख्य स्रोत भुशुण्डि रामायण को माना जा सकता है।

संपादन का आधार : इस रामायण का संपादन चार पुरानी प्रतियों के आधार पर किया गया है। सबसे पुरानी प्रति १७७९ वि० की है। यह मथुरा में लिखी गई थी। दूसरी प्रति रीवां की है जो १८९९ वि० में लिखी गई थी। तीसरी प्रति बलरामपुर से मिली। इसमें लिपिकाल नहीं है। चौथी प्रति अध्योध्या में मिली। इसे १९२२ वि० में लिखा गया था। विद्वान् संपादक का कथन है कि चारों प्रतियों के पाठ में कोई विशिष्ट अंतर नहीं है, किन्तु "इनके द्वारा प्रतिलिपि परंपरा की स्थापना तथा मूल प्रति के लिपि काल के संधान में कोई उल्लेखनीय योगदान नहीं प्राप्त होता।"

अन्य ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि खंडों के विभाजन एवं कापालिक, कौल, सिद्ध,

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहज साधना आदि की चर्चा से भी सिद्ध होता है कि इस रामायण का रचनाकाल पूर्वमध्य काल ही है। यवनों के आक्रमण या प्रभाव के कारण देश को **धन्यदेश** और **म्लेच्छ-प्रायः देश** कहा गया है। इस उद्धरण से भी काल निश्चित करने की दिशा में कुछ सहायता मिलती है।

यों तो भुशुण्डि रामायण की गवेषणा संपूर्ण पुस्तक के प्रकाशित होने पर ही संभव है। किन्तु यहाँ एक महत्त्वपूर्ण तथ्य बहुत स्पष्ट होकर सामने आता है जो इस रामायण के प्रभाव को **मानस** पर स्वीकार करता है: कथा प्रसंग लेकर या शाब्दिक तुलना के धरातल पर। किन्तु महत्वपूर्ण पक्ष है दूसरा : वह यह कि गोस्वामी तुलसीदास ने राम में ब्रह्मत्व की स्थापना करने के साथ-साथ **मर्यादा पुरुषोत्तम** की स्थापना की है। मानस मधुरोपासना, रासलीला, प्रमोदवन-लीला आदि से एकदम अछूता है। राम की विशिष्ट भाव-प्रतिमा तुलसी के मन में स्पष्ट और अपने ही ढंग से सुविचारित थी। तुलसी के राम सदैव लोकमंगल के लिये हैं, आदर्श पुत्र, पति, भाई हैं। वह भक्तवत्सल और निष्ठा-भाव से प्रजापालक हैं। इस प्रकार भुशुण्डि रामायण के प्रकाश में मानस के राम और अधिक उजागर हुए हैं। विद्वान् संपादक ने इसके लिये अनेक कारणों की चर्चा की है :

तुलसीदास के समय की परिस्थितियाँ भिन्न थीं; वह युगद्रष्टा थे, अतः समय की मांग उनके सम्मुख उपस्थित थी। ऐश्वर्यपूर्ण उस राम की आवश्यकता थी जो रामराज्य की कल्पना जन-मानस में बैठा सके।

तुलसीदास के आगे वर्ण-आश्रम के कर्त्तव्य भी थे : पुराना परंपरावादी दृष्टिकोण। किन्तु इस दृष्टि में समन्वय भी था। स्मार्त विचारधारा के कारण वह विधि-हरि-हर, तीनों के समर्थक थे। खंडन केवल पाखंड का किया : वह भुशुण्डि रामायण की मुक्त तांत्रिक साधना का समर्थन नहीं कर सकते थे। तुलसी ने अलख जगाने वालों को नीच भी कहा है।

मानस वैष्णव परंपरा-पोषक ग्रंथ है। भुशुण्डि रामायण में सब कुछ एक साथ चलता है। कौलाचार, शाक्त मत और तांत्रिक प्रयोग तो हैं ही। निर्गुण ब्रह्म की महिमा भी इसमें है। दूसरे शब्दों में भुशुंडि रामायण के कर्त्ता के सामने राम के नाना रूपों की, कृष्ण की तरह सब कुछ करने में सामर्थ्यवान् नाम की कल्पना थी। मानसकार मर्यादा से कैसे हटते ?

एक और कारण भी था। मानस भाषा ग्रंथ है। इसका उद्देश्य 'सुरसरि सम सब कर हित' था, ज्ञान का चमत्कार दिखलाना नहीं। इसीलिये भुशुण्डि रामायण की तरह न तो इसमें प्रसंग-प्रतिकूल अवसर मिलेगा और न जीवनगत सामान्य लोकाचार की अवहेलना।

डा० भगवतीप्रसाद सिंह ने भुशुण्डि रामायण का समीक्षात्मक पाठ प्रकाशित कर रामकथा जगत् का विशिष्ट उपकार किया है। इससे उन विद्वानों को राहत मिलेगी जो इस रामायण की टोह में थे और उन्हें भी संतोष होगा जो तुलसी के राम को इस नये प्रकाश में और भी भव्य रूप में देखेंगे। मधुराभक्ति के अध्ययनकर्त्ताओं के लिये तो यह गहरी निधि ही है। आशा की जानी चाहिए कि शेष भागों का प्रकाशन भी शीघ्र ही होगा।

—कृष्णाचार्य

भुशुण्डि रामायण
संपा० डा० भगवतीप्रसाद सिंह, सहसंपा० जनार्दन शास्त्री पांडेय. वाराणसी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, १९७५. ६२, ३८, ९७४ पृ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

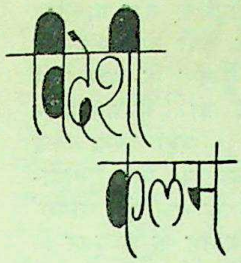

प्राचीन संस्कृतभाषा की सहोदरा केल्टिक

१७८६ ई० में रायल एशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता के मुख्य हाल में सर विलियम जोंस ने भारत-यूरोपीय भाषा सिद्धांत का प्रतिपादन पहली बार किया था। इस भाषा-सिद्धांत से तुलनात्मक भाषाविज्ञान की आधारशिला मिली तथा आगामी दो सौ वर्षों में इस सिद्धांत के सहारे विपुल काम हुआ है। जोंस ने ग्रीक, लैटिन और संकृत के समानार्थी शब्दों का और समान ध्वनि वाले शब्दों की ओर पंडितों का ध्यान आकर्षित किया था और कहा था कि इस दृष्टि से **गौथिक** और **केल्टिक** भाषा-समूहों का अध्ययन भी होना चाहिये। आगे चलकर लियुआनी, स्लाविक, अल्बानी और आर्मिनी भाषाओं का अध्ययन तो हुआ, किन्तु केल्टिक भाषा की ओर ध्यान नहीं गया।

जर्मनी में श्लेजेल और बाप ने इस दिशा में गंभीर और विस्तृत अध्ययन कर संस्कृत, ग्रीक, लैटिन, जर्मन एवं फारसी की निकटता स्पष्ट की। किन्तु प्रिचर्ड पहला विद्वान था जिसने १८३१ ई० में 'द ईस्टर्न ओरिजिन आफ द केल्टिक नेशन्स' पुस्तक के द्वारा संस्कृत और केल्टिक का विस्तृत अध्ययन किया। उस समय इस अध्ययन को चुनौती दी श्लेजेल और पाट ने। उन्हें यह सिद्धांत स्वीकार न था। उस समय भी प्रिचर्ड अपनी विचाराधारा में अकेले नहीं थे। आपका समर्थन अडाल्फ पिक्टेट ने किया। और सबसे महत्व की बात उस समय यह थी कि फ्रांज बाप ने भी प्रिचर्ड के अध्ययन की सराहना की थी। तदनंतर जर्मन विद्वान जान कास्पर झुस ने भारी परिश्रम और अपने सब साधनों की बाजी लगाकर (अपनी संपत्ति ही बेच डाली) योरप का दौरा किया, सामग्री इकट्ठी की और अपने विचारों का सार **ग्रामेटिका केल्टिका** (१८५३ ई०) में प्रकाशित किया। स्टोक्स ने संकेतात्मक भाषा में यहां तक कहा कि जिस प्रकार यूनानी देवता झूस के मस्तिष्क से अथनी शस्त्र सहित प्रकट हुई थी, उसी उसी तरह इस झुस के मस्तिष्क से केल्टिक भाषाविज्ञान का पूर्णांग अवतार हुआ है।

संस्कृत से केल्टिक भाषा के तुलनात्मक अध्ययन का महत्व इसलिये भी अधिक है कि केल्ट (आयरलैंड में) यूरोप के पश्चिमी छोर की अंतिम भाषा है जिसमें अपेक्षाकृत कम परिवर्तन हुए और परिणामस्वरूप उसमें मूल प्राचीन रूपों की झलक आज भी सुरक्षित है।

अब इस अध्ययन को पुनः आगे बढ़ाया आयरलैंड के विद्वान् डा० माईल्स दिल्लाँ (१९००-१९७२) ने। आप स्थानीय **इंस्टीच्यूट आफ एडवांस्ड स्टडीज एंड स्कूल आफ केल्टिक स्टडीज** के निदेशक थे। यों आपने भाषाशास्त्रीय अध्ययन का श्रीगणेश जर्मनी में किया तथा बहुत समय **संस्कृत** के अध्यापक रहे। प्रस्तुत ग्रंथ आपने शिमला स्थित **इंडियन इंस्टीट्यूट आफ एडवांस्ड स्टडीज** के तत्वावधान में किया था। खेद का विषय यह है कि श्री दिल्लाँ का देहांत अपनी यह यह पुस्तक **केल्ट्स एंड आर्यंस—सर्वइवल आफ इंडोयूरोपीयन स्पीच एंड सोसइटी** प्रकाशित होने से पहिले ही हो गया।

डा० दिल्लाँ ने अपने ग्रंथ के आरंभ में पूर्वसूरीयों के सिद्धांतों का सोदाहरण विवरण दिया है। आपने **शतम्** और **सेंटम** भाषा वर्गों से तथा अन्य मान्य सूत्रों के आधार पर बतलाया है कि कहां तक मूल एकता थी, कहां से परिवर्तनों का सिलसिला शुरू हुआ और कहां से नये प्रभाव और प्रभेदों का रूप देखने को मिलता है। डा० दिल्लाँ का मत है कि ३०० ई० पू० से केल्टिक वर्ग की भाषाएं एशिया माइनर से स्पेन, पुर्तगाल तक समूचे यूरोप में प्रचलित थीं। किन्तु अब इन भाषाओं का अवशेष आधुनिक रूप में आयलैंड, स्काटलैंड, वेल्स और ब्रिटेनी में ही बच रहा है। अन्य अध्यायों में लेखक ने केल्टों का इतिहास, संस्कृति एवं आयरिश भाषा का शास्त्रीय अवलोकन, शब्दों की बनावट, ध्वनि विज्ञान, वाक्य रचना, व्याकरण आदि विभिन्न अंगों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से उदाहरण देकर बतलाया है कि कहां-कहां राज्याश्रयी काव्य, वीरगाथा, लोकगाथा आदि का तुलनात्मक विवेचन (संस्कृत नाराशंसी, दान-स्तुति से लेकर भाट, चारण की परंपरा एवं ग्रीक क्ली आंद्रोन या आफ्थितानें क्ली से लेकर आयरिश वीर-गाथाओं की प्राचीन परंपरा का संस्कृत से तुलना और समानांतर विकास दिखाकर), समाज रचना, राजनीतिक एवं धर्मशास्त्रीय धर्मकल्पनाओं का विवेचन किया है। आपके अनुसार प्राचीन वर्णव्यवस्था की झलक भी प्राचीन आयरिश साहित्य में मिलती है। आयरलैंड के इन प्राचीन वृत्तों में भी द्रुइड्स (पुरोहित वर्ग) को वर्णश्रेष्ठ माना जाता था।

अंतिम अध्याय में उन संस्कृत-प्राकृत उपाख्यानों की चर्चा है जिनसे मिलते-जुलते उदाहरण प्राचीन आयरिश साहित्य में मिलते हैं। पुस्तक के अंत में २४ सुमुद्रित चित्र हैं--इनसे भी प्राचीन आयरिश और भारतीय संस्कृति के कुछ समान रूपों की पहिचान की जा सकती है। पुस्तक के आरंभ में डा० वी० राघवन एवं प्रो० सुनीतिकुमार चटर्जी के प्राक्कथन हैं। यहां इतना संकेत करना उचित ही होगा कि प्रो० सुनीति-कुमार चटर्जी ने भी 'काल्ट्स एंड आर्यंस' लिखकर संस्कृत और केल्टस के अध्ययन की परंपरा को आगे बढ़ाया था।

पुस्तक में डा० दिल्लां की जीवन-रेखा के रूप में दिवंगत लेखक का स्मरण सर्वथा उचित हुआ है।

--श्री कृष्ण बा० शोशी

केल्टस एंड आर्यंस--सर्वाइवल्स आफ इंडो-यूरोपीयन स्पीच एंड सोसाइटी. ले० माइल्स दिल्लाँ. शिमला, इं० इ० आफ एडवांस्ड स्टडीज़, १९७५. १८० पृ० ३५.००

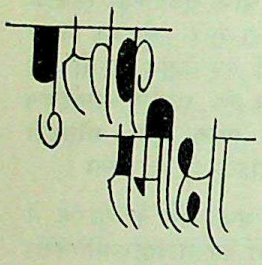

छायावादयुगीन स्मृतियाँ

रामनाथ सुमन छायावादी युग के आरंभ में (१९०३ ई०) पैदा हुए थे एवं बाद में इलाहाबाद में आपने साहित्यिक जीवन-यापन किया। ऐसे लेखक के लिये यह स्वाभाविक था कि वह प्रसाद, निराला और पंत को देखे, पढ़े और गुने। यह सही है कि श्री सुमन ने अपने अध्ययन में जितना प्रसाद पर लिखा, या उन्हें प्राथमिकता दी उतनी अन्य छायावादी लेखक या अन्य लेखक को नहीं दी। पुनः आप संस्मरण भी लिखते ही रहे। **हमारे नेता, हमारे राष्ट्र निर्माता** तथा **गाँधी, सुभाष बोस, लाजपत राय** आदि पर भी लिखा था।

किन्तु प्रस्तुत कृति, जो सुमनजी की दिवंगत होने से ठीक पूर्व की कृति है, सुमन को उनकी अन्य कृतियों से अलग करती है। आरंभ में ही सुमन लिखते हैं: वाराणसी में जन्मा; वहां खेला; ..... यह वाराणसी केवल मेरी जन्मभूमि नहीं है.....यह भारतीय संस्कृति की केंद्र भूमि है; यह हिंदू धर्म की जन्मभूमि है।' स्मृतियाँ लाला भगवानदीन से शुरू होती है--अपने साहित्यिक गुरु से। पुनः जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, पं० केदारनाथ पाठक, पं० रामनारायण मिश्र, रा० दा० गौड़, जगन्मोहन बर्मा, रामचंद्र बर्मा, गो० ना० मिश्र, कि० ला० गोस्वामी, श्या० सु० दास, हरिऔध, रा० च० शुक्ल, पराड़कर, ह० कृ० जौहर, ला० ना० गर्दे, गो० रा० गहमरी, कृ० बि० मिश्र, संपूर्णानन्द, श्री प्रकाश, आगा ह० कश्मीरी, रत्नाकर, मा० ला० चतुर्वेदी, प्रसाद, रायकृष्णदास, प्रेमचंद, सु० नं० पंत, नवीन, महादेवी, जैसे साहित्यकारों के साथ संपर्क और अपने प्रत्यक्ष अनुभवों के आधार पर जो कुछ लिखा है, वह यद्यपि विशेष विस्तृत या विश्लेषणात्मक भी नहीं है, किन्तु यत्रतत्र सटीक राय और सहज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धि से उत्पन्न मतों ने इस १९५ पृ० की पुस्तक को गरिमा अवश्य प्रदान की है। यह मेरा सौभाग्य रहा है कि श्री सुमनजी से हि० सा० सम्मेलन, प्रयाग में बहुधा भेंट होती थी और खादी के भव्य कुरते में सांवली काया आज भी मेरे सामने प्रत्यक्ष हो उठती है। वह जीवन में बहुत से कटु अनुभवों को सहेजे हुए थे। किन्तु इस पुस्तक में प्रायः मधुर स्मृतियां लिपिबद्ध हैं या स्पष्ट, दोटूक राय। उदाहरण के लिये--रामचंद्र शुक्ल के बारे में लिखते हैं कि वह आवश्यकता से अधिक गंभीर, असफल अध्यापक और सहजता को दबाए रहते थे। पांडित्य और लेखन शैली की प्रशंसा अवश्य की है। इसी प्रकार वह अपने गुरु लालाजी की विशेषताएं बताते हैं तो यह कहने से भी नहीं चूकते कि, "न उस समय, न आज की मेरी रस ग्रहण शक्ति उनको बड़ा कवि मान पाई? फिकरेबाजी और मुहावरों की बहार उनके काव्य में अवश्य थी....परंतु काव्य-मर्मज्ञ, आचार्य एवं शिक्षक वह एक नंबर के थे।"

यहाँ डा० मोतीचंद्र कृत **बनारस** पुस्तक की याद प्रसंगवशात आ रही है। इसमें मोतीचंद्रजी ने बनारस के पंडितों का विस्तृत परिचय दिया है। किन्तु बनारस के हिंदी लेखकों, पंडितों, कवियों, अनुवादकों और सेवकों का परिचय मुझे जैसा इस पुस्तक में मिला, वह अन्यत्र नहीं। यह सच है कि परिचय, संस्मरण या विवरण प्रायः संक्षिप्त हैं, किन्तु उनमें व्यक्तिगत परिचय की छाप है, अतः इनका मूल्य पांडित्य-पूर्ण पुस्तकों से इस अर्थ में कहीं अधिक है। जो साहित्यकार प्रसाद-प्रेमचंद युग के बनारस को समझना चाहते हैं, उन्हें यह स्मृति-भरी पुस्तक अवश्य गुननी चाहिये। पं० रामनारायण मिश्र (ना० प्र० सभा के संस्थापकों में से एक) के संबंध में लिखी दो पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं--

उस बृद्धावस्था में भी उनमें वही तेज, वही ताजगी, वही आदर्श परायणता और वही स्नेह था। जब संमेलन के नेता और हिंदी के प्रोफेसर लोग कोठी के आरामदेह कमरों में ठहरते थे, तब जिसकी हड्डी की खाद पर वे लहलहा रहे और फूल-फल रहे थे वह दधीचि वैसे ही सामान्य प्रतिनिधियों के साथ ठहरा हुआ था, उनके दुःख-सुख में शरीक, परंतु उनकी राजनीति से प्रायः निर्लिप्त,--जैसे जीवन में सबके प्रति वह पूर्ण आत्मार्पित हो चुका है।

--कृष्णाचार्य

छायावादयुगीन स्मृतियाँ. ले० रामनाथ सुमन दिल्ली, मेकमिलन, १९७५. १९५ पृ० २०.००

●

सोक्रेटीस : उपन्यास या महाकाव्य

१९७५ ई० के साहित्य अकादमी के पुरस्कार-क्रम में प्रथम बार गुजराती के उपन्यास सोक्रेटीस के लिय पुरस्कार की घोषणा से आश्चर्य-मिश्रित संतोष का अनुभव हुआ। कारण, अब तक पिछले दो दशकों से गुजराती के मूर्धन्य और वयप्राप्त विवेचक विद्वान पंडितों को ही यह पुरस्कार प्राप्त होता रहा है। १९७५ के इस पुरस्कार से ऐसा लगा कि अकादमी अब अपेक्षाकृत युवक साहित्यकार को और ललित साहित्य पर, विशेषकर गुजराती के संदर्भ में भी विचार करने लगी है।

सोक्रेटीस के कर्त्ता श्री मनुभाई पंचोली "दर्शक" गुजराती साहित्य के माने-जाने साहित्यकार हैं तथा उनकी पिछली कृति **दीप निर्वाण** को पर्याप्त ख्याति भी मिली थी। प्रागैतिहासिक युग का चित्रण करने वाली इस कृति के अनंतर आपकी एक और कृति" **"झेर तो पीधां छे जाणी जाणी** प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास की पृष्ठभूमि सामाजिक है। श्री दर्शक ने सोक्रेटीस में काफी बड़ी पृष्ठभूमि में दृश्य, रंग और जीवन की हलचल को उभारा है। लेखक काफी समय से ग्रीक संस्कृति और सुकरात की महान मानवता से प्रभावित रहे हैं। अतः यूनानी सभ्यता और सोक्रेटीस अभेद रूप में इस उपन्यास के तानेबाने में संपृक्त हैं। इस देश की संस्कृति को भी लेखक ने सुकरात की दृष्टि से ही चित्रित किया है। कथा के मूल में है सोक्रेटीस द्वारा सत्य खोज का अभियान। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि यूनानी सभ्यता पर उपन्यास के नायक का प्रभाव व्यापक रूप में दिखाया गया है। यह कथावस्तु गुजराती में ही नहीं, संभवतः अन्य पश्चिमी भाषाओं में इस कथानक को ऐसा औपन्यासिक रूप नहीं

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया गया। इस दृष्टि से भी तथा आद्यंत संतुलित कथानक-निर्वाह के कारण यह कृति अकादमी के पुरस्कार की अधिकारिणी है।

लेखक ने अथेंस और यूनान का वर्णन, तत्कालीन समाज की स्थिति को ऐतिहासिक एवं काल्पनिक पात्रों के सहारे इस ढंग से किया है कि उपन्यास में स्वाभाविकता और यथार्थ का अच्छा-खासा निर्वाह हुआ है। इतना ही नहीं, कृतिकार की शैली ही कुछ ऐसी है जो कथावस्तु को महाकाव्य की गरिमा देती है। सोक्रेटीस एस्पेशिया, मीडिया के सेंद्रा आदि पात्र (उतिष्ठतः दशांगुलम्) यों तो चरित्र-चित्रण की दृष्टि से यथार्थ की भूमि पर ही चलते हैं, किन्तु कृतिकार ने उन्हें कुछ ऊँचा उठाकर सामान्य से कुछ ऊँचा ही दर्शाया है। नारी--कष्ट पाती है और उस कष्ट को भी कुछ मानवीय बनाती है नारी का स्नेह उसकी सहिष्णुता।

पेरीक्लीस और उसकी प्रेयसी एस्पेशिया की प्रेम चेष्टाएं भी काव्य के धरातल पर चित्रित हैं। लेखक की शैली यह है--पार्थिनान की शिल्प-कृतियों को प्रकाश उभार देता था, किन्तु एस्पेशिया स्वयं प्रकाश को उजागर करती थी। लेखक ने इस प्रकार के सीमित किन्तु सार्थक शब्द-खंडों की सृष्टि यत्रतत्र और सर्वत्र ही की है। एथेंस में स्वयं सोक्रेटीस ही मानवता का केंद्र-स्थल है। उसके साथ-साथ उसके आसपास का वातावरण भी जैसे शील की छाया देता है और कहीं कुछ ऐसा है जो सत्य के अन्वेषण की ओर उन्मुख करता है। इस संदर्भ में, ऐसे वातावरण की स्वतः स्फूर्त सृष्टि के लिये भारत में गाँधी युग का स्मरण किया जा सकता है। ऐसे वायुमंडल से जहां सोक्रेटीस विचरता हो, क्या सामान्य नगण्य मनुष्य और क्या उच्चकुलीन वर्ग से लेकर लोकोत्तर मानव की कल्पना करनेवाला नागरिक वंचित रहेगा ?

कथा मे दो और ऐसे चरित्र भी है जो पाठक को अपनी सत्ता में खींचते हैं : वे हैं मीडिया और एपोलोडोरस। यह प्रणय-संबंध का वह सूत्र है जो अपनी चरमावस्था में क्रमशः पहुंचने में पर्याप्त समय लेता है। जीवन-संघर्ष, सामान्य अर्थ में यहां घटित होता है, किन्तु उसकी टकराहट सोक्रेटीस के व्यक्तित्व को स्पष्ट करती है। पाठक इस त्रिकोण द्वारा एथेंस के बुरे-भले की पहिचान करता है। मीडिया अपने शीशमहल (आइवरी टावर) में जीती है; गुलामों की समस्याएं पाठक को अलग से झकझोरती है, और कहीं मानव की अपनी पहिचान, कुशलता और आनंदोल्लास की ऊर्मियाँ।

इस उपन्यास का उपसंहार बहुत तीक्ष्ण और बेधक है, किन्तु इसमें सोक्रेटीस का अपना जीवनमूल्य विजय-स्तंभ की तरह अपराजेय और प्रतिष्ठापूर्ण है। दर्शक इस केंद्रीय भाव को स्थापित करने में बहुत कुछ सफल हुआ है।

इस उपन्यास को लिखा है **दर्शक** ने, भारत के उस लेखक ने जो अपने देश की नैराश्यपूर्ण अंगड़ाई को दूरकर सत्य की खोज में आगे बढ़ रहा था। किन्तु इस पुराण प्रसिद्ध देश का शासक वर्ग कुछ और था, उसका प्रयत्न कुछ दूसरी ओर था। **दर्शक** ने अपनी इस मनोव्यथा को भी सोक्रेटीस के माध्यम से व्यक्त किया है : ऐसा प्रतिबिंब संवेदनशील पाठक के मन पर उभरता है।

इस औपन्यासिक कृति में लेखक ने सोक्रेटीस के जीवन-मूल्यों को कहीं से लादा नहीं है, वह तो उसके व्यक्तित्व के साथ ही प्रतिभासित होते हैं, ठीक उसी तरह जिस तरह मीडिया और एपोलोडोरस की प्रणय-गाथा भी अपनी गति से बढ़ती है। यूनान का विलासी जीवन भी अपने निजी रूप में चलता है। संभवतः यही कारण है कि लेकख नीरसता, या अत्यंत भावुक आग्रह या और किसी प्रकार के अतिरेक से बच सका है। संभवतः इस उपन्यास की सफलता का रहस्य भी यही है।

--शिवकुमार जोशी

काम संबंधों का यथार्थ और समकालीन हिंदी कहानी

डा० वीरेन्द्र सक्सेना लिखित प्रस्तुत ग्रंथ मेरठ विश्वविद्यालय द्वारा पी० एच० डी० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध है। श्री सक्सेना नई पीढ़ी के कहानीकार हैं तथा आपका दृष्टिकोण कहानियों के परिप्रेक्ष्य में काम संबंधों के यथार्थ की परिधि में वैज्ञानिक है।

मानवीय सृष्टि में काम संबंध शाश्वत है और साहित्य में इसकी चर्चा भी बहुत

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। किंतु वास्तविकता यह है कि (पश्चिम की) के बाद श्लील-अश्लील की विभीषिका से आक्रांत आलोचकों की लेखनी की गति इस दिशा में अवरुद्ध थी। लेखक ने काम संबंधों के गोपनीय और महत्वपूर्ण पक्ष की ऐसी वैज्ञानिक एवं तथ्यात्मक जानकारी पाठकों को देने का साहसिक प्रयास किया है जो अद्यतन शिक्षित समाज के दर्पण का कार्य करता प्रतीत होता है।

शोधकर्त्ता ने सात अध्यायों में सांप्रतिक कहानियों के आधार पर पाठकीय विश्लेषण के लिए प्रयुक्त सर्वेक्षण, प्रश्नावलियों द्वारा महानगर, नगर और कसबे के काम संबंधों का अध्ययन एवं तुलनात्मक विश्लेषण किया है तथा इनसे कतिपय महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले हैं। डा० नगेंद्र के शब्दों में **हिंदी में यह एक नई शुरुआत है और सांख्यिकीय सर्वेक्षण की पद्धति का प्रयोग कर इसे जो वस्तुपरकता प्रदान की गई है वह अपने आप में महत्वपूर्ण उपलब्धि है।**

शोधकर्त्ता ने महानगर दिल्ली, नगर बरेली तथा कसबा बिसोली के विभिन्न व्यवसायों में रत अनेक नर-नारियों के विचारों से प्राप्त काम संबंधी जो सांख्यिकी प्रस्तुत की है वह साहित्य के साथ-साथ समाज-विज्ञान, मनोविज्ञान तथा आयुर्विज्ञान के लिए भी उपयोगी है। ग्रंथ में हिंदी के समसामयिक बीसों कहानीकारों की काम-संबंध के विषय में दी हुई मान्यताएं पठनीय हैं।

कतिपय निष्कर्षों से आज की सामाजिक स्थिति पर प्रकाश पड़ता है। लेखक ने कसबे के संबंध में निष्कर्ष निकाला है कि **अत्यधिक नियंत्रण एवं दमन के कारण वर्जित काम संबंधों में पूर्ण संपर्क की सीमा के प्रतिशत तो अपेक्षाकृत कम हैं, पर वेश्यागमन के प्रतिशतो में कोई कमी दृष्टिगोचर नहीं होती। कसबे में व्यक्तिगत एवं सामाजिक नैतिकता का विरोधभास भी महानगरों एवं नगरों की अपेक्षा अधिक मात्रा में है, अतएव कहानीकारों ने कसबे की कहानियां लिखते समय वहां के जीवन के यथार्थ को व्यंग्यात्मक ढंग से चित्रित किया है तथा काम संबंधों के प्रति एक स्वस्थ एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण का समर्थन किया है। ऐसा ही एक निष्कर्ष विवाह के संबंध में है। हमने वैवाहिक काम संबंधों पर विस्तार से विचार करते हुए देखा है कि विवाह के परंपरागत रूप में बदलाव हो रहा है तथा विवाह अ जन्म-जन्मांतर का संबंध न रह कर मात्र एक समझौता रह गया है जो ठीक प्रकार से निर्वाह न होने पर तोड़ा भी जा सकता है।** किन्तु इससे इस निष्कर्ष पर पहुंचना उचित नहीं होगा कि निकट भविष्य में विवाह एवं परिवार की संस्थाओं का अस्तित्व नहीं रहेगा।

साहित्य की अन्य विधाओं में भी इस प्रकार का शोध करने के लिए इस पुस्तक ने मार्ग प्रशस्त किया है। सर्वेक्षण का क्षेत्र विस्तृत करके परिणाम में सार्वभौमिकता लायी जा सकती है। पुस्तक की छपाई और कागज उत्तम है। लेखक के श्रम को देखते हुए मूल्य भी अधिक नहीं कहा जा सकता।

--कमलाप्रसाद द्विवेदी

काम संबंधों का यथार्थ और समकालीन हिंदी कहानी. ले० वीरेंद्र सक्सेना. दिल्ली, साहित्य भारती, १९७५. ३१६ पृ० २२ सेमी० ४०.००

बदसूरत सच्चाई पर मर्मस्पर्शी उपन्यास : तमस

देश-विभाजन की ऐतिहासिक विसंगति जिस बर्बरता का परिणाम थी, उसकी वीभत्सता को बड़ी कुशलता के साथ, बड़े दर्द के साथ भीष्म साहनी ने 'तमस' में उभारा है। इस विभीषिका का सूत्र संचालन पर्दे के पीछे रहकर ब्रिटिश सत्ता किस प्रकार कर रही थी, इसका निर्देश भी उपन्यासकार ने बड़ी दक्षता के साथ किया है। इसमें यह संकेत करने का भी प्रयास किया गया है कि अंधेरे में भटकती वह भारतीय पीढ़ी यदि अपनी गलतियों से एक ओर अंधेरे को...तमस को घनीभूत कर रही थी तो दूसरी ओर उससे जूझ भी रही थी। यह मैं जरूर कहना चाहूँगा कि जूझने का श्रेय इस उपन्यास में जिस शक्ति को दिया गया है, बहुतों की दृष्टि में वह उसकी अधिकारिणी नहीं है।

इस उपन्यास में मुस्लिम बहुल पश्चिमी पंजाब के एक अंचल के स्वतंत्रता के ठीक पहले के विक्षुब्ध और उत्पीड़ित जनजीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की कुछ झलकियां उद्देश्य साधक क्रम में पिरो कर पेश की गयी हैं। जिस तरह वृहत् फलक पर अंकित भू-चित्र की प्रभविष्णुता उसके समग्र दृश्य के संयोजन पर निर्भर करती है, उसी तरह इस उपन्यास का वैशिष्ट्य इसके व्यक्ति चरित्रों की रेखाओं के उभार में न होकर विविध समूहों की मानसिकता के अंकन में है। विगत इतिहास के कड़ुए अनुभवों के फलस्वरूप स्वाधीन अखंड भारत की मांग से औसत मुसलमान तथा पाकिस्तान की मांग से हिंदू आशंकित थे। धार्मिक असहिष्णुता और पारस्परिक अविश्वास को भड़का कर ब्रिटिश कूटनीति ने इसी आशंका को खुले संघर्ष का रूप देकर अपने हितों की रक्षा करनी चाही थी। अंग्रेजों का गुर्गा मुराद अली मस्जिद के सामने सूअर की लाश फिकवा कर जिस मुस्लिम विक्षोभ को उभारता है, डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड प्रशासन को जानबूझ कर निष्क्रिय बनाये रखकर उसे आरंभिक तनातनी और गोबध (कौन जाने वह भी अंग्रेज सरकार द्वारा ही नियोजित रहा हो) से गुजर कर खुली लूटमार आगजनी और हत्याकांड तक विकसित होने का अवसर प्रदान करता है। लेखक का सबसे घनिष्ठ और अंतरंग परिचय हिंदू समाज से है। स्वभावतः उसकी प्रतिक्रियाओं और विकृतियों के चित्रण में उसने सबसे अधिक स्पष्टता और कठोरता बरती है। पुण्यात्मा वानप्रस्थी जी एक तो 'सब पर कृपा करो भगवान' जैसी प्रार्थना करते हैं। दूसरी ओर घोर पाप फैलाने वाले म्लेच्छों, मुसलमानों पर उबलता तेल और जलते अंगारे फेंकने की शिक्षा भी देते हैं—मास्टर देवव्रत रणवीर जैसे किशोरों से मुर्गियाँ कटवा-कटवा कर आर्य वीरदल में उन्हें दीक्षित करते हैं और मौका आने पर म्लेच्छ-वध करने की प्रेरणा देते हैं। दानवीर प्रधान जी लाठियां मंगवाने का सारा खर्च स्वयं देते हैं। मंत्री श्री 'गोबध हुआ तो खून की नदियाँ' बहाने की धमकियां देते हैं। कांग्रेसी नेता मेहता जी की एक टांग कांग्रेस में दूसरी हिन्दू सभा में है। लेखक का मंतव्य है कि हिन्दू समाज के इन्हीं नेताओं की संकीर्णता, अदूरदर्शिता, स्वार्थपरता और भीरुता के कारण मुस्लिम समाज से दिल खोल कर मेलजोल संभव नहीं हो पाया।

हिंदू समाज की प्रतिक्रिया का चित्रण अधिक संयम और समान के साथ किया गया है। आक्रमण की आशंका से ग्रस्त अल्पसंख्यक सिख अपने गुरुद्वारे में एकत्र होते हैं, अपनी बलिदानी परंपरा को चेता कर एक बार फिर तुर्की से मोर्चा लेने के लिये संगत को ललकारते हैं और 'खालसा राज' का स्वप्न देखते हैं। इस मध्ययुगीन मानसिकता की सबसे बड़ी कमजोरी यही है कि वह अंग्रेज के कुचक्र को बिलकुल भुला देती है, और अपनी वास्तविक शक्ति को नहीं तौल पाती। परिणामतः वीरतापूर्वक लड़ कर भी हथियार चुक जाने के कारण रुपया देकर प्राण बचाने की असफल चेष्टा के बाद सिख स्त्रियों को अपनी मर्यादा की रक्षा के लिये आत्महत्या करनी पड़ती है और गुरुद्वारे का अस्तित्व ही संकट में पड़ जाता है।

मुस्लिम समाज की मान्यता और आक्रामक प्रक्रिया का चित्रण अपेक्षाकृत बहिरंग दृष्टि से किया गया है। हिंदुओं के मंदिर और सिखों के गुरुद्वारे की बैठकों के समान ही मुसलमान जामा मस्जिद में इकट्ठा होते हैं और गोलड़ा शरीफ के पीर वहां वाअज़ भी देते हैं, किंतु उसका अंतरंग वर्णन लेखक नहीं कर पाया है। केवल नत्थू के द्वारा वहां के संगीन वातावरण का आभास ही उसने दिया है। वैसे औसत उत्तेजित मुसलमान मोटे कसाई की तरह हिंदू मुसलमान की पुरानी अदावत के आधार पर काफिर को मारना ही सबाब मानता है और अंग्रेजों की चालबाजी को पहचानने से इंकार कर देता है।

परिणामतः शहर और गाँवों में दंगे होते हैं, लूट-मार आगजनी, बलात्कार और हत्याएं होती हैं। अल्पसंख्यकों (इस क्षेत्र में हिंदू-सिखों) की स्त्रियों का अपहरण, धर्मान्तरण होता है। बावजूद घने अंधेरे के, राजो जैसी कुछ भली औरतें, शाहनवाज जैसे कुछ भले लोग अब भी मानवता की ज्योति को जगाये रखते हैं।

इस सारी कूट-योजना का सूत्रधार है डिप्टी कमिश्नर रिचर्ड, जिसका आई० सी० एस० रूप लंडन में निर्धारित ब्रिटिश नीति को हृदयहीन, किंतु दक्ष यंत्र की तरह अमली जामा पहनाता है और जिसका मानवीय रूप बुद्ध की प्रतिमाओं की मुसकानों पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुग्ध है। लीजा के रूप में अंग्रेज अफसरों की ऊबी, उच्छृङ्खल पत्नियों के निरर्थक जीवन का प्रभावशाली चित्रण लेखक ने सफलतापूर्वक किया है।

लेखक के अनुसार केवल कम्यूनिस्टों ने ही ब्रिटिश नीति को भांपा था और हिंदू-मुस्लिम-सिख एकता के माध्यम से उसे व्यर्थ करना चाहा था। इसीलिए उसकी पूरी सहानुभूति कम्युनिस्टों के प्रति समर्पित है। हिंदुओं के बीच देवदत्त, सिखों के बीच सोहनसिंह, मुसलमानों के बीच मीर दाद ही होशोहवास कायम रख कर आपसी एकता पर जोर देते हैं और ये तीनों कम्युनिस्ट हैं। बाद में बनी अमन कमेटी के सेक्रेटरी भी कामरेड देवदत्त ही बनते हैं। कम्यूनिस्ट पार्टी के लिये लेखक का यह प्रेम उसे पक्षधर ही बनाता है सत्य का चितेरा नहीं। गांधी, नेहरू और आजाद के विरोध में जाकर कांग्रेस को केवल हिंदुओं की पार्टी के रूप में प्रचारित कर और देश विभाजन की नीति का जबर्दस्त समर्थन कर कम्युनिस्ट पार्टी ने ने उस समय अंग्रेजी कूटनीति को सफल ही बनाया था। मैं इस अतिरिक्त कम्युनिस्ट प्रेम को उपन्यास की कमजोरी मानता हूँ।

इसी तरह उपन्यास में हिंदू, मुसलमान, सिख जनता का अंग्रेजी के प्रति प्रगाढ़ विश्वास और अंत में प्रशासन के हस्तक्षेप का जादुई प्रभाव भी अतिरंजित लगता है। फिर भी पंजाब की रीति-नीति बोल-चाल, सामान्य जनजीवन तथा राजनीतिक दांव-पेच का जीवंत चित्रण इस उपन्यासमें हुआ है। यह गुण इस उपन्यास को विशिष्ट बना देता है, इसमें संदेह नहीं।

—विष्णुकांत शास्त्री

तमस. ले० भीष्म साहनी. दिल्ली राजकल, १९७४. २८४ पृ० २१ सेमी०

●

सहधर्मी-चर्चा

मुंबई मराठी ग्रंथ संग्रहालय

भारत सेवक समूह के कुछ उत्साही युवकों ने (जिनमें श्री वा० मोडक, शं० ह० शेजवलकर और अं० गो० पुणतांबेकर प्रमुख थे) १८९५ ई० में **श्री छत्रपति वाचनालय** की स्थापना की थी। इससे पूर्व जो पुस्तकालय सार्वजनिक रूप से स्थापित हुए थे वह प्रायः स्थानीय अंग्रेजी शासकवर्ग-की प्रेरणा से बनते थे और उनमें अंग्रेजी की पुस्तकों का बाहुल्य होता था। बंबई में महामारी के प्रकोप से आगामी दो वर्षों के बाद छत्रपति वाचनालय समाप्त प्रायः हो गया। किंतु स्थानीय विद्या-प्रेमी समाज ने पुनः न्यायमूर्ति ना० रानडे से प्रेरणा प्राप्त कर १८९८ ई० में **मुंबई मराठी ग्रंथ संग्रहालय** की स्थापना की। इस संग्रहालय में पहली बार मराठी ग्रंथों के संग्रह एवं मराठी भाषा पढ़ने वाले समाज के लिये वाचनालय की व्यवस्था हुई। समय पाकर और क्रमशः यह संग्रहालय इस रूप में विकसित हुआ है कि आज यह मराठी वाङ्मय का अद्वितीय संग्रहालय तो है ही, अपनी विविध गतिविधियों और विशिष्ट संदर्भ-ग्रंथों के प्रकाशन के कारण प्रथम कोटि के पांडित्यपूर्ण ग्रंथ प्रकाशन के केंद्र के रूप में भी परिगणित है।

संग्रहालय विभाग : संपूर्ण भारत में मुद्रण की दृष्टि से १८००-१८६७ ई० तक का समय प्रायः अपनी बाल्य अवस्था में था। बंगाल से लेकर बंबई प्रेसीडेंसी तक स्थानीय लोगों में से इनेगिने लोगों ने ही मुद्रणालयों की ओर ध्यान दिया। अतः इस समय भारतीय भाषाओं में मुद्रित पुस्तकें आज दुर्लभ हैं। इस संग्रहालय में इस समय की मुद्रित लगभग १००० पुस्तकें प्राप्त हैं। मेरा अनुमान है कि भारत में संभवतः ऐसा कोई ग्रंथालय नहीं है जिसमें किसी भारतीय भाषा की इतनी पुस्तकें, वह भी १८६७ ई० तक की मुद्रित और सुरक्षित हों। मराठी मुद्रण के इस आरंभिक युग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में बहुधा मोडी लिपि चलती थी। स्वभावतः इस लिपि में छपी पुस्तकें भी इस संग्रह में हैं। बाद में ग्रंथालय के आयोजकों ने प्रसिद्ध लेखकों के ग्रंथों की मूल पांडुलिपियों के संग्रह की ओर भी ध्यान दिया। इनमें उल्लेखनीय है : गंगाधर शास्त्री कृत **मराठी भाषे चे व्याकरण** (१८३६ ई०), भा० वि० वरेरकर कृत **'घरवाली'**, ह० ना० आपटे कृत **वज्राघात,** आदि। अन्य उल्लेखनीय पुरानी मुद्रित पुस्तकों में हैं : बंबई कुरियार प्रेस में मुद्रित और रार्बट ड्रमंड कृत मराठी, गुजराती व अंग्रेजी भाषाओं का व्याकरण (१८०८ ई०), १८२३ ई० में प्रकाशित **विदुर नीति,** बैजनाथ शर्मा कृत और श्रीराम-पुर प्रेस से मुद्रित **सिंहासन बत्तिशी, महाराष्ट्र भाषेचा कोश,** दादोबा पांडुरंग कृत **मराठी भाषे चे व्याकरण** (१८३६) आदि। संग्रहालय ने पुरानी दुर्लभ पत्रिकाओं के संकलन की ओर भी ध्यान दिया। १८४२ ई० में प्रकाशित **'प्रभाकर'** पत्रिका के दुर्लभ अंक भी प्राप्त किए।

संदर्भ विभाग : समय की मांग के अनुसार संग्रहालय का विकास शनै शनै होने लगा। अनुसंधानकर्त्ता विषय और व्यक्तियों पर शोध-खोज करने आने लगे। आज इस विभाग में मोरोपंत, लो० तिलक, विवेकानंद जैसे व्यक्तियों पर और अणु-संधान, इतिहास वृत्त, आदि विषयों पर ग्रंथपुटीय अध्ययन (बिब्लियोग्राफिकल स्टडीज) उपलब्ध हैं तथा नये-नये विषयों पर इस प्रकार के कार्य होते ही रहते हैं। यह विभाग साहित्यकार संबंधी या विशिष्ट प्रकार के उत्सव और संगोष्ठियां भी आयोजित करता रहता है।

इतिहास संशोधन मंडल : मु० म० ग्र० संग्रहालय का द्वितीय महत्वपूर्ण विभाग (संग्रहालय के अनंतर) इतिहास संशोधन मंडल है। इस महत्वपूर्ण विभाग की स्थापना १९५८ ई० में हुई। १९६५ ई० में **महाराष्ट्र इतिहास परिषद** की योजना मंडल ने ही प्रस्तुत की। इस मंडल से त्रैमासिक 'भारतीय इतिहास व संस्कृति' एवं 'मराठी शोधन पत्रिका' भी नियमित रूप से प्रकाशित होती है। मंडल द्वारा प्रकाशित **मराठी वाङ्मय कोश** ने अनुकरणीय उदाहरण उपस्थित किया है।

मराठी प्रबोधन शाखा : संग्रहालय की यह शाखा जनसाधारण के स्तर पर १९६१ ई० में स्थापित हुई। इस शाखा द्वारा लोकप्रिय विषयों पर भाषण, शिक्षापूर्ण चित्र-पटों का प्रदर्शन जैसे कार्य संपन्न कराये जाते हैं। व्याख्यान भी विभिन्न नामों से नियमित रूप से और योजनाबद्ध ढंग से कराये जाते हैं। प्रतिवर्ष गजेंद्रगडकर व्याख्यानमाला, डा० ग० मा० फड़के व्याख्यानमाला, सावरकर व्याख्यानमाला, शारदोत्सव व्याख्यानमाला आयोजित होते हैं।

कला-मंडल : इस शाखा की स्थापना १९५८ ई० में हुई। नाम के अनुरूप इसका कार्य कला-प्रसाधनों द्वारा संग्रहालय का उद्देश्य अग्रेषित करना है और इसमें नाटक संबंधी व्याख्यानों के अतिरिक्त नाट्य शिक्षण की व्यवस्था भी है। कोल्हटकर के नाम से नाट्यशिक्षण की व्यवस्था भी है। कोल्हटकर के नाम से नाट्य-स्पर्धाओं का आयोजन किया जाता है। इससे नव-शिक्षित नाट्य-कर्मियों को प्रेरणा मिलती है। इतना ही नहीं, **आंतरभारती-केन्द्र** (१९५३ ई० में स्थापित) विभिन्न भारतीय भाषाओं के सहयोग-संपर्क की ओर भी प्रयत्नशील है। संग्रहालय महाराष्ट्र की एक ऐसी संस्था के रूप में विकसित हो रही है जो जीवन को राष्ट्रीय जीवन को सर्वांगीण रूप में और राष्ट्र को एक ही भावप्रतिमा के रूप में विकसित होते देखने का स्वप्न देख रही है। **मराठी ग्रंथ सूचि** के निर्माता शं० ग० दाते ने नियत-कालिक पत्रिकाओं की सूची भी बनाई थी। संग्रहालय के **दाते सूची-मंडल** ने इसे भी दो भागों में पूरा किया है। इसी प्रकार **साने गुरुजी** के नाम से बाल विकास केंद्र बालकों के लिये पत्रिका प्रकाशित करता है और बाल-वाङ्मय के विकास के लिये समर्पित है।

इन विविध और दीर्घजीवी सेवाओं से प्रभावित होकर महाराष्ट्र प्रशासन संग्रहालय को मान्यता देने लगा है। १९३७ ई० से बंबई महानगरपालिका अनुदान देने लगी है और हाल ही में इस महानगरपालिका ने अपने २० ग्रंथालयों के संचालन का कार्य भी इसे सौंप दिया है।

—आशा संत

कन्नड़ साहित्य परिषत्तु, बैंगलूर

३१ अक्टू० १९१४ ई० को श्री एम० शामराव, क० श्रीनिवास राव और डा० पी०

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एस० अच्युतराव ने कन्नड़ भाषा की परिशुद्धि एवं इसके साहित्य की अभिवृद्धि के लिये एक सभा बुलाई थी। इस परिषद् का पहला अधिवेशन ३ मई, १९२५ ई० को आयोजित किया गया जिसमें धारवाड़, विजापुर, बेलगाँव, कारवार, बंबई नगर, बेल्लारि, दक्षिण कन्नड़, मैसूर संस्थान के जिलों, धारवाड़ कर्नाटक विद्यावर्धक संघ, आदि के प्रतिनिधि इस स्थापना महोत्सव के प्रथम अधिवेशन में उपस्थित थे। श्री एच० वी० नडज्या की अध्यक्षता में यह समारोह चार दिनों तक नाना प्रकार के कार्यक्रमों द्वारा संपन्न हुआ।

इस संमेलन में निश्चय हुआ : संस्था का नाम **कर्नाटक साहित्य परिषत्तु**, कार्यालय बगलूर में। उद्देश्य निर्धारित हुए—कन्नड़ भाषा का विकास और नवीन एवं प्राचीन ग्रंथों का प्रकाशन। उद्देश्यों की पूर्ति के निमित्त भी व्यापक रूप में विचार किया गया तथा निश्चय किया गया कि व्याकरण, भाषा का इतिहास तथा कोश-साहित्य प्रस्तुत किया जाय; साहित्यशास्त्र संबंधी पारिभाषिक शब्दावलियां बनाई जायं; दर्शन और विज्ञान संबंधी ग्रंथ लिखाए जायं; उपर्युक्त उद्देश्य के लिये पत्रिका-प्रकाशन; मौलिक ग्रंथ लेखकों को सम्मान और पुरस्कार की व्यवस्था; भाषा-साहित्य के शोध-कार्य में लगे विद्वानों के लिये आवश्यक वृत्तियों की व्यवस्था; पुस्तकालयों और वाचनालयों की व्यवस्था आदि। पुनः १९६७ ई० में समय की मांग के अनुसार संविधान में कुछ संशोधन हुए और १९७० ई० में कर्नाटक के १९ जिलों में जिला समितियों का संगठन किया गया। परिषद का नाम भी अब **कन्नड़ साहित्य परिषत्तु** कर दिया गया है।

भवन निर्माण : समय की वृद्धिशील गति के कारण परिषद् का अपना भवन भी होना चाहिये था। संयोग से उपाध्याय श्री क० श्रीनिवासराव, (जो १९२० से १९३३ तक उपाध्यक्ष रहे) स्वयं वास्तुकला के पंडित थे। आपने स्वयं ही भवन के लिये मानचित्र प्रस्तुत किया। आरंभ में मैसूर राज्य से १६०००रु० की आर्थिक सहायता मिलते ही १२ अप्रैल १९३१ ई० को भवन का शिलान्यास हुआ। **श्रीकृष्णराज परिषदमन्दिर** नाम से ज्ञात इस नवीन भवन में परिषद का कार्य १९३३ ई० से विधिवत् होने लगा।

साहित्य-कार्य की परंपरा : आरंभिक अवस्था में बेल्लावे वेंकटनारायणप्पा ने साहित्यिक गतिविधियों की स्वस्थ परंपरा बनाने का श्रेय लिया। आप यों तो परिषद के अवैतनिक कोषाध्यक्ष थे, किंतु साहित्यिक कार्यों में स्वयं दत्तचित्त रहते थे। पंप-भारत, पंप-रामायण, चावुंडराय पुराण, सोमेश्वर-शतक आदि ग्रंथों का आपने संपादन किया। इस संपादन कार्य के साथ-साथ आपने कई जीवनियां लिखीं तथा षट्पति काव्य का कोश बनाने का मार्ग प्रशस्त किया। १९३६ ई० से प्रतिवर्ष वसंत व्याख्यानमाला का सिलसिला नियमित रूप से चल रहा है। पुनः श्री गंडप्पा ने गमक कला (काव्य वाचन) के विकास के लिये भारी प्रयत्न किया। आज गमक कला कर्नाटक प्रदेश में काफी लोकप्रिय है। परिषद् की पत्रिका प्रति छः मास पर अधिकारी विद्वानों द्वारा संपादित एवं प्रकाशित होती है। अब कुछ दिनों से परिषद् का निजी प्रेस है। मा० वेंकटेश अय्यंगार (१९४३-४७) की अध्यक्षता में संस्था को और अधिक पुष्ट बनाया गया तथा कन्नड़-कन्नड़ बृहत् कोश की गौरवमय परंपरा का श्रीगणेश हुआ। इस ग्रंथ का विमोचन महोत्सव भी दिसंबर १९७५ में संपन्न हो चुका है।

परिषद् के वर्तमान अध्यक्ष श्री जी० नारायण ने त्रैवार्षिक योजना के अनुसार परिषद् को और अधिक जीवन प्रदान किया है। परिषद् ने अपनी गौरवमयी परंपरा के ५५ वर्ष पूर्ण कर स्वर्णजयंती उत्सव संपन्न किया। श्री० एम० वी० सीतारामय्या के संपादकत्व में जयंती ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है। इस ग्रंथ में परिषद का इतिहास तो है ही, साथ ही कन्नड़ साहित्य के विविध अंगों पर सम्यक् ढंग से प्रकाश भी डाला गया है। इसी अवसर पर डा० रं० श्री मुगली के संपादन में लगभग २५ कन्नड़ ग्रंथ प्रकाश में आ चुके हैं। पिछले वर्ष परिषद का ४७ वां संमेलन भी अपनी पूर्व प्रतिष्ठित परंपरा के अनुसार ही संपन्न हो चुका है। इस संमेलन के अध्यक्ष थे मैसूर विश्वविद्यालय के उपकुलपति दे० जवरेगौडा।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि १९४७ ई० के अनंतर परिषद् ने अपना सर्वतोमुखी विकास किया है तथा कर्नाटक राज्य के लेखक, पंडित और शास्त्रज्ञ अपने इस उत्तरदायित्व के प्रति सचेष्ट हैं।

—चि० ल० देशपांडे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशिष्ट-प्रकाशन

(इस स्तंभ में किसी भी विषय के श्रेष्ठ, नये दृष्टिकोण से लिखे या किसी पुस्तकालय में स्थायी रूप से स्थान पाने के अधिकारी ग्रंथ सटिप्पण प्रस्तुत हैं। प्रकाशकों और विषय-विशेष के प्रेमियों से अनुरोध है कि वे कृपया इस स्तंभ को ध्यान से देखें और महत्वपूर्ण स्तरीय प्रकाशित ग्रंथों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करें। लेखक के नाम के सामने यथासंभव जन्म-वर्ष दे दिया गया है। पुस्तक के नाम के बाद प्रकाशक विवरण, पुनः पृष्ठ संख्या (भूमिका और मूल पुस्तक के पृष्ठ) और अंत में पुस्तक की लंबाई तथा मूल्य है। पृष्ठ और आकार का विवरण पुस्तकालयों में सूचीकरण-कार्य में सुविधा की दृष्टि से दिया गया है। कोष्ठक में विषय का स्पष्टीकरण, विषय-सीमा या विशेषता आदि की ओर संकेत है। --संपादक)

अंग्रेजी

कल्याणकुमार दासगुप्त
ए ट्राइबल हिस्ट्री आफ एंसियंट इंडिया . कलकत्ता, नवभारत पब्लिशर्स, १९१४ . ३०,३३६ पृ० २५ सेमी० १००.०० (अग्र, आर्जुनायन, अश्वक, औदुंबर, कुलूत, मालव, राजन्य, त्रिवि, त्रिगर्त, वृष्णि, यौधेय जातियों का इतिहास : उनकी मुद्राओं के आधार पर लिखित यह शोध-प्रबंध कलकत्ता विश्व० से १९६५ में स्वीकृत)

पिल्लइ, के० के०
ए सोशल हिस्ट्री आफ द तमिल्स, २रा सं० मद्रास, मद्रास विश्वविद्यालय, १९७५ . ५९१ पृ० २३ सेमी० २०.००

भट, गोविंद केशव, १९१४--
ट्रेजेडी एंड संस्कृत ड्रामा . बंबई, पोपुलर प्रकाशन, १९७४.० ८,१६६ पृ० २१ सेमी० ३६.०० (संस्कृत के दुःखांत नाटकों का अध्ययन)

वेलिंग, फ्रेंक
द ग्रोथ आफ द रिलीजस सिगनिफिकैंस आफ राम इन नार्थ इंडिया . हार्वर्ड, विश्वविद्यालय, १९७३ . ७,६६८ पृ० (उत्तर भारत में राम के धार्मिक महत्व का अध्ययन : पुस्तक विश्व० में जमा: अप्रकाशित)

उर्दू

ज्ञानचंद
तज्जीए . नई दिल्ली, मक्तबा जामिया लि०, १९७३ . ३५२पृ० २२सेमी० ११.०० (साहित्यिक निबंध)

मालिक राम
वोह सूरते इलाही. नयी दिल्ली, मक्तबा जामिया, १९७४ . २५६पृ० २१सेमी० १०.०० (उर्दू साहित्य के दस जाने-माने कवि समीक्षक आदि की परिचयात्मक समीक्षा)

मुहम्मद अबू सहूर
ग़ालिब्यात के चंद मुबाहिस . लखनऊ . नसीम बुक डिपो, १९७३ . २१५पृ० १९सेमी० ५.०० (ग़ालिब की शायरी पर कुछ शोधपूर्ण निबंध)

मुहम्मद तक़ी अमीनी
तहजीब की जदीद तश्कील . दिल्ली, नदवातुल मुसन्निफ़िन, १९७४ . २४०पृ० २४सेमी० १७.५० (ऐतिहासिक दृष्टि से पश्चिमी और पूर्वी सभ्यताओं का अध्ययन)

कन्नड़

कुर्तिकोटि, कीर्तिनाथ
विश्वव्यापी गणेश. सागर, विश्वव्यापी गणेश प्रकाशन, १९७५. २०,२५६पृ० २२ सेमी० २०.०० (गणेश का ऐतिहासिक और पौराणिक विवेचन)

गोपालकृष्ण भट्ट, तेक्कुंज
मुद्दणन श्री रामाश्वमेधम् . मेंगलोर, प्रकाशक १९७२ . १२,४७८ पृ० २४ सेमी० १५.०० (रामाश्वमेध का विश्लेषण)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लठ्ठे, एम० एस०
महादेवीअाक्क मत्तु कारिकालम्मे .धारवाड़, कर्नाटक विश्वविद्यालय, १९७५. १४,२७०पृ० २६सेमी० २३.०० (महादेवीअाक्क और कारिकालम्मे का अध्ययन)

गुजराती

ज्ञान गंगोत्री ग्रंथ-श्रेणी
संपा०भोगीलाल गांधी आदि. वल्लभविद्यानगर, सरदार पटेल विश्वविद्यालय,१९६७.–जि०, २४ सेमी० ३०.०० प्रति जिल्द (३० जिल्दों में विषयक्रम से प्रस्तावित विश्वकोश . अब तक (१९७५) १८ जिल्द प्रकाशित)

हरिवल्लभ भायाणी
व्युत्पत्ति विचार . अमदावाद, युनिवर्सिटी ग्रंथ निर्माण बोर्ड, १९७५. १०,२९५पृ० २२सेमी० १९.५०.(४ खंडों में सामान्य विचार, भारतीय -आर्य विकासक्रम, ध्वनि परिवर्तन, कुछ शब्दों की व्युत्पत्ति, स्फुट विचार)

तमिल

सुब्रह्मण्यन, एस० वी०
तमिल इलक्कियकोल्कइ–ओरअरिमुकम. मद्रास, इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट आफ तमिल स्टडीज, १९७५. ४४३पृ० २१सेमी० १०.०० (काव्य समीक्षा)

तेलगु

कृष्णमूर्ति, भद्रिराजु
तेलुगु भाषा चरित्र . हैदराबाद, आंध्र प्रदेश साहित्य अकादमी, १९७५ . १४,५२९ पृ० २३ सेमी० १६.०० (तेलुगु भाषा का इतिहास)

रामराजु, बीरुदुराजु, १९२५––
जानपद गेयालु—संधिक चरित्र . हैदराबाद, आंध्र प्रदेश साहित्य अकादमी, १९७५ . ६८,४८१पृ० २१सेमी० १६.०० (आंध्र लोकगीत और सामाजिक इतिहास)

वेंकट रामाराव, सूगूर्के, १९४१––
तेलुगुलो साहित्य विमर्श : अवतरण–विकास-मुलु . हैदराबाद, पाचिडि प्रचुरपलु, १९७४ . ८,३१०पृ० २१सेमी० २०.०० (तेलगु साहित्य की उत्पत्ति और विकास)

शास्त्री, बी० एन०
आंध्रुलु संघिक चरित्र . हैदराबाद, सरस्वती निलयम, १९७५ . ८,४०२ पृ० २१.५ सेमी० २५.०० (आंध्र राज्य का सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास)

पंजाबी

गुलचरन सिंह,
मक्खण शाह लुबाणा . जलंधर, सुजलाणा पब्लिशर्स,१९७५. १२५ पृ० २२ सेमी० १५.०० (लुबाणा की जीवनी और गुरु तेगबहादुर की लुबाणा द्वारा खोज)

नानक देव
साहकार जपुजी, टीका० हरनाम सिंह शान . चंडीगढ़, पंजाब विश्वविद्यालय पब्लिकेशन ब्यूरो, १९७५ . २४,४४३ पृ० २१ सेमी० ३६.०० (शब्दार्थ और टीका सहित)

महिंदर कौर गिल
गुरु अर्जुनदेव : जीवन ते बाणी . दिल्ली, नेशनल बुक शाप, १९७५ . ४३२ पृ० २२सेमी० ४०.०० (दिल्ली विश्व० से स्वीकृत प्रबंध)

शेख़ फ़रीद
सी सेड शेख फरीद, संपा० हरनाम सिंह शान . चंडीगढ़, पंजाब विश्व० –गुरुनानक सिख स्टडीज़, १९७५ . १०४ पृ० २४ सेमी० ३.२५ . (पंजाबी के साथ नागरी और उर्दू लिप्यन्तर एवं अंग्रेजी अनुवाद सहित)

बंगला

कालिदास
मेघदूत, अनु० सुकुमार सेन . कलिकाता, ईस्टर्न पब्लिशर्स, १९७५ . ११२ पृ० २१ सेमी० (मूल संस्कृत सहित समश्लोकी बंगला-अनुवाद)

दीनेशचंद्र भट्टाचार्य शास्त्री
प्राचीन भारतीय मनोविद्या . कलिकाता, संस्कृत कालेज,१९७३ . १२,१७८पृ० २४ सेमी० १५.०० (मनोविज्ञान संबंधी प्रबंध)

नारायण सान्याल
अश्लीलतारदाये . कलिकाता, शेख प्रकाशन, १९७५. ६,१८५ पृ० २२ सेमी० (उपन्यास)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधीररंजन दास
उत्खनन-विज्ञान . कलिकाता, नवभारत पब्लिशर्स, १९७५. ५६,५१८पृ० २१सेमी० ८५.०० (पुरातत्वीय उत्खनन विद्या)

हिरण्मय वंद्योपाध्याय
विश्व जिज्ञासा . कलिकाता, रवींद्र भारती विश्वविद्यालय, १९७५. ५९७पृ० २१सेमी० २०.०० (दर्शन संबंधी जिज्ञासाएं)

मलयालम

कुज्जु कृष्णनन्, पल्लिप्पट्टु
महाचरितसंग्रह सागरम्. कोट्टायम, साहित्य प्रवर्त्तक, १९७५ . १००२पृ० २१सेमी० ४०.००

भार्गवन पिल्ला, जी०
पाणपा ट्टुकल . कोट्टायम, नेशनल बुक स्टाल, १९७५ . ९० पृ० १८ सेमी० ३.५०

विष्णु नंपूतिरि, एम० बी०
मुखदर्शनम् . कोट्टायम, नेशनल बुक स्टाल, १९७५ . १९२ पृ० १८ सेमी० ६.५०

सेतु, १९४२–
किरातम . कोट्टायम, साहित्य प्रवर्त्तिका, १९७५ . १२५पृ० १८सेमी० ४.०० (उपन्यास)

मराठी

कृष्णदास, इयामा
श्रीकृष्ण चरित्र कथा, संपा० वि० बा० प्रभुदेसाई एवं बा० ना० मुंडी . मुंबई, मुंबई मराठी साहित्य संघ, १९७५ . ४६७ पृ० २४ सेमी० २०.०० (सोलहवीं सदी में गोमंतक में लिखी भागवत के दशम स्कंधानुसारी कृष्ण काव्य की प्रथम मुद्रित संहिता एवं अनुशीलन)

पंडित, भवानीशंकर श्रीधर
संनिचय,२ भाग . नागपुर, नागपुर, प्रकाशन १९७५ . १९सेमी० ४२०पृ० ३२.०० (मराठी कवि और उनके काव्य की समीक्षा)

मुक्तिसंग्राम, अज्ञात
हैदराबाद मुक्ति संग्रामासील अज्ञात कथा . पुणे, राजहंस प्रकाशन., १९७५. २१सेमी० १६० पृ० १२.०० (हैदराबाद रियासत में स्वतंत्रता आंदोलन)

पारखे, म०. स०
रामयशोगाथा. पुणे, ज० आ० मोडकर, १९७५. ७६७पृ० २१सेमी० ५१.०० (परशुराम विषयक)

संकृत

कात्यायन
भाषिकसूत्रम्, वृत्तिकार : महास्वामी और भाष्यकार : अनन्त भट्ट, संपा० ब्रजबिहारी चौबे . होशियारपुर, विश्वेश्वरानंद शोध संस्थान,१९७५ . ८६ पृ० २४ सेमी० २४.०० (संपा० द्वारा अंग्रेजी में विस्तृत भूमिका)

भुशुण्डि रामायण–पूर्व खंड
संपा० भगवतीप्रसाद सिंह और जनार्दन शास्त्री . वाराणसी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, १९७५ . ८,९७४ पृ० २४ सेमी० (चार पांडु लिपियों पर आधारित और वी० राघवन कृत भूमिका सहित)

शुक्ल यजुः संहिता समन्वय भाष्यम्
भाष्यकार गंगेश्वरानंद उदासीन, संपा०सुरजनदास स्वामी . दिल्ली-बंबई, गुरु गंगेश्वर चतुर्वेद प्रकाशन संस्थान (प्राप्ति स्थान : श्रोत मुनि निवास, वृंदावन-मथुरा), १९७५ (दो भाग प्रकाशित) . २५ सेमी० ५.०० प्रति खंड (मूल सहित भाष्य)

हिंदी

अज्ञेय, १९११–
लौटती पगडंडियां–संपूर्ण कहानियाँ-भाग २ . दिल्ली, राजपाल, १९७५, ४४० पृ० १८ सेमी० २०.०० (२० कहानियां; भाग १ : **छोड़ा हुआ रास्ता** में ३० कहानियां-इसी वर्ष प्रकाशित)

दुष्यंतकुमार त्यागी, १९३३––
साये में धूप . दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, १९७५ . ६४ पृ० २२ सेमी० (हिंदी में ग़ज़लों के प्रयोग)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवेश ठाकुर, १९३३–
भ्रमभंग . नई दिल्ली, भारतीय ज्ञानपीठ, १९७५ . २०४ पृ० २१ सेमी० १३.०० (मध्यवर्गीय युवक के जीवन पर उपन्यास)

रमेश कौशिक, अनु०, १९३०–
१०१ सोवियत कविताएं . दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, १९७५ . २८३पृ० २३ सेमी० ३०.०० (रूसी, युक्रेनी, वेलोरूसी जार्जियायी, उज़बेकी, ताज़िक, लालवियाई, लिथुआनी आदि भाषाओं की कविताओं का अनुवाद . आरंभ में ४० पृ० भूमिका)

रामनाथ 'सुमन', १९०३–
छायावादयुगीन स्मृतियां . दिल्ली, मेकमिलन कंपनी, १९७५ . ६,१९५पृ० २२सेमी० २०.०० (पं० केदारनाथ पाठक, पं० रामनारायण मिश्र, जगमोहन वर्मा, गो. ना. मिश्र, रा. च. शुक्ल, पराड़कर, आगा हश्र कश्मीरी, रत्नाकर, प्रसाद, रायकृष्णदास आदि अनेक लेखकों की स्मृतियाँ)

रामेश्वरलाल खंडेलवाल 'तरुण', १९१९–
आंधी और चांदनी . दिल्ली, नेशनल प० हाउस, १९७५ . १२,१४० पृ० २२ सेमी० १५.०० (आधुनिक जीवन-शोध की मार्मिक कविताएं. कवि का तीसरा काव्य संग्रह)

शिवानी, १९२३–
वातायन . दिल्ली, राजपाल, १९७५ . १२२ पृ० १८ सेमी० ७.५० . (ये निबंध झांकियां हैं, केवल बाहरी नहीं, अंतर की भी। प्रथम बार स्वतंत्र भारत में प्रति सप्ताह प्रकाशित)

सुमंगल प्रकाश
जय-पराजय . नयी दिल्ली, भारतीय ज्ञानपीठ, १९७५ . ४०२ पृ० २२ सेमी० २६.०० (गांधीयुगीन राजनीतिक जागृति और उथल-पुथल की पृष्ठभूमि में लिखा उपन्यास)

हिरण्मय
कन्नड़ साहित्य सौरभ . दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, १९७५ . (कन्नड़ काव्य परंपरा का विवेचनात्मक अध्ययन)

●

साहित्य मंच

भारतीय हिंदी परिषद कालिकटमें २७वाँ अधिवेशन

२९ से ३१ दिसबंर को कालिकट विश्वविद्यालय में भारतीय हिंदी परिषद का अधिवेशन **डा० मलिक मोहम्मद की अध्यक्षता में** (विश्वविद्यालय में हिंदी विभागाध्यक्ष) संपन्न हुआ। उद्घाटन समारोह श्री **अनंत गोपाल शेवड़े की अध्यक्षता** में और कालिकट विश्वविद्यालय के उपकुलपति डा० एन० ए० नूर मुहम्मद के हिंदी में स्वागत भाषण से शुरू हुआ। केरल में परंपरा के अनुसार निलविलक्कु (विशेष प्रकार का दीपक) प्रज्ज्वलित कर उत्सव का आरंभ किया जाता है। दीपज्वलन के अनंतर उद्घाटन भाषण दिया श्री रमाप्रसन्न नाइक ने (**सचिव, राजभाषा विभाग–भारत सरकार**)। आपने स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम के संबंध में कई व्यावहारिक सुझाव दिये और परंपरागत अध्यापन परिपाटी की मुक्त समीक्षा की। इस सत्र का समापन हुआ प्रो० सुकुमारन अषीकोड़े के मलयालम भाषा में भाषण से। श्री सुकुमारन मलयालम के मान्य समीक्षक और विश्वविद्यालय के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपकुलपति हैं। इस भाषण का सार हिंदी में सुनाया गया। आपने बताया कि हिंदी को सर्वभारतीय भाषा बनाने के लिये हमें **सर्व भाषा सरस्वती** की कल्पना को प्रत्यक्ष करना होगा।

दूसरे दिन प्रातः गोष्ठी का विषय था: 'हिंदी भाषा और साहित्य को दक्षिण की देन'। इस विषय के वक्ता थे—डा० वी० पी० विजयन, प्रो० जी० सुंदर रेड्डी और डा० मलिक मोहम्मद। द्विपहर की गोष्ठी में जो परचे पढ़े गये उनके विषय थे—आदि और मध्यकालीन साहित्य; काव्यशास्त्र, पाठालोचन तथा भाषा विज्ञान; आधुनिक साहित्य एवं समकालीन साहित्य और आलोचना।

तीसरे दिन भी दो संगोष्ठियां आयोजित थीं। पहली संगोष्ठी में दक्षिण के विश्वविद्यालयों में हिंदी पाठ्यक्रम विषय था। इसमें भाग लेने वाले थे दक्षिण के विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक। डा० लक्ष्मीनारायण लाल ने दूसरी गोष्ठी का विषय उठाया—**हिंदी का वर्तमान सृजनात्मक लेखन तथा हिंदी अध्यापन।** इस भाषण में डा० लाल ने विभागाध्यक्षों की कुछ आलोचना की। डा० नामवर सिंह ने आधुनिक लेखन को पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने की कठिनाइयों का जिक्र किया। प्रो० इब्राहीम शरीफ ने कहा कि प्राध्यापक प्रायः सौंदर्य शास्त्र की दृष्टि से देखते हैं तथा लेखन के सामाजिक मूल्यों को भूल जाते हैं। आपने यह भी कहा कि हिंदी-प्राध्यापक प्रायः सिद्धांततः उर्दू को हिंदी की शैली बतलाते हैं किंतु पाठ्यक्रम में इनको नहीं लेते। श्री शोरिरिाजन ने लेखन और अध्यापन के संतुलन की बात उठाई जो बहुत समीचीन और सामयिक थी।

अंत में समापन समारोह में केंद्रीय हिंदी निदेशालय के निदेशक डा० हरवंश लाल ने हिंदी की उपलब्धियों का सिंहावलोकन किया। इस समारोह में उपराष्ट्रपति श्री जत्ती ने कहा कि अध्यापकों को चाहिये कि वे हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में बढ़ावा दें। धन्यवाद देने का कार्य संपन्न किया दिल्ली विश्वविद्यालय के वरिष्ठ प्रो० विजयेंद्र स्नातक ने। यह परिषद् भारतीय विश्वविद्यालयों के हिंदी विभागों का संगठन है तथा इसमें व्यावहारिक एवं व्यावसायिक समस्याओं की चर्चा होती रहती है।

इन सब कार्यकलापों के साथ-साथ २९ ता० की रात को ही एक सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। इस कार्यक्रम में दो कथायें कथकली द्वारा अभिनीत की गईं। इस नृत्य-कथा को संभवतः पहली बार अनेक हिंदी प्रदेशीय विद्वानों ने देखा और इससे केरल की सांस्कृतिक कला को समझने में सहायता मिली। दूसरे दिन की रात (३०-१२-७५) को भी भरत नाट्यम्, मोहिनियाट्टम्, कैकोट्टिक्कलि, बांसुरी वादन आदि कार्यक्रम आयोजित थे।

जामिया मिल्लिया में मानस

पिछले कई महीनों से रामकथा को लेकर देश भर में पर्याप्त ऊष्मा है। यों इस ऊष्मा का श्रेय उन इतिहासकारों को जाता है जो **राम की ऐतिहासिकता** की समस्या को सुलझाना चाहते हैं। इसे संयोग ही कहिये कि पिछले वर्षों में **रामचरितमानस** की चारसौवीं वर्षगांठ मनाई गई थी। स्वभावतः रामकथा के विचार के तीन आयाम हैं—ऐतिहासिक राम, काव्य ग्रंथों में रामकथा के विविध रूप और उपासना-लोक (धार्मिक) के राम। तुलसी के राम पिछले दो आयामों में ही व्याप्त हैं। ऐतिहासिक राम की खोज वाल्मीकि या उनसे भी पूर्ववर्ती सूत्रों में है। पुरातत्व-शास्त्री कहते हैं कि इतिहास का राम इन सूत्रों से भी—मिथक-लोक से भी नहीं मिलने का। इसे तो अयोध्या, चित्रकूट, लंका, रामेश्वरम्, विंध्याचल में कहीं से खोद कर ही प्रत्यक्ष किया जा सकता है।

इन सब समस्याओं से अलग जनवरी के अंतिम दिनों में **विश्वविद्यालय अनुदान आयोग** के सहयोग से **जामिया मिल्लिया इस्लामिया** के प्रांगण में **रामचरित मानस संगोष्ठी** आयोजित हुई। जा० मिल्लिया के हिंदी विभाग द्वारा आयोजित त्रिदिवसीय संगोष्ठी की छः बैठकों में से प्रथम और अंतिम तो औपचारिक अधिक थीं—यों इनमें भी कुछ समस्याओं के रूप उभरे थे। संगोष्ठी के विषय—मानस में सांस्कृतिक चेतना, मानस में लोकतत्व एवं तुलसी रामायण की प्रासंगिकता, थे। अपने स्वागत-भाषण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में प्रधानाचार्य जियाउल हसन फारुकी ने बतलाया कि मानस ने मुसलमानों के सामने भी इंसानियत की परंपराओं को खूबसूरती के साथ पेश किया है। उपकुलपति मासूम हुसैन खाँ ने कहा कि मुस्लिम औरतों के कुरान पाठ पर मानस का तर्ज़ देखा जाता है।

आगे चलकर तुलसी के काव्य में प्राप्त अंतर्विरोधों की पर्याप्त चर्चा हुई। ऐसी चर्चा तुलसी के संबंध में आम बात है। भाग लेने वाले रूसी **प्रो० चेलिशेव** ने अपने ढंग से स्पष्ट किया कि ताल्सताय का साहित्य भी अंतर्विरोधों का शिकार है। फिर भी लेनिन ने ताल्सताय के साहित्य को रूस का दर्पण कहा है। इसी संदर्भ में तुलसी साहित्य के (प्रगति और मिथक के वैज्ञानिक आधारों पर) अध्ययन-कर्त्ता **रमेश कुंतल-मेघ** ने बतलाया कि तुलसी ने मिथक और तत्कालीन चेतना को मिला कर आलेख प्रस्तुत किया है, और निराशा और त्रासदी के मध्य कलियुग से लेकर सतयुग तक का चित्र उपस्थित किया है। धार्मिक चेतना तो उस समय की प्रधान चेतना थी। अतः तुलसी को धर्मचेतना से अनुप्राणित लोककवि कहना अधिक समीचीन होगा।

दूसरी गोष्ठी में श्री **चंचल चौहान** ने अपने पठित लेख में तुलसी को रूढ़िवादी, सेवकसेव्य संबंधों के पोषक, भाग्यवाद के समर्थक, तर्क-संबंध विरोधी, निंदा विरोधी और दासका का आदर्शीकरण करनेवाला कवि कहा। स्वभावतः इस संगोष्ठी में पर्याप्त गर्मी रही। भाग लेने वालों में प्रमुख थे राधेश्याम पाठक, जोगेंद्र, सोज़, घनश्याम मिश्र। इस गोष्ठी के अध्यक्ष थे तुलसी साहित्य के पंडित डा० उदयभानु सिंह।

डा० माहेश्वर की अध्यक्षता में तीसरी संगोष्ठी हुई। वक्ता थे प्रो० गोवर्धननाथ शुक्ल, डा० सावित्री शोभा, डा० निर्मला जैन और डा० कुँवरपाल सिंह। निबंध इन विषयों पर थे—तुलसी का सामाजिक परिवेश, तुलसी की सामाजिकता, चौथी संगोष्ठी डा० स्नातक की अध्यक्षता में हुई। लेख पढ़े राधेश्याम पाठक और डा० विश्वनाथ त्रिपाठी ने। डा० त्रिपाठी ने अपने निबंध में प्रश्न किया कि संपूर्ण मध्यकाल में तुलसी के अतिरिक्त अकाल, महामारी, और स्त्री अशिक्षा और पेट की आग की बात कितने की? अध्यक्ष ने भी अपना निबंध पढ़ा। इस संगोष्ठी में भी आरंभ से अंत तक रोचकता बनी रही।

समापन संगोष्ठी डा० नामवर सिंह के भाषण से हुई। आपने बतलाया कि रामकथा का ऐतिहासिक विकासक्रम बहुत रोचक है, और कहा कि इस कथा के शिल्पियों की अपनी आवश्यकताएं थीं। इन आवश्यकताओं ने कुछ परिणामों को जन्म दिया। अंततोगत्वा यह परिणाम विवाद बने। जमिया मिल्लिया के इतिहास विभाग के प्रो० अजहर अंसारी आदि ने भी इस बहस में हिस्सा लिया। इस संगोष्ठी में पं० सुधाकर पांडेय ने समापन भाषण दिया।

नयी जानकारी की दृष्टि से इस संगोष्ठी में डा० कबीर अहमद जायसी की सूचनायें महत्व की थीं। आपने उर्दू और फारसी की लगभग २५ रामयणों की सूचनायें दीं। आपने जहांगीरकालीन **मसीह रामायण** का भी विस्तृत परिचय दिया। आपने बतलाया कि **मसीह** का चरित्र-चित्रण मौलिक तो है ही, एक विशेषता और है—वह यह कि इस रामायण के राम, सीता आदि अधिक लौकिक हैं। धोबी-प्रवाद इसमें नहीं। सीता ने रावण का चित्र बनाया था। बस, राजा को खबर हुई और सीता को बनवास।

भोपाल में रामायण संगोष्ठी

मध्यप्रदेश में रामगिरि, चित्रकूट, लंका आदि स्थानों का पता लगाने का अत्यंत उर्वर क्षेत्र है। यदि राम उत्तर से (अयोध्या से) दक्षिण की ओर चले तो मध्यप्रदेश के मार्ग से जान की ही संभावना बनती है। अतः म० प्र० प्रशासन पुरातत्व विभाग ने चार दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन कर (२१ से २४ फरवरी), पुनः रामायण की ऐतिहासिकता या कुछ रामायणकालीन स्थानों का स्थान निश्चित करने का अवसर दिया। २२ फरवरी को डा० ह० धी० सांकलिया ने इस बार **लंका की खोज** के संबंध में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि लंका दक्षिण भारत में नहीं, कहीं दक्षिण-पूर्व मध्यप्रदेश में, या कहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उड़ीसा या आंध्र क्षेत्र में थी। आपने बतलाया कि जबलपुर के पास इंद्राना पहाड़ियों में भी लंका के होने की संभावना नहीं। वहां साल के बन थे और न हैं। इस संदर्भ में वह अमर कंटक से बस्तर तक की यात्रा करने की योजना बना चुके हैं। आपके विचार से रामायण ८०० ई० पू० की रचना नहीं है, यों लोककथा के रूप में इसका अस्तित्व १२००-१५०० ई० पू० हो सकता है।

डा० प्रभुदयाल अग्निहोत्री और पटना विश्वविद्यालय के पुरातत्व विभाग के अध्यक्ष डा० बी० पी० सिन्हा ने भी विचार प्रकट किये। डा० सिन्हा का मत है कि रामायण में भौगोलिक ज्ञान की परधि काफी विस्तृत है। राम दक्षिण भारत क्यों नहीं जा सकते थे? डा० अग्निहोत्री ने कहा कि मात्र अधूरे पुरातत्वीय ज्ञान के आधार पर परंपरा से प्राप्त विश्वासों पर आक्रमण करना ठीक नहीं है। कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रो० ए० के० चटर्जी ने बतलाया कि रामायण का उत्तरकांड भी विमल सूरि और अश्वघोष की रचनाओं से पूर्व की रचना है। आपकी मान्यता है कि रामायण और महाभारत की रचना भी उज्जयिनी पाटलिपुत्र के विस्तार और स्थापना से पूर्व हो चुकी थी तथा राम भी दक्षिण उसी मार्ग से गये होंगे जिस मार्ग से समुद्रगुप्त अपनी दिग्विजय के लिये निकले थे। डा० चटर्जी ने डा० सुनीतिकुमार चटर्जी के इस मत का भी खंडन किया कि रामायण दशरथ जातक से प्रभावित है। आपने कहा कि पालि और जैन साहित्य में दोनों महाकाव्यों की जानकारी के प्रमाण मिलते हैं। आपने दशरथ जातक को मात्र उत्तरकांड का संक्षिप्त संस्करण बतलाया और कहा कि यह जातक भावना के स्तर पर वैदिक साहित्य से अधिक प्रभावित ज्ञात होता है, इससे अधिक कुछ नहीं। इतना तो मानना ही होगा कि रामायण लेखन के समय राम पौराणिक पुरुष अवश्य बन गये थे।

श्री सुंदरलाल त्रिपाठी ने, जो वर्षों से प्रायः रामायणकालीन भारत और दंडकारण्य का ही अध्ययन कर रहे हैं तथा आपने बस्तरनिवास के कारण अधिकांश स्थानों का स्वयं निरीक्षण भी किया है—कहा कि अरण्यकांड और अयोध्याकांड में वर्णित चित्रकूट दो चित्रकूटों का संकेत करते हैं। आपने कहा कि राम-भरत मिलन वाला चित्रकूट मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश के संधिस्थल पर है। यह प्रथम चित्रकूट है। अरण्यकांड का चित्रकूट बस्तर जिले में इंद्रावती नदी के तीर पर है। श्री त्रिपाठी की मान्यता है कि विभिन्न आश्रमों, दंडकारण्य और पंचवटी आदि के वर्णन से लगता है कि आदिवासियों के मध्य इंद्रवती के तट का चित्रकूट ही रामायण का चित्रकूट है। आज की इंद्रावती उस समय की मंदाकिनी हो सकती है। आपने कोरापुट (उड़ीसा) जिले में रामगिरि को ही रामायणकालीन **रामगिरि** माना है, नागपुर के निकट के **रामटेक** को नहीं। इसी प्रकार पंचवटी भी गोदावरी के तट पर थी, यह नासिक में कैसे होगी? डा० वी० वी० लाल ने पुनः दुहराया कि महाभारत युद्ध ९०० ई० पू० में हुआ था और इसके लिये आपने प्रमाण भी पुरातत्व के स्रोतों से दिये।

चौथे दिन (२४ फरवरी) संगोष्ठी में पुरातत्वशास्त्री, इतिहासकार और रामायण के अध्येतागण कई महत्वपूर्ण बातों पर एकमत दीख पड़े। डा० बी० के० सिन्हा (पटना) ने इस समापन समारोह की अध्यक्षता की ओर कहा कि रामायण की सब बातों को मात्र कल्पना प्रसूत मानकर चलना भूल होगी। इतिहासकार को इन दोनों महाकाव्यों के ऐतिहासिक आधार की खोज करते रहना होगा। संगोष्ठी में भाग लेने वाले विद्वान इस स्थापना पर भी एकमत थे कि रामायण महाभारत से पूर्व की रचना है। इस संदर्भ में डा० चटर्जी ने बतलाया कि इन महाकाव्यों में साकेत और कौशांबी की चर्चा है। इनका उल्लेख महावीर और गौतम बुद्ध से पूर्व भी प्राप्त था। अतः आर्य-अनार्य संस्कृतियों के सहअस्तित्व को अस्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। डा० सांकलिया का आग्रह था कि रामायण-महाभारत के काल-निर्णय में नक्षत्रशास्त्र का सहारा भी लिया जाना चाहिए।

विगतकाल (२३ फरवरी) प्रो० वी० वी० लाल ने कहा कि इस स्थापना के लिये कि महाभारत का युद्ध ईसा से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९०० वर्ष पूर्व हुआ था, कई परिस्थिति निर्देशक प्रमाण मिले हैं। आपने अपने विचारों की पुष्टि में तीन पुरातत्वीय प्रमाण दिये। पालिश किए हुए रंगीन मृत्तिका भांड उन सब स्थानों पर मिले हैं जिनका संबंध महाभारतकालीन स्थानों से बतलाया जाता है। यह सभ्यता ७ से १० वीं ई० पू० तक फैली हुई थी। दूसरा प्रमाण : कौशांबी के उत्खन में ऐसे रंगीन भांड (मृत्तिका) मिले हैं जो कला की दृष्टि से हलके पड़ते हैं–पतनशील सभ्यता के प्रतीक। इन मिट्टी के बर्तनों का संबंध कौशांबी और हस्तिनापुर के मेल में है। इस पतनशील मृत्तिका भांड शैली से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि गंगा की बाढ़ से हस्तिनापुर के विनाश के बाद पांडवों ने राजनगरी अन्यत्र हटा दी थी। तृतीय पुरातत्वीय उत्खनन से भी हस्तिनापुर में बाढ़ की पुष्टि होती है। इस प्रकार प्रो० लाल का कहना है कि महाभारत का काल-निर्धारण करने में उन्होंने साहित्य एवं पुरातत्व दोनों स्रोतों से काम लिया है।

दिल्ली में द्वितीय पुस्तक-मेला

नई दिल्ली में प्रथम **विश्वपुस्तक मेला** १९७३ के मार्च में हुआ था और उन्हीं **दिनों प्रथम विश्व संस्कृत सम्मेलन** और अखिल भारतीय **ग्रंथालय संमेलन** भी आयोजित थे। प्रथम आयोजनों का उफान ही कुछ और होता है, अतः यह मेला आकार-प्रकार में विराट था। जनवरी १९७६ (१६-२५ जनवरी) में मथुरा रोड पर स्थायी रूप से निर्मित प्रदर्शनी मैदान में द्वितीय विश्वपुस्तक मेला लगा। पहली प्रदर्शनी (१९७२) में यूनेस्को का सहयोग था तो इस बार की द्वितीय प्रदर्शनी में **नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली,** अगुआ बन कर सामने आया।

राष्ट्रीय पुस्तक प्रदर्शनी : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास ने भारत की प्रमुख भाषाओं की ५०० चुनी हुई पुस्तकों की प्रदर्शनी पृथक् से की। निःसंदेह इस प्रकार की प्रदर्शनी के अभाव में इस विश्व पुस्तक मेला का कुछ अर्थ ही न था। पुस्तकों का चुनाव सामान्यतः अच्छा था। प्रदर्शनी कर यह और भी अच्छा बनाया जा सकता था। इस खंड में १९७४-७५ तक प्रकाशन प्रदर्शित थे। संभवतः इन पुस्तकों की कोई सूची उपलब्ध नहीं थी, मुद्रित सूची। कोई सूची तो अवश्य बनाई गई होगी।

मेले का उद्घाटन १६ जनवरी के ४ बजे केंद्रीय शिक्षा मंत्री **प्रो० नूरुल हसन** ने किया और स्वागत किया राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष **सर्वपल्ली गोपाल ने**। इस मेले में लगभग १७० भारतीय प्रकाशकों की दुकानें थीं। यों अनेक राज्य सरकारों ने भी अपने पंडाल लगाये थे। इनमें प्रमुख थे असम, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा, उत्तरप्रदेश, केरल, जम्मू-कश्मीर, तमिलनाडु, पंजाब, बंगाल और महाराष्ट्र। अन्य सरकारी और अर्धसरकारी संस्थाओं ने भी अपनी दुकानें लगाई थीं। भारत सरकार का प्रकाशन विभाग, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, साहित्य अकादमी (नई दिल्ली), विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने भी अपने प्रकाशन प्रस्तुत किए थे। मध्यप्रदेश ने तो अपने शीर्ष लेखकों के चित्र भी लगाये थे।

विदेशी प्रकाशकों में प्रमुख थे ब्रिटेन, अमेरिका, सोवियत संघ, पूर्व और पश्चिमी जर्मनी, चेकोस्लोवाकिया, पाकिस्तान, सिंगापुर, यूगोस्लाविया, बलगारिया, फ्रांस, जापान, मलयेशिया, कीनिया, बंगलादेश, श्रीलंका, हालैंड, ईरान और ईराक।

भारत और पुस्तक मेला : पुस्तक-मेला का इतिहास बहुत पुराना है। जर्मनी के फ्रैंकफुर्ट नगर में (प्रसिद्ध जर्मन कवि और विचारक गोइथे की जन्मभूमि) यह मेला शुरू किया गया था। यूरोप का सबसे बड़ा पुस्तक मेला अब भी यहाँ प्रति वर्ष लगता है। माना जाता है कि पोथियों की संख्या की दृष्टि से (हस्तलिखित) आज भी भारत अग्रणी है। किंतु आज के विज्ञान के युग में, कागज, मुद्रण, जिल्द बंधाई की कला में भारत कितना आगे है? यदि ७५ प्रतिशत अपढ़ लोगों को छोड़ दिया जाय तो प्रकाशन की स्थिति अधिक सोचनीय नहीं है। भारतीय भाषाओं के प्रकाशन अधिक नहीं बिकते। **राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, साहित्य अकादमी** और विश्वविद्यालय स्तर की पुस्तकों के प्रकाशक (जो विभिन्न राज्यों में कार्यरत हैं) **हिंदी ग्रंथ अकादमयों** में बेशुमार प्रकाशन पड़े है। यह कि प्रकाशन अधिक और पाठक एवं खरीदने वालों की संख्या पर्याप्त कम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इधर कलकत्ता में भी मार्च के पूर्वार्ध में पुस्तक मेला लगा। **राष्ट्रीय पुस्तक न्यास** ने यहाँ भी भारतीय भाषाओं में प्रकाशित (वही १९७४-७५ में प्रकाशित पुस्तकें) ग्रंथ प्रदर्शित किये। इस मेले में यह स्वभाविक ही था कि बंगला प्रकाशकों के स्टाल अधिक हों। विक्टोरिया मेमोरियल और बिड़ला प्लेनेटोरियम के बीच के मैदान में यह मेला काफी व्यस्त और उत्साहपूर्ण था। मेले के अंतिम दिन (१४ मार्च) तो आशातीत भीड़ थी। बिक्री भी थी। कुछ नये-पुराने प्रकाशन तो ४०।५० प्रतिशत छूट पर उपलब्ध थे। कलकत्ता के सामान्य नागरिक का पुस्तक-प्रेम यहां देखने को मिलता था। क्या लेखक, क्या बच्चे और क्या विद्यार्थीवर्ग। सब कोई पुस्तकें देखने-समझने या खरीदने के लिये उत्सुक थे।

दिल्ली में पुस्तक-मेला के अवसर पर अखबारों ने और **दिनमान** ने **विश्वपुस्तक मेला परिशिष्ट** प्रकाशित किया। मेले के महत्व और दायित्व, विदेशों में भारतीय पुस्तकें, हिंदी देश और विदेश में, रा० शै० अ० प्र० परिषद का योगदान, हिंदी प्रकाशन बिकते क्यों नहीं, साहित्य अकादमी उद्देश्य और प्रकाशन, आदि लेखों द्वारा **दिनमान** ने सामान्य पाठकों को काम की जानकारी दी।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास को अलग अलग क्षेत्रों में अपने अपने ढंग से देखा जाता रहा है। शायद यह भी सत्य है कि इसके प्रकाशनों ने अपेक्षित जागरण उपस्थित नहीं किया। किंतु पिछले दस वर्षों से इस संस्था ने अनेक प्रदर्शनियां लखनऊ, बंबई, मद्रास, कलकत्ता आदि नगरों में आयोजित की तथा **विश्व पुस्तक मेला** में भी इसका योगदान उल्लेखनीय है। न्यास ने भारत में पुस्तक मेला का वातावरण अवश्य पैदा किया है।

संदर्भ भारती : प्रकाशन विवरण

१.	पत्रिका का नाम	संदर्भ भारती
२.	पंजीकृत संख्या	आर० एन० २७१४६।७५
३.	पत्रिका प्रकाशन की भाषा	हिंदी
४.	प्रकाशन का कालक्रम	द्वैमासिक (फरवरी, अप्रैल, जून, अगस्त, अक्तूबर और दिसंबर महीनों के प्रथम सप्ताह में प्रकाशित)
५.	पत्रिका का मूल्य	छः रुपये वार्षिक
६.	प्रकाशक का नाम	श्री परमानंद चूड़ीवाल
	जातीयता	भारतीय
	पता	९ कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७
७.	मुद्रक का नाम	परमानंद चूड़ीवाल
	जातीयता	भारतीय
	पता	९ कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७
८.	संपादक का नाम	श्री कृष्णाचार्य
	जातीयता	भारतीय
	पता	९ कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७
९.	मुद्रण-स्थल का विवरण	मिश्रा एंड कंपनी, १२ ग्रांट लेन, कलकत्ता-१२
१०.	प्रकाशन स्थान	९ कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकीय

संमतियां

संदर्भ भारती का प्रवेशांक पाकर खुशी हुई। इसमें जो सूचनायें हैं वह उपयोगी हैं। अगले अंकों के लिये कोटि-कोटि शुभ-कामनायें।

—डा० कामिल बुल्के, रांची

संदर्भ भारती की बहुमुखी प्रगति के लिए एक निष्ठामय प्रयास का मैं हृदय से स्वागत करता हूं।

—गोवर्धनाथ शुक्ल, अध्यक्ष, हिंदी विभाग, अलीगढ़ विश्वविद्यालय।

संदर्भ भारती के अक्टूबर अंक के लिये धन्यवाद। आपके प्रयत्नों की सफलता की कामना करता हूं।

—जी० शंकर कुरप, कोचिन (केरल)

संदर्भ भारती का प्रवेशांक मिला। बहुत सुंदर प्रयास है। निश्चय ही हिंदी में इस इस प्रकार की अन्य कोई पत्रिका नहीं है। मेरी हार्दिक बधाई।

—डा० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश', प्रो०—उदयपुर विश्वविद्यालय, उदयपुर।

आपकी पत्रिका 'सन्दर्भ भारती' मिली। यह मुझे बहुत ही सुंदर और उपयोगी लगी। आशा करता हूं कि यह भारतीय भाषाओं का समन्वय मंच ही नहीं, बल्कि उनकी सृजनात्मक प्रवृत्तियों का दर्पण भी बनेगा। भाषा और साहित्य एकता के साधन हैं, और एकता की आवश्यकता है। इसलिये 'सन्दर्भ भारती' जैसे पत्रों की भी आवश्यकता है। मेरी बधाई स्वीकार करें।

—ए० रमेश चौधरी (आरिगपूडि)

पत्रिका का दूसरा अंक देख कर परम सुख मिला। बड़ी ही योग्यता और क्षमता के साथ आपने इसके २४ पृष्ठों में 'गागर में सागर' भरने का प्रयास किया है। इसके लिए मेरी बधाई स्वीकार करें। साथ ही यह भी प्रार्थना करना चाहूंगा कि आप कृपा कर इसका पहला अंक अवश्य भेज दें।

—काशीनाथ उपाध्याय 'भ्रमर', सचिव, हिंदी समिति, उत्तर प्रदेश शासन, लखनऊ

संदर्भ भारती का दिसंबर ७५ का अंक मिला। धन्यवाद। हिंदी में एक अभाव की पूर्ति करने वाली पत्रिका है। इसकी हिंदी में बड़ी आवश्यकता थी। संपादन की तरह ही छपाई भी सुंदर है। बधाई।

—श्री वेंकटलाल ओझा, हिंदी समाचार पत्र संग्रहालय, कसारहट्टा रोड, हैदराबाद।

पिछले दिनों संदर्भ भारती का दूसरा अंक प्राप्त हुआ। भारतीय भाषा परिषद का यह प्रयत्न और इसका उद्देश्य बहुत ही महत्वपूर्ण और प्रशंसनीय है। काफी देर से ऐसे पत्र की आवश्यकता थी।

—हजारा सिंह, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला।

संदर्भ भारती का प्रथम अंक देखने को मिला। पत्रिका के उद्देश्य इतने रचनात्मक हैं कि इनकी पूर्ति के महान उद्देश्य से आपने **संदर्भ भारती** की जो परिकल्पना की है वह निश्चय ही प्रशंसनीय है। आज के संदर्भ में ऐसी पत्रिका की नितांत आवश्यकता थी... आप हिंदी भाषा के माध्यम से सभी भाषाओं के साहित्य व वहां की साहित्यिक गतिविधियों से पाठक को परिचय कराना चाहते हैं। वास्तव में यह एक दुस्तर कार्य है। फिर भी आपके इस प्रयास के प्रति मैं बधाई देता हूं।

—तिप्पय स्वामी, मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर।

संदर्भ भारती का प्रथमांक मिला। बहुत सुंदर प्रकार से तैयार किया गया है। उपादेय सामग्री संपन्न भी है। आपके स्तुत्य प्रयास के लिए साधुवाद।

—र० शौरिराजन, प्रबंध संपादक, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास।

संदर्भ भारती का प्रथम अंक पढ़ कर बहुत प्रसन्नता हुई। परिषद् ने यह पहला काम किया है जो वास्तव में भारतीय भाषा-भाषियों के लिए स्थायी महत्व का कार्य सिद्ध होगा। आवश्यकता है इसके कलेवर में पर्याप्त वृद्धि की। —पृथ्वीनाथ शास्त्री, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिषद वार्त्ता

उर्दू साहित्य संगोष्ठी

उर्दू साहित्य संगोष्ठी : भारतीय संस्कृति संसद के सभागार में २१ फरवरी, शनिवार को उर्दू संगोष्ठी सायं छः बजे आयोजित थी। कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्राध्यापक श्री जनाब ज़फर उगानवी ने आधुनिक उर्दू की वर्तमान स्थिति और विकास पर अपना लिखित भाषण पढ़ा। निबंध में मूलतः चर्चा उर्दू शायरी पर थी, अन्य साहित्य विधाओं का संदर्भ प्रवंगवश ही था।

पुनः जनाब एज़ाज अफज़ल, जनाब खलिफ अब्दुल्ला और जनाब हबीब हाशमी ने कविता पाठ द्वारा आज की उर्दू शायरी के प्रतिनिधि नमूने (जो स्वयं रचित थे) प्रस्तुत किये। साहित्य-प्रेमी और साहित्यिक श्रोताओं ने इन कविताओं के मार्मिक रचना विधान को सराहा। इस अवसर पर पर्याप्त श्रोता उपस्थित थे और वे अंत तक उर्दू साहित्य के आज के दौर और कविता का रसास्वादन करते रहे।

इस गोष्ठी की अध्यक्षता फारसी और उर्दू के प्रसिद्ध विद्वान प्रो० हीरालाल चोपड़ा ने की तथा श्रोताओं की जिज्ञासाओं का समाधान अपनी निजी और प्रत्यक्ष जानकारी के आधार पर प्रामाणिक और प्रभावशाली ढंग से किया।

आवश्यक सूचना

संदर्भ-भारती : इस मार्च (१९७६) को परिषद ने अपनी संस्था के उद्घाटन समारोह (मार्च १९७५) के बाद प्रथम वर्ष संपन्न किया। इस बीच परिषद ने **संदर्भ भारती** के तीन अंक (अक्टूबर, दिसंबर और १९७६ में फरवरी अंक) प्रकाशित किये। यह हमारे लिये संतोष का विषय है कि विभिन्न क्षेत्रों में (विश्वविद्यालयों, प्रकाशकों और लेखकों के मध्य) इस पत्रिका का स्वागत किया गया है और यह अनुभव किया गया कि इस प्रकार की भारतीय भाषा-साहित्यों के संदर्भों से जुड़ी पत्रिका की आवश्यकता थी, विशेकर इस संदर्भ में कि संभवतः हिंदी भाषा का यह दायित्व भी है कि उसके माध्यम से भारतीय साहित्यों की चर्चा अधिकाधिक हो। इस द्वैमासिक पत्रिका का वार्षिक चंदा मात्र छः रु० है। यह चंदा पत्रिका के प्रकाशन-व्यय कम है। किंतु हम आशा करते हैं कि साहित्यकारों, शोध-संस्थानों से प्रोत्साहन मिलेगा तथा ग्राहकों का उत्साह हमारे घाटे को अवश्य पाट देगा।

परिषद का स्थानांतरण

परिषद का कार्यालय फरवरी १९७६ तक भारतीय संस्कृति संसद के भवन में अवस्थित था। संसद का सभागार परिषद के लिये सदैव प्रस्तुत रहा है। संसद के अधिकारीगण से लेकर कर्मचारियों तक का सहयोग-स्नेह परिषद के लिये सदैव प्रेरणा और कृतज्ञता का स्मरण-केंद्र रहेगा।

आवश्यक स्थान के अभाव में कई विधाओं में परिषद क्रियाशील नहीं हो पा रही थी। अब परिषद का कार्यालय **९ कैमक स्ट्रीट (इंडस्ट्री हाउस के बगल में) कलकत्ता-१७ में** स्थापित हो गया है। **संदर्भ-भारती** के पाठकों, संगोष्ठी में रस लेने वाले साहित्यकारों और साहित्य प्रेमियों से निवेदन है कि वह अब **९ कैमक स्ट्रीट में** स्थित कार्यालय से संपर्क स्थापित करें और पत्राचार भी इसी पते पर करें।

पुस्तकालय और वाचनालय का शुभारंभ :

नये कार्यालय में परिषद् अपने **संदर्भ पुस्तकालय** का विकास करने के लिये प्रयत्नशील है। अप्रैल मास से परिषद् का **वाचनालय** और **पुस्तकालय** प्रबुद्ध और शोधकार्य में रुचि रखने वाले अध्येता पाठकों के लिये सायंकाल ५ से ७ बजे तक खुला रहेगा। वाचनालय में भारत की प्रमुख भाषाओं की चुनी हुई उच्चस्तरीय पत्रिकाओं की व्यवस्था की गई है। पुस्तकालय में प्रमुख भारतीय भाषाओं के संदर्भ ग्रंथों, गौरव-ग्रंथों (क्लासिकल साहित्य) और उच्च कोटि के समसामयिक ग्रंथों की व्यवस्था की जा रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औद्योगिक प्रतिष्ठान

सुमधुर स्वर तुल्य हैं। स्वर में ध्वनियोंका समूह मात्र नहीं होता, वे उनके पारस्परिक सामंजस्य और समन्वय के प्रतीक हैं।

इंडिया कार्बन लिमिटेड

६, ओल्ड पोस्ट आफिस स्ट्रीट,
कलकत्ता-७००००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजीयन–आर० एन० २७१४६/७५

भारतीय भाषा परिषद

भारतीय भाषा परिषद, ९ कैमेक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७
के लिये श्री परमानंद चूड़ीवाल द्वारा प्रकाशित एवं
मिश्रा एण्ड कं०, १२ ग्रांट लेन कलकत्ता-१२ से मुद्रित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

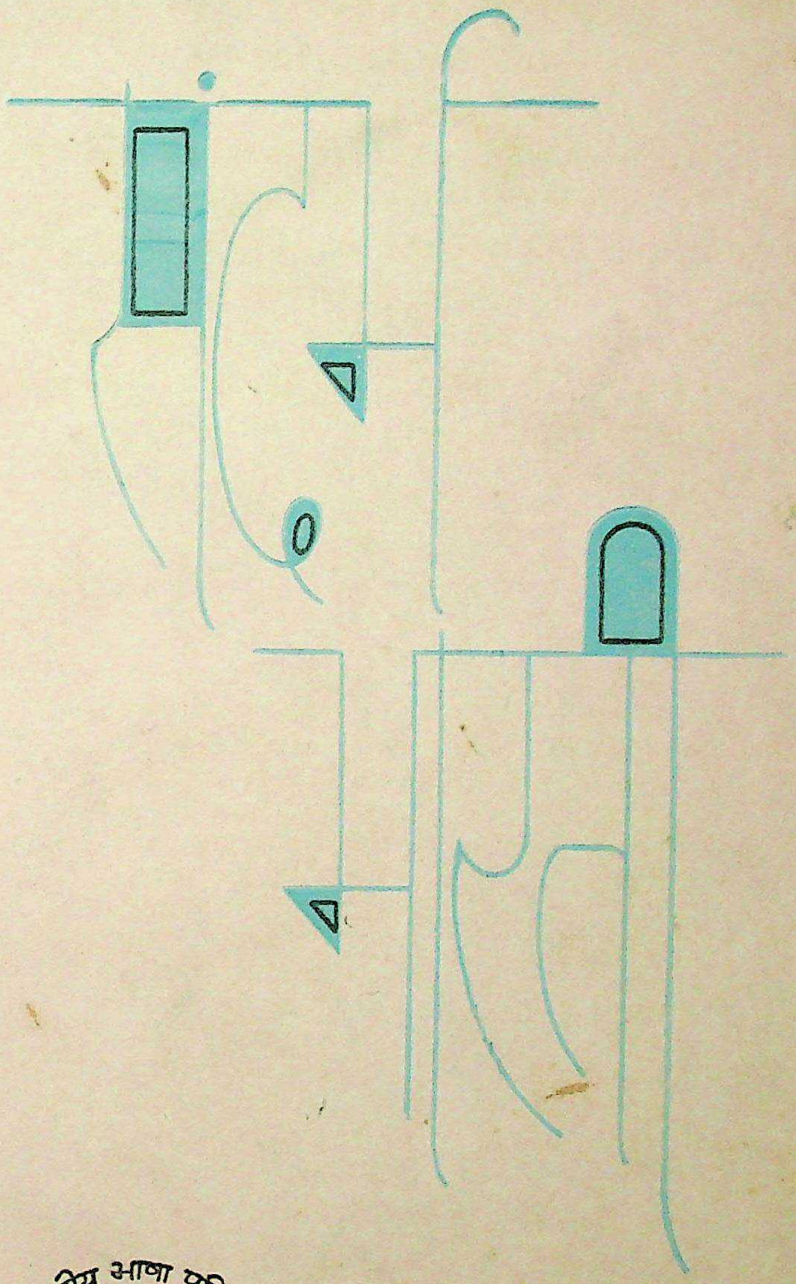

अक्तूबर
१९७६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय भाषा परिषद् के उद्देश्य

- भारतीय भाषाओं में पारस्परिक सहयोग-सौहार्द ।
- भारतीय भाषा-साहित्य की विलुप्त राशि की खोज और शोध ।
- विशिष्ट विषयों पर भारतीय विद्वानों की वक्तृतायें और उनका प्रकाशन ।
- भारतीय भाषाओं के मौलिक एवं अनूदित ग्रंथों का प्रकाशन ।
- भारतीय भाषाओं और अंतरराष्ट्रीय महत्व के संदर्भ ग्रन्थों का अनुवाद ।
- उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पत्रिका-प्रकाशन ।
- उपर्युक्त उद्देश्यों पूर्ति के लिए प्रेक्षागार, संदर्भ पुस्तकालय, वाचनालय, प्रकाशन विभाग, शोधकर्त्ताओं एवं साहित्यकारों के लिये शोधकक्षों और साहित्यकार-आवास की व्यवस्था ।

परामर्श मंडल

अंग्रेजी	:	श्री शमीक बनर्जी, कलकत्ता
असमिया	:	श्री बीरेन्द्र भट्टाचार्य, गुवाहाटी
उड़िया	:	डा० गोपालचंद्र मिश्र
कन्नड़	:	डा० मे० राजेश्वरय्या, मैसूर
कश्मीरी	:	डा० शिब्बन कृष्ण रैणा, पटियाला
गुजराती	:	श्री गुलाबदास ब्रोकर, बंबई
तमिल	:	श्री र० शौरिराजन मद्रास
तेलुगु	:	श्री बालशौरि रेड्डी, मद्रास
पंजाबी	:	डा० हरभजन सिंह, दिल्ली
बंगला	:	प्रो० अलोकरंजन दासगुप्त
मणिपुरी	:	श्री नीलकंठ सिंह, इंफल
मराठी	:	प्रो० वसंत बापट, बंबई
मलयालम	:	डा० एम० मलिक मोहम्मद, कालीकट
संस्कृत	:	डा० विद्यानिवास मिश्र, वाराणसी
सिंधी	:	डा० मोतीलाल जोतवाणी, दिल्ली
हिंदी	:	डा० प्रभाकर माचवे, बंबई

संपादक
कृष्णाचार्य

पत्राचार के लिए :– संपादक, संदर्भ भारती, भारतीय भाषा परिषद
९, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्व भाषा सरस्वती

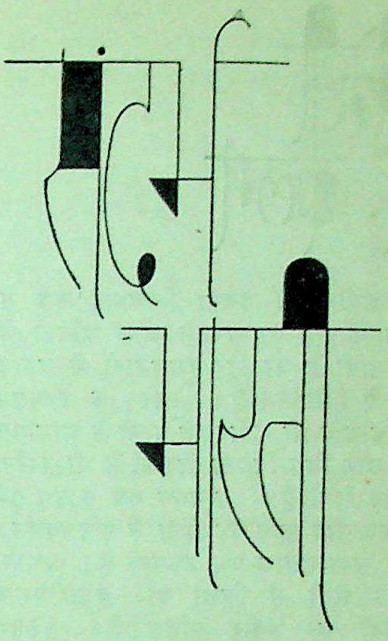

वर्ष २ : अंक ५
अक्तूबर १९७६

विदेशी कलम
कबीर : चा० वादविल २

पुस्तक समीक्षा
विवेकानन्द ३
थोड़ां आंसु : थोड़ां फूल ४
उक्ति विशेष ६
मैंने स्मृति के दीप जलाए ७

विशिष्ट प्रकाशन
अंग्रेजी, असमीया, उर्दू, गुजराती,
तमिल, पंजाबी, बंगला, मराठी,
मलयालम, संस्कृत, हिंदी ९–१३

अनुसंधान
अंग्रेजी, तमिल, मराठी, हिंदी १४–१५

सहधर्मी-चर्चा
बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद् १६

साहित्य-मंच
द्वितीय विश्व हिंदी संमेलन १८
शरच्चंद्र : उत्सव शृंखला २०
ज्ञानपीठ पुरस्कार : अखिलंदम् २०
महाकवि उल्लूर लघु कन्नड़ कोश २०

परिषद वार्ता
भारतीय भाषा ग्रंथालय : उद्घाटन २१

श्रद्धांजलि २३

द्वैमासिक पत्रिका
वार्षिक : ६.००
एक अंक : १.००

भारतीय भाषा परिषद
९ कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

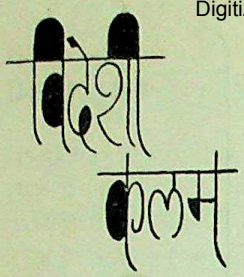

कबीर : शार्लोत वादविल

कबीर की गणना निर्विवाद रूप से हिंदी के ऐसे रहस्यवादी श्रेष्ठ कवियों में की जाती है जो हिंदू-मुसलमानों में समान रूप से प्रतिष्ठित हैं। भारत के उच्चतम लेखक-कवि भी कबीर की वाणी से आकर्षित हुए और जिसे विदेशी लेखकों ने भी पर्याप्त महत्व दिया है। सामान्य रूप से इस पूर्व मध्यकालीय कवि पर हिंदी में परिचयात्मक और समीक्षात्मक ग्रंथ उपलब्ध हैं। प्रभाववादी शैली में लिखा डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी का **कबीर** प्रसिद्ध है। १९१० ई० में आचार्य क्षितिमोहन सेन ने तीन भागों में कबीर का संपादन किया था और कबीर के पदों का संपादन १९२० ई० में किया।

इधर शार्लोत वादविल ने, जो हिंदी लेखकों में अच्छी तरह से जानी-मानी लेखिका हैं, कबीर पर अंग्रेजी में **कबीर** पुस्तक लिखकर प्राथमिक रूप से पश्चिमी देशों के लेखकों के लिये अमित अर्थपूर्णता का काम किया है। संकेत किया जा चुका है कि अंग्रेजी में **वेस्टकोट, केई** आदि ने कबीर पर लिखा है। किंतु इन लेखकों की जिज्ञासा भारतीय लेखकों की तलाश तक सीमित थी, या ईसाइयत से तुलना के स्तर पर लिखा गया। साहित्यिक स्तर पर, या पुनः पांडित्यपूर्ण प्रामाणिकता के स्तर पर विदेशी लेखकों की पुस्तकें वादविल से काफी पीछे छूट गई हैं।

लेखिका ने पुस्तक के प्रथम भाग में, कबीर की खोज, कबीर की जीवनी, कबीर की वाणी (भाषा, शैली, समीक्षात्मक काव्य-संकलन और अंग्रेजी अनुवादों की चर्चा), कबीर : उसका युग (जुलाहा, बौद्ध, नाथपंथियों का परिवेश), उत्तरी भारत के सूफी, उत्तर भारत का संतमत: शैव और वैष्णव मत, एवं कबीर और रामानंद-विभागों में विस्तृत चर्चा की है। कबीर की खोज संबंधी पिछले सब प्रयत्नों की छानबीन करने के अनंतर ही यह पुस्तक लिखी गई है। ना० प्र० सभा द्वारा प्रकाशित **कबीर ग्रंथावली** (१९२८) के अलावा इस अध्ययनकर्त्ता के आगे माताप्रसाद गुप्त और पारसनाथ तिवारी कृत और अपेक्षाकृत अच्छे संस्करण –क्रमशः १९६९ और १९६१ में प्रकाशित–भी हैं।

पुस्तक के आरंभ में उचित ही कहा गया है कि **भारत के धार्मिक इतिहास में कबीर का स्थान अनुपम है : हिंदू उसे वैष्णभक्त, मुसलमान पीर, सिख भगत, कबीरपंथी उसे अवतार मानते हैं। आधुनिक देशभक्तों के लिये कबीर हिंदू-मुसलमानों की एकता का अग्रदूत है, नवीन वेदांतियों के लिये वह मनुष्य के सार्वभौमिक धर्म के उद्बोधक थे। कबीर रुढ़िवादिता और कर्मकांड के और मुसलमान परंपरा में चले आते अहं और कट्टर इस्लाम के विरोधी थे। आज के प्रगतिवादी क्षेत्रों में कबीर समाज सुधारक, जातिवाद के विरोधी, क्रांतिकारी, छुआछात के खंडनकर्त्ता के रूप में माने जाते हैं। बुद्धिवादी वर्ग को उनके वचनों से संतोष होता है और उनके लिये कबीर एक सद्य-वायु संचारक हैं। निर्भय चरित, ऊँची धारणा और सामान्य जन-जीवन पर असाधारण प्रभाव के कारण कुछ लोग तो उन्हें गौतम बुद्ध के समक्ष रखते हैं।**

इस प्रकार संपूर्ण पुस्तक भाषा, शैली, जीवनी आदि के संबंध में प्रामाणित तथ्यों से परिपूर्ण है और विश्वास दिलाती है कि पुस्तक लेखिका ने कबीर संबंधी प्राप्त देशी-विदेशी आदि कोई आधार छोड़ा नहीं है। लेखिका ने विदेशी समीक्षात्मक पद्धति का बहुत निष्ठापूर्वक उपयोग किया है तथा इस देश के कुछ लेखक भी इसमें कुछ ऐसे स्रोत पायेंगे जिन तक उनकी पहुँच नहीं थी। दूसरे शब्दों में, पुस्तक पूर्वाग्रह से असंपृक्त, ऊहापोह से दूर और पूर्व-पश्चिम के छोटे-बड़े के भाव से भी पृथक् है। साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही यह कहना असंगत न होगा कि कोई भी नयी स्थापना, साहसपूर्ण वक्तव्य आदि पुस्तक में नहीं है। एक शब्द में, वैज्ञानिक पद्धति, पूर्वापर सामग्री का उपयोग इस ग्रंथ में भरपूर है; किंतु कबीर के काव्य-गुण, उसमें रहस्यवादी तत्वों की पकड़ की बात भी नहीं उठाई गई है। आचार्य शुक्ल, या डॉ० ह० प्र० द्विवेदी की उद्भावनाओं की ओर लेखिका का ध्यान नहीं गया है। मूल साहित्य-व्यंजना संबंधी समीक्षा इस ग्रंथ में प्रायः नहीं मिलेगी।

कुछ अंग्रेजी अनुवाद के संबंध में : एक विशेषता अनुवादों को लेकर देख पड़ती है। कबीर की रचनाओं के अनुवादों—जैसे, बंगला, पंजाबी, सिंधी, तमिल और यूरोपीय भाषाओं के अनुवादों की चर्चा यथातथ्य की गई है। विल्सन (एच० एच०) से लेकर जे० पी० उन्याल के अंग्रेजी अनुवादों का विवरण यहाँ मिलेगा। रवीन्द्रनाथ के अनुवाद को पर्याप्त प्रतिष्ठा दी गई है। संपूर्ण पुस्तक के ३३१ पृष्ठों के कलेवर में प्रथम १८४ पृष्ठ भूमिका, परिचय, समीक्षा आदि है, और १५२ से ३३१ पृष्ठों तक काव्यानुवाद। संभवतः १४२ पृष्ठों और छोटे टाइपों में इतना अधिक और परिश्रम-साध्य अंग्रेजी अनुवाद पहली बार प्रकाशित हुआ है। यह मानने का कारण है कि कबीर की प्रतिनिधि रचनाओं का अनुवाद अब पश्चिमी जगत् को प्राप्त है, तथा उन भारतीय कबीर प्रेमियों और पंडितों को भी, जो हिंदी, विशेषकर कबीर की हिंदी नहीं समझ सकते।

संक्षेप में, कबीर की ग्रंथ-खोज परंपरा, कबीर-काव्य के शोध और लेखन का क्रम, कबीर की जीवनी के आधारों, काव्यानुवाद के अंग्रेजी अनुवादों का सम्यक् परिचय और इतिहास इस ग्रंथ में संयोजित है। पूर्व मध्यकालीन तंत्र, नाथों और सिद्धों पर उसके प्रभाव और कबीर की रचना में इन प्रभावों के तानों-बानों का विवरण लगभग बीस पृष्ठों में कुछ विस्तार से ही (५वाँ अध्याय) दिया है। इस भाग में कबीर के साधनापक्ष, रहस्यवाद और अंतर्विरोधों की ओर स्पष्ट संकेत दिये गए हैं। **हरि सुमिरण और साधु सत्संग** संबंधी कबीर के विश्वासों की परीक्षा भी इसी भाग में की गई है और कहा गया है कि कबीर की बौद्धिक विचारधारा की संगति इन सबसे बैठाना कठिन है।

इस भाग के अंतिम अवतरणों में प्रतीकवाद, कबीर के योग, **महासुख** की कल्पना, पिया से मिलने की आकुलतापूर्ण पदों की झलक की गई है।

—कृष्णाचार्य

कबीर. ले० शालोंत बादविल. ऑक्सफोर्ड, यूनिवर्सिटी प्रेस, १९७४. १४,३४०पृ० मू० १३०.००

पुस्तक समीक्षा

विवेकानंद और समकालीन भारतवर्ष

स्वामी विवेकानन्द के जीवन, साधना और दर्शन विषयक ग्रंथों का अभाव नहीं है। देशी-विदेशी अनेक चिन्ताशील मनीषियों, जैसे, रोम्याँ रोलाँ, भगिनी निवेदिता, लो० तिलक, श्री अरविंद, ऐनी बेसेंट, ईशरवुड, रमेन्द्रनाथ शील, राधाकृष्णन् लुई बर्क, जवाहरलाल, सुभाष बोस एवम् अध्यापक वागमर जैसे लोगों ने विवेकानंद के विषय में कलम उठाई है।

लेकिन कभी भी एक विशेष किंतु महत्वपूर्ण पहलू की समकालीन भारतीय इतिहास की पृष्ठभूमि में स्वामीजी को अभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक नहीं देखा गया था। श्री अरविंद ने कहा हैं : **इस देश के इतिहास को स्वामीजी ने जैसे दोनों हाथों से उठाकर बदल डाला है**। इस उक्ति को प्रकाशित करने के लिए प्रयोजनीय तथ्य एवम् साक्ष्य-संकलन की आवश्यकता बनी ही रही।

लेखक के मतानुसार स्वामी विवेकानंद प्रबल, प्रचंड और ज्वलंत अस्तित्व थे। साथ ही स्वामी विवेकानंद ही थे नवभारत के गायक। लेकिन इतिहास के प्रचलित ग्रंथों में भारत के नवजागरण के लिए विवेकानंद की भूमिका को समुचित स्वीकृति नहीं मिली है। सन् १९५८ में प्रकाशित हुआ श्रीमती मेरी लुई बर्क का सुबृहत् ग्रंथ **स्वामी विवेकानंद इन अमेरिका : न्यू डिस्कवरी**। विवेकानंद ने अमेरिका में जिस प्रचंड अलोडन की सृष्टि की थी, उसकी कहानी लिखने के लिए श्रीमती बर्क ने परवर्ती स्मृतिकथाओं पर भरोसा नहीं किया, अतः अमरीका के नाना स्थानों से स्थानीय संवादपत्र तथा अन्य क्षेत्रों के संवादपत्रों एवं समकालीन स्वीकृति को व्यवहृत किया है। श्रीमती बर्क के आदर्श से प्रेरणा लेकर लेखक शंकरीप्रसाद बसु ने भारत का कोना-कोना छान डाला है : स्थानीय संवादपत्र और पत्र-पत्रिकाएँ देखी हैं एवं अन्यान्य स्रोतों से प्रकाश सूत्र संग्रह किए हैं। इस संधान के फलस्वरूप इस एक विशेष विषय पर लेखक ने पर्याप्त सामग्री संग्रहीत की है : **प्रथम : सर्वभारतीय जागरण सर्व प्रथम स्वामी विवेकानंद के द्वारा ही संभव हुआ।** लेखक ने पाया कि चिंतनशील भारतीय मनीषियों के अंतर में स्वामीजी की पैठ अत्यंत गंभीर थी। अनेक विशिष्ट व्यक्तियों ने कहा है : जीवन जब तक सहज और साधारण रहता है विवेकानंद के बगैर भी काम चल जाता है; लेकिन जब देश गंभीर संकट के घने आवर्त्त में फँसने लगता है, काली छाया उसे घेर लेती है–तब परम आलोक एवम् परम शांतिदाता के रूप में विवेकानंद सामने आते हैं।

इस ग्रंथ के दो खंड प्रकाशित हुए हैं। दो खंड और प्रकाशित होने पर ग्रंथ संपूर्ण होगा। इस बृहत् ग्रंथ से पता चलेगा कि स्वामीजी का जीवन किसी भी हालत में कुसुमावृत नहीं था, निरंतर द्वन्द्व और संघर्ष के बीच से उन्हें अग्रसर होना पड़ा। तत्कालीन भारत के प्रायः सारे धर्म-संप्रदायों––ब्राह्म, मिशनरी, हिंदू, रक्षणशील वैष्णव, बौद्ध, थियोसोफिस्ट एवम् अन्य स्वार्थ गोष्ठियों ने उनका विरोध किया। इनमें से बहुतों का विरोध तो उनके मत और आदर्श को लेकर ही था। कितने ही व्यक्तिगत आक्रमण स्तर तक उतर आए थे। ग्रंथ में भूमिका सहित उन सारे संवादों का उल्लेख है। स्वामीजी पर मिथ्या कुत्सा से व्यथित एक शिष्या के आक्षेप करने पर स्वामीजी ने उससे कहा, **परसिक्युशन के बगैर कोई भाव प्रचारित नहीं होता**। स्वीकार करना होगा कि इस परसिक्युशन का एक बड़ा भाग उन्होंने एकाकी ही भोगा। इन आक्रमणों और उत्पीड़नों का इतिहास जाने बगैर विवेकानंद का पूर्ण व्यक्तित्व समझना संभव नहीं है। उनके शत्रुओं की नकाब खोले बगैर विवेकानंद का यथार्थ उन्मोचन नहीं हो सकता। इस ग्रंथ में है यही आश्चर्यपूर्ण कहानी––आघात-संघात से रक्तरंजित किंतु आलोकोच्छल एक महाजीवन की कथा।

ग्रंथकार कलकत्ता विश्वविद्यालय में बंगला साहित्य के अध्यापक हैं और आपने आबाल्य विवेकानंद-परिवेश में जीवन बिताया है। युक्ति और भक्ति, निरुपेयता और शरणागति एवं अर्घ्य का संमिश्रण इस बृहत् ग्रंथ के पन्ने-पन्ने पर प्रवाहित है।

––सुनील बिहारी घोष

विवेकानंद और समकालीन भारतवर्ष, २ जि० ले० शंकरीप्रसाद बसु, १९७५-७६. मू० ४०.०

थोड़ां आंसु : थोड़ां फूल

"कुटिलता से दूर रहने में वह गौरव मानता...उसकी अंतर प्रतिभा रंगभूमि के उत्कर्ष के लिए आतुर थी...इस स्वप्नदर्शी ने कुछ स्वप्न गढ़ रखे थे। उसे रंगमंच की सेवा करनी थी..." इस तरह तृतीय पुरुष की शैली में इस आत्मकथा का अंतिम प्रकरण लिखा गया है। और प्रथक पुरुष एकवचन से––"मेरा जन्म हुआ इससे पहले ही सन् १८५३ में गुजराती रंगभूमि की शुरूआत हो चुकी थी। मुझे रंगभूमि का नट बनना था"––यह कहते-कहते जयभाई अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मकथा के अंतिम प्रकरण में नम्र हो जाते हैं। जिन जयभाई को हमलोग जानते हैं, वह स्वभाव से नम्र ही नहीं, विनम्र व्यक्ति थे। इस प्रकार इस पूरी की पूरी आत्मकथा थोड़ा आंसू : थोड़ा फूल' में एक उत्तम अदाकार की नम्रता पन्ने-पन्ने पर दिखलाई देती है।

आत्मकथा लिखना कोई इतनी सरल कला भी नहीं है। उस पर भी सिर्फ दो किताब पढ़ने के बाद पाठशाला को तिलांजलि देकर, रंगदेव की पाठशाला में और उसके आसपास के वातावरण से शिक्षा लाभ करने-वाले एक 'अनपढ़'(?) व्यक्ति के लिए तो इस तरह का लेखन कसौटी की बात ही है। शायद यही कारण है कि यह पूरी आत्मकथा जैसे बार-बार ऊबड़खाबड़ पगडंडियों से गुजरती रहती है। एक सन्निष्ठ और पारदर्शी व्यक्तित्व का परिचय लेखक की सरल लेखनी से झलकता है। जिन्हें व्यक्ति जयशंकर में रुचि है उन पाठकों को शायद पूरी तृप्ति न भी हो। ऐसा लगता है कि इस लेखक ने प्रेक्षकों के आगे 'मेन ड्राप' को जैसे कभी उठाया ही नहीं। या यों कहा जाय कि 'मेन ड्राप' उठाने का भान तो जरूर करा दिया, लेकिन प्रेक्षकों को पूरा स्टेज मापने का मौका नहीं दिया; दिखलाए, सिर्फ छोटे-छोटे दृश्य; और इन दृश्यों के बीच भी व्यावसायिक रंगमंच की टेकनीक के मुताबिक, पिछले हिस्से में मुख्य दृश्य का संयोजन मात्र है। एक दूसरा नाटक चालू रहने का आभास तो दर्शक को हुआ।

गुजराती व्यावसायिक रंगमंच के सामने जिस वक्त सिनेमा या रेडियो-टेलिविजन की चुनौती रही थी, भिन्न रुचिवाले प्रेक्षकों के मनोरंजन का यही एकमात्र साधन था। उस बीच इस साधक ने क्या-क्या देखा, क्या-क्या अनुभव पाए, कैसी-कैसी धूपछाँह के बीच से इसे गुज़रना पड़ा——बीते कल के इतिहास की इन सारी बातों-घटनाओं को नाट्यरसिक पाठकों तक पहुँचाने का धर्मकार्य जयभाई ने अपनी शक्ति भर और अधिकारपूर्वक संपन्न किया है।

गुजराती रंगमंच के सामने आज जो शिकायत है, 'गुजरात में नाटक नहीं है', 'गुजरात में मंचन लायक मौलिक नाटक नहीं है', 'गुजरात के पास कोई क्षमतावान् नाट्य लेखक नहीं है', ये तब भी थी। इसके बावजूद भूलाभाई नृसिंह विभाकर, प्रभुलाल द्विवेदी, मणिलाल पागल, रसकवि रघुनाथ ब्रह्मभट्ट, और तो और खुद बापुलाल नायक की कोटि के गुजराती नाट्य लेखकों की साधनासिद्धि और त्रुटियों का बयान एक दीक्षित कलाकार की कलम से निसृत होता रहा है, इसका ऐतिहासिक मूल्य तो है ही; लेकिन यह सारी प्रक्रिया किस प्रकार चल रही थी, इसकी जानकारी पाठक को होती है, तो एक ओर जहाँ उसे खेद होता है, वहीं बीच-बीच में उसका मनोरंजन भी होता है; और कितनी श्रद्धा इन नाट्य लेखकों के लिए होती है। सालों तक प्रेक्षकों के दिल जीतते जीतते इन लेखकों ने अपनी कलम चालू रखी।

रंगमंच के उत्कर्ष के लिए नाट्यलेखक और नाट्ययोजक के बीच का तालमेल कितना जरूरी था, इसका आँखों देखा ही नहीं, दिल में संजोया हाल जयभाई की कलम से बहता है। जयभाई की आत्मकथा से आज के रंगमंच के अपनाने लायक जो दो-चार खास बातें हैं, उनमें सबसे पहली बात लेखक, प्रयोजक और निर्देशक का यह 'दलीय प्रयास' है, और उसके बाद ही नंबर आता है निर्मम तालीम का। आवाज़, हलन-चलन, मंच परिचय और विभिन्न पात्रों के आत्मसात करने लायक सदय सामान्य बुद्धि। महज गुरु से मिली चाबियों और शिक्षण से बात नहीं बन पाती थी। कलाकार को अपने अंतर के कलाकार के कान पकड़कर उठाना-बैठाना पड़ता था। परकाया प्रवेश की विधि हज़म करनी पड़ती थी। और वह भी किस तरह के वातावरण में, कैसे ठोस साधनों के बीच, रोजमर्रा की जरूरतों के कैसे अभाव के बीच, माँ-बाप की छत्रछाया से कितने मील दूर रंगदेव का प्रीतिभाजन बनने के लिए इस नटमंडली को अपनी साधना आगे धकेलनी पड़ती थी? आश्चर्य-मुग्ध बना देने वाली उस परिस्थिति का अंकन जयभाई ने अपनी सबल लेखनी से किया है।

आज के हर कलाकार और प्रेक्षक के लिए जयभाई की यह आत्मकथा पाठ्य-पुस्तक जैसी बन पड़ी है। कलाप्रेमी कलाकार अपना नाट्य कौशल ज्यादा-से-ज्यादा उच्च कोटि का बनाने के लिए कैसी-कैसी साधना आजन्म करता है, क्या-क्या छोड़ता है, क्या-क्या भोगता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, यह जान लेना उनके लिए जरूरी है। डिटेल्स के लिए उनका आग्रह, छोटी-से-छोटी बात को नजरअंदाज न करनेवाली उनकी शिक्षा, नाटक की अखंडता के निर्वाह के लिए अनिवार्य थी। उनके हृदय में जो अमृत भरा था वह उनकी आंखों से छलकता।

जयभाई की इस आत्मकथा को दर्द-कथा भी कहा जा सकता है। शुरू के वर्षों से ही छिन्न-भिन्न हुआ उनका गृहस्थ जीवन, उनकी स्नेह-भंग मनोवस्था, नीति और नियमों के बारे में उनकी निष्ठा, उभरते कलाकार के रूप में सहनी पड़ी, विघ्नबाधायें वगैरह; किस-किस मोर्चे पर इस व्यक्ति को जूझना पड़ा, जूझता रहा। 'जयशंकर' नाम के बावजूद कितनी ही पराजयों का स्वाद उन्हें चखना पड़ा। इस सबके बावजूद गुजरात में जब तक रंगमंच जीवित रहेगा, गुजरात अपनी 'सुंदरी' को याद करेगा। गुजराती नाटक का इतिहास लिखे जाने पर आज के नाटक-वालों के भाग्य से **अंक** में आधी लाइन आएगी, और जयशंकर के हिस्से में आएगा पूरा एक **दृश्य**।

जयभाई के निधन के साथ गुजराती रंगमंच के एक युग का अंत होता है, बाकी रहते हैं सिर्फ उनके स्वप्न। जीते जी अपने कई स्वप्न 'साल्वेज' करने के लिए जयभाई ने यथाशक्ति और यथामति पुरुषार्थ किया, लेकिन उनकी आत्मकथा के अंतिम प्रकरण 'अंतरप्रकरण' से भी कहीं ज्यादा व्यथापूर्ण है यह अंतिम प्रकरण! लेकिन कौन लिखेगा इस प्रकरण को?

—शिवकुमार जोशी

थोड़ां आंसु थोड़ां फूल. ले० जयशंकर सुंदरी. अमदावाद, वोरा कं०, १९७६. ३०६ पृ० मू०१६.००.

राष्ट्रीय ज्ञानकोश : उक्ति विशेष

अगस्त १९७६ के अंक में स्टर्नबाख द्वारा संपादित 'महासुभाषित कोश' का परिचय हम अपने पाठकों को दे चुके हैं। अब पुनः वैसे ही अधिक व्यावहारिक और कुछ कहावत के रूप में प्रयुक्त सुभाषित खंडों को लेकर **राष्ट्रीय ज्ञान कोश : उक्ति विशेष** नाम से श्री अमरेन्द्र गाडगील ने संपादित किया है। श्री गाडगील मराठी जगत् के मान-जाने लेखक है। संपादक यह मानकर चले हैं कि हमारे देश में राष्ट्री-यता, नैतिकता, चरित्रबल और अभयवृत्ति का विकास होना आवश्यक है। संभवतः इसी वृत्ति से प्रेरित होकर तत्संबंधी सुभाषित चुने गये हैं।

उक्ति विशेष संग्रह में ऐसी कई विशेष-ताएँ हैं जो आज तक प्रकाशित साधारण सुभाषित कोशों से भिन्न हैं। इस संग्रह का पहला प्रयत्न यह रहा है कि इसमें सामान्य भारतीय पाठकों की आवश्यकताओं का उद्‌बोधन हो सके। इस खंड में (योजना कई खंडों में पूर्ण होगी) पाँच सौ से अधिक सूक्ति खंडों का समावेश है। सूक्ति खंड शब्द का प्रयोग साभिप्राय है। प्रायः दैनिक जीवन में हम सब किसी श्लोक, सुभाषित या किसी भी छंद के महत्वपूर्ण अंश का ही उद्धरण बातचीत में देते हैं। ये वाक्य खंड कभी-कभी मुहावरा या कहावत का रूप भी धारण कर लेते हैं और हम मूल स्रोत या संपूर्ण उद्धरण को भूल ही जाते हैं। उदाहरणार्थ: हम कहते हैं: अर्थस्य पुरुषो दासः, कृण्वन्तो विश्वम् आर्यम्, न स्त्री स्वातंत्र्यम् मर्हति, आदि। इस कोश में इन वाक्य खंडों को अकारादि क्रम दिया गया है, तथा, पुनः इनके पूरे सुभाषित उद्‌धृत किये गये हैं। इस क्रम से पाठक अपने अधूरे ज्ञान को पूर्ण तो करता ही है, साथ ही उसके स्मृतिपटल को अधूरे सुप्त सूक्तिखंड का मूल स्रोत भी ज्ञात हो जाता है। पुनः इन संपूर्ण श्लोकों या सुभाषितों की सम्यक व्याख्या भी मराठी भाषा में की गई है। इस संपादन प्रक्रिया द्वारा संपादक ने सुभाषित रत्नाकर से केवल उन रत्नों को चुना है जो अपनी सांस्कृतिक परंपरा की बौद्धिक या उदात्त वृत्तियों की ओर आकर्षित करते हैं। दूसरे शब्दों में, राष्ट्रीय गौरवबोध, सांस्कृ-तिक अस्मिता के परिचय और जनसाधारण में दैनिक जीवन और शील-शिष्टाचार का परोक्ष ज्ञान कराने की यह पद्धति निश्चित रूप से बड़ी सार्थक और वैज्ञानिक बन पड़ी है। ऐसे कोश प्रत्येक भारतीय भाषा में सुलभ कराए जाने चाहिए। विद्यार्थी, अध्यापक, वक्ता, राजनीतिज्ञ, साहित्यकार आदि इस कोश का उपयोग मनोरंजन और सुविधा से कर सकते हैं। यह अन्य कोशों की तरह यांत्रिक या दुरूह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है। कारण, प्रत्येक सूक्ति अपने आप में परिपूर्ण और मानस को आह्लादित करने वाली उद्बोधन केन्द्र हैं।

संपादक ने इस ग्रंथ की उपयोगिता आद्यक्षर श्लोक सूची और विषयक्रम से भी श्लोकसूची देकर बढ़ा दी है। इस **उक्ति कोश** से संस्कृत भाषा की ओर रुचि वृद्धि का लाभ भी हो सकता है। प्रायः सामान्य रूप से विद्यार्थी संस्कृत नहीं पढ़ना चाहते। किन्तु जिन्हें ज्ञान की प्यास है, या जिन्हें शब्द सौंदर्य का व्यसन लग चुका है, ऐसे सुधी पाठक इस प्रकार के कोश से अपने संस्कृत अज्ञान को कुछ हद तक अवश्य दूर कर सकते हैं। इस संदर्भ में इस पुस्तक के **शुभाशंसन** के लेखक प्रसिद्ध प्राच्य विद्या विशारद डॉ० रा० ना० दांडेकर ने ठीक ही कहा है कि **सूक्तियाँ होमियोपैथी सूक्ष्म गोलियों की तरह मीठी और प्रभावशाली सिद्ध होती हैं**। श्री दांडेकर ने आरंभ में ही सुभाषित या उक्तियों के संबंध में जो प्रशस्ति प्रस्तुत की है उसे तो प्रत्येक संस्कृत साहित्य प्रेमी को कंठस्थ करनी चाहिये :

सुभाषितमयैर्द्रव्यै संग्रहम् न करोति यः
सोऽपि प्रस्तावयज्ञेषु कां प्रदास्यति दक्षिणाम् ।।

श्री गाडगील के संकल्पानुसार एक अन्य खंड में भारत के गौरवमय इतिहास से संबंधित स्थलों का विवरण दिया जायगा : हल्दीघाटी, पानीपत, कुरुक्षेत्र, रायगढ़, विजयनगर, कालडी आदि का विवरण। एक भाग में घटनाओं एवं विशिष्ट प्रसंगों का विवरण होगा और एक में होंगी वरेण्य व्यक्तियों की जीवनियाँ। आशा की जानी चाहिये कि मराठी में तो यथाशीघ्र यह सब प्रकाशित होगा ही, हिंदी आदि अन्य भारतीय भाषाओं में भी इन ग्रंथों का प्रकाशन होगा।

—श्रीकृष्ण जोशी

राष्ट्रीय ज्ञानकोश-१, उक्ति विशेष. संपा० अमरेंद्र लक्ष्मण गाडगील. मुंबई, वोरा एंड कं०, १९७६. ३२७ पृ० मू० २०.००

मैंने स्मृति के दीप जलाए

नाम से ही स्पष्ट है "मैंने स्मृति के दीप जलाए" संस्मरण साहित्य है। इसे हम हरिवंश राय बच्चन कृत 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' और 'नीड़ का निर्माण फिर, फिर' एवं अमृतलाल नागर कृत 'जिनके साथ जिया' की अगली कड़ी कह सकते हैं। इनमें लेखक के जीवन से संबंधित घटनाओं के वर्णन में अन्य व्यक्तियों का उल्लेख हुआ है, पर 'मैंने स्मृति के दीप जलाए' में लेखक ने अपने जीवन की घटनाओं के माध्यम से अन्य व्यक्तियों का चरित्रांकन किया है। **मैंने स्मृति के दीप जलाए** के रचयिता हिंदी के जाने-माने लेखक श्री रामनाथ 'सुमन' हैं। श्री सुमन की अन्य कृतियों से हिंदी जगत् पहले से ही काफी परिचित है। आपने जीवनी संबंधी अनेक कृतियों का सर्जन किया है।

ग्रंथ का शुभारंभ भारतीय राष्ट्रीय जीवन के दीपस्तंभ **पुरुषोत्तमदास टंडन** के संस्मरण से हुआ है। टंडनजी की स्मृतियों का उल्लेख करते समय सुमनजी ने अनेक क्षेत्रों में व्याप्त उनके विद्यार्थी, वकील, प्रबंधक, जनसेवक, देश नेता, राष्ट्रनायक, विधानसभा के अध्यक्ष के रूप में उनकी निष्ठा तथा दृढ़ प्रिय रूपों की अपेक्षा उनके हिंदी के आजन्म व्रती रूप का चित्रांकन किया है। इस संदर्भ में टंडनजी का यह कथन स्मरणीय है, "लोग कहते हैं कि मैं साहित्य और राजनीति से समन्वित दोहरा व्यक्तित्व रखता हूँ। परन्तु सच्ची बात यह है कि मैं पहले साहित्य में आया और प्रेम से आया। हिंदी साहित्य के प्रति मेरे उसी प्रेम ने उसके हितों की रक्षा और उसके विकासपथ को स्पष्ट करने के लिए मुझे राजनीति में सम्मिलित होने को बाध्य किया।"

वृंदावनलाल वर्मा के संस्मरण में सुमनजी ने उन्हें हिन्दी के **वाल्टर स्काट**, बल्कि कई अंशों में उससे ज्यादा अच्छे और मर्मी लेखक कहा है। उनकी खुराक के संबंध में लेखक का कथन है—छः सेर पक्का दूध तथा आध सेर जलेबियाँ एक बार में उदरस्थ करना उनके लिए सहज था। ४०-४२ अण्डे एक बार में खा जाते थे। १२५ संतरे तथा २५० आम खाते भी बहुतों ने उन्हें देखा है। सुमनजी ने इन्हें पहलवान साहित्यकार नाम से संबोधित किया है। २ माह में 'गढ़ कुण्डार' पूरा होने पर वर्माजी ने प्रतिज्ञा की कि 'मरते दम तक लिखता रहूँगा'—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अपनी प्रतिज्ञा उन्होंने एक मध्ययुगीन राजपूत सामंत की भाँति निबाही।

भाईजी (**हनुमानप्रसाद पोद्दार**) के संबंध में लेखक का वक्तव्य : मैं भाईजी से बहुत कम मिलता रहा हूँ, बहुत कम बोलता रहा हूँ, परंतु गांधीजी के बाद मेरे जीवन को सबसे अधिक उन्होंने प्रभावित किया है, पावन बनाया है। अगणित हैं उनके स्नेह की स्मृतियाँ और वे इतनी निजी और इतनी पावन है कि उनको कहना या लिखना उनकी पावनता को लजाना है। लेखक ने स्वीकारा है कि ऐसा दिव्य और प्रायः मौन स्नेहसत्संग उन्हें जीवन में बहुत ही कम मिला है।

'**शिवपूजन** (शिवपूजन सहाय) का स्मरण आते ही आंखों के आगे एक ऐसी दुनिया आकर खड़ी हो जाती है जो चली गई है, शायद सदा के लिए चली गई है मेरे जैसे साहित्य के कुछ ध्वंसावशेषों के लिए, जो मिटकर भी मिट नहीं पाती है। वह भी कैसा जमाना था, जब हिंदी लाभ की नहीं, पूजा की, साधना की चीज थी। जब लोग एक-एक शब्द की शुद्धता का विचार करते थे; जब साहित्य की प्रवृत्तियों और सिद्धांतों को लेकर आपस में चलती थी, परंतु लड़ाई अंतर के रस-निर्झर के कपाट बंद नहीं कर पाती थी। प्रतिस्पर्धा व्यक्तिगत नहीं, सामाजिक थी, साहित्यिक थी, इसलिए यों कहें कि वह आज के अर्थ में प्रतिस्पर्धा ही नहीं थी। जिससे लड़ते थे, उसीके लिए फूट-फूट कर रोते थे, उसी की याद में सिर धुनते थे। **शिवजी** वस्तुतः मानवता के प्रतीक, शिक्षक, आचार्य, रचनाकर, पत्रकार, साहित्यसेवी सभी कुछ थे। एक बार उन्होंने सुमनजी को लिखा था, 'राणाप्रताप के मार्ग का अनुगमन करके मानसिंह की जिंदगी के मजे लूटना चाहते हो? यह कभी हुआ है, भैया?' एक बार मित्रों द्वारा आत्मकथा लिखने के अनुरोध पर शिवजी ने कहा था—'यदि मैं अपनी आत्मकथा लिखूँगा तो हिंदी के बहुतेरे साहित्यिक आत्महत्या कर लेंगे।'

कृष्णदेव प्रसाद गौड़ पहले डिकेंस पर फिदा और अंग्रेजी कवियों के शैदा थे। तब 'बेढब' नहीं 'सरस' थे। 'प्रसाद', 'उग्र' और 'सुमन' के सम्पर्क में आकर हिंदी में भी लिखने लगे और 'बेढब बनारसी' हुए। लेखक ने उनकी हाजिर-जवाबी तथा जीवन की कुछ अविस्मरणीय घटनाओं का सहज चित्रण किया है।

निश्चय ही **सेठ गोविंददास** खरी आलोचना की अपेक्षा दंभपूर्ण चाटुकारिता से खुश होनेवाले थे, और ऐसे ही लोगों की मंडली से घिरे रहते थे। यह उनका दोष भी था, दुर्भाग्य भी था। साहित्यकार के रूप में उनका विकास भारतीय जीवन का एक चमत्कार है। जेल में उनके पास समय काफी था। वहीं उनमें लिखने की स्फूर्ति हुई और जब लिखना शुरू किया तो राजनीतिक की भाँति साहित्य में भी जहाँ देखिए वहीं उपस्थित। रचनाओं के ढेर लगा दिए। उनका साहित्य मोल की अपेक्षा तौल से भारी होकर रह गया है।

बहुत कम लोगों को मालूम होगा कि जीवन-रक्षा की दृष्टि से **शशिमोहन** को कौड़ियों के मोल बेच दिया गया था, टोटका लग गया और वे रहे। अब वास्तविक नाम लुप्त हो गया और वे **बेचन शर्मा** बन गए। 'सुमन' जी के शब्दों में वह छैल-छबीले रंगीन तबियत यम-नियम को ललकारते चलनेवाले युवक थे। एक तरह का अक्खड़पन और बैलौस अभय उनमें सदा रहा।

बेनीपुरी को पत्रकारिता का ऐसा नशा था कि जेल में भी हाथ से लिखकर 'कैदी' निकालते। बेनीपुरी की शैली चुटीली और तेजस्विनी थी। वह भारत, गोलमाल, किसान-मित्र, बालक, युवक, कर्मवीर, योगी, जनता, हिमालय, जनवाणी, नईधारा तथा चुन्नूमुन्नू आदि पत्रों से सम्बद्ध थे। उस समय शायद ही किसी दूसरे पत्रकार का संबंध इतने अधिक पत्र-पत्रिकाओं से रहा हो। बेनीपुरी कवियों में कवि, पत्रकारों में पत्रकार, साहित्यिकों में साहित्यकार, चिन्तकों में चिन्तक और इन सभी के बीच क्रांतिकारी थे। उनमें भाषा की जादूगरी थी।

करुणारस में डूबे **जनार्दनप्रसाद झा द्विज** दिल खोलकर हंसना-हंसाना जानते थे। वह किसी गुट में न थे और इसीलिए किसी के प्रचार का साधन न बने। वह नूतन-पुरातन से प्रतीक थे। लेखक ने विनोदशंकर व्यास के संस्मरण में बताया है कि **विनोदशंकर व्यास** यारबाज और दूसरों पर फबतियाँ कसने में कुशल थे। 'सुमन' जी के मत से उनमें घुमक्कड़ी, आवारागर्दी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(कुछ-कुछ लफंगाई), हास-लास, संगीत या कलाप्रियता और साहित्यिक अभिरुचि की प्रवृत्तियाँ थीं और कोठेवालियों का गहरा और विस्तृत अनुभव था।

शिवप्रसाद मिश्र को रुद्र कहा उग्र ने, और स्वीकारा 'निराला' ने। यहीं आगे चलकर 'रुद्र काशिकेय' तथा 'गुरु बनारसी' हुए। 'रुद्र' हास्य, व्यंग्य तथा अपनी बनारसी बोली के लिए विख्यात हैं। काशिका-संस्कृति के उद्धारक 'रुद्र' ही हैं। उन पर एक ओर 'प्रसाद' का सांस्कृतिक प्रभाव है तो दूसरी ओर 'उग्र' की चुलबुली शैली का असर। सुमन ने उन्हें एक सफल अभिनेता ही नहीं वरन् हिंदी नाटकों के अभिनय इतिहास में बेजोड़ बताया है। निश्चय ही बनारस की सारी मस्ती उनमें फट पड़ी थी, वह 'शिव' और 'रुद्र' का समन्वय थे। अंतिम संस्मरण में सुमन ने कितना हृदयग्राही चित्रण किया है—'आज के हिंदी प्रेमी और पाठक में यदि हृदयनाम की चीज का कोई टुकड़ा कहीं बचा हो, तो उसे यह जानकर ठेस लगेगी कि—'रतलाम टाइम्स' और 'पुण्य भूमि' के संचालक-गण, जो लखपति-करोड़पति थे, उन्हें (**गोपालसिंह नेपाली को**) केवल पैंतालिस रुपये मासिक देते थे और उन्हीं पैंतालिस काँटों से छिदे हुए कलेजे से, भीतर आह और कराह तथा ऊपर-ऊपर 'वाह' लिये वह कविताएँ लिखता रहा; कविताएँ क्या लिखना था, कलेजा तराशकर अक्षरों की डिबिया में बन्द करता था। इतना है कि प्रेम की बानी

अब पहचान गया हूँ मैं।
भीतर रोना, बाहर हँसना,
संगिनी, जान गया हूँ मैं॥

निःसंदेह रामनाथ 'सुमन' ने अपने समकालीन साहित्य मनीषियों का यथार्थ चित्रांकन करते हुए हिंदी जगत् को एक महत्वपूर्ण कृति भेंट की है।

—शिवनारायण खन्ना

मैंने स्मृति के दीप जलाए. ले० रामनाथ सुमन, दिल्ली, राजपाल, १९७६. १९८पृ०●

विशिष्ट प्रकाशन

[इस स्तंभ में किसी भी विषय के श्रेष्ठ, नये दृष्टिकोण से लिख या किसी पुस्तकालय में स्थायी रूप से स्थान पाने के अधिकारी ग्रंथ सटिप्पण प्रस्तुत हैं। प्रकाशकों और विषय-विशेष के प्रेमियों से अनुरोध है कि वे कृपया इस स्तंभ को ध्यान से देखें और महत्वपूर्ण स्तरीय प्रकाशित ग्रंथों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करें। लेखक के नाम के सामने यथासंभव जन्म-वर्ष दे दिया गया है। पुस्तक के नाम के बाद प्रकाशक विवरण, पुनः पृष्ठ संख्या (भूमिका और मूल पुस्तक के पृष्ठ) और अंत में पुस्तक की लंबाई तथा मूल्य है। पृष्ठ और आकार का विवरण पुस्तकालयों में सूचीकरण-कार्य में सुविधा की दृष्टि से दिया गया है। कोष्ठक में विषय का स्पष्टीकरण, विषय-सीमा या विशेषता आदि की ओर संकेत है। —संपादक]

अंग्रेजी

इंडियन जर्नल ऑफ एलाइड लिंगुइस्टिक्स जि०१, अंक१. नयी दिल्ली, बाहरी पब्लिकेशंस, जन०-जून १९७५. (अंग्रेजी और हिंदी में प्रकाशित अर्धवार्षिक भाषा-तात्विक पत्रिका. संपा० आर० एन० श्रीवास्तव—मू० ३०.०० वार्षिक)

इंदुप्रकाश पांडेय, १९२४-
हिंदी लिटरेचर—ट्रैंड्स एंड ट्रेट्स. कलकत्ता, फर्मा के० एल० मुखोपाध्याय, १९७५. ९,२४८ पृ० २२ सेमी० ४०.०० (हिंदी के साहित्यिक आंदोलनों पर विशेष रूप से प्रकाश डाला है।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कपिला वात्स्यायन
सम आस्पैक्ट्स ऑफ कल्चरल पौलिसीज इन इंडिया. पेरिस, यूनेस्को, १९१२. १०५ पृ० २३.५ सेमी० २०.०० (प्रशासन, आर्थिक ढांचा, शिक्षा और संस्कृति, पुरा-तत्व, संग्रहालय, ग्रंथालय, गजैटियर्स, पुस्तक उत्पादन, जन माध्यम और संस्कृति, हस्त-, कलाएं एवं अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक संबंधों पर।)

कल्चर एंड टाइम
लेखक : एल० गार्डेट, ए० जे० गुरेविच, ए० कागामें, सी० लर्रे, जी० ई० आर० लौयड, ए० नेहर, आर० पनिक्कर, जी० पात्तरी, पी० रिक्युएर. पेरिस, यूनेस्को प्रेस, १९७६. २४५ पृ० २४ सेमी० ९५.५० (भारत सहित अनेक यूरोपीय और एशियाई देशों में काल और संस्कृति की अवधारणा संबंधी गवेषणात्मक लेख)

कालिदास बिब्लियोग्राफी
संपा० सत्यपाल नारंग. नयी दिल्ली, हेरीटेज पब्लिशर्स, १९७५. ४१२ पृ० १००.०० (कालिदास कृत और संबंधी कृतियों की विस्तृत और वर्गीकृत सूची).

असमीया

नंद तालुकदार
संबाद पत्तर रॅद काँचलित असमीया साहित्य. गुवाहाटी, बरुआ एजेंसी, १९७५. १४, २२४, १७ पृ० १९ सेमी० १०.०० (१९ वीं शती के असमीया पत्रिकाओं में और साहित्य संबंधी समीक्षात्मक लेख।)

लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा
बेजबरुवार दिनलेखा—२रा भाग. संपा० महेश्वर नियो. जोरहाट, असम साहित्य सभा, १९७६. ३ १,१८० पृ० २४ सेमी० १०.०० (लेखक कृत दैनन्दिनी : १९०४-१९३४. १ला भाग. १९६९ में प्रकाशित १८९५-१९०३. असमीया भाषा में **नियोग** कृत भूमिका और दैनंदिनी अंग्रेजी में)

विजयचंद्र भागवती
भारतर स्वाधीनता आंदोलनर रूपरेखा. जोरहाट, असम साहित्य सभा, १९७६. ६,७१पृ० मु० चित्र २०.५ सेमी० ४.०० (नवीनचन्द्र बरदलै स्मृति भाषण)

सुकुमार बरकाथ (कायस्थ)
हस्ति विद्यार्णव, संपा० प्रतापचंद्र चौधरी. गौहाटी, पब्लिकेशन बोर्ड, १९७६. ११, २६६पृ० २३×३४सेमी० २५०.०० (रंगीन फलक. मूल हस्तलिखित की आद्यंत फोटो. आहोम राजा शिवसिंह और रानी अंबिका देवी की आज्ञा से लिखित)

उर्दू

अफ़ज़ल अहमद
चकबस्त (हयात और अदबी खिदमत) लखनऊ, सरफराज़ क़ौमी प्रेस, १९७५. २४० पृ० २१ सेमी० २०.०० (लेखक की समीक्षा और उसकी जीवनी—लखनऊ वि० वि० से स्वीकृत प्रबंध)

खोरजी, एदलजी जमशेदजी
खुरशीद, संपा० मसीहुज्ज़मा. लखनऊ, किताब नगर, १९७३. १५२ पृ० १४ सेमी० ५.०० (पारसी रंगमंच का पहला उर्दू नाटक. पहला प्रकाशन गुजराती लिपि में—१८७१?)

येफीमोफ, डी०
दूसरी जंग-ए-अज़ीम—और एशियाई कौमों पर इसका असर. नयी दिल्ली, रूसी दूतावास, १९७५. ९० पृ० २१.५ सेमी०

ज़ब्तशुदा नज़्में
संपा० ख़लींफ़ अंजुम तथा मुजतबा हुसैन. नई दिल्ली, समाजवादी शिक्षण संस्थान, १९७५. १७१पृ० २२सेमी० २०.०० (स्वतंत्रताप्राप्ति पूर्व की ११७ नज़्में. नागरीलिपि में)

भगवतगीता
अनु० हसन उद्दीन अहमद. नई दिल्ली, नेशनल बुक ट्रस्ट, १९७५. १२० पृ० २०सेमी० ४.७५ (गीता का गद्यानुवाद)

गुजराती

ओझा, मफत, १९४४—
काव्यनुं शिल्प. अमदावाद, सेजल प्रकाशन, १९७६. ८,२२४पृ० २८सेमी० १६.२५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(नरसी महेता से लेकर माधव रामानुज तक ४० कवियों की समीक्षा)

डगली, वाडीलाल जैचंद
शियालानी सवारनो तडको . अमदावाद, बाल-गोविंद प्रकाशन,१९७५ . १८, २४८ पृ० १३.०० (ललित निबंध संग्रह)

जयशंकर 'सुंदरी', १८८९-१९७५
थोड़ां आंसु : थोड़ां फूल : जयशंकर सुंदरीनी आत्मकथा अमदावाद, वोरा एंड कं०, १९७६ . १६,३०६पृ० चित्र १८सेमी० १६.०० (आत्मकथा)

पेटलीकर, ईश्वर, संपा०
पूज्य श्री मोटा : जीवन अने कार्य . मुंबई, आर० आर० शेठ, १९७५ . १२,७५२ पृ० २२ सेमी० २५.०० (चुनीलाल आशाराम भगत श्रीभोटा का जीवनदर्शन)

शुक्ल, बंसीधर, संपा०
ज्ञानसंहित . अमदावाद, वोरा एंड कं०, १९७६ . ८,५५६पृ० २५ सेमी० ५०.०० (सामान्य ज्ञान संबंधी संदर्भ ग्रंथ : विराट विश्व, पृथ्वी, भूगोल, विज्ञान, प्रकृति के प्राणी, इतिहास, धर्म-पुराण-तत्वज्ञान, अक्षर-सृष्टि, (भाषा-साहित्य), संस्कृति, ललित-शास्त्र, कानून, तोलमाप, वाहन, व्यवहार आदि २५ भागों में व्यावहारोपयोगी कोश)

तमिल

आयुवुत्तोकै, तोकुती
संपा० एस० वी० सुब्रह्मण्यन . त्रिवांद्रुम, केरल विश्वविद्यालय–तमिल विभाग, १९७४ . ८, ३३४ पृ० १८ सेमी० १०.०० (तमिष भाषा-साहित्य के विभिन्न पहलुओं पर शोध-लेख)

कुलत्तरन, के०
तमिषप्पत्तिरिकैकल . त्रिवांद्रुम, केरल विश्व-विद्यालय,१९७५ . १७२पृ० १८सेमी० ७.५० (तमिल पत्रकारिता संबंधी लेख . विवेचित-पत्रों की सूची भी)

चंद्रशेखरेन्द्र सरस्वती (शंकराचार्य कांची)
देयवत्तिन कुरल, संपा० आर० गणपति . मद्रास, वनदि पदिप्पगै, १९७६ . ३२, ९०८पृ० (१ली जिल्द) . १८सेमी० (हिंदुत्व संबंधी १७८ लेख)

वेउला मर्सी
इरुपतिल चिरुकथैकल—१९००-१९७३ . मंगरै (जि० कन्याकुमारी), लेखक, १९७४ . ८ ,२७६पृ० १८सेमी० ६.०० (तमिल कहानियों की समीक्षा : कहानियों की सूची सहित

लक्ष्मणन् चेट्टियार, एस० एम०
तमिष नाट्ट मक्कलिन मरपुम पनपाटम . नयी दिल्ली, नेशनल बुक ट्रस्ट, ४, २६२ पृ० सचित्र २१ सेमी० ८.७५ (तमिलनाड . लोकसाहित्य और रीति रिवाज संबंधी परिचय)

पंजाबी

अमृता प्रीतम, १९१९–
इक उदास किताब . नई दिल्ली,नागमनी प्रकाशन,१९७६ . ७१ पृ० १९सेमी० ६.०० (योरप के २८ लेखक और कवियों संबंधी)

अमृता प्रीतम, १९१९–
रसीदी टिकट . नई दिल्ली, नागमनी प्रकाशन, १९७६ . १६३ पृ० मु०चित्र १९ सेमी० १६.०० (आत्मकथा)

कुलबीर सिंह कांग
सैयद वारिसशाह : इतिहासक ते काव्य मूल्लांकन . अमृतसर, नीउ एज बुक सेंटर, १९७५ . १२ ,२१६पृ० २४सेमी० २०.००

शिवकुमार बटालवी, १९३७-१९७३
अलविदा, संपा० प्यार सिंह और नरजीत सिंह खहरा . अमृतसर, गुरुनानक विश्व०, १९७४ . १२१पृ० २६ सेमी० १८.०० (मृत्यु उपरांत प्रकाशन)

बंगला

गिरींद्रनाथ दास
वांगला पीर साहित्येर कथा . बारासात शेहिव लाइब्रेरी, १९७६ ५२८ पृ० २२से०मी० २५.०० (मुस्लिम पीर-दरवेश की जीवनी और उनका साहित्य).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नरेंद्रनाथ भट्टाचार्य
प्राचीन विश्वसाहित्य . कलिकाता, साहित्य संसद्, १९७६. १६,४३० पृ० २२सेमी० २५.०० (संस्कृत; पाली, प्राकृत, अपभ्रंश; चीनी और जापानी साहित्य; ईरानी, मिश्र आदि : ग्रीक; यूरोपीय साहित्य; भारतीय आंचलिक साहित्य; विदेशी लेखक और भारत, अध्यायों में विभाजित)

रमेशचंद्र मजूमदार
बांग्ला देशेर इतिहास : १९०५-१९४७, जि० ४ . कलिकत्ता, जनरल प्रिंटर्स एंड पब्लि०, १९७५. १२, ६००पृ० २२ सेमी० ४०.०० (बंगाल के मुक्तिसंग्राम का इतिहास)

शिवकाली भट्टाचार्य
जिरंजीव वनोषधि . कलिकाता,आनंद पब्लिशर्स, १९७६. १७,३६७पृ० २२.५सेमी० २५.००

सुजित नाग
अंतरंग शरच्चंद्र . कलिकाता,तुली कलम, १९७६. ८, १९२ पृ० मु० चित्र २२ सेमी० ६.०० (शरच्चंद्र के दैनिक और आंतरिक जीवन का घनिष्ठ परिचय)

मराठी

कुलकर्णी, व० दि०
साहित्य : रूप आणि गंध . बंबई,मेजेस्टिक बुक स्टाल,१९७६. १४८पृ० २१ सेमी० १२.५० (समीक्षा)

धांडगे, गणेश
झलाया . औरंगाबाद, मराठवाडा साहित्य परिषद, १९७६. १३४पृ० २१ सेमी० १२.०० (कहानियाँ) ।

मोकाशी, दि० बा०
आदिकथा . बम्बई, मौज प्रकाशन गृह, १९७६. १५६ पृ० १८ सेमी० १५.०० (कहानियाँ)

शिरवाडकर, के० रं०
रंगविश्वातील रसयात्रा . पुणे, गो० य० राणे प्रकाशन, १९७६. २०८ पृ० २१ सेमी० १२.०० (विलियम शेक्सपियर की प्रतिभा का रसास्वाद)

सागर, चारुता
नागीण . बंबई, मैजेस्टिक बुक स्टाल, १९७६. १६६ पृ० २१ सेमी० १६.०० (कहानियाँ)

सारंग, विलास
सोलेदाद . बंबई, मौज प्रकाशन,१९७५. १४० पृ० १८ सेमी० १३.२५ (१३ कहानियाँ)

मलयालम

अेलुत्तच्छन, तुंचत्तु
मलयालम महाभारतम् . अनु० को० अ० सुब्रह्मण्य अय्यर . लखनऊ, भुवनवाणी ट्रस्ट, १९७५. १२१०पृ० २२.५ सेमी० ४०.०० (मूल पाठ नागरी लिपि में और हिंदी में गद्यानुवाद : पाद टिप्पणी में)

इलंको अटिकल
चिलप्पतिकारम्, टीका० नेनमार पी० नारायणन् नायर . त्रिचूर, केरल साहित्य साहित्य अकादमी, १९७५. ४२, ९११पृ० २१सेमी० ४५.०० (मलयालम लिपि में मूल पाठ) ।

कुट्टिकृष्ण मारार, के० एम०, १९००-१९७३
शरणागति. कोट्टयम, साहित्य प्रवर्तक, सहकरण संघम्, १९७६. ४०४ पृ० २१सेमी० १५.०० (दार्शनिक विषयों पर निबंध)

तुंचन प्रबंधङ्ङ्ल
त्रिचूर . केरल साहित्य अकादमी, १९७६. १०, ३६४ पृ० १८सेमी० १५.०० (मलयालम के गौरल-कवि तुंचचत्तझुत्तच्छन संबंधी पांच प्रबंध . केरल साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत)

शंकर पिल्ला, जी०, १९३०–
अवतरणम् ग्रांतालयम . वांतांद्रुम, केरल ग्रंथशाला सहकरण संघम्,१९७६. ८८पृ० १८ सेमी० ३.२५ (प्रयोगात्मक नाटक)

संस्कृत

गंगादित्य
स्मृति चिंतामणि, समीक्षात्मक पाठ-संशोधनकर्त्ता लूडो रोचर . बड़ौदा, ओरि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओरयंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट, १९७६ २१, १५६पृ० २५सेमी० २६.०० (१५ वीं शती में लिखित स्मृतियों का संक्षिप्त संकलन)

पुराण—भागवतपुराण
भागवत पुराण-राज्य और गटिंजन विश्व-विद्यालय पुस्तकालय स्थित भूर्जपत्र पोथी. संपा० हैज बखार्ट और अनुक्रमणिकाकार माहेश्वरी प्रसाद. नयी दिल्ली, इंटरनेशनल अकादमी ऑफ इंडियन कल्चर. २६, ८४६पृ० ३७×२७सेमी० ३००.०० (१४-१५ वीं शती की लिखी और प्राचीनतम प्राप्त प्रति का फोटो. शारदा लिपि में. कश्मीर संस्करण.)

मशक गार्ग्य
आर्षेयकल्प. वरदराज कृत विवृति सहित. पाठान्तर सहित संपा० वी० आर० शर्मा. होशियारपुर, विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, १९७६. ६२, ६०४ पृ० २५सेमी० १००.०० (विश्वे० भारतभारती ग्रंथमाला, ६८. श्रोत साहित्य का महत्व-पूर्ण भाग और सामवेद की तकनीकी शाखा का ग्रंथ.)

यामुनाचार्य
आगमप्रामाण्यम्. संपा० एम० नरसिंहाचारी. बड़ौदा, ओरयंटल इंस्टीट्यूट, १९७६. ४६, १८३ पृ० २५ सेमी० १८.०० (पांचरात्र आगम के वैदिक स्रोत की व्याख्या)

रामशरण शास्त्री
पाणिनीयव्याकरणशास्त्रे वैशेषिकतत्व मीमांसा. दिल्ली, लेखक, १९७६. २९८पृ० २२ सेमी० ७५.०० (संपूर्णानंद संस्कृत विश्व० से स्वीकृत प्रबंध)

हिंदी

अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध
हरिऔध पद्यामृत, संपा० किशोरीलाल गुप्त. वाराणसी, हिंदी साहित्य कुटीर, १९७६. १४, ४२३पृ० २३ सेमी० ३२.०० (हरिऔध-काव्य का प्रतिनिधि संकलन)

अविनाश, १९३६–
समान्तर रेखाओं का त्रिकोण. अहमदाबाद, सोनल प्रकाशन, १९७४. १९५पृ० रेखा-चित्र. २४ सेमी० ४०.०० (आर्ट कागज पर 'द्वन्द्वात्मक वैषम्य से जन्मी कविता')

दीनानाथ शरण, १९३८–
नेपाली साहित्य का इतिहास. पटना, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, १९७४. १६, ४८३पृ० २१ सेमी० २०.००

भारतभूषण अग्रवाल, १९१९-१९७५
अग्निलीक–एक दृश्यकाव्य. दिल्ली, राजकमल, १९७६. ६७ पृ० २२.५ सेमी० १०.०० (सीता वनवास और राम के चारित्रिक अंतर्विरोध पर आधारित दृश्य काव्य)

मणि मधुकर, १९४२–
रसगंधर्व. दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, १९७५. ८३पृ० २२ सेमी० ९.०० बहु-चर्चित नाटक. (मध्य प्रदेश, कला परिषद्, द्वारा रवीन्द्र भवन, भोपाल में प्रस्तुत, १ दिसं० १९७३ को).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुसंधान

[इस स्तंभ में भाषा-साहित्य संबंधी प्रकाशित शोध ग्रंथों की सूची प्रस्तुत है तथा इस क्रम में अंग्रेजी और हिंदी के प्रबंध हैं। अन्य भाषा-साहित्यों संबंधी प्रबंधों की सूचना अगले अंक में प्रस्तुत की जा सकेगी। –संपादक]

अंग्रेजी

एलयपेरुमल, एम०
ग्रामर आफ एग्कुरुनूरु विद इंडैक्स. त्रिवांद्रुम, केरल विश्व०–तमिल विभाग, १९७५. १५९ पृ० २५ सेमी० १२.०० (संगम साहित्य के प्रसिद्ध आठ संग्रहों में से एक संग्रह का व्याकरण और अनुक्रमणिका)

फैलमन, जैक
द रिवाइवल आॅफ ए क्लासिकल टंग बेन येहूदा एंड माडर्न हेब्रू लैंग्वेज. पेरिस, माटन–द हेग, १९७३. १५१पृ० २३ सेमी० (आधुनिक हेब्रू के पुनर्स्थापन और येहूदा के कार्य की समीक्षा)

बंकबिहारी चक्रवर्ती
डिसाइफरमेंट आॅफ इंडस स्क्रिप्त—ए न्यू लाइट. कलकत्ता, इंडियन पब्लिकेशंस, १९७५. ५४२पृ० फलक २४ सेमी० १८.०० (२०० में से ४६ मुद्राओं का अर्थ देने का प्रयत्न)

रविप्रकाश, १९४०–
वर्ब मार्फोलाजी इन मिडिल इंडो-आर्यन. नई दिल्ली, मुंशीराम मनोहरलाल, १९७५. ६, ३३६ पृ० २२ सेमी० ९०.०० (मध्य भारोपीय भाषाओं की क्रियाओं का रूपात्मक अध्ययन)

वर्सिग, गेर्नट और अल्रिच नेवेर्लिंग, संपा०
टर्मिनलॉजी आॅफ डॉकूमेंटेशन इन इंगलिश, फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश एंड रसियन. पेरिस, द यूनिस्को प्रेस, १९७६. २७३पृ० २४ सेमी० (आधारिक प्रलेखन शब्दावली में एकरूपता प्राप्त करने के लिये पुस्तकाध्यक्ष, अनुवादक तथा इस विषय के विद्यार्थियों के लिये प्रस्तुत शब्दावली)

सुब्रमण्यन, एस० वी०
ग्रामर आॅफ अकनानूरु विद इंडैक्स. त्रिवांद्रुम, केरल विश्वविद्यालय-तमिल विभाग, १९७२. ३५८ पृ० २८ सेमी० (संगमकालीन आठ काव्य संग्रहों में से एक संग्रह का व्याकरण)

सुब्रमनियम, वी० आई०
डायलैक्ट सर्वे आॅफ मलयालम-एज़हवतूय. त्रिवांद्रुम, केरल विश्व०, १९७४. ६८८ पृ० नकशा २५ सेमी० (इसमें विदेशों में और भारत में हुए सर्वेक्षण कार्य सम्मिलित हैं. मूल शब्दसूची, कोश, प्रश्नावली, बोली-क्षेत्र आदि के विवरण हैं : इससे पूर्व भी कई बोलियों के व्याकरण इस विभाग द्वारा प्रस्तुत किये जा चुके हैं)

तमिल

अन्नमलाइ विश्वविद्यालय
तमिषप्पुलवर वरलाररुक-कलंजियम्. अन्नमलाइनगर, अन्नमलाइ विश्वविद्यालय–तमिल विभाग, १९७४ (जि० १—अ-औव) ८,३६७पृ० २१सेमी० १५.०० (अकारादि क्रम में १९७० तक के १०५८ तमिल लेखकों के संक्षिप्त रेखाचित्र और उनकी महत्वपूर्ण कृतियों के परिचय)

वानमामलै, एन०
संपाहृ मक्कलुम परपुम. मद्रास, न्यू सैंचुरी, १९७५. ८, १८१पृ० लेखफोटो. १८ सेमी० (विभिन्न समयों में प्रकाशित नृतत्व संबंधी लेखों का संग्रह)

सुब्रमण्य भारती, सी०
भारतीय पुटैयल, संपा० आर० ए० पद्मनाभ. मद्रास, अमूद, १९७५. १६, ३२१ (३री जिल्द). फलक १८ सेमी० १२.०० (लेखक कृत अप्रकाशित गद्यलेखन एवं भारती पर अन्य लेख)

मराठी

ओवंडे, गंगाधर कृष्ण
स्मृति विहार. बड़ोदे, वैदेही गोवंडे, १९७५. २१६ पृ० २१ सेमी० २०.०० (कृषि-शास्त्रज्ञ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के संस्मरण : संगीत महफिलों के रोचक विवरण भी सम्मिलित हैं।)

दिवेकर, हरी रामचंद्र, १८८४-१९७५.
डा० ह० रा० दिवेकर निवडक लेखसंग्रह. पुणे, डा० रा० ना० दांडेकर, १९७६. २२२ पृ० २१ सेमी० (विशिष्ट विद्वान की चुनी हुई शोधनिबंधादि रचनाएं. १६ अंग्रेजी, १४ मराठी, ३ हिंदी में एवं १ संस्कृत में)

हिंदी

किशोर काबरा
रीतिकालीन काव्य में शब्दालंकार. मथुरा, जवाहर पुस्तकालय, १९७५. ३१६पृ० २२ सेमी० ३०.००

गर्जे, चन्द्रकान्त
हिंदी-मराठी के ऐतिहासिक उपन्यास. कानपुर, पुस्तक संस्थान, १९७६. ३२७ पृ० २२ सेमी० ४०.००

गाडगील, म० के०
हिंदी एकांकियों में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति. कानपुर, पुस्तक संस्थान, १९७६. २६४ पृ० २२ सेमी० ४०.००

गायकवाड, ज्ञानराज काशीनाथ
आधुनिक हिंदी नाटकों में संघर्ष तत्व. कानपुर, पुस्तक संस्थान, १९७५. ४१६ पृ० २२ सेमी० ५०.००

जियालाल हंडू
कश्मीरी और हिंदी सूफीकाव्य का तुलनात्मक अध्ययन. दिल्ली, भारतीय ग्रंथ निकेतन, १९७३. १६, ५०४पृ० २२सेमी० ४५.००
(कुरुक्षेत्र विश्व० से स्वीकृत प्रबंध)

नगीना जैन, १९३५–
आंचलिकता और हिंदी उपन्यास. नयी दिल्ली, अक्षर प्रकाशन, १९७६. १२,२२३ पृ० २२ सेमी० ३५.०० (आगरा विश्व० से स्वीकृत प्रबंध)

बुद्धसेन नीहार
विश्वकवि निराला. दिल्ली, रीगल बुक डिपो, १९७५. १६, ४२४ पृ० २२ सेमी० ६०.००

माडगूलकर, ग० दि०
हिंदी गीत रामायण, अनु० रुद्रदत्त मिश्र. बंबई, जयमंगल-शिव सृष्टि, १९७६. १६, १६८पृ० २२सेमी० १२.०० (समश्लोकी अनुवाद)

रामेश्वर मिश्र
राष्ट्रभाषा हिंदी का स्वरूप–विधान. दिल्ली, भारतीय ग्रंथ निकेतन, १९७५. ६, ४५८ पृ० २२ सेमी० ५५.००

लक्ष्मीकान्त शर्मा
जैनेन्द्र के उपन्यासों का मनोविज्ञानपरक शैलीतात्विक अध्ययन. नई दिल्ली, पूर्वोदय प्रकाशन, १९७५. ३०,२९२पृ० २२ सेमी० ४५.००

वसन्ता, एस०
आधुनिक हिंदी कविता में दुरूहता. (सन् १९२० ई० से सन् १९६५ ई० तक). दिल्ली, वाणी प्रकाशन, १९७५. ३२०पृ० ३२सेमी० ४०.००

विनोद गोदरे
छायावादोत्तर हिंदी प्रगीत. दिल्ली, वाणी प्रकाशन, १९७५. ३३६पृ० २२सेमी० ४५.००

संतराम अनिल
कनौजी लोक साहित्य. दिल्ली, अभिनव प्रकाशन, १९७५. ३१२पृ० २२ सेमी० ४५.००

सहस्त्रबुद्धि, विमल, १९३१–
हिंदी उपन्यासों में नारी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण. कानपुर, पुस्तक संस्थान, १९७४. ४१९ पृ० ४०.००

सावित्रीचंद्र 'शोभा'
सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में समाज और संस्कृति–सूर, तुलसी एवं दादू के विशेष संदर्भ में. दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, १९७६. १६,२३५ पृ० २४ सेमी० ४०.००
(अलीगढ़ विश्व० से स्वीकृत प्रबंध के आधार पर यत्किंचित परिवर्तित अध्ययन) ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहधर्मी-चर्चा

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना

स्थापना : हिंदी शोधकार्य, पुस्तकालय एवं प्रकाशन जगत् को प्रतिष्ठा देने वाली संस्थाओं में बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् अन्यतम संस्था है। बनारस में नागरी प्रचारिणी सभा (१८९३) और इलाहाबाद में हिंदी साहित्य सम्मेलम (१९१२) क्रमशः शोध और प्रचार का कार्य अपने ढंग से करती आ रही हैं। किंतु बिहार जैसे बड़े राज्य की अपनी ही विशेषता है, तथा दूरस्थ संस्थाएँ हिंदी के बृहत् अंचलों की भाषागत एवं साहित्यगत गतिविधियों एवं स्थानीय अभावों की दैनंदिनी और स्थायी आवश्यकताओं की पूर्ति कैसे कर सकती थीं? पटना के वरिष्ठ साहित्यकार डॉ० लक्ष्मीनारायण सुधांशु की प्रेरणा से बिहार विधानसभा ने ११ अप्रैल १९४७ ई० को 'परिषद्' की स्थापना के अभिप्राय से एक प्रस्ताव भी स्वीकृत किया था। किंतु १९४७ से ४९ई० तक का समय संपूर्ण देश के लिए उथलपुथल का समय था। अतः अवसर मिलते ही जुलाई १९४९ में शिक्षा विभाग के अंतर्गत राजकीय संस्था के रूप में इसकी स्थापना हुई और ठीक एक वर्ष में ही जुलाई १९५० ई० से परिषद् का कार्य आरंभ हो गया।

यह भी संयोग ही था कि सरकारी तंत्र में उस समय आचार्य बदरीनाथ वर्मा शिक्षा मंत्री थे तथा मंत्रालय के सचिव थे साहित्य सर्जक श्री जगदीशचंद्र माथुर। परिणाम यह हुआ कि परिषद् की कार्य-पद्धति अनुभवी शिक्षाविदों, साहित्यकारों की परिकल्पना और अनुभव का पुट लेकर निर्मित हुई। इसी शुद्ध साहित्य अनुष्ठान का परिणाम था कि उस समय के वरिष्ठतम आचार्य शिवपूजन सहाय को (जन्म १८९३), जो उस समय अट्ठावन वर्ष के हो चुके थे, पूर्णकालिक मंत्री बनाया गया। यों इनसे भी पहिले शिक्षा विभाग के प्रकाशन पदाधिकारी पं० छबिनाथ पांडेय ने मंत्री पद पर कार्य किया था।

परिषद् के संस्थापक सदस्य बनाए गये—राजा० रा० र० प्र० सिंह, सुधांशु, छबिनाथ पांडेय, दिनकर, बेनीपुरी, म० प्र० दीक्षित, मो० ला० महतो, म० रं० प्र० सिंह, के० मिश्र 'प्रभात', डॉ० बुल्के, जा० व० शास्त्री, राधाकृष्ण, धर्मेंद्र ब्र० शास्त्री, डॉ० वि० प्रसाद, प्रो० जगन्नाथ मिश्र, प्रो० जगन्नाथराय शर्मा, डॉ० अनंत सदाशिव अल्तेकर, सा० वि० वर्मा, बु० झा, 'कैरव', डा० बदरीनारायण प्रसाद, डॉ० जनार्दन मिश्र, पं० अ० वि० झा, अमरेंद्र नारायण, भुवनेश्वरनाथ मिश्र 'माधव', भागवत प्रसाद, उमानाथ, गोरखनाथ सिंह, ज० चं० माथुर। परिषद् के अध्यक्ष आचार्य बदरीनाथ वर्मा और उपाध्यक्ष थे शार्ङ्गधर सिंहजी (पटना विश्वविद्यालय के उपकुलपति)। इस प्रकार प्रति तीसरे वर्ष परिषद् का पुनः संगठन होता है। शिक्षा मंत्री पदेन अध्यक्ष और राज्य के वरिष्ठ साहित्यकार सदस्य होते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि यह सरकारी तंत्र साहित्यकारों को प्रतिष्ठा देने और कार्यसंचालन की दृष्टि से पर्याप्त लचीला है एवं परिषद् के निर्माताओं की सूझबूझ का परिचायक है।

उद्देश्य और कार्य इस प्रकार संलिखित हैं : आधुनिक भारतीय भाषाओं के साहित्य के संवर्धन, भारत की राष्ट्रभाषा तथा बिहार की राजभाषा हिंदी में कला, विज्ञान एवं अन्यान्य विषयों के मौलिक तथा उपयोगी ग्रंथों के प्रकाशन और बिहार की प्रमुख बोलियों के अनुशीलन की समुचित व्यवस्था करना इस परिषद् का प्रमुख उद्देश्य है। उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए परिषद् की कार्यशैली के अंग हैं:—

(क) प्रामाणिक ग्रंथों के प्रणयनार्थ पुरस्कार देना।

(ख) अन्य भाषाओं के साहित्यिक-वैज्ञानिक ग्रंथों के अनुवाद प्रस्तुत करना।

(ग) राज्य की साहित्य-संस्थाओं एवं अन्य प्रचलित भाषाओं के ग्रंथ प्रकाश में लाना।

(घ) लोक साहित्य का संकलन-प्रकाशन करना।

(ङ) राज्य में प्रचलित बोलियों का साहित्यिक एवं वैज्ञानिक अध्ययन को प्रोत्साहन देना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(च) विद्वानों को विशिष्ट विषयों पर आमंत्रित कर उनसे भाषण कराने की व्यवस्था करना; भाषण प्रकाशित करना।

(छ) महत्वपूर्ण प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों का अन्वेषण कराना और प्रकाशन की व्यवस्था कराना।

(ज) उद्देश्य की सम्यक् सिद्धि के लिये अन्यान्य आवश्यक साहित्यिक महत्व के कार्य करना।

कार्य की दृष्टि से परिषद् का कार्यालय इस प्रकार गठित है : प्रकाशन विभाग, प्राचीन पोथी-शोध विभाग, लोकभाषा अनुसंधान विभाग, पुस्तकालय, साहित्य-इतिहास विभाग, विद्यापति-अनुसंधान विभाग, भाषा सर्वेक्षण विभाग, पत्रिका प्रकाशन, और भंडार-बिक्री विभाग।

पुरस्कार व्यवस्था : परिषद् ने भाषा-साहित्य की अभिवृद्धि और साहित्यकारों के सम्मानार्थ पुरस्कारों की व्यवस्था की है, यथा—

वयोवृद्ध साहित्यिक सम्मान पु० (रु० १५,००), अ० भारतीय हिंदी ग्रंथ पु० (१०००), सर्जनात्मक ग्रंथ पु० (१०००), अहिंदी भाषा-भाषी लेखक हिंदी ग्रंथ पु० (१०००), छात्र-छात्रा निबंध प्रतियोगिता (१०० रु० के दस)।

विशिष्टता : कहना चाहिये कि १९४७ ई० के बाद हिंदी क्षेत्र में स्थापित साहित्यिक संस्थाओं में परिषद् ने गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है। यह स्थान इसे संभवतः और मुख्यतः अपने प्रकाशनों, पुस्तकालय निर्माण और भाषणमालाओं से प्राप्त हुआ है। परिषद् ने भारतीय स्तर के हिंदी लेखकों की गंभीर रचनाएँ बिना किसी राज्यपरक भेदभाव के प्रकाशित की हैं। इनमें से कुछ लेखकों के नाम से ही प्रकाशन-गौरव का आभास होता है : आचार्य नरेन्द्रदेव कृत **बौद्ध धर्म-दर्शन**, पं० रामावतार शर्मा कृत **यूरोपीय दर्शन**, गोपीनाथ कविराज कृत **काशी की सारस्वत साधना**, गिरधर शर्मा चतुर्वेदी कृत **वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति**, राहुल कृत **मध्य एशिया का इतिहास**, मोतीचंद्र कृत **सार्थवाह**, अ० स० अलतेकर कृत **गुप्तकालीन मुद्राएँ**, नलिन विलोचन शर्मा कृत **साहित्य का इतिहास-दर्शन**, आदि। स्पष्ट है कि यह ना० प्र० सभा जैसी संस्थाओं की लीक (क्लासिक्स ग्रंथ प्रकाशन) से हट कर परिषद् ने अपना जो क्षेत्र चुना है वह भविष्य में प्रगति का द्योतक है।

अनुसंधान पुस्तकालय : इसी प्रकार परिषद् ने थोड़े ही समय में जो सामग्री एकत्रित की है उससे व्यवस्थापकों की सूझबूझ का पता लगता है। क्या पोथियों और क्या मुद्रित पुस्तकों के संग्रह, दोनों क्षेत्रों में प्रगति हुई है। परिषद् के लिए वस्तुतः पृथक् **पुस्तकालय-भवन** और उसमें प्रशिक्षित ग्रंथाध्यक्ष एवं तकनीकी कर्मचारियों की आवश्यकता है।

परिषद् के विस्तृत ब्यौरे के लिये **परिषद् परिचायिका—१९७६ ई०**, ३४ पृष्ठों की पुस्तिका परिषद् कार्यालय से निःशुल्क उपलब्ध है। इसमें पुरस्कारों, प्रकाशनों एवं कार्यपद्धति आदि का सम्यक् ब्यौरा प्राप्त है। ठिकाना : बिहार-राष्ट्र-भाषा-परिषद्, पटना-४।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य मंच

मॉरिशस में द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन

मॉरिशस की राजधानी पोर्टलुई से आठ किलोमीटर के अंतर पर **मोका** अंचल में स्थित **महात्मा गाँधी प्रतिष्ठान** में २८ अगस्त को प्रधान मंत्री सर शिवसागर रामगुलाम ने द्वितीय विश्व सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कहा कि इस सम्मेलन से हमें यह विचार करते हुए एक प्रकार का गर्व होता है कि हम सब लोग एक विशाल हिंदी नाम के परिवार से संबद्ध हैं—उस भाषा से जो बोलने की दृष्टि से विश्व की तीसरी बड़ी भाषा है। प्रधानमंत्री महोदय ने हिंदी को स्नेह और एकता का प्रतीक मानते हुए कहा कि यह जनता की भाषा रही है तथा इसने सदैव स्वतंत्रता का संदेश देते हुए सांस्कृतिक दासता को अस्वीकार किया है। इसने भारत और मॉरिशस की स्वतंत्रता में बहुमूल्य योगदान किया है।

सम्मेलन की तैयारी विस्तृत रूप से की गई। **मोका** नाम के इस उपनगर के प्रधान मार्ग तो अलंकृत थे ही, आयोजन-कर्त्ताओं के अलावा स्थानीय समाजों की ओर से छोटे-छोटे मार्ग भी सजाए गये थे। स्मरणीय तथ्य यह है कि मॉरिशस में हिंदी के बाद तमिल तेलुगु, मराठी और उर्दू बोलने वालों की संख्या भी पर्याप्त है तथा तमिल एवं तेलुगु अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भी मॉरिशस के प्रतिनिधि भारत आए थे। इस तथ्य का उल्लेख सर रामगुलाम ने भी अपने भाषण में किया था। अतः यह स्वाभाविक ही है कि इस देश में भारत के प्रति विशिष्ट प्यार हो।

इस उद्घाटन समारोह की अध्यक्षता की भारतीय प्रतिनिधि दल के प्रधान एवं स्वास्थ्य मंत्री डॉ० करणसिंह ने। डॉ० करणसिंह ने कहा कि हिंदी विश्व की स्वीकृत भाषाओं के साथ अपना उचित स्थान प्राप्त करने के लिये आगे बढ़ रही है। यूनेस्को ने तो इसे स्वीकार किया है और एक दिन यह संयुक्त राष्ट्र (यू० एन०) की भाषा भी होकर रहेगी। डॉ० सिंह ने संस्कृत भाषा के अध्ययन की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा कि हिंदी और भारतीय भाषाओं का विकास संस्कृत के अध्ययन से और अधिक होगा। २८ अगस्त का उद्घाटन समारोह संस्कृत में गणेश स्तवन से आरंभ हुआ। इस अवसर पर मॉरिशस के कबीना मंत्री तो थे ही, विश्व के अनेक भागों से भी विद्वान प्रतिनिधि आए हुए थे। भारत के साथ, जापान, फ्रांस, इटली पश्चिमी जर्मनी, चेकोस्लोवाकिया, संयुक्त राज्य, स्वीडन, केन्या, मलावी, मदागास्कर और तंजानिया आदि के प्रतिनिधि उपस्थित थे।

मॉरिशस में युवा और खेल-क्रीड़ा मंत्री श्री डी० बंसतराय ने, जो प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन में भी उपस्थित थे, कहा कि कभी भारत से आये मॉरिशस के निवासियों ने जो कष्ट सहन किए हैं उनकी कहानी बड़ी मर्मस्पर्शी है। किंतु इस सबके होते हुए भी इन लोगों ने अपनी संस्कृति और भाषा के प्रति जो अटूट आस्था बनाए रखी और जिस ढंग से इन सबको जीवित रखा वह अपने आप में स्प्रहणीय है। प्रधान मंत्री श्री रामगुलाम ने आगत प्रतिनिधियों को रात में प्रीतिभोज पर आमंत्रित किया।

दूसरे दिन अपरान्ह में हिंदी की समस्याओं को लेकर परिसंवाद आयोजित था। परिसंवाद इस विश्वास के साथ शुरू हुआ कि हिंदी भाषा यथासमय अंतर्राष्ट्रीय भाषा होकर रहेगी। परिसंवाद का विषय था **अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में हिंदी : उसकी शैलियाँ और विभिन्न रूप**। इस विचार गोष्ठी में यह बात भी उभर कर सामने आई कि हिंदी संबंधी कार्य और जागरण केवल उन्हीं देशों में (मॉरिशस, फिजी, गुयाना, सुरीनाम आदि) देखने में नहीं आ रहा है, जहाँ भारत के लोग जाकर बस गए हैं। यूरोपीय देशों में भी बहुत कुछ हो रहा है और अन्य देशों में भी हो रहा है जो वस्तुतः भारत से उपर्युक्त रूप में संबद्ध नहीं हैं।

परिसंवाद में प्रमुख रूप से भाग लिया मॉरिशस के कबीना मंत्री श्री खेर जगत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिंह, हाइडेलबर्ग विश्वविद्यालय के हिंदी प्रोफेसर लोथार लुट्जे, संयुक्तराज्य अमेका की की श्रीमती सारा कोहिम, चेकोस्लोवाकिया के डॉ० ओडोलेन स्मकेल, जापान के के० दोई, फ्रांस की श्रीमती निकोल बलबीर, स्वीडन के लियोनार्ट पियर्सन और हंगरी की कुमारी इवा आरावी। संयोजक थे भारत के कवि और कुशल संपादक धर्मवीर भारती। सबने अपने-अपने ढंग से परिसंवाद के विषय पर अपने विचार प्रगट किए। मॉरिशस के हिंदी लेखक सोमदत्त बखौरी ने अपील की कि भारतीय तथा अन्य सब देश के लेखकों में घनिष्ठ और अर्थपूर्ण संबंध अपेक्षित है। पता ही नहीं लगता कि कहाँ क्या हो रहा है? भारत के लेखक, कवि और पत्रकार श्रीकांत वर्मा ने बाहर के शब्दों को ग्रहण करने और व्याकरण के ढाँचे को लचीला बनाने की आवश्यकता पर बल दिया और कहा कि हिंदी का अंतर्राष्ट्रीय रूप समृद्ध करने के लिये ऐसा करना नितांत आवश्यक है। अमेरिकी श्रीमती कोहिम ने बतलाया कि उनके देश में काफी लोग इस भाषा को सीख रहे हैं—कुछ तो इसके सौंदर्य के कारण और कुछ इसके अंतर्राष्ट्रीय योगदान के कारण। मॉरिशस की कुमारी धनवंती रिकोई ने अपने देश में समृद्ध पुस्तकालय की आवश्यकता के लिये उचित ही कहा।

भारत से पहुँचे अन्य प्रतिनिधियों में उल्लेखनीय हैं: केन्द्रीय प्रशासन के प्रतिनिधि श्री रमाप्रसन्न नायक, बी० पी० सिन्हा, ना० प्र० सभा, वाराणसी के अध्यक्ष श्री वेणीशंकर झा, प्रसिद्ध कहानी लेखक कमलेश्वर, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के मंत्री श्री आंजनेय शर्मा, प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन के महासचिव श्री अनंत गोपाल शेवड़े, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, अमृता प्रीतम, भगवतीचरण वर्मा, विमल मित्र, फादर बुल्के, संसद सदस्य शंकरदयाल सिंह, सुधाकर पांडेय, चंदूलाल चंद्राकर, योगेंद्र शर्मा, सूचना मंत्रालय के सचिव के० एन० प्रसाद, राजभाषा विभाग के सचिव सुधाकर द्विवेदी; विदेश मंत्रालय के स० सचिव एस० वी० पुरुषोत्तम और हिंदी अधिकारी बच्चूप्रसाद सिंह। भारत से गैरसरकारी प्रतिनिधियों में प्रमुख थे अमृतलाल नागर, उ० ना० अश्क, महावीर अधिकारी, म० श्याम जोशी, राजेंद्र अवस्थी, कन्हैयालाल नंदन, शि० मं० सिंह सुमन, डॉ० नामवर सिंह, शीला संधू, राजेंद्र यादव, श्या० नं० किशोर, बाल० बैरागी और ललित सुरजन।

२६ तारीख को गोष्ठी का विषय था **जनसंचार माध्यम और हिंदी.** संयोजक थे दैनिक हिंदुस्तान के संपादक चंदूलाल चंद्राकर। नवभारत टाइम्स, बंबई के संपादक श्री महावीर अधिकारी ने सुझाव दिया कि विकासशील देशों को **गुटनिरपेक्ष संवाद पद्धति** में योगदान देना चाहिये। **साप्ताहिक हिंदुस्तान** के संपादक श्री मनोहर श्याम जोशी ने कहा कि हिंदी के समाचारपत्र जब तक अनुवादों पर निर्भर रहेंगे तब तक विकास कैसे होगा? मॉरिशस के श्री दीपचंद बिहारी, संसद् सदस्य श्री शंकरदयाल सिंह ने रेडियो और टेलीविजन पर हिंदी को उचित रूप से प्रतिष्ठित करने पर जोर दिया। इस गोष्ठी में भाग लेने वालों में प्रमुख थे माधुरी के संपादक श्री अरविंद कुमार, **सारिका** के संपादक श्री कमलेश्वर।

हिंदी और स्वैच्छिक संस्थाओं की भूमिका एवं **विभिन्न देशों में हिंदी के पठन-पाठन की समस्याएं** विषयों पर तीसरी और चौथी गोष्ठियाँ आयोजित थीं। गोष्ठियों के इन अयोजनों से स्पष्ट झलकता है कि इस द्वितीय सम्मेलन की व्यवस्था पहले सम्मेलन से निश्चित रूप से अधिक व्यवस्थित और अर्थपूर्ण थी। पाठ्य-पुस्तकों के संबंध में माना गया कि उपर्युक्त पुस्तकें उपलब्ध नहीं हैं और अन्य वैज्ञानिक उपकरण भी अनुपस्थित।

समापन-वक्तव्य: (१) मॉरिशस में एक **विश्व हिंदी केंद्र** की स्थापना की जाय। (२) विभिन्न देशों में भाषा संबंधी कार्यों को संगठित करने के लिये **अंतर्राष्ट्रीय हिंदी पत्रिका** का प्रकाशन किया जाय जिसमें मानव विश्व नागरिक के रूप में विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय कर सके। (३) **वसुधैव कुटुंबकम्** के सिद्धांत से हिंदी को प्रेम, सेवा और शांति की भाषा कहा गया। यह सब बातें संदर्भ-भारती के अगस्त ७६ अंक में प्रस्ताव के रूप में प्रस्तुत हैं। पाठक कृपया पुनः इस **संपादकीय** को देखें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरच्चंद्र : एक उत्सव शृंखला

प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक डॉ० सुनीति कुमार चट्टोपाध्याय की अध्यक्षता में १७ सितंबर (शुक्रवार) को बंगीय साहित्य परिषत् (कलकत्ता) में शरत-प्रदर्शनी का उद्घाटन हुआ। अध्यक्ष महोदय ने बतलाया कि शरत् के चित्रों का एलबम और हस्तलिपि के नमूनों से परिपूर्ण पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है।

राज्य प्रशासन ने भी महाजाति सदन में शरत् संबंधी सम्मेलन आयोजित किया। उद्घाटन किया बंगाल के वरिष्ट नेता-नागरिक श्री अजयकुमार मुखर्जी ने। श्री बनफूल, बंगाल के प्रसिद्ध कथाकार ने कहा कि हम एक उत्सव से दूसरे उत्सव में जाते हैं। किंतु मैं जानना चाहूँगा कि ऐसे उत्सवों के प्रबंधकों में से कितनों ने शरत् को पढ़ा-समझा है? डा० रमेशचंद्र मजूमदार ने बतलाया कि शरत् को वाराणसी की एक विधवा ने बतलाया था कि चरित्रहीन की किरणमयी से उसे बड़ी प्रेरणा मिली है। इस पर लेखक ने बतलाया था कि बहुत से लोगों ने इस उपन्यास लेखन पर मेरी भर्त्सना की थी। किंतु इस महिला के कथन से मैं आश्वस्त हुआ कि मैंने ठीक ही लिखा था।

देवानंदपुर (हुगली) में तीन दिवसीय उत्सव मनाया गया। उद्घाटन किया श्री पन्नालाल दासगुप्त ने। इस अवसर पर प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था।

दिल्ली में शरत्: मावलंकर हाल में शरत जयंती बड़ी शालीनता से संपन्न हुई। सभा में बोलते हुए श्री जैनेन्द्रकुमार ने कहा कि वस्तुतः शरत् ने भारतीय एकता की दृढ़ नींव रखी थी। वह आधुनिक दार्शनिक थे। यह उत्सव **अखिल भारतीय शरत् शती समिति** ने आयोजित किया था। समिति के संयुक्त सचिव श्री मणि मुखोपाध्याय ने बतलाया कि वर्ष भर शरतोत्सव मनाया जायगा। श्री मुखोपाध्याय ने बतलाया कि हम सब सांस्कृतिक गिरावट की ओर जाने लगे हैं, अतः इस समय हमें शरत् को समझना होगा। इतिहास के संदर्भ में शरत् की सामाजिक परिस्थितियों का विश्लेषण करना बहुत आवश्यक है। यह समिति ११ से २८ नवंबर तक विद्वानों के भाषण, परिसंवाद, प्रतियोगिता, नाटक आदि का आयोजन करेगी और भारतीय एवं विदेशी लेखकों के गवेषणापूर्ण लेखों से परिपूर्ण एक उच्च-कोटि की पुस्तक भी (गोल्डन बुक) प्रकाशित करेगी।

बंगीय साहित्य परिषत् ने २७ सितंबर (सोमवार) को बंगाल के वरिष्ट साहित्यकार श्री प्रेमेन्द्र मित्र की अध्यक्षता में शरत् शताब्दी उत्सव आयोजित किया। परिषत् के सचिव डॉ० मदनमोहन कुमार ने बतलाया कि शरत् कृत लगभग सब पांडुलिपियाँ एकत्रित कर ली गई हैं और इन्हें **परिषत् संग्रहालय** में सुरक्षित कर दिया गया है।

पेरुंगलूल वैद्यलिंगम् अखिलंदम्
(भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार)

भारतीय ज्ञानपीठ की पुरस्कार समिति ने तमिल के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री. पेरुंगलूल वैद्यलिंगम् अखिलंदम् (अखिलन नाम से प्रसिद्ध) को ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित करने की घोषणा की है। बहुमुखी प्रतिभा के धनी श्री अखिलन ने उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध, यहाँ तक कि बच्चों के लिये नाटक-कहानी आदि भी लिखी हैं। आपके बहुप्रशंसित उपन्यासों में परिगणित हैं: नेनजिन अलैगल, पावइ विलक्कु, वेंगैयिन मैंदन। ज्ञानपीठ ने आपके उपन्यास चित्तिरप्पावै पर पुरस्कार घोषित किया है।

आजकल श्री अखिलन मद्रास आकाशवाणी में तमिल कार्यक्रम के अध्यक्ष हैं।

परमेश्वर अय्यर (महाकवि उल्लूर) जन्मशती समारोह (१८७७-१९४९)

क्विलोन जिला (केरल राज्य) में मलयालम के महाकवि उल्लूर की जन्म शताब्दी आयोजन की तैयारी आरंभ हो गई है। इस आयोजन के अध्यक्ष श्री टी. एस. विश्वनाथ पिल्लै और सचिव **श्री कादवूर चंद्रन पिल्लै** हैं। समिति के अन्य सदस्य हैं क्विलोन के पादरी जेरोम फर्नांडीज़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जिलाधीश श्री बाबू जैकब। स्थानीय नागरिक श्री एन० कप्पन हैं संरक्षक।

समारोह का सिलसिला जिले के प्रत्येक ताल्लुक में सम्मेलन, परिसंवाद, विद्यार्थियों के मध्य भाषण और निबंध प्रतियोगिताओं द्वारा वर्ष भर चलता रहेगा। स्कूल-कालेजों में छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की जा रही है। कवि उल्लूर की कुछ काव्य-पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं--**अमृतधारा, अरुणोदयम्, भाषा चम्पूक्कल, चित्रशाल, दीपावली** और **हृदय कौमुदी**। **अंब** नामक नाटक भी लिखा है।

लघु कन्नड़ कोश :

कन्नड़ साहित्य परिषद् के अध्यक्ष श्री जी० नारायण ने प्रेस-सम्मेलन को बतलाया कि परिषद् ७०० पृ० का **लघु कन्नड़ कोश** अंग्रेजी की **जेम डिक्शनरी** के आकार-प्रकार में प्रकाशित करेगी। इस कोश का संपादन कन्नड़ के विख्यात पंडित एच० एम० नायक कर रहे हैं। इस कोश की दो लाख प्रतियाँ प्रकाशित की जायँगी और इसका मूल्य केवल २ रु० रहेगा। राज्य प्रशासन इसके प्रकाशन आदि के लिये ग्यारह लाख रु० खर्च करेगा।

वस्तुतः परिषद में कई वर्षों से पाँच जिल्दों में बृहदाकार कोश का संपादन कार्य हो रहा है। इस कोश की पहली जिल्द प्रकाशित हो चुकी है और दूसरी एवं तीसरी जिल्दें क्रमशः १४ जुलाई १९७६ और अप्रेल १९७७ में प्रकाशित हो जायँगी। चौथी और पाँचवीं जिल्दों के संपादन का कार्य भी सुचारु रूप से चल रहा है। यह कार्य भी १९७७ के अंत तक पूरा हो जाने की आशा है। इस योजना में लगभग ३२ लाख रु० से अधिक खर्च आयगा।

परिषद् वार्त्ता

भारतीय भाषा ग्रंथालय
(ग्रंथालय का उद्घाटन)

पूर्वकल्पित योजना के अनुसार ५ सितंबर के प्रातः १० बजे परिषद के सभाकक्ष में प्रसिद्ध विचारक, भारतीय कला और संस्कृति के विद्वान् लेखक एवं कलकत्ता विश्वविद्यालय के भूतपूर्व वागेश्वरी प्रोफेसर **श्री नीहाररंजन राय** के द्वारा परिषद के **भारतीय भाषा ग्रंथालय** का उद्घाटन अनुष्ठान संपन्न हुआ। आरंभ में वाग्देवी स्तवन और मंगलगान के अनंतर परिषद के अध्यक्ष श्री सीताराम सेकसरिया ने प्रोफेसर नीहाररंजन राय और समुपस्थित ग्रंथाध्यक्षों, अध्यापकों, लेखकों एवं गण्यमान नागरिकों का स्वागत करते हुए कहा कि परिषद की स्थापना भारतीय भाषाओं और साहित्यों के विकास को एक **इकाई** के रूप में विकसित करने के लिए की गई है। इसी दृष्टि से परिषद एक ही मंच पर सब भारतीय भाषाओं की चर्चा का कार्यक्रम आयोजित करती है और परिषद की द्वैमासिक पत्रिका **संदर्भ-भारती** भी इसी उद्देश्य से प्रकाशित की जा रही है। परिषद भारत की सब भाषाओं को **सरस्वती** के रूप में देखती है और यही हमारा घोषित आदर्श है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुनः ग्रंथालय की **संयोजिका डॉ० प्रतिभा अग्रवाल** ने बतलाया कि इस ग्रंथालय का आरंभ भारतीय भाषाओं के संदर्भ ग्रंथ, प्राचीन गौरव ग्रंथ और आधुनिक प्रतिष्ठित लेखकों की चुनी हुई रचनाओं के संकलन से किया जा रहा है। भाषा और साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन और विभिन्न भारतीय भाषाओं की ज्ञान राशि के मूल्यांकन-परीक्षण से हमारे लक्ष्य की पूर्ति हो सकती हैं और भारतीय लेखक एक दूसरे के निकट आ सकते हैं। आपने बताया कि अभी संस्कृत, अंग्रेजी, गुजराती, बंगला, मराठी और हिंदी की लगभग १५०० पुस्तकें इस ग्रंथालय में प्रस्तुत की गई हैं। शीघ्र ही अन्य भाषाओं की पुस्तकें प्राप्त करने की व्यवस्था की जा रही है। डॉ० अग्रवाल ने राष्ट्रीय ग्रंथालय के तकनीकी कर्त्ताओं एवं अन्य सहयोगियों की प्रशंसा की और कहा कि हमें विश्वास है कि भविष्य में भी वे ऐसी ही सहयोग-भावना बनाए रखेंगे।

उद्घाटनकर्ता प्रो० राय ने अपने भाषण के आरंभ में ग्रंथालय-परिवेश की सादगी-पूर्ण एकांत वातावरण को ग्रंथालय के लिये सर्वथा उपयुक्त बतलाते हुए कहा कि यह आवश्यक नहीं है कि बड़े प्रचार और वृहत् आरंभ से बाद में भी वह उत्साह और लक्ष्यपूर्त्ति की लगन बनी रहे। यहाँ का रूप देखकर मुझे विश्वास होता है कि परिषद का प्रयत्न अवश्य अर्थवत्ता प्राप्त करेगा। भाषणकर्त्ता ने बड़े ओजस्वी किंतु सम्यक् वाणी में कहा कि सर्वत्र तंत्र तो है–भारी तंत्र, किंतु मन, संकल्प और निष्ठा के मंत्र का अभाव पाया जाता है। ग्रंथालयों के देखभाल करने का जो भी अनुभव मुझे है उसके आधार पर मैं कहना चाहूँगा कि कार्य में आंतरिक मनोयोग ही प्रमुख है। कैसा संयोग है कि मैं अपने सक्रिय जीवन के आरंभ में भी ग्रंथालय से (कलकत्ता विश्व०) संबद्ध था और जीवन की इस वेला में भी (७३-७४ की वयस में) मैं ग्रंथालय से पुनः जुड़ा हुआ हूँ।

आपने श्री सीताराम सेकसरिया से पुराने परिचय के संदर्भ उपस्थित करते हुए कहा कि मैं आपको जानता हूँ और आशा होती है कि भा० भा० परिषद आपकी अनुभवपूर्ण देखरेख में विकास पथ की ओर बढ़ेगी। श्री राय का यह उद्घाटन भाषण वस्तुतः उद्बोधन भाषण की तरह था जिसमें काव्य की गरिमा, अनुभव की सचाई और आत्मा की निष्ठा झलकती थी। ४५ मिनट का यह भाषण श्रोताओं के मन पर काफी देर तक छाया रहा। मंत्री श्री परमानंद चूड़ीवाल ने सब समुपस्थित व्यक्तियों को धन्यवाद देकर इस आयोजन के समापन का संकेत किया।

पुनः ग्रंथालय द्वार पर अलंकृत पुष्प-शृंखला की गाँठ खोल कर प्रो० राय ने प्रवेश द्वार सर्वसाधारण के लिये उन्मुक्त किया। आगत अतिथियों, विद्वानों और पुस्तक प्रेमियों ने काफी समय तक ग्रंथालय की पुस्तकें और सब प्रमुख भाषाओं की पत्रिकाएं देखी-पढ़ीं और हस्ताक्षर पंजिका को अक्षरित किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रद्धांजलि

हेमंतबाला देवी चौधुरानी

बंगला की जानी-मानी साहित्यकार श्रीमती हेमंतबाला देवी चौधुरानी का देहांत १ जून, मंगलवार को कलकत्ता में हो गया। हेमंतबाला १९३१ में रवींद्रनाथ ठाकुर के संपर्क में आई तथा लगभग १० वर्षों तक इनका आपस में पत्राचार (लगभग २६४ पत्र) होता रहा। र० ठाकुर के लिखे पत्र 'चीठीपत्र' संख्या ९, में प्रकाशित हो चुके हैं। देवी चौधुरानी की कृतियों में प्रसिद्ध हैं **अनंत चिंता, हेमंत बेलाये** और **नूतन रूपकथा**।

श्रीमती चारुबाला दासगुप्त

बंगला भाषा की कवयित्री श्रीमती चारुबाला दासगुप्त का निधन शनिवार २४ जुलाई, १९७६ को शांति निकेतन में ८२ वर्ष की आयु में हो गया। प्रारंभ से ही आपका छात्रा-जीवन, पुनः लेखनकाल उच्चकोटि की प्रतिभा का परिचायक रहा। श्रीमती दास गुप्त लेखन कार्य के अलावा सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में भी बोगरा (अब बंगला देश) में (अपने प्रारंभिक कार्य क्षेत्र में) भी पर्याप्त प्रसिद्ध थीं।

जां निसार अख्तर

उर्दू के ख्यातिलब्ध कवि जां निसार अख्तर का निधन बासठ वर्ष की वयस में बुधवार, १८ अगस्त को बंबई में हो गया। आपका जन्म ग्वालियर में हुआ था और आरंभ से प्रगतिवादी विचारधारा से संबद्ध रहे। आप कुछ वर्षों तक हमीदिया कालेज, भोपाल में उर्दू के प्रोफेसर रहे, पुनः जीवन के आखिरी २० वर्ष बंबई में रहे तथा हिंदी फिल्मों के लिये गीत लिखते रहे। १९७३ में आपको नेहरू पुरस्कार मिला था। आपके प्रसिद्ध काव्य-संग्रह हैं **खाक-ए-दिल, पिछले पहर** और **घर आंगन**।

डॉ० भवतोष भट्टाचार्य

संस्कृत साहित्य के प्रसिद्ध पंडित डॉ० भवतोष भट्टाचार्य का निधन भातपाड़ा (चौबीस परगना) में सोमवार २३ अगस्त १९७६ को हो गया। मृत्यु के समय आपकी आयु ७३ वर्ष की थी। आपने प्राचीन साहित्य संबंधी लगभग बीस पुस्तकें लिखीं एवं बंबई ऐशियाटिक सोसाइटी से **पी० वी० काणे स्वर्ण पदक** और **यदुनाथ सरकार स्वर्ण पदक** कलकत्ता की एशियाटिक सोसाइटी से प्राप्त किया था।

काज़ी नज़रुल इस्लाम

बंगभाषा के अत्यंत लोकप्रिय और राष्ट्रीय भावनाओं से ओतःप्रोत क्रांतिकारी कवि काज़ी नज़रुल इस्लाम का निधन २९ अगस्त को प्रातः १०-१० बजे ढाका में हो गया। सुहराबर्दी उद्यान में हजारों की संख्या में लोग नमाज़-ए-जनाज़ा में सम्मिलित हुए, तद्पश्चात् अपरान्ह बेला में कवि को ढाका विश्वविद्यालय की मसजिद के समीप दफना दिया गया। कवि नज़रुल का जन्म बर्दवान जिले के पुरुलिया गाँव में २४ मई १८९९ ई० को हुआ। राष्ट्रीय आंदोलन के प्रवाह में नज़रुल की ख्याति उच्चतम शिखर तक पहुँची थी तथा रवींद्र संगीत के साथ नज़रुल गीति का अपना विशिष्ट स्थान है। आपकी प्रकाशित लगभग २५ पुस्तकों में से कुछ अमर रचनाओं के नामः व्यथार दान (कहानियाँः १९२१), दोलन चंपा १९२३, नज़रुल गीतिका १९३३, संचिता १९४०, अग्निवीणा १९४६ (तीनों काव्य संग्रह), रुबाइयाते हाफिज़ १९३० का अनुवाद। काज़ी ने कई पत्रिकाओं, बंगीय मुसलमान साहित्य पत्रिका (धर्मनिरपेक्ष), मुस्लिम भारत (मासिक),

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
धूमकेतु (१९२२ से) का संपादन किया। १९२४ में प्रेमिला दासगुप्ता से विवाह किया। १९२२ में प्रकाशित अग्निवीणा (पहला काव्य संग्रह) का आवरण चित्र अवनीन्द्रनाथ ने बनाया था। घोर परिश्रमी और दानी स्वभाव के कवि की क्रांतिकारी वाणी अचानक जुलाई १९४२ में मौन हो गई थी। चिकित्सा से अंत तक कोई लाभ न हुआ।

गंगाप्रसाद श्रीवास्तव

हिंदी में पुरानी पीढ़ी के प्रसिद्ध हास्य सम्राट्, नाटक, उपन्यास, कहानी और कविता लेखक गंगाप्रसाद श्रीवास्तव (जी० पी० श्रीवास्तव के नाम से प्रसिद्ध) का निधन अपने निवास स्थान **गंगा-भवन** गोंडा में ३० अगस्त १९७६ को प्रातः ९ बजकर ४५ मिनट पर ८७ वर्ष की वयस में हो गया। आप तीन वर्षों से रुग्ण थे तथा पिछले तीन-चार मास से चारपाई भी नहीं छोड़ पाते थे। आपका जन्म २३ अप्रैल १८९० ई० में छपरा में हुआ और स्नातकोत्तर शिक्षा एवं एल० एल० बी० प्रयाग विश्वविद्यालय से किया। आपने लगभग ४० पुस्तकें लिखीं; किंतु निधन अभावग्रस्त अवस्था में हुआ तथा लेखन कार्य पिछले कई वर्षों से शेष हो चुका था। आपकी लोकप्रिय रचनाएँ थीं : लंबी दाढ़ी (कहानियाँ : १९१३), उलटफेर (नाटक : १९१८), नौकझौंक (गद्य काव्य : १९१९), लतखोरीलाल, दिल जले की आह (उपन्यास : १९३१, १९३२), बौछार (नाटक : १९५३)।

विष्णु सखाराम खांडेकर

मराठी के प्रसिद्ध उपन्यास लेखक विष्णु सखाराम खांडेकर का निधन मिरज में ७८ वर्ष की आयु में २ सितंबर के प्रातः हो गया। भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त-कर्त्ता खांडेकर मराठी के वरिष्ठ और लब्धप्रतिष्ठ कथाकारों में परिगणित तथा अपनी शैली और पौराणिक संदर्भों को आधुनिकता देने की कला में निष्णात थे। आपका जन्म ११ जून १८९८ के दिन सांगली में हुआ था। आपकी कृतियों की संख्या लगभग ६०-६५ है। जीवन भर अनेक प्रकार की व्याधियों और अभावों से ग्रस्त खांडेकर अदम्य उत्साह से मानवीय संबंधों से प्रतिबद्ध और साहित्य के क्षेत्र में कल्याण मार्ग के विश्वासी थे। मराठी में उन्हें शिक्षाशास्त्री, सामाजिक उत्थान के समर्थक और अत्यन्त लोकप्रिय साहित्यकार के रूप में शीर्ष स्थान प्राप्त था। लोग आपको प्यार से **भाऊ-साहेब** कहते थे। आपकी कुछ स्थायी कृतियों के नाम : **ययाति, दोन, ध्रुव, क्रोंच वध** आदि उपन्यास, **कलिका** कहानी संग्रह, **गडकरी : व्यक्ति आणि वाङ्मय** समीक्षात्मक निबंध हैं। आपकी श्रेष्ठ रचनाओं के अनुवाद भारत की प्रायः सब प्रमुख भाषाओं में प्राप्त हैं।

पी० एन० धर

कश्मीरी भाषा के लोकप्रिय लेखक और आकाशवाणी, जम्मू और कश्मीर के निदेशक का निधन ६ सितंबर को दिल्ली में हो गया। मृत्यु के समय आपकी आयु ६१ वर्ष की थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजीयन–आर० एन० २७१४६/७५

भारतीय भाषा परिषद

भारतीय भाषा परिषद, ९ कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७
के लिये श्री परमानंद चूड़ीवाल द्वारा प्रकाशित एवं
मिश्रा एण्ड कं०, १२ ग्रांट लेन कलकत्ता-१२ से मुद्रित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

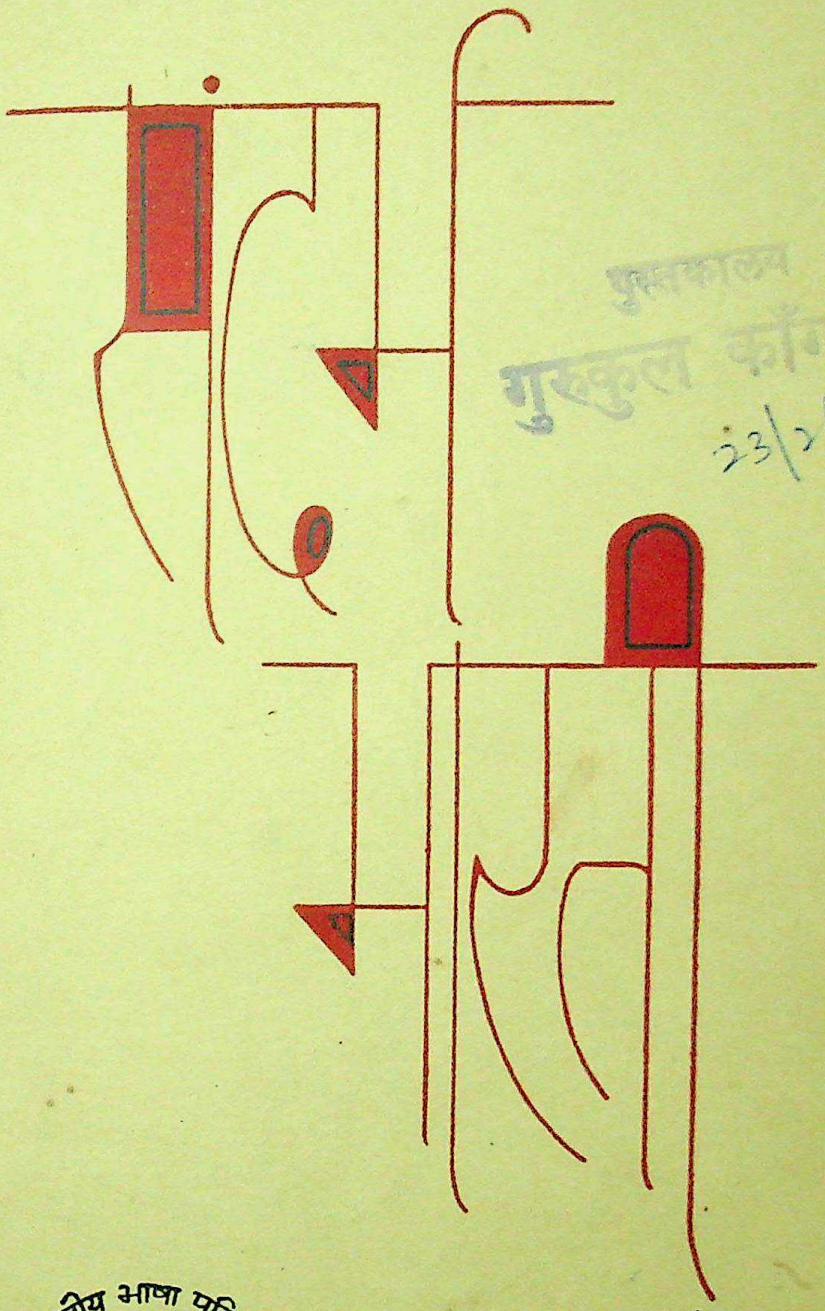

पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी
23/2/78

भारतीय भाषा परिषद्
कलकत्ता

फरवरी
१९७८

• तेलुगु साहित्य अंक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय भाषा परिषद् के उद्देश्य

- भारतीय भाषाओं में पारस्परिक सहयोग-सौहार्द ।
- भारतीय भाषा-साहित्य की विलुप्त राशि की खोज और शोध ।
- विशिष्ट विषयों पर भारतीय विद्वानों की वक्तृताएँ और उनका प्रकाशन ।
- भारतीय भाषाओं के मौलिक एवं अनूदित ग्रन्थों का प्रकाशन ।
- भारतीय भाषाओं और अन्तरराष्ट्रीय महत्व के संदर्भ ग्रन्थों का अनुवाद ।
- उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पत्रिका-प्रकाशन ।
- उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रेक्षागार, संदर्भ पुस्तकालय, वाचनालय, प्रकाशन विभाग, शोधकर्त्ताओं एवं साहित्यकारों के लिये शोधकक्षों और साहित्यकार-आवास की व्यवस्था ।

परामर्श मंडल

अंग्रेजी	:	श्री शमीक बनर्जी, कलकत्ता
असमिया	:	डॉ० बीरेन्द्र भट्टाचार्य, गुवाहाटी
उड़िया	:	डॉ० गोपालचंद्र मिश्र
कन्नड़	:	डॉ० मे० राजेश्वरय्या, मैसूर
कश्मीरी	:	डॉ० शिब्बन कृष्ण रैणा, नाथद्वारा
गुजराती	:	श्री गुलाबदास ब्रोकर, बंबई
तमिल	:	श्री र० शौरिराजन, मद्रास
तेलुगु	:	श्री बालशौरि रेड्डी, मद्रास
पंजाबी	:	डॉ० हरभजन सिंह, दिल्ली
बंगला	:	प्रो० अलोकरंजन दाशगुप्त
मणिपुरी	:	श्री नीलकंठ सिंह, इंफल
मराठी	:	प्रो० वसंत बापट, बंबई
मलयालम	:	डॉ० एम० मलिक मोहम्मद, कालीकट
संस्कृत	:	डॉ० विद्यानिवास मिश्र, वाराणसी
सिंधी	:	डॉ० मोतीलाल जोतवाणी, नई दिल्ली
हिंदी	:	डॉ० प्रभाकर माचवे, नई दिल्ली

संपादक

सन्हैयालाल ओझा

पत्राचार के लिए :— संपादक, संदर्भ भारती, भारतीय भाषा परिषद
९, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००१७
दूरभाष : ४३-२४१८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्व भाषा सरस्वती

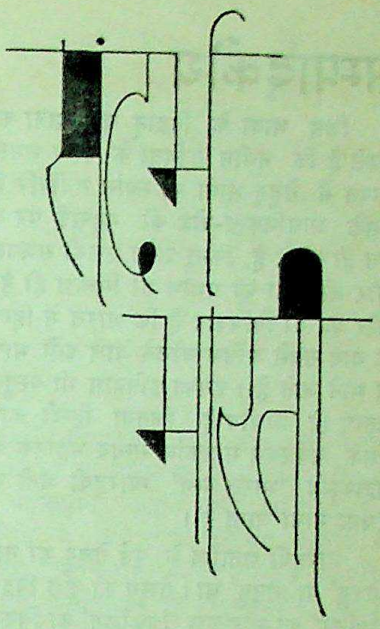

वर्ष ४ : अंक १

फरवरी १९७८

तेलुगु साहित्य अंक

इस अंक के संपादक :

बाल शौरि रेड्डी

द्वैमासिक पत्रिका

वार्षिक : १२.००

एक अंक : २.००

सम्पादकीय : २
स्वातंत्र्योत्तर तेलुगु साहित्य : बालशौरि रेड्डी ३
स्वतंत्र भारत में साहित्य : नार्ल वेंकटेश्वर राव १२
मैं : रा० वेंकट सत्यनारायण १३
आँसू : वैशम्पायन १५
मैं और मेरा साहित्य : श्रीश्री १६
तेलुगुसाहित्य में यौन : श्री राशा १८
संवेदना : दयावन्ती १९
अस्पताल में (लघु नाटिका) : एम० एस० मूर्ति २०
यह स्ट्रीकिंग तो नहीं है (कहानी) : के० कृष्णमूर्त्ति मेनन ८१
हार्ट पेशण्ट : श्री पी० एस० नारायण २५
इंटरव्यू : इन्द्रगंटि जानकी बाला २६
कविताएँ : वी. वी एस. किशोर, सी० नारायण रेड्डी, दुर्गानन्द, गुण्टूरि शेषेन्द्र शर्मा, कुंदुर्त्ति आंजनेयुलु के. राम मोहन राजु एन्वी', इंद्रगटि श्रीकान्त शर्मा, कूरेल्ल, अनन्त, दाशरथी २७
पुस्तक समीक्षा : दी तेलुगु पोएट्स ऑफ मदुरा एण्ड तंजौर, बसेरे से दूर ३४
विशिष्ट-प्रकाशन : अंगेजी, गुजराती, मराठी मलयालम, राजस्थानी, संस्कृत, हिन्दी ३६
अनुसंधान : मराठी, हिन्दी ३९
परिषद वार्ता : ४०
साहित्य मंच : ४१
सहधर्मी चर्चा : नटनागर शोध संस्थान ४४
श्रद्धांजलि : ४६

भारतीय भाषा परिषद

९ कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

जिस भाषा के विद्वान् यह दावा कर सकते हैं कि नवीन कविता के लिए समस्त भारत में तेलुगु-भाषा का स्थान सर्वोपरि है, उसके आधुनिकता-बोध की गहराई पर दो मत हो सकते हैं, किन्तु इससे उसकी सजगता और जीवंतता का प्रमाण तो मिलता ही है। और यह तो निर्विवाद है कि भारत में हिन्दी के बाद सबसे अधिक बोलने वाले इसी भाषा के माने जाते हैं। इसका इतिहास भी वस्तुतः उतना ही प्राचीन है, जितना हिन्दी का। इसके सर्वप्रथम महाकवि नन्नय भट्टारक का महाकाव्य 'भारत ग्रन्थ' ग्यारहवीं शती की रचना माना जाता है।

बारहवीं शताब्दि के पूर्व तेलुगु का नाम 'तेरुगु' या 'तेनुगु' था। तेलुगु को कुछ विद्वान 'त्रिलिंग' का और कुछ 'त्रिकलिंग' का विकार मानते हैं। सामान्यतः तेलुगु को दक्षिण की द्रविड़ भाषा परिवार का सदस्य माना जाता है। भाषा-वैज्ञानिकों का एक दल यही मानता है। किन्तु दूसरा दल इससे भिन्न मत का है। 'आन्ध्र-भाषा-चरित्र' के रचयिता चिलुकुरि नारायण राव के मतानुसार वह आर्य-भाषा परिवार की ही सदस्य मानी गई है। नन्नय भट्ट ने अपने ९०० वर्ष पूर्व लिखित 'आन्ध्र शब्द चिन्तामणि' में स्पष्ट किया है कि प्राकृतों में द्राविड़ी प्राकृत भी एक आर्य भाषा थी। जिस प्रकार आधुनिक भारतीय भाषाओं का जन्म अपने अपने क्षेत्र की प्राकृत, पाली या अपभ्रंश से माना जाता है, उसी तरह तेलुगु भी दक्षिण भारत में प्रचलित प्राकृत का ही, जिसमें हाल की गाथा सप्तशती तथा गुणाढ्य की बृहत्कथा लिखी गई है, विकसित रूप है।

तेलुगु लिपि प्राचीन ब्राह्मी की दक्षिण शाखा का परिवर्तित रूप है, और कन्नड़ लिपि के साथ इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्रारम्भ में दोनों भाषाओं की एक ही लिपि थी। तेलुगु की वर्णमाला सम्पूर्ण, वैज्ञानिक और स्वरान्त है, हिन्दी की तरह व्यंजनांत नहीं। अतः उच्चारण ध्वनियों के शुद्ध और स्पष्ट होने से यह भाषा संगीत के लिए बड़ी उपयुक्त मानी जाती है।

आधुनिक तेलुगु के प्रवर्त्तक कंदुकुरि वीरेशलिंगम् पंतुलु के अनुसार तेलुगु साहित्य चार भागों में विभाजित किया जा सकता है: सन् ७०० से लेकर १०५० तक अज्ञात युग, १०५० से १५०० तक आदि युग, १५०० से १७५० तक मध्य युग, और १७५० के बाद वर्त्तमान युग। प्रतिपादित विषय के अनुसार भी इसे इन चार भागों में विभाजित किया जाता है:

शासन युग—लेखों और ताम्रपत्रों का काल, पुराण युग—संस्कृत के पुराण ग्रन्थों का अनुवाद, प्रबन्ध युग—अनुकृत या स्वतन्त्र काव्य रचना, और गद्य युग—नवीन विकास का आधुनिक युग।

वस्तुतः तेलुगु प्रबन्ध-युग तेलुगु साहित्य का स्वर्ण युग माना जाता है।

संस्कृत के पुराण ग्रन्थों और महाकाव्यों के अनुवादों के अतिरिक्त तेलुगु में प्रबन्ध काव्यों की भी बड़ी समृद्ध परम्परा रही है। विजयनगर के महाराज कृष्णदेवरायलु की 'भुवन विजय सभा' के अष्ट दिग्गज महाकवियों ने अनेक प्रबन्ध काव्य लिखे। स्वयं श्री कृष्णदेव राय ने 'आमुक्त माल्यदा' महाग्रन्थ का प्रणयन किया। इसके अतिरिक्त तेलुगु में लगभग एक हजार से अधिक शतक काव्य लिखे गए। नृत्य, अभिनय और संगीत में प्रवीण कलाकारों द्वारा प्रदर्शित, प्राचीन साहित्य के दृश्य प्रबन्धों के यक्षगान की भी तेलुगु में समृद्ध परंपरा है। इसी तरह सन्त महात्माओं की वाणी के गीति-साहित्य ने भी तेलुगु की समृद्धि में प्रचुर योगदान किया है।

आधुनिक साहित्य के समग्र दृश्यपट को एक प्रबन्ध में समेट लेना सम्भव नहीं है। प्रस्तुत अंक की सीमाएँ हैं, वह मात्र आधुनिक युग के अत्याधुनिक काल खण्ड-स्वातंत्र्योत्तर तेलुगु साहित्य ही का परिचय प्रस्तुत कर रहा है। फिर भी विद्वान सम्पादक बालशौरी रेड्डी के अग्रलेख से आधुनिक प्रवृत्तियों का सम्यक परिचय पाठक पाए बिना नहीं रहेगा। उनका चयन प्रातिनिधिक है, और इसके लिए हम उनके निकट, तथा इस अंक के अन्य कवियों, लेखकों तथा अनुवादकों को अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं।—हमें यह स्वीकार करते हुए बड़ी प्रसन्नता है कि सहयोग, सद्भावना और सहकार के मार्ग, भाषा-बीथियों की सीमारेखा के बावजूद, परस्पर मिलकर हार्दिकता का कितना प्रशस्त राजमार्ग निर्माण कर देते हैं, इसकी प्रतीति साहित्य का क्षेत्र ही दे सकता है।

—स० ओझा

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वातंत्र्योत्तर तेलुगु साहित्य

तेलुगु के विख्यात महाकवि 'श्री श्री' ने स्वातंत्र्योत्तर तेलुगु काव्य "त्वमेवाहम्" (श्री आरुद्र कृत) की भूमिका में बताया है, 'हमें मुख्यत: स्मरण रखने की दो चीजें हैं- एक, भारत भर में राजनैतिक दृष्टि से अधिक जागृत प्रदेश आन्ध्र प्रदेश है। दूसरी : नवीन कविता के लिए समस्त भारत में तेलुगु भाषा का स्थान सर्वोपरि है। इन दोनों के बीच परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है।' यह बात आज भी सत्य है। राजनैतिक चेतना तथा कविता की नवीनतम प्रवृत्तियों में आन्ध्र प्रदेश आज भी अग्रणी है।

स्वतन्त्रता की प्राप्ति के कुछ वर्ष पूर्व ही १९४३ में अभ्युदय लेखक संघ (प्रगतिशील लेखक संघ) की स्थापना हुई थी। इस संघ का साम्यवादी दल के सिद्धान्तों के साथ प्रत्यक्ष संबंध था। महाकवि श्री श्री ने यह बात "प्रगतिशील लेखक और विप्लव दृष्टि-कोण" नामक लेख में स्पष्ट की थी 'अभ्युदय लेखक जिन सामाजिक अत्याचारों को निर्मूल करने की व्यथा अनुभव करता है, उन्हीं के निर्मूलन के लिए अगर एक राजनैतिक दल प्रचार करता है तो कवि अपने शिल्प को अवश्य उसके वास्ते समर्पित करेगा।' किन्तु १९४७ में भारत जब स्वतन्त्र हुआ, तब मार्क्सवादी सिद्धान्तों की नहीं, बल्कि संवैधानिक प्रजातंत्र की भित्ति पर राष्ट्रीय सरकार स्थापित हुई। उसी समय तेलंगाना आन्दोलन छिड़ा। इस आन्दोलन के साथ प्रगतिशील आन्दोलन ने नई उत्तेजना व प्रेरणा प्राप्त की।

तेलंगाना क्षेत्र में रजाकारों के अत्याचार भी हुए, जनता ने उनका विरोध किया। पुलिस की कार्रवाई, तेलंगाना का सशस्त्र संघर्ष, साम्यवादी दल तथा प्रगतिशील रचनाओं पर प्रतिबन्ध, प्रगतिशील शक्तियों से सहानुभूति दिखाने वाली जनता के प्रति पुलिस के अत्याचार, इन सब घटनाओं ने तेलुगु साहित्य को प्रभावित किया। खासकर तेलुगु कविता पर इन घटनाओं का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित हुआ। इसी राजनैतिक जागृति का परिणाम है—सर्व श्री अनिशेट्टी सुब्बाराव कृत 'अग्नि वीणा', दाशरथी कृत 'रुद्र वीणा' तथा 'अग्नि धारा', सोमसुन्दर विरचित 'वज्रायुधम' रेंटाल राघव राव रचित 'संघर्षण' और आरुद्र कृत 'त्वमेवाहम्'। गद्य के क्षेत्र में भी उपर्युक्त आन्दोलनों से प्रभावित सुन्दर रचनाएँ अविर्भूत हुईं। श्री सुंकर सत्यनारायण तथा वासि रेड्डी भास्करराव ने सम्मिलित रूप से 'मा भूमि" (जमीन हमारी) नामक नाटक रचा, जिसे कांग्रेसी सरकार ने जब्त किया था। अनेक वर्ष पश्चात इस नाटक के प्रकाशन पर प्रतिबंध हटाया गया।

तेलंगाना में साम्यवादियों ने इसलिए सशस्त्र क्रांति और गोरिल्ला-युद्ध शुरू किया कि उनकी दृष्टि में राष्ट्रीय सरकार साम्राज्य-वादियों को जी हुजूरी करनेवाली सरकार है। वे अपने सिद्धांतों के अनुरूप साम्यवादी सरकार स्थापित करना चाहते थे। वे असफल हुए। पुलिस कार्रबाई के साथ तेलंगाना भारत संघ का अंतर्भाग बना। इससे साम्यवादी आन्दोलन को गहरा आघात लगा। परिणामस्वरूप उन्हें अनिवार्य रूप से अपने कार्यक्रमों में परिवर्त्तन लाना पड़ा। कुछ लेखकों की साम्यवादी कार्यक्रमों के प्रति आस्था शिथिल और प्रजातन्त्र के प्रति सुदृढ़ हुई। फलत: वे तेलुगु देश, तेलुगु भाषा व तेलुगु जाति का गान करने लगे। इस संदर्भ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में 'महाद्रोदय' जैसे काव्य प्रकाश में आये।

उपर्युक्त आन्दोलनों के प्रभाव से १९५२ के चुनाव में साम्यवादी दल की आशातीत विजय हुई। आन्ध्रवासियों ने तीस वर्ष तक 'विशाल आंध्र' का जो आन्दोलन चलाया, वह साकार हुआ। विभिन्न राज्यों में बँटे आंध्र के प्रांत एक शासन के अन्तर्गत आ गये। भाषा के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन-आन्दोलन का बीजारोपण आंध्र-वासियों ने ही किया था।

आंध्र प्रदेश की स्थापना के साथ ही तेलुगु को शासन के स्तर पर मान्यता दिलाने का प्रयत्न हुआ। इसी अवधि में तेलुगु कविता में वस्तु और शैली-संबंधी बहुत बड़ा परिवर्त्तन आया। यों तो छन्दोबद्ध कविता को तिलांजली देने का प्रयत्न इसके पूर्व ही हो चुका था, किन्तु इस अवधि में गद्य कविता एक आन्दोलन के रूप में सामने आई। साथ ही जहाँ पहले कृषक, मजदूर, दलित, शोषित एवं पीड़ित प्रजा का स्वर तेलुगु कविता में बुलंद था, वहाँ अब गुमाश्ते, क्लर्क बेरोजगार व मध्यम वर्ग ने भी अपना स्थान बना लिया।

उपर्युक्त विचारधारा से भिन्न स्वर हमें अजन्ता, केशव राव, गोपाल चक्रवर्ती, अपिराल विश्वम, इत्यादि की कविता में दर्शित होता है। इनकी कविता में राजनैतिक चेतना की अपेक्षा मानसिक संवेदनशीलता अधिक दृष्टिगत होती है। इस स्थिति का चित्रण कवि श्री आरुद्र के शब्दों में स्पष्ट हुआ है—'श्री केशव राव जहाँ अनुदित प्रभात को देख सके, वहाँ पर मादिराजु रंगाराव 'जागृत आकाश' तथा उसके भीतर के 'किर्मीरों' के दर्शन कर सके। श्री गोपाल चक्रवर्त्ती ने 'कलम के स्वप्न' देखे, अपिराल विश्वम ने 'कालं गोस्तुन्न गीतल' अर्थात काल द्वारा खींची गई रेखाओं को स्वीकार किया तो बापूरेड्डी ने 'चैतन्य रेखाओं' को पहचाना। इस प्रकार जहाँ प्रगतिशील लेखकों का आन्दोलन सो रहा था, वहाँ पर प्रगति जागृत थी।'

स्वतंत्रता की प्राप्ति के साथ पुलिस की कार्रवाई और निजाम शाही की समाप्ति का सर्वत्र स्वागत हुआ। निजाम शाही के क्रूर शासन से मुक्ति के लिए राष्ट्रवादियों ने भी अथक प्रयत्न किया था किन्तु प्रगतिशील शक्तियों का इस में बहुत बड़ा हाथ था। उन्हीं दिनों जो काव्य प्रकाश में आए, उनमें सर्वश्री कुन्दुर्ति आंजनेयुलु द्वारा विरचित 'तेलंगाना', और गंगनेनि वेंकटेश्वर राव कृत 'उदयिनी' तेलंगाना के संग्राम का सजीव चित्र प्रस्तुत करते हैं। इसी संदर्भ में रेंटाल गोपाल कृष्ण कृत 'सर्पयाग' और 'संघर्षण' भी उल्लेखनीय हैं। श्री अनिशेट्टि सुब्बाराव ने 'अग्नि वीणा' नामक काव्य संग्रह में बताया है—"प्रति ओकड़ शिवुडु नेडु" अर्थात प्रत्येक व्यक्ति आज एक शिव है। विज्ञान के पथ पर पग धरने वाले मानव को सचेत करते हुए कवि कहता है—'अधिरोहण की दशा में तुम्हारे कदमों में गलत ताल-लय नहीं करूँगा।' इसी परम्परा में "युगे-युगे" काव्य का प्रादुर्भाव हुआ। साम्यवादी विचारधारा ने क्रांति का जो आन्दोलन चलाया, जिसका लक्ष्य केवल मात्र विप्लव था, उस की परिधि को पार कर राष्ट्रीय प्रजातंत्र का पोषण 'तेलंगाना' नामक काव्य में हुआ है। एक समीक्षक ने बताया है कि कुन्दुर्ति की कविता में यह जो परिवर्त्तन आया है, वह प्रगतिशील कविता को पीछे छोड़ नवीन कविता-युग का स्वागत करता है। इनके द्वारा विरचित 'तेलंगाना' काव्य एक प्रकार से दो युगों के लिए सेतु के समान है। प्रगतिशील कविता आन्दोलन के दो प्रमुख व महान काव्य ग्रन्थों में उल्लेखनीय हैं, एक छोर पर महाकाव श्री श्री द्वारा प्रणीत "महा-प्रस्थानं", और दूसरे छोर पर "तेलंगाना"। ये दोनों काव्य अपनी कविता-शक्ति के बल पर सब प्रकार की कसौटियों पर कसे जा सकते हैं। यदि प्रथम काव्य प्रगतिशील धारा की आधारशिला है तो दूसरा उसका उच्च शिखर है। एक जलप्रपात है तो दूसरा जलधारा है। कुन्दुर्ति ने इस काव्य के द्वारा गद्य कविता को प्रधानता दी। काव्य भाषा लोक भाषा बनी।

तेलंगाना में साम्यवादियों द्वारा जो सशस्त्र आन्दोलन चलाया गया था, उस के समर्थन में अनेक कवियों ने असंख्य काव्य और नाटक रचे। कई कवियों को तत्कालीन सरकार ने जेलों में बन्द किया और 'मा-भूमि' जैसे नाटक जब्त किए। आंध्र में ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्भवतः पहली बार कवियों को कारागार में भेजा गया।

राजनैतिक स्वतन्त्रता के साथ युवा पीढ़ी के कवियों में तीन प्रकार की विचारधाराएँ दृष्टिगोचर हुई हैं—पहली विचारधारा के कवि, काव्य तथा समाज में जो परिवर्त्तन हुए हैं, उनके अत्यन्त निकट रहते हुए उन्हें भलीभाँति समझ कर अपनी प्रतिभा के बल पर उनकी व्याख्या करते हैं। दूसरी कोटि के कवि उपर्युक्त परिवर्त्तन से संतुष्ट न होकर भविष्य में सुन्दर परिवर्त्तन की कामना करने वाले हैं—और तीसरे वर्ग के कवि वे हैं जो वर्त्तमान में साँस लेते हुए भी वैचारिक क्षेत्र में अनेक पीढ़ियों पीछे हैं। तीसरे वर्ग के कवियों का चित्रण यहाँ अनावश्यक है।

युवापीढ़ी के जिन विचारशील कवियों ने निमाज की तानाशाही पर व्यंग्य कसा, भर्त्सना की, निन्दा की, फलतः कारागार में जाना पड़ा, उनमें दाशरथी एक हैं। दाशरथी ने निजाम नवाब को वृद्ध जम्बूक बताया था। दाशरथी प्रारंभ में मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित हुए थे, कालांतर में राष्ट्रवादी विचारधारा के समर्थक बन गए।

सोमसुन्दर ने रजाकारों के विरुद्ध अपना स्वर बुलन्द किया। 'गुलामों का हमला' नामक कविता इसका प्रबल उदाहरण है। सोमसुन्दर को कारागार में नहीं जाना पड़ा। पर उनका काव्य 'वज्रायुध' जब्त हुआ। ये प्रगतिशील विचारधारा के प्रमुख कवियों में से हैं। १९५३ में गोदावरी नदी में जो भयंकर बाढ़ आई, उसकी विभीषिका का चित्रण उन की "गोदावरी जल-प्रलयं" कविता में दर्शनीय है। कवि गोदावरी से प्रश्न करते हैं—'हे माते सद्यः प्रसव देनेवाली शेरनी हो तुम, अपनी ही संतान को निगल डालती हो, यह कैसा न्याय है? तालवृंत बनकर बहनेवाली तुम्हारी तरंगें आज ताल वृक्ष के बराबर उमड़ पड़ी।'

प्रगतिशील तत्वों के साथ परम्परावादी कविता की धारा भी अंतर्वाहिनी के रूप में धीमी चाल से बह रही थी। ऐसे भी कवि हुए जिन्होंने देश, काल एवं स्थिति से ऊपर उठ कर कलात्मक तत्वों को प्रश्रय दिया। कतिपय कवियों ने सामयिक विचारधारा का पोषण करना अधिक समीचीन समझा। बुद्ध की २५०० वीं जयन्ती से प्रभावित होकर अनेक कवियों ने शांति, अहिंसा तथा सत्य की पुनः प्रतिष्ठा पर जोर दिया। इस की पुष्टि में प्रकाश में आये काव्य 'बोधि-सत्व' 'नागार्जुन सागर' इत्यादि हैं। तिलक जैसे भाव प्रवण कवियों ने अपनी कविता द्वारा मानवतावाद को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया है। वे कहते हैं 'जीवन-मृत्यु के बीच जीवन में चारों तरफ संदेह जैसा अंधकार व्याप्त है। उस के भीतर चंदन जैसी सुगंधित मानवता ही हमारा एक मात्र अलंकार है।' आगे कहा है—'कविता हृदय के अंतर की ज्योतिपूर्ण सीमाओं को प्रकट करे और चेतना की परिधि का विस्तार हो, चाहे अग्नि की वर्षा हो या अमृत की, उस का परम लक्ष्य सौंदर्य और आनंद ही है।'

१९६२ में चीन ने भारत पर हमला किया। फलतः भारत के प्रगतिशील तत्वों को बड़ा धक्का लगा। इससे यह तथ्य स्पष्ट हुआ कि साम्यवादी सिद्धांतों के अनुयायी राष्ट्रों का ध्येय, अंतर्राष्ट्रीय मातृत्व की अपेक्षा राष्ट्रीय-प्रयोजनों का संरक्षण प्रधान है। अतः प्रगतिवादियों में से अनेक ने राष्ट्रीय प्रयोजनों पर अपना ध्यान केन्द्रित किया और कविता में भी देश भक्ति व राष्ट्रीयता ने पुनः अपना स्थान बनाया। लेकिन इसी कारण प्रगतिशील शक्तियों के बीच संघर्ष भी हुआ।

एक वर्ग का कहना था कि प्रगतिशील आन्दोलन का मूलभूत तत्व देशीय नहीं, अंतर्राष्ट्रीय है। दूसरे वर्ग का विश्वास था कि अन्य देशों की ओर दृष्टिपात करनेवाली दृष्टि त्याग कर अपने देश के कल्याण के हेतु काव्य-सर्जन उचित है। मार्क्सवादी साहित्य-कारों के वर्ग ने स्पष्ट किया कि श्रमिक जीवन में देश-विदेश का कोई अंतर नहीं होता। उस श्रम को लूटनेवाले वर्गों की प्रकृति एवं प्रवृत्ति के अनुरूप धर्म, दर्शन संस्कृति एवं साहित्य का निर्माण होता है। श्रम-जीवियों का दर्शन ही मार्क्सवाद है। उस के मूलभूत सिद्धांत किसी भी समाज में विजातीय नहीं हो सकते।

इस संक्रांति काल में चीन के प्रति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपना असंतोष प्रकट करते हुए जो काव्य प्रकाश में आए, उनमें श्री गज्जल मल्ला रेड्डी द्वारा विरचित "वृश्चिक संतान" गणनीय है। १९७० में प्रमुख प्रगतिशील कवि 'श्री श्री' की षष्टि-पूर्त्ति विशाख पट्टणम में मनाई गई थी। उस वक्त, कतिपय उग्रवादी कवियों ने चीन की सांस्कृतिक-क्रांति, माओ का नेतृत्व, सशस्त्र क्रांति, श्री काकुलम का नक्सलपंथी आन्दोलन आदि का समर्थन करते हुए "विप्लव रचयितल संघम" (क्रांतिकारी लेखक संघ) की स्थापना की जो "विरसं" नाम से प्रख्यात है। चीन के प्रति आक्रोश व क्रोध प्रकट करते हुए जो प्रगतिशील कवि अपने आशय को स्पष्ट करते हुए उस दल से बाहर आ गए, वे अभ्युदय कवि ही रह गए।

विरसं की ओर से "भंभा" "ले", (उठो), 'रा' (आस्ते), 'तिरगबड्' (विद्रोह करो) इत्यादि रचनाएँ आईं। कतिपय पाठकों तथा युवकों को इन कृतियों ने उत्तेजित किया। पर विरसं के लक्ष्यों में 'कमिटमेंट' अत्यंत प्रधान है।

श्रीकाकुलम के गोरिल्ला युद्धों ने विरसं कवियों का उत्साहवर्द्धन किया, जैसा कि १९४८ में तेलंगाना के सशस्त्र आन्दोलन ने अभ्युदय (प्रगतिशील) कवियों को प्रेरित किया था। फलतः जैसे अभ्युदय कवियों की कृतियों पर प्रतिबंध लगाया गया था, वैसे ही विरसं के कवियों के कविता संकलनों को आन्ध्र सरकार ने न केवल विद्रोहकारी घोषित कर उन पर प्रतिबंध लगाया, अपितु एक दर्जन के करीब लेखकों एवं कवियों को भी कारागार में बंद किया। आन्ध्र के उच्चन्यायालय ने सरकारी नीति को अवैधानिक घोषित कर न केवल उन संकलनों पर से प्रतिबंध हटाया, बल्कि कवियों को भी मुक्त किया। किंतु आपातकालीन स्थिति में पुनः कुछ कवियों को कारागार में भेज दिया गया, और अदालत में उनपर एक मुकदमा दायर किया गया। परिणामस्वरूप सर्व श्री के० जी० सत्यमूर्त्ति, के० सीतारामय्या, के० वी० रमणारेड्डी, टी० मधुसूदन राव, चेरबंड राजू, एम० टी० खाँ, रंगनाथम और वरवर राव को कारागार की सजा भोगनी पड़ी। इस वक्त भी उनपर मुकदमा चल रहा है।

प्रगतिवाद के साथ तेलुगु काव्य-जगत में प्रयोगवाद अंतर्वाही बनकर प्रवाहित होता रहा है। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के दस वर्ष पूर्व ही कवि श्री पट्टाभि ने प्रयोगवादी कविता का शुभारम्भ किया था। उन्होंने अपने 'फिडेल रागल डजन" में अच्छे प्रयोग किये। मात्र छन्द का बहिष्कार करते हुए उन्होंने कहा—

'ना ई वचन पद्यालने दुड्डु कर्रलतो
पद्याल नड्डुमुल विरगदंतानु'

अर्थात 'मैं अपनी गद्य कविता रूपी इन लाठियों से कविता की कमर तोड़ दूँगा।' दूसरी जगह कहते हैं,—'क्रासवर्ड्स पजल्स जैसी तुम्हारी आँखों को हल करने का भाग्य किसका होगा ? हे वेश्ये, तुम समाज के लिए एक रद्दी की टोकरी हो।'

प्रयोगवादियों में मुख्यतः तात्विक दृष्टिकोण, व्यष्टिवाद तथा आत्मावलोकन के तत्व उभर आये हैं। भाषा-शैली तथा काव्य-वस्तु में भी एक सुनिश्चित लक्ष्य दृष्टिगोचर होता है। इस परंपरा में खासकर कुन्दुर्ति, आरुद्र तथा तिलक के नाम अवश्य ही उल्लेखनीय हैं। तीनों ने गुमाश्ते के जीवन की विशद व्याख्या की, उसकी व्यथा की गाथा गाई है। कुन्दुर्ति ने यहाँ तक बताया कि—'गुमाश्ते का जीवन न मिटा सकनेवाला जीवन ही मेरा गीत है।' 'जाति तथा अनीति के बीच होनेवाला संघर्ष ही मेरा गीत है।' मध्यवित्त परिवार का चित्रण करने में ये तीनों पर्याप्त सफल हुए हैं। गुमाश्ते के जीवन का कलात्मक चित्रण इनकी कविताओं में पाया जाता है। श्री आरुद्र कृत "एन० जी० ओ० सूर्य" (N. G. O. Sun) इस का उत्तम उदाहरण है। श्री श्री ने भी प्रयोगवादी सुन्दर कविताएँ की हैं—वे कहते हैं—

शिशु को न प्राप्त होनेवाले स्तन्य जैसा
बहता है गोदावरी जल।

फटे कलेजे की भाँति खेतों में दरार पड़ गईं।

हमारे उद्योग योजनाओं में बंद हैं।

हमारी प्रतिभा सेवा के लिए बंधक है।

० ० ० ०

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्द्ध नग्न स्थिति में आसमान को ढँक
कर
अध भरे पेट, जलनेवाली आँखों से
इस प्रकार हे मानव, कब तक खड़े रह
सकोगे ?

कुछ ऐसे कवि भी रहे जो प्रगतिशील तत्वों से प्रभावित स्वतंत्र विचारधारा के थे। तिलक ने अपनी कविता का ध्येय तटस्थ होकर स्पष्ट किया है—

'मेरी कविता का कोई तत्व नहीं
आप जो सोचते हैं, वह मनस्तत्व नहीं,
धनिकवाद तो किसी भी हालत में नहीं,
साम्यवाद भी नहीं,—
पर है—मानवता, करुणा
और सौन्दर्य है मेरी कविता'

आरुद्र ने कविता में रीति को प्रधान माना। वैसे, कविता में उन्होंने जितने प्रयोग किये हैं, उतने शायद ही अन्य कवियों ने किये हैं। ये प्रगतिवादी तथा प्रयोगवादी होते हुए भी रीति को प्रमुखता देते हैं। उनका कहना है—'जिसमें कविता के तत्व नहीं, जो चीज केवल प्रयोजन के हेतु लिखी हो, वह स्वाद्य नहीं होती। प्रगतिशील तत्वों की विरोधी कविता का भी हम आदर करते हैं, उसके शिल्प को प्रशंसा करते हैं। शिल्प-हीन उत्तम आदर्श प्रेरित करनेवाली वस्तु पर हम हर्ष नहीं प्रकट कर पाते।'

व्यक्ति तथा समाज के मध्य होनेवाले संघर्ष के आधार पर सामाजिक चेतना को ध्येय बनाकर गद्य कविता को अपनाने वाले कवियों में दिगम्बर कवियों का स्थान भी उल्लेखनीय है। इस श्रेणी में वरवर राव, सी० विजयलक्ष्मी, सी० वी० कृष्णाराव, वे० नरसिंहा रेड्डी, जगन्नाथ राव, मिरियाल रामकृष्ण इत्यादि के नाम अवश्य लेने चाहिए। दिगम्बर कविता का जन्म वस्तुतः १९६७-६८ में हुआ था।

दिगम्बर कवियों ने सामाजिक अत्याचारों के प्रति अपना आक्रोश प्रकट करते हुए अनेक रचनाएँ कीं। इस आशय के तीन काव्य-संग्रह भी प्रकाश में आये और पाठकों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। निखिलेश्वर, महा स्वप्न, चेरबण्ड राजु इत्यादि दिगम्बर कवियों ने समष्टिगत दायित्व को ग्रहण कर अत्यन्त आत्म विश्वास के साथ वर्त्तमान समाज की धज्जियाँ उड़ाईं और उसे जलाकर भस्म कर देने का आवाहन किया। उनकी कविता के तांडव एवं विकट अट्टहास ने पाठकों में जहाँ प्रारम्भ में हलचल मचा दी वहीं बाद में उनके जुगुप्सापूर्ण शब्दों के प्रयोग ने विरक्ति एवं घृणा पैदा की। प्रायः सभी दिगम्बर कवि अत्यन्त प्रतिभाशाली हैं, इसमें जरा भी सन्देह नहीं। पाठकों में प्रारम्भ में आवेश एवं उद्रेक जागृत करने में ये कवि सफल हुए। इन कवियों ने पाठक वर्ग को यह आश्वासन दिया—'हम मानव द्वारा ओढ़े गये नकाब को फाड़ देंगे। स्मशान के सिर पर फूलों के पौधे उगायेंगे, निरन्तर शोषित एवं पीड़ित विश्व में अपनी कविता के द्वारा एक नया मोड़ ला देंगे। अपने नेत्र की ज्वालाओं के द्वारा जगत के लुच्चे-लफंगों को भस्म कर देंगे।'

महास्वप्न नामक कवि का कहना है—'आप लोगों की रक्षा करनेवाले इस अंधकार-पूर्ण शिला दुर्ग को तोड़ दूँगा। इस सभ्यता का मान भंग करूँगा। (सतीत्व लूटूँगा) प्रत्येक बाँबी को तोड़, विष-भुजंगों को पकड़ उनके दाढ़ निकालूँगा। इस भयंकर अरण्य में दावानल पैदा करूँगा। इस सभ्यता के रावण का लंका-दहन करूँगा।' इस प्रकार समाज के मानव की दुर्बलता पर खीझ कर उसे राक्षस मानना समीचीन नहीं लगता पर दिगम्बर कवियों ने जो नये उपमान दिये जिस शैली में अपनी अभिव्यक्ति दी, उसके कारण वे शीघ्र ही प्रकाश में आये और उनका अधिक प्रचार भी हुआ। इस आक्रोश के पीछे उनका आशय यह है—'व्यक्ति के भीतर समूल परिवर्तन होना चाहिए। यह इसलिए संभव नहीं है कि आज के समाज में प्रत्येक व्यक्ति, इस प्रकार अपने ऊपर नकाब धारण किए हुए है जिससे वह वास्तव में पूर्ण रूप से साँस नहीं ले पाता, अतः उस नकाब को हटाकर उसे एक सच्चे मानव के रूप में प्रकट होना है।' इसी ओर संकेत करते हुए वे कहते हैं—'तुम्हारी अस्थियों के भीतर समाये हुए सभ्य को कीचड़ से मत ढँको।—मानव बनो—लाल गुलाब की भाँति--अंगारे जैसे, यौवन की भाँति-मंदहास जैसे। वास्तव में गगन के बीच मार्तण्ड जैसे—आधा क्षण जियो।' इस प्रकार वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव को पूर्ण व्यक्तित्व के साथ उभर आने का आवाहन देते हैं, उनकी दुर्बलता पर क्षोभ व आक्रोश प्रकट करते हैं—उसकी निंदा करते हैं, उसे गालियाँ देते हैं, ताकि वह चौंक कर, सँभल कर या चेत कर अपने नकाब को उतार फेंके। यही व्यथा उनकी कविता का लक्ष्य है।

इस प्रकार कतिपय त्रुटियों के बावजूद भी दिगम्बर कवि निस्संदेह रूप से प्रतिभाशाली कवि हैं। कविता को दिगंबर कवियों ने जो नये उपमान, अलंकार, प्रतीक, रस, ध्वनि, व्यंग्योक्ति एवं विलक्षणता प्रदान की, वह प्रशंसनीय है। इन की कविता की एक बानगी देखिए,

काल-कांता के संग
बीसवीं शती की सौर-शय्या पर
संश्लिष्ट समस्याओं का
सौरभ घ्राण करते हुए
पल पल संघर्ष के साथ रमण करते
शुक्रेतर समस्त ग्रहों के
संकेतों को सुना दूँगा
प्रलयों की तहों के नीचे
निश्शब्द को रूप दूँगा।

सामाजिक व्यथा तथा वैयक्तिक व्यथा से प्रेरित होकर उत्तम रचना करनेवालों की संख्या आज पचास से कम नहीं है। उन सब का संक्षेप में ही सही, परिचय देना या एकाध उद्धरण देना भी इस छोटे से निबंध में संभव नहीं हैं। इनके अलावा स्वतंत्र रूप से काव्य रचना करनेवाले प्रतिभाशाली कवियों की संख्या सैकड़ों है।

आरुद्र ने अपनी कविता के माध्यम से प्रतीक वाद को जन्म दिया। इनके प्रतीक बड़े ही भाव बोधक है। एक उदाहरण, 'जीवितं रेडियो सेट्टुकी, भर्त एरियल भार्य अर्थं' अर्थात् जीवन रूपी रेडियो सेट के लिए अगर पति एरियल है तो पत्नी अर्थ। उन्होंने तेलुगु कविता में अनेक सफल प्रयोग किये। उनकी फुटकल कविताओं में ही नहीं, 'सिनीवाली' नामक काव्य संग्रह में भी ये प्रयोग पढ़ते ही बनते हैं। इस दिशा में तिलक, कुन्दुर्ति, दाशरथी, श्लिष्टा आदि उल्लेखनीय हैं। इसीप्रकार कुन्दुर्ति द्वारा विरचित "युगे युगे" प्रयोगवाद में गद्य कविता का उत्तम उदाहरण कहा जा सकता है।

प्रगतिशील कविता के साथ ही तेलुगु में लोक-भाषा के प्रयोग का मार्ग खुल गया था, किंतु गत दो दशाब्दियों में ही इस भाषा को साधारण मानव के जीवन, सुख-दुःख, उनकी समस्याएँ आदि को व्यंजित करने का श्रेय प्राप्त हुआ है। सच तो, प्रयोगवादियों ने ही गद्य कविता को न केवल जन्म दिया, अपितु उसे उच्च शिखर तक पहुँचा दिया। तिलक, कुन्दुर्ति, आरुद्र आदि ने इस विधा में प्राण फूँके, बिंब कल्पना में अजंता कवि तथा बैरागी ने कलम तोड़ कर रख दी। उनकी कविता में कोमल शब्दावली भावना की दृष्टि से अन्तर्मुखी बनकर मानव की वेदना को मूर्त रूप देती है। मादिराजु रंगाराव ने मुक्तक नामक एक नई प्रक्रिया को जन्म दिया। गोपाल चक्रवर्त्ती की कविता चमत्कार प्रधान है और शब्दों में श्लेष को ध्वनित करते हुए एक नूतन जीवन तत्व की व्याख्या करती है। यह प्रक्रिया इतनी लोकप्रिय और प्रभावशाली बनी कि उस समय तक पद्य तथा गीतों की रचना करने वाले कवि भी गद्य कविता के आश्रय में आने लगे।

गद्य कविता की वस्तु विविध रूपों में हमारे सामने आई है। प्रतिभाशाली कवियों ने सूक्ष्म-दर्शिनी प्रतिभा द्वारा ज्वलन्त समस्याओं के व्यापक रूप की गहराइयों को दर्शाने का प्रयत्न किया है। कुछ लोगों ने किसी अदृश्य देवता या चन्दामामा से अपनी समस्याओं का निवेदन किया हैं, कुछ लोगों ने स्वप्न रूप में उनका चित्र खींचा है। कतिपय कवियों ने उन्हें व्यंग एवं आक्षेप के रूप में प्रस्तुत किया है तो कुछ ने प्रबोधात्मक शैली में व्यक्त किया है, और कुछ ने आशा निराशा के स्वगत स्वर में।

भारत वर्ष गत तीस वर्षों में अनेक प्रमुख समस्याओं का सामना करता आ रहा है अपर्याप्त खाद्यान्न, प्रकृति के प्रकोप से उत्पन्न अकाल, भूकंप, परिवार-नियंत्रण, अभी हाल के आए आँध्र प्रदेश और तमिलनाडु में तूफान तथा समुद्र के द्वारा की हुई ध्वंस लीला आदि। कोई कहता है—"सर्वत्र क्षुधा गीत, आज की वायु में सौरभ नहीं है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई व्यथा का हृदय लेकर आक्रन्दन कर उठता है—'अपना भार आप ही न ढो सकने-वाली भूख'। एक ओर विद्यालयों में अशांति है, हड़तालें हो रही हैं तो दूसरी ओर मजदूरों की हड़तालें!—आज जो हड़तालें हो रही हैं, इनका नेपथ्य क्या है, ये समस्याएँ भी कवियों को विकल कर रही हैं।

इसी समय कविता के क्षेत्र में एक नया आयाम स्थापित हुआ। वह है शक्तिशाली इतिवृत्त वाली आधुनिक काव्य-रचना। डॉ० सी० नारायण रेड्डी ने ऐतिहासिक इतिवृत्तों को ग्रहण कर 'नागार्जुन सागरम्' 'कर्पूर वसंत रायलु' 'विश्वनाथ नायकुडु' जैसे सुन्दर काव्य-ग्रन्थों का निर्माण किया है। नारायण रेड्डी की कविता में प्रगति-शील तत्वों का अभाव नहीं है। वे विशुद्ध मानवतावादी हैं। गीतों की रचना में श्री रेड्डी सिद्धहस्त हैं। उन्होंने प्रायः उन सभी समस्याओं को अपनी कविता का लक्ष्य बनाया जिसने कवि के हृदय को उद्वेलित किया है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात सर्व श्री कोडवटिगंटि कुटुम्बराव, गोपीचन्द, नोरी नरसिंह शास्त्री, चलम, विश्वनाथ सत्यनारायण इत्यादि ने अनेक उपन्यास लिखे जो सामाजिक, ऐतिहासिक, पौराणिक, मनोवैज्ञानिक तथा अन्य विविध क्षेत्रों के हैं। राष्ट्रीय आन्दोलन तथा गाँधीवाद से भी प्रभावित दो-चार उपन्यास उल्लेखनीय हैं।

श्री कोडवटिगांटि कुटुम्बराव ने स्वतंत्रता के पूर्व ही 'चदुवु' (शिक्षा) नामक उपन्यास लिखा था, जिसने बाद की पीढ़ी को भी अत्यन्त प्रभावित किया। श्री कुटुम्बराव सामाजिक सिद्धांतों के प्रति स्पष्ट विचार रखने वाले लेखक हैं। राजनैतिक एवं आर्थिक व्यवस्था के साथ सामाजिक संबंधों में जो एक अन्योन्य संबन्ध है, उस विषय में वे अपनी एक स्वस्थ एवं स्पष्ट विचार धारा रखते हैं। उनका विश्वास है कि आर्थिक मूल्यों के आधार पर सामाजिक मूल्य निर्धारित होते हैं। मध्य वित्त परिवार के कृत्रिम मूल्य, आत्म वंचना, भय एवं संदेहों के साथ निम्न वर्ग की व्यथाओं एवं शोषण के सजीव चित्र, विश्व संग्राम की विभीषिकाएँ, बेकारी, रुपये के अवमूल्यन द्वारा उत्पन्न विषम समस्याएँ आदि आप की रचनाओं के इतिवृत्त हैं।

स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास साहित्य में क्रांति कारी तत्वों को प्रश्रय देने वालों में राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री अग्रगण्य है। इनके उपन्यासों में 'अल्पजीवी', 'राजू-महिषी', 'गोवुलोस्तु-न्नापि' 'जागृत' इत्यादि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। अल्पजीवी में बाह्य संघर्ष के साथ आन्तरिक संघर्ष पढ़ते ही बनता है। इस उपन्यास का कथानायक सुब्बय्या स्वभाव से भीरु और कायर है। वह चुपचाप अपमान और शोषण को सहता जाता है। वह किसी को धोखा नहीं देता, न घूस लेता है। गवरय्या जैसे ठेकेदार द्वारा वह कैसे शोषित होता है, उसका लंबा इतिहास अंकित है। गवरय्या समाज के साथ प्रतिकार की भावना से प्रेरित हो उसे धोखा देकर, लूट कर अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहता है। शास्त्री का दूसरा उपन्यास राजू-महिषी के संबन्ध में श्री श्री ने अपने विचार यों व्यक्त किये हैं—'तेलुगु में जैसे पूर्ण संतोष प्रदान करने वाली कविता व कहानियाँ आईं, वैसा उपन्यास आज तक नहीं आया इस बात की मेरी शिकायत थी, पर मेरा विश्वास है कि यह उपन्यास एक समग्र रूप को प्राप्त कर सका है।' उन्होंने यहाँ तक कहा है कि 'यह उपन्यास बीसवीं शती का क्लासिक माना जाएगा। इस में ऐसी कोई बात नहीं रह गई जिसका चित्रण न हुआ हो।'

श्री महीधर राम मोहन राव राजनैतिक सिद्धांतों का स्पष्ट अवगाहन करते हैं। उन्होंने ओनमालु, रथ चक्रालु और दावानलम, नामक तीन उपन्यास लिखे जिनका इतिवृत्त तेलंगाना में जमीन्दारों के विरुद्ध आन्दोलन का सजीव चित्र है। इस में कृषक, मजदूर की दयनीय दशा के साथ उन को इस स्थिति से मुक्त करने का सारथ्य करनेवाला त्याग पूर्ण जीवन प्रस्तुत किया गया है। इसी इतिवृत्त को आधार बनाकर श्री वट्टिकोट आलवार स्वामी ने "प्रजल मनिषि" (जनता का मानव) तथा श्री दाशरथी रंगाचार्य ने "चिल्लर देवुल्लु" (फुटकर देवता या छोटे देवता) प्रस्तुत किये हैं। इन में जमीन्दार और जमीन्दारों के अत्याचार तथा जनता का शोषण विविध दृष्टिकोणों में प्रस्तुत हुआ है।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेलुगु उपन्यास-साहित्य में अत्यन्त ही उल्लेखनीय कृति "चंघिज खाँ" हैं। तेलुगु के ऐतिहासिक उपन्यासों में इस की समता कर सकने वाला दूसरा उपन्यास नहीं है, मंगोल इतिहास का अनेक वर्षों तक अध्ययन और शोध कार्य करके श्री तेन्नेटि सूरी ने यह उपन्यास प्रस्तुत किया है। भाषा, भावना शक्ति, शिल्प, गोबी मरुभूमि का चित्रण, चीन का समग्र रूप इस कृति में प्रतिबिंबित है। यदि यह उपन्यास अंग्रेजी में रूपांतरित हुआ होता तो इसे नोबेल पुरस्कार प्राप्त होता। इतिहासकारों ने चघिज खाँ को अत्यन्त क्रूर मानव रूपधारी राक्षस घोषित किया है, मगर सूरी के उपन्यास में वह समस्त मंगोल जातियों का संगठन करने वाला महान वीर है। चंघिज खाँ अन्याय, अत्याचार, शोषण का अन्त करने के लिए प्रादुर्भूत एक मानवतावादी के रूप में इस उपन्यास में प्रस्तुत है। इस उपन्यास की समाप्ति में लेखक कहता है—'संघर्ष से अग्नि प्रज्वलित होती है चंघिज खाँ भयंकर प्रजा शोषण में अवतरित एक ज्वाला रेखा है। जो विध्वंस की रेखा के उद्भव का विरोध करते हैं, उन्हें इस प्रश्न का समाधान देना होगा कि मानव-समाज में असहनीय प्रजा शोषण क्यों होना चाहिए?' एक संदर्भ में चंघिज खाँ अपने किये हुए कार्यों की कैफियत देता है—'उस दीन-हीन अवस्था में गोबी मरुभूमि की जनता को देखने पर मेरा हृदय फटा जाता है, आप लोग इस की कल्पना तक नहीं कर सकते। समस्त गोबी जातियों को एक सूत्र में बाँधकर उन्हें एक शक्तिशाली जाति के रूप में परिणत किए बिना इन्हें मुक्ति नहीं है। इस सत्य का अन्वेषण मैंने अपने बाल्यकाल में ही किया है। इसी एक मात्र लक्ष्य की पूर्त्ति के लिए मैं दिन रात कार्यरत हूँ। इस कार्य को सम्पन्न करने में मैंने अनेक अकृत्य किये। अनेक जातियों को समूल नष्ट किया है।'

आधुनिक मानव समाज, पारिवारिक समस्याएँ, मानव का भीतरी व्यक्तित्व और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को आधार बना कर असंख्य उपन्यास रचे गये हैं। इस क्षेत्र में बलिवाड कांताराव, भास्कर भटल कृष्णा राव, सिंगराजु लिंगमूर्त्ति आर० एस० सुदर्शनम, रंधि सोमराजु, इच्छापुरमु, जगन्नाथ राव, पद्मराजु, धनिकोंडा, कोम्मूरि वेणुगोपाल राव, पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा, सूर्य प्रकाश राव, वीराजी, शारदा, पीलाप्रगड़, राघव, मंजुश्री, पोरंकि दक्षिणामूर्त्ति इत्यादि के नाम गणनीय हैं।

गत दशाब्दि के उल्लेखनीय उपन्यासों में एन० आर० नंदी का नैमिषारण्य, श्री विनुकोंड नागराजु कृत 'ऊबिलोदुन्न' (दलदल में भैंसा), नवीन कृत अंपशय्या' विशेष चर्चित हैं। नैमिषारण्य में अग्रवर्णों के द्वारा हरिजनों के प्रति किये जाने वाले अत्याचार, मध्य वित्त परिवारों की आर्थिक समस्याएँ, नौकरी पेशा नारियों की कठिनाइयाँ, आदि रोचक ढंग से वर्णित हैं। नागराजु कृत ऊबिलोदुन्न तथा नवीन रचित अंपशय्या प्रयोगात्मक उपन्यास हैं। आज की सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याओं को सांकेतिक रूप में उठाकर नागराजु ने जहाँ सोचने के लिये पाठकों को बाध्य किया, वहां अंपशय्या में नवीन ने विद्यार्थियों की समस्याओं, छात्रावास तथा विश्वविद्यालय का जीवन, तथा युवापीढ़ी की उद्वेगपूर्ण प्रवृत्तियों का भी सजीव चित्रांकण किया है।

तेलुगु में आज सशक्त उपन्यास लिखने वालों की संख्या में महिला लेखिकाओं की संख्या भी कम नहीं है। विशेष रूप से चर्चित महिला लेखिकाओं में वीना देवी, सीता देवी, मुप्पाल रंगनायकम्मा, के० राम लक्ष्मी, लता, इल्लिदल सरस्वती देवी, मालती चंदूर, यद्दनपूडि सुलोचना राणी, कोडूरि कौसल्या देवी, परिमला सोमेश्वर, सी० आनंद राममू, तुरगा जानकीराणी, काविलिपाटि विजयलक्ष्मी, कलिपाक रमामणि, वेदुल शकुन्तला, उन्नव विजयलक्ष्मी, मादिरेड्डी सुलोचना, डी० कामेश्वरी विशालाक्षी, कोमला देवी, छाया देवी, पी० रामलक्ष्मी वगैरह ने बीसों उपन्यास लिखे और इन लेखिकाओं ने पाठक वर्ग की परिधि को अत्यंत व्यापक बनाया। उक्त लेखिकाओं की कृतियाँ भारी मात्रा में बिक्री हो रही हैं। साथ ही पत्र पत्रिकाओं में इन के उपन्यास बराबर धारावाही छप रहे हैं, इनकी कृतियों पर अनेक फिल्में भी बनी हैं।

अधिकांश लेखिकाओं ने पारिवारिक जीवन का चित्र प्रस्तुत किया है। नारी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण इन उपन्यासों की विशेषता

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कही जा सकती है। किंतु भाव, भाषा, शिल्प वस्तु तथा समाज में जागृति पैदा करने की दृष्टि से मुप्पाल रंग नायकम्मा कृत 'बलिपीठम्', बीना देवी द्वारा रचित 'हैंग मी क्विक" तथा 'पुन्य भूमि आँखें खोलो' सीता देवी कृत 'समता महिमनिपि' विशेष रूप से पठनीय हैं।

तेलुगु का कहानी साहित्य इतना समृद्ध है कि विश्व की किसी भी भाषा की रचनाओं से समता कर सकता है। विश्व-कहानी प्रतियोगिता में श्री पद्मराजु कृत तेलुगु कहानी 'गालिवान' (तूफान) ने द्वितीय पुरस्कार प्राप्त किया था। गुणाढय ने इसी प्रदेश में वृहत्कथा लिखी थी। वस्तुतः तेलुगु में कहानी साहित्य का प्रादुर्भाव सामाजिक सुधार को लेकर हुआ था। स्वतंत्रता के पूर्व भी उच्च कोटि के २०-२५ ऐसे कथाकार हुए, जिन्होंने तेलुगु कहानी को न केवल समृद्ध किया, अपितु प्रतिष्ठा भी दिलाई। स्वातंत्र्योत्तर काल में कम से कम सौ उत्तम कथाकार हुए हैं। उन सबका उल्लेख करना संभव नहीं है। स्वतन्त्रता के पूर्व से कहानी-लेखन में अपना अमिट स्थान बनाकर बराबर कहानी के विकास में योगदान देने वालों में सर्वश्री कोडवटिगंटि कुटुम्ब राव का नाम उल्लेखनीय है.। अन्य उल्लेखनीय कथाकारों में चलेम, बुच्चि बाबू, गोपीचन्द, वट्टिकोट आलवार स्वामी, मुनि माणिक्यम्, करुण कुमार इत्यादि हैं। स्वातंत्र्योत्तर कथाकारों में सर्वश्री राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री, चागंटि सोमयाजुलु, कालीपट्टन रामा राव, पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा, सी० एस० राव, सीता देवी, कोम्यूरो, मुप्पाल रंगनायकम्पा, वीराजी, मारुती राव, बलिवाडा, कांताराव नवीन, बीना देवी आदि ने उत्कृष्ट कहानियाँ रची हैं।

तेलुगु की श्रेष्ठ कहानियों में नीली, ऊरुम्मडि ब्रतुकुलु, पेवमेंट, ए मैटर ऑफ नो इंपार्टेन्स, केलु पिल्लै चाबु, यज्ञं आदि गिनी जाती हैं। युवा पीढ़ी के लेखक बड़ी सुन्दर रचनाएँ कर रहे हैं। सामाजिक, भावात्मक, ऐतिहासिक, व्यंग्य-प्रधान आदि कहानियाँ विपुल संख्या में लिखी जा रही हैं।

आज की तेलुगु कहानी में केवल पीड़ित शोषित मानव का ही चित्रण नहीं अपितु समाज का यथार्थ चित्रण, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी इन कहानियों में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। आंचलिक कहानियाँ भी जनता की बोली और क्षेत्रीय बोली में लिखी गई हैं।

नाटक के क्षेत्र में तेलुगु का विकास अभूतपूर्व है। तेलुगु रंगमंच का उद्भव एक शताब्दि पूर्व हुआ था। तब से आज तक हजारों नाटक रचे गये और मंच पर अभिनीत हुए हैं। स्वतन्त्रता के पूर्व अधिकांश नाटक पौराणिक, ऐतिहासिक रहे सामाजिक नाटकों की संख्या भी कम न थी, किन्तु १९४७ के बाद समस्या प्रधान नाटक, कृषक, मजदूर व जमीन्दारों के अत्याचार को आधार बनाकर भी रचे गये। तेलुगु नाटक को एक कला मान कर उच्च शिक्षा प्राप्त परिवारों ने उस के विकास में योगदान दिया। स्वयं स्वर्गीय महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर तेलुगु नाटक देखने विजयवाड़ा गये थे।

आज के नाटककारों में राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री, गोल्लपूडि मारुती राव, आत्रेय, नरस राजु, लमिडिपाटि, कोडालि गोपाल राव, बोम्मिडिपल्लि सूर्या राव, पिनिशेट्टि, श्री राम मूर्त्ति अनिशेट्टी, सुब्बा राव, पालग्रम्मि पद्मराजु, सोमंचि यज्ञन्न शास्त्री आदि, रेडियो रूपकों की रचना में सर्वश्री देवुलपल्लि कृष्ण शास्त्री, डा० सी० नारायण रेड्डी, आरुद्र, बोम्मिरेड्डीपल्लि सूर्याराव, पिनिशेट्टि आदि के नाम लिये जा सकते हैं।

तेलुगु साहित्य की अन्य विधाओं का भी आज बड़ी तेजी के साथ विकास होता जा रहा है बाल-साहित्य, समीक्षा, गद्य साहित्य, एकांकी, जीवनियाँ इत्यादि भी प्रतिभाशाली लेखकों द्वारा पूर्वाधिक विकास को प्राप्त हो रहे हैं। कुल मिलाकर हम यही कह सकते हैं कि तेलुगु साहित्य भारत के अन्य साहित्यों की तुलना में किसी भी दशा में कम नहीं।

—बालशौरि रेड्डी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्र भारत में साहित्य / नार्ल वेंकेटेश्वर राव

नव भारत के साहित्य में साफ नजर आने वाली चीज है 'मानवता'। प्राचीन साहित्य में भी मानवता को छूनेवाली, इर्द-गिर्द की कई बातें शामिल सी दीखती हैं, लेकिन वे सारी की सारी धर्म, भक्ति, परलोक, देव-देवताओं वाले परिवेश से जुड़ी हैं। स्वर्ग की ओर बिछी इन्सान की नजरें, परलोक के मामलों का विस्तार के साथ वर्णन, पुराने साहित्य में लक्षित है। उस जमाने के साहित्य का मुख्य उद्देश्य था 'मुक्ति', भवबंधन को तोड़, मिथ्या-जगत् और मोह-वलय को चीर, ऐहिक प्रलोभन से हट कर सांसारिक यातनाओं से, उन की गिरफ्त से बच-निकलना ही मुक्ति है, विमुक्ति भी। इस जीवन से विमुक्त होकर आत्मा को परमात्मा में विलीन कर, सत्-चित् आनन्द की अनुभूति प्राप्त करना इस साहित्य का लक्षण है। पुराने साहित्य में प्राप्त इन भावों से भिन्न एक नये भाव जगत् को नये भारत के साहित्य ने अपना ध्येय चुना जो मानव की अँदरूनी इन्सानियत पर जोर देता है। इस दुनिया से, इस जीवन से, मानव-समूह से मतलब रखनेवाली सभी चीजों के प्रति स्नेह बरतता है यह आधुनिक साहित्य। हो सकता है यह साहित्य, ईश्वर के प्रति व आध्यात्मिक मामलों की ओर कड़ी विमुखता दर्शाए, व करुणा, क्रोध, आदि गुणों से ओतप्रोत किसी दैवी-शक्ति को भी नकारे, लेकिन वास्तव में यह मानव को मानव-जैसा मापने की कोशिश करता है। इकबाल एक जगह कहते हैं,

'यदि मेरे अस्तित्व का एक कण भी समाप्त होता है तो इस भाव से मैं अमर जीवन को स्वीकार नहीं करूँगा। वर्षों की पीड़ा एक अमूल्य थाती है. मैं अपनी मनुष्यता दिव्यता से भी नहीं बदलूँगा।' यह नया साहित्य इन उदात्त भावों के मुताबिक कुछ हद तक तो जरूर है, (चाहे वह पूरा न भी हो) एक मेधावी आलोचक ने कहा : 'नया साहित्य फ़ायड और मार्क्स की एक बेचैन साझेदारी है, जिसमें प्रभावी साझीदार फ़ायड है।'

आजादी के मिलने के उपरांत भारतीय साहित्य नई आशाओं से प्रेरित और पुष्ट होने लगा, परन्तु वे कभी साकार नहीं हो सकीं। कारण ? कृष्ण कृपलानी के शब्दों में 'वर्त्तमान मनःस्थिति निष्ठाकी उतनी नहीं जितनी निराशा की है, साहस की उतनी नहीं जितनी अवज्ञाकी है, आवेश की उतनी नहीं, जितनी विकृति की है।'

आजादी हासिल करने के बाद देश के विभिन्न कोनों में हत्याकांड, धार्मिक विद्वेष, अन्य कई कलह-द्वेषों की नृशंसता इतनी छा गई है कि पूरा देश 'पराजित' माहौल से भर गया है। हमारे सपने छितरा गये हैं। जनतंत्र के पक्षधर 'वाल्ट विटमन' भी इसी तरह के शिकंजे में गिरफ्तार थे, जिस के कारण मुक्त गीत गा सकनेवाली चिड़ियों को उड़ा नहीं सके।

तो भी निराश होने की कोई जरूरत नहीं। साहित्य अकादमी इस क्षेत्र में पूरी सक्रियता दिखा रही है। टागोर, इकबाल, प्रेमचंद, शरत् चंद्र जैसे लेखकों की आज कमी है। हाल के कुछ लेखकों से कुछ उम्मीद की जा सकती है।

१९४८ में प्रकाशित अपने एक ग्रन्थ में डॉ० डी० पी० मुखर्जी यों कहते हैं,

'आधुनिक भारतीय साहित्य सामाजिक कथ्य पर अधिक बल के कारण विशिष्ट है। वह निरे सामाजिक-सुधार से बहुत आगे है। प्रायः परिस्थितियों का संबंध संघर्ष से होता है, और उनका निरूपण सामाजिक। जमीन्दारों का पतन, निम्न मध्यवर्ग का उत्कर्ष, नगरों में दुर्भाग्यग्रस्त नर-नारियों का और गाँवों में किसानों का जीवन भी साहित्य में ग्रहीत हुआ है जब कि वर्ग-चेतना का भी संकेत किया गया गया है और उस पर जोर दिया गया है। एक शब्द में आधुनिक साहित्य की विषय वस्तु सामाजिक संघर्ष है।'

आज भी तेलुगु साहित्य के हालात यही है। इस मौजूदा स्थिति से बच निकलने की ताकत लुप्त सी दीखती है। आधुनिक साहित्यकारों में उज्ज्वल, अखंड श्रद्धा की निहायत जरूरत है।

अनु० — डॉ० जी० बाल सुब्रह्मण्यम्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मैं' / रापुरु वेंकट सत्यनारायण

"मैं"

इस एक शब्द में न जाने कितना अनुभव, कितनी हलचल, कितनी कातरता, कितना दुःख, कितना सन्तोष, कितनी जीत, कितनी हार भरी है !

मेरे 'मैं' में साठ वर्ष का आत्मचरित भरा है—मेरे साथ जुड़े लोगों का इतिहास है। मुझमें हिलडुल कर कागज पर न पसर पानेवाले अनन्त भाव भरे हैं। कागज पर पसर कर रंजित कराने वाली अनगिनत कथा-गाथायें, गीत, उपन्यास, निबंध, कवितायें भी हैं। और हाँ, मुझसे निःसृत हो रजत पट पर उभरे रजत संभाषण, नवनीत गीत भी अनगिनत हैं।

मैं इन्हें आकाश में भी देख सकता हूँ और पृथ्वी पर भी। नीले आकाश में झाँकते समय अनुभूत गर्व, पृथ्वी की ओर देखते समय अनुभूत निराशा को अगर मैं लिखने लगूँ तो न जाने कितने पृष्ठ रँग जाँय।

कुछ भी हो 'मैं' 'केवल मैं' हूँ। मैं कोई अन्य नहीं हो सकता, कोई अन्य मैं बन नहीं सकता। अपने इस 'मैं' का मैं बहुत गौरव करता हूँ। दूसरों की बात कुछ इधर भी हो सकती है कुछ उधर भी। इस 'मैं' को प्रशंसा के हार भी पहनने पड़ते हैं और समालोचकों के विषभरे साँप भी लपेटने पड़ते हैं।

मेरे 'मैं' का स्मरण आते ही कभी लगता है कि इसके साथ एक बहुत बड़ा जत्था जुड़ा है यानी मेरे आत्म बन्धु, आप्त मित्र, सम्बन्धी, सहायक। लगता है ये सब मुझे हँसाते हुए न जाने मेरी कौन-कौन सी जीतों को लेकर विजय दुन्दुभि बजाते हुए, आनन्द और हर्षातिरेक से शंख फूँकते हुए, अचानक मुझे आलिंगन में बाँधते हुए, डराते हुए, साधु-जीवन को प्रबोधित करते हुए, विश्वगीत के हर चरण को सुनाते हुए, तृप्ति भरा शक्ति भरा जीवन मुझे दे रहे हैं।

अक्षय स्वरूप, अक्षर स्वरूप—कुछ कभी लगता है कि पीछे से मेरा हँसी उड़ा रहे हैं पागलों जैसे हँस रहे हैं, मुझे देखकर। मेरे हृदय को चोट पहुँचाने, क्षति पहुँचाने के लिए भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। मैं गरीब बन आत्मशक्ति खोया-सा क्षुद्र बन अनादरित हो निंदाओं के भार से झुक कर गिरता पड़ता चल रहा हूँ तो मुझे शांति की भिक्षा देने की कोशिश करते से दीखते हैं ये लोग।

पर मैंने जिन आप्त मित्रों को अपने लिए बनाया प्राण-प्रिय अपने जीवन के शिल्प सौभाग्य को जिनमें बाँटा वे खिलखिलाकर भागते हुए, जय जयकार करते हुए, हर समय एक ही समान हृदय लेकर एक ही लक्ष्य से प्रेरित हो मेरा अनुसरण करते हुए, चाँदनी रात में सैकत स्थली में एकाकी बन चलते समय मुझे चारों ओर से घेर कर वलयाकार घूमते हुए विहँसने वाले भी अनेक हैं हम सब अक्षय रूप हैं, अक्षर स्वरूप हैं।

मुझसे निःसृत साहित्य में ये प्रमुख भूमिकायें निभानेवाले हैं। उन पर मैंने जो वात्सल्य बिखेरा है उससे कहीं अधिक उनका मेरे प्रति गौरव है।

मेरी उम्र ढल जाय, शक्ति क्षीण होने लगे मेरे स्वप्न बिखर जाएँ लेकिन ये विहँसते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही रहेंगे। मुझे बूढ़े अधिक पसन्द हैं। उनकी गरिमा, आदर, भरापूरा व्यक्तित्व, सरलता, सहज साहस उनकी ये सभी बातें मुझे आकर्षित करती हैं। तभी अपनी रचनाओं में मैंने अधिकतर वृद्धों को लिया है जिन्हें चित्रण कर असीम तृप्ति और शांति पाते रहना मेरी आदत हो गई है।

कुछ लोगों ने कहा भी है कि समय से पूर्व ही मुझ पर बुढ़ापा आ गया है। पता नहीं यह टिप्पणी मेरे लिए प्रशंसा का भाव रखती है अथवा आक्षेप का। कुछ भी हो परस्पर सौजन्य, करुणा, वितरण इत्यादि लक्षणयुक्त व्यक्ति एक वटवृक्ष की भाँति होता है। यह वृक्षराज अपनी शाखाओं पर बैठे पक्षियों के पत्ते खाते रहने पर आत्मिक आनन्द पाता रहता है। यात्रियों के लिए तपती दोपहरी में छाँव फैलाकर फूलों का महल सजाने में सुख और अपने पास का फल-दान करने में तृप्ति पाता है। कभी-कभी फूलों की वर्षा कर आशीर्वाद देता है।

रचना कर सकना जीवन की महान पुण्यभरी विशेषता है। रचना को उदात्तता के कारण रचनाकार चिरंजीवी होता है। भविष्य में जुड़ सकनेवाले रिश्ते सम्पादित करता है। इसीलिए महाकवि फिरदौसी ने कहा है :—

'आज हम जिन गृहों में निवास करते हैं हो सकता है कल वह शीत-वात-आतप से प्रभावित हो कर ढह जाएँ, धाराशायी हो जाएँ पर मेरी कविता के प्रासाद को किसी भी प्रकार की वर्षा और तूफान नहीं गिरा सकते।'

हो सकता है हर रचनाकार इतना महान मंदिर न खड़ा कर सके। मुझ जैसे लोग छोटी-छोटी झोपड़ियाँ ही बना सकते हैं। इन पर बिन मुर्झाई लतायें छवा दी जाएँ तो वही चिरकाल तक बनी रहेंगी। मेरे पात्रों में सब न सही, एक दो तो अवश्य ही भावी पीढ़ी को मेरे नाम से परिचित करायेंगे।

मेरा मन जब कभी उदास हो जाता है तो मुझे वृद्ध चूड़ीवाला स्मरण हो आता है। उसकी नम्रता, सेवाभाव, धर्मचिन्तन और भक्तिभाव मुझे रंजित करते हैं। आधी रात के समय अथवा किसी तपती दोपहरी में सोचते बैठने पर, लगता है चूड़ीवाला आकर द्वार खटखटाये तो कितना अच्छा हो। उससे कुछ देर बतियाते रहकर प्यार की रसभीनी फुहार में भीग कर कुछ क्षण जी उठने की ललक होती है। सोचते रहने की स्थिति में लगता है कहीं दूर से वह चूड़ीवाला कह रहा हो—'आऊँ कहाँ से? मैं तो तुम्हारे ही भीतर हूँ।' सच भी तो है। वह अन्यत्र कहाँ, मेरे ही मस्तिष्क में मुझमें ही तो है। वह जीवंत हो मेरे साथ बतियाने लगेगा, यह आशा नहीं मरती।

'मैं' मैं ही बना रहूँ, मुझसे अलग जो मैं हूँ, वह न बनूँ और एक शक्ति मुझ में जाग उठे कि मैं दूसरों को उस पावन शक्ति गंगा में डुबकी लगाने योग्य बना सकूँ यही मेरे मानव जीवन का ध्येय है, लक्ष्य है।

'मैं' एक भौतिक काया भी हूँ एक अरूप शक्ति भी। इस शक्ति द्वारा आकार धरनेवाले मेरे पात्र, दर्पण हैं—सोपान हैं।

'मैं' भौतिक काया अशाश्वत हूँ।

इस काया के पार अलग 'मैं' शक्ति-वाहक 'मैं' शाश्वत हूँ।

अनु० — दयावन्ती

मरने के बाद भी किसी लेखक की ऊबाऊ होने की क्षमता जीवित ही रहती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँसू / वैशम्वायन

कहते हैं कि अणुबम अत्यंत शक्तिमान माना जाता है पर भूकम्प कई हजार अणुबमों से भी बढ़कर शक्तिमान होता है। पर कई हजार भूकम्पों की शक्ति से भी बढ़-कर शक्तिमान और एक वस्तु है आँसू की एक बूँद। एक बूँद आँसू में कई लाख अणुबमों की शक्ति निहित है।

आँसू की एक बूँद राज्यों को मेट सकती है, बना सकती है, मृतप्राय मनुष्य को जीवित कर सकती है, जीवित व्यक्ति को मार भी सकती है और कभी-कभी तो उसे जीवित शव में बदल देती है। यह सब कुछ उस व्यक्ति की कुशलता पर निर्भर करता है जो इसका प्रयोग करता है।

लोग कहते हैं कि एक मीठी सी बात में काफी शक्ति होती है, लेकिन यह आंशिक सत्य ही है। एक बूँद आँसू और एक छोटी सी मुस्कान में निहित शक्ति से शब्दमय सम्पूर्ण संसार हार जाता है। तभी तो सहज रूप से दूसरों को वश में कर लेनेवाले कुछ लोग आवश्यकतानुसार मधुर मुस्कान के बाण छोड़ते रहते हैं अथवा नयनों के कोरों में आँसू ढुलकाते रहते हैं और मनचाही बात करवा लेते हैं।

स्त्रियाँ आँसुओं के प्रयोग में निष्णात होती हैं। पति अगर साड़ी या गहना न लाकर दे तो उसे चौखट के बाहर ही रोक कर फटकारने के बजाय एक आँसू ढुलकाकर 'बस अपने इतने से भाग्य से मुझे संतुष्ट हो लेना चाहिये' एक छोटा सा वाक्य कह कर अति नाटकीय ढंग से विषाद भरी एक छोटी सी मुस्कान बिखेर कर देखे तो सही, उनका क्या प्रभाव पड़ता है पति पर! पति स्वयं अपने आप को मारवाड़ी की दूकान पर गिरवी रखकर सुबह तक पत्नी के लिए एक सुन्दर नेकलेस उपहार में ला देगा।

लोगों को यह भ्रम है कि क्लियोपात्रा की महानता उसके सौंदर्य में है। हम दावे के साथ कह सकते हैं कि वह मधुर मुस्कान और आँसू दोनों को समान अंशों में नाप कर संतुलित कर इस कौशल से अभिनय में प्रयोग करती है कि जूलियस सीजर जैसे सम्राट् उसके आगे दुम हिलाते नजर आते हैं।

आँसू स्वास्थ्य के लिए बहुत उपयोगी होता है। नसों में उत्तेजना अधिक होने पर अगर खूब रो लिया जाय तो भारीपन हल्का होकर शरीर स्वस्थ हो जाता है। इसलिए रोनेवालों को रोने की तीव्रता कम होने तक रोने देना चाहिए। पर दुनिया ऐसा नहीं होने देना चाहती। वह न तो रोनेवालों को रोने देती है और न हँसने वालों को हँसने ही। इसीलिए एक तेलुगु कवि कविता में रो दिया है—दुनिया मुझे जी भर कर रोने नहीं देती।

सांसारिक रोना अलग है और रसमय रुदन अलग। किसी पर दुःख का पहाड़ टूट पड़े तो जी भरकर रो लेने के बाद वह कहता है ऐसा दुःख तो शत्रु को भी न हो लेकिन नाटक में हरिश्चन्द्र को स्मशान में रोते देख उसके दुःख में दर्शक स्वयं भी रो देता है और यही दुःख देखने के लिए बार-बार टिकट खरीद कर जाता है। अलंकारशास्त्रियों ने इसी को 'रसानन्दानुभूति' कहा है। उनका विचार है कि दुःख भी एक प्रकार के आनंद की स्थिति है। पड़ौसन कामाक्षम्मा को पति त्याग दे तो अड़ौसन कहती है अच्छा हुआ कम्बख्त को निकालना ही ठीक हुआ, पर वही स्त्री सिनेमा में पति द्वारा त्याग दी गई हिरोइन का दुःख देखकर आँसुओं से पूरा थियेटर गीला कर देती है।

कृष्ण दूतकार्य करने जा रहे थे। धर्मराज, भीम और अर्जुन ने बड़े-बड़े भाषण दिए। सब सुनने के बाद श्रीकृष्ण ने द्रौपदी से पूछा—द्रौपदी ने दुःशासन द्वारा खोले गए

(शेष पृष्ठ १७ पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं और मेरा साहित्य / श्री श्री

१९४७ का अपना वैशिष्ट्य है—उस साल हम आजाद हुए थे, किन्तु अंग्रेजों का कहना है—'हमें आजादी प्रदान की गई।' कांग्रेसी लोगों की धारणा में आजादी अहिंसा और सत्याग्रह की तपस्या का शुभ फल है। मैं मानता हूँ कि हमें 'स्वातन्त्र्य' मिला ही नहीं।

हम तेलुगु भाषी, १९४७ में तीन करोड़ के लगभग थे, आज शायद बढ़ गये होंगे चार करोड़ तक। हमारा प्रदेश फ्रांस से बड़ा है (हालाँकि हमारी भाषा फ्रेंच से समृद्ध नहीं है)। ऐसा वक्त भी था जब तेलुगु पूरे दक्षिणांचल की राजभाषा थी। गत हजार सालों में हम ने कम-से-कम तीन महान कवि दुनिया को दिये थे तिक्कना, वेमना, और गुरजाड़ अप्पाराव।

अब हम बीसवीं सदी के बीच में हैं—यह सदी हमारी है, अपनी है (जहाँ तक तेलुगु साहित्य से मेरा संबन्ध है)। मैं १९१० में जन्मा था (धूमकेतु की तरह), तीन बार मौत से लड़कर जीत गया हूँ। १९१८ में पहला गीत लिखा था (छंदों के नियमों की जानकारी के बिना), १९२० में पहला उपन्यास रच डाला था (वीर विजय सिंहुलु), १९२५ में लघु उपन्यास (परमाणु रहस्य) छप गया था, जिसकी प्रतियाँ आज उपलब्ध नहीं।

१९२८ में मेरे काव्य संकलन का प्रथम खण्ड (प्रभाव) छप गया, राजमहेंद्री के सरस्वती पवर प्रेस में, मेरे पिताजी को दी गई रकम से। इस मुद्रण का सारा मामला मित्रवर पुरिपंडा ने देखा, सँभाला था (अपनी भूमिका के सहित)। १९३० में ६३ दिन तक अंत्र-ज्वर से पीड़ित रहा था और खुद जान गया कि जीवन मौत के खिलाफ जिहाद बोल फिर जीतता है (यह सोचकर कि यह अब जिएगा नहीं, खटिए से लोगों ने मुझे उतारा) यह थी मेरी दूसरी मौत। १९५५ में मेंटल क्लिनिक में रहना मेरी तीसरी मौत थी। पहली मौत उस वक्त की थी, मेरे जन्मते ही। अपने को चंद-चंद महीनों के अंदर ही मर जाना चाहिये था, पर मरा नहीं। मेरे एक रिश्तेदार ने अपनी प्राकृतिक-चिकित्सा के द्वारा जीवन प्रदान किया उस चिकित्सा प्रक्रिया की कुछ निशानियाँ मेरे बदन पर बाकी हैं, धब्बों के रूप में।

१९३० तक तेलुगु साहित्य रहा मेरा रहनुमा बनकर, उसके बाद मैं स्वयं उसका प्रथम निर्देशक बना। वहाँ से शुरू तेलुगु साहित्य का इतिहास श्रीश्री की आत्म कहानी मात्र है। इस शताब्दि के आरंभ में, छायावादी कविता ने जमीन्दारी कविता पर बगावत की, यद्यपि बचपन से मेरे बागी मन ने छायावादी कविता का नियंत्रण किया है, बड़े चाव और प्रेम के साथ।

१९२५ से १९५० तक के पच्चीस सालों के दौरान छायावादी कविता के खिलाफ विद्रोह शुरू हुआ। इसी अंतराल में दो महत्वपूर्ण घटनाएँ घटित हुईं—द्वितीय विश्वयुद्ध का आरम्भ और स्वातंत्र्य का आगमन। उन्हीं दिनों 'छायावादी कविता: एक शव परीक्षा' शीर्षक निबंध लिखने को मन कसमसा रहा था। निबंध लिख न पाया, पर हकीकत थी कि साहित्यिक क्षेत्र से छायावादी कविता निष्कासित हुई, पुनः साबित करने की जरूरत ही नहीं रह गई। छायावादी कविता का स्थान प्रगतिवादी कविता ने ले लिया था। इस प्रगतिवादी कविता ने क्या पाया है? मेरे कवि-सहोदर सोमसुन्दर काफी लम्बा खुलासा देने में समर्थ हैं। मैं एक बात पर ही जोर दूँगा, ग्रांथिक (साहित्यिक) भाषा को तिलांजलि दी गई। हर किस्म के साहित्य में—पत्र-पत्रिकाओं में, रेडियो-वार्ताओं में, व्यावहारिक भाषा की विजय पताका फहराई गई। कविता-क्षत्र में 'गणबद्ध छंद'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की फ्यूडलिज्म की कमर तोड़कर, सारस्वत जीवियों ने 'मात्रावद्ध छंद' के जनतंत्र को कायम किया। उन दिनों—

—मैं भी
विश्वाग्नि मैं
एक समिधा को .....

जैसी सिंगल-पन्ना कविताओं के प्रणयन में तैनात रहता था, अब्बूरि रामकृष्ण राव इसी गद्य गीत का उल्लेख करते थे :

खाली पे—
केजी पे—
टियाँ बे—
ची जाती हैं—

'खाली पेकेजी पेटियाँ बेची जाती हैं' ..... यों पढ़ना चाहिये। तेलुगु में इस कदर गद्य गीतों को गति देनेवालों में प्रथम, व्यक्ति है श्री अब्बूरि रामकृष्ण राव। कई दिनों पहले की बात है। मेरी कविता 'पौलालनन्ती हलाल दुन्नी' पढ़कर तारीफ का पुल बाँधते उन्होंने कहा था 'तुम ने इसमें प्रगतिशील कवियों के लंदन मेनिफेस्टो का पूरा निचोड़ समावेश कर दिया।' मैंने अपने दिमाग में अब भी यह तारीफ हिफाजत से रखी है।

एक और बात बता दूँ। उन्हीं दिनों एक श्री अडिवि बापिराजू ने भीमवरम में कवि सम्मेलन आयोजित किया। वहाँ पर कविता पाठ करते समय, किसी बारह साल के लड़के ने पीछे से कहा–'ओह। ऐसी कविता मैं भी लिख सकता हूँ।' और यह बात मेरे कानों में पड़ी। फख्र है कि सच मैं ऐसी कविता करता हूँ, जिसे सुनकर एक अदना सा लड़का यह कह सका।

पिकासो के चित्र को देखकर एक करोड़पति बोले – ओह ! इस ढंग की तस्वीर दस साल का मेरा लड़का भी बना सकता है। झट बगल में बैठे दूसरे करोड़पति कह बैठे चित्र लेखन से नावाकिफ, कोई भी रईस पिकासो की तस्वीर लाखों रुपयों में खरीदता है, मत भूलियेगा, भैया।

परसों यानी हाल में ही हैदराबाद के वीरशैव होस्टल में 'क्रांतिकारी लेखक संघ' (वि० र० सं) के द्वितीय वर्षान्त समारोह के दौरान श्री अब्बूरि ने मुझे एक और योग्यता पत्र प्रदान कर दिया। बोले 'यू आर वेजिंग ए हिरोइक बैटल' साहित्य अकादमी की सदस्यता से बढ़कर यह वाक्य मेरे लिये मान्य है, महत्वपूर्ण है।

अनु०—डॉ० पी० बाल सुब्रह्मण्यम

(पृष्ठ १५ का शेषांश)

बालों के जूड़े को एक बार खोल आँखों में पानी भरकर कहा—दूतकार्य करते समय बस इन्हें एक बार स्मरण कर लेना। परिणाम स्वरूप लाखों टन अणुबम विस्फोट जितनी शक्ति उजागर हुई। कुरुक्षेत्र का युद्ध हो गया।

काव्य कांताएँ इन आँसुओं का मूल्य बखूबी जानती हैं। पेद्दन्ना रचित मनुचरित्र में उन्होंने लिखा है—वरूधिनी जब प्रवरारूय का आलिंगन करने को उद्यत होती है तो निष्ठावान प्रवर उसे दूर धकेलता है। तब वरूधिनी 'हे निर्दयी ! देखो तो तुम्हारे नाखून कहाँ चुभे हैं' कहकर अपने उरोज दिखाती है। इस प्रकार वह दुःख प्रकट करने के संदर्भ में भी श्रृंगार भावना का ही पोषण करती है। कवि लिखते हैं 'वरूधिनी कोयल की कूक सी रो उठी।'

सत्यभामा के आँसुओं की बानगी और अन्दाज ही अलग है। वह तो पति श्रीकृष्ण के पैर पकड़ कर चिरौरी करने पर पैरों से परे हटकर नखरों में रोई थी कि वे सौत रुक्मिणी से ही अधिक प्रेम करते हैं। विश्वनाथ सत्यनारायण की रचना में गिरिका प्रौढ़ा नहीं, मुग्धा थी अतः विरह का दुःख न सह पाई तो फूट-फूट कर रोने लगी। भवभूति तो मात्र रुदन को ही रस-की उच्चतम कोटि तक पहुँचा गए हैं। रोना चेतनता और प्राणवान जीवन का चिह्न है। बच्चा पैदा होते ही नहीं रोता तो उसे 'मृत' माना जाता है। अतः आँसू जीवन दायक टॉनिक है।

अनु०—दयावन्ती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेलुगु साहित्य में 'यौन' / श्री रांशा

शृंगार रसराज है, यानी आत्मीय रिश्तों का पूरा अवलम्ब शृंगार ही है !

शृंगार यौन का पर्याय है, वह व्यष्टियों को एकत्र करता है, समाज को समष्टि की विराटता देता है, समाज में धर्म, अर्थ की परिभाषाओं को निश्चित करता है – अधर्म, अनर्थ को निर्मूल करता है। द्वेष व्यष्टि का विघटन करता है, हर शख्स के चारों ओर दुर्भेद्य वलय का निर्माण करता है।

समाज की रचना कैसे संभव है ? वह कैसे जारी रहती है ? कल्याण की स्थिति भी मुमकिन है। समाज परिवार से, परिवार 'यौन' व 'काम' से परिचालित है ! काम का परिवर्द्धन जरूरी है। इसी दृष्टि से शृंगार को रसराज कहते हैं। शृंगार जीवों के शारीरिक संबन्धों को उदात्त बना देता है, प्रफुल्लित कर देता है। हमारे प्रबन्ध इसी उदात्त प्रयोजन से रचे गये हैं, नायक है धीरोदात्त नायिका उदात्त भावों से अनुप्राणित, उनके रिश्ते भी खासी उदात्तता लिये हुए।

क्षुद्र (अधम) नायक-नायिका को क्यों हम स्वीकार नहीं कर सकते ? यह एक तर्क है। निषेध तो नहीं, पर प्रयोजन क्या है ? क्षूद्रता ही जैसे 'उष्णेन उष्णं शीतलम्', वैसे ही क्षुद्रता के साथ क्षुद्रता नहीं जोड़नी चाहिये। प्रबन्धों में दृष्टिगत शृंगार केवल आंध्र जाति तक सीमित नहीं, वह कालानुसार परिवर्त्तनशील है—अंग्रेजी, फ्रेंच जर्मन आदि साहित्यों में भी इसी ढंग का शृंगार देखने को मिलता है, लेकिन वह थोड़ा सा 'हैवानी' लगता है। उद्रिक्त प्रेम ही 'काम' है, काम में जो उफान (फोर्स) है प्रेम में नहीं, इसलिये ही काम हैवानी प्रतीत होता है। और एक बात : हमारे प्रबंधों में नायिकाओं का नखशिख वर्णन ही क्यों ? नायक का क्यों नहीं ? हमारा उत्तर : पुरुषों ने लिखा है, स्त्रियों ने नहीं। स्त्री कोमल स्वभाव की, निसर्ग से वे केवल ग्रहीताएँ हैं, न कि कर्त्ताएँ। कर्तृत्व पुरुष का स्वभाव-कर्म है, महोज्ज्वल काम के विजृंभण के बिना पुरुष कर्त्ता नहीं हो सकता। स्त्री में 'काम' सहज नहीं, एक प्रेरित स्थिति है जो पुरुष के द्वारा ही संभव है। काम शास्त्र भी स्त्रियों को शृंगार प्रसाधन के आकर्षक उपाय, और पुरुषों को वैविध्यपूर्ण प्रेरक मार्ग बताया करता है, हैवानियत की असली वजह भी यही है।

यह हैवानियत भी समय के अनुसार बदलती है—उस जमाने के लोग काफी बलिष्ठ, भोजन-प्रेमी, हट्टे-कट्टे, इसलिये तो रण रंग में शूर रहे, स्नायु-दौर्बल्य जानते तक नहीं थे, बराबर के योद्धा स्मर-रंग में भी ! इस पीढ़ी के लोगों के लिये तो वह अवश्य हैवान से लगते ही हैं, उन के उद्गार भी ऐसी ही हैवानियत लिये हुए।

'भाव कविता' (छायावादी कविता) ने इसी हैवानियत के खिलाफ बगावत की। नायिका की जगह हृदयेश्वरी का उद्भव हुआ, नखशिख वर्णन के स्थान में आराधना आई। इसके कर्णधार कृष्ण शास्त्री, वेदुत, वायनि व्यण्डूरि आदि। काम के बदले में निर्वीर्य प्रेम की प्रतिष्ठा की गई। 'स्त्री' इन सामाजिकों की आराध्य वस्तु है। स्त्री की गरिमा का बखान करके इन कवियों ने पुरुषों की दुनियाँ में प्रचलित 'धृष्टता' की निन्दा की। फलतः प्रबन्ध-युग के अंत तक जो 'स्त्री' भोग्या मात्र रही थी, भाव कविता युग में आराध्य देवता बन चैतन्य से अनुप्राणित हो, 'अर्द्धांगिनी' का दावा लेकर खड़ी हो प्रश्न करने लगी। इस के साथ कविता पिघलकर, राजनीति की झीनी चादर में अटक, छिप गई।

(शेष पृष्ठ १९ पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संवेदना / दयावन्ती

'माँ ·····' बड़ी दर्दनाक आवाज।'

सामने तीन मंजिला मकान। तीनों मंजिलों से एक साथ कई चेहरे उगे और फेड आउट हो गए।

'माँ' बीच सड़क पर पड़े एक व्यक्ति की कराह।

तीन मंजिले मकान के सामने पाँच हजार गायों की गोशाला का मालिक लम्बा-तगड़ा जो सुबह से अब तक गोशाला के आगे पड़ी चौड़ी तख्ती पर बैठा उस दिन की आमदनी गिन रहा था, कराह सुन कर गिनती भूल गया। झुँझलाहट में उसने सारे पैसे अँगोछे में समेटे और भीतर गया।

'मां ·····'

कौन है यह ? स्कूल जाते बच्चों ने दो मन भारी पुस्तकों का थैला सँभाल कर दूसरे से पूछा।

'माँ ·····' सड़क पर वह व्यक्ति पसरा पड़ा था। दूसरा बच्चा उसी को देखता खड़ा था बोला— भूख लगी होगी।'

'मम्मी ने रेसेस में खाने के लिए टिफिन का डिब्बा दिया है। इसे खिला दें।'

'मेरे पास पानी की बोतल है' दूसरे ने कहा।

पहले वाले ने थैले से डिब्बा निकाला तो दूसरे ने उसके हाथ से छीन लिया और उस में का दही चावल नन्हें-नन्हें हाथों से निकाल कर एक ओर सड़क पर पड़े व्यक्ति के मुँह में दे दिया।

पहले वाले ने दूसरे के थैले से पानी की बोतल निकाली और पानी उसके मुँह में डाला, 'पहले इसे पानी पिलायेंगे।' पानी की बूँदे गले में पहुँचते ही सड़क पर पसरे उस हड्डी के ढाँचे ने आँखे खोल दीं। दोनों नन्हों की आँखें प्रसन्नता से झूम उठीं।

इतने में दूर से बजती स्कूल की घंटी सुनाई दी। टिफिन का डिब्बा और पानी की बोतल वहीं छोड़ दोनों नन्हें भागे।

दूसरी ओर से दहाड़ती हुई एक लारी ने भोंपू बजाया और ब्रेक लगाने का प्रयत्न करने में दोनों बच्चे उसकी चपेट में आ गए। लारी का पहिया दाहिनी ओर मुड़ गया और वह दलदल वाले गढ़े में जा गिरी।

सड़क पर पसरा पड़ा व्यक्ति समझ नहीं पा रहा था कि क्या हुआ है।

तीन मंजिले में रहनेवाला एक लेखकीय चेहरा जो सड़क पर पड़े व्यक्ति के प्रति पूरी संवेदना से भर कर भीतर खोल में छुप गया था पुनः प्रकट हुआ दृश्य और घटना की गहराई में उतर कर कहानी बनाने के लिए।

(१८वाँ पृष्ठ का शेषांश)

इसतरह के नारी जागरण के मूल कारक हैं चलय। हेवलॉक एलिस, फ्रॉयड, किन्से इत्यादि मनीषियों की प्रभावी शोध ने पुरुष के नपुन्सक प्रेम का खण्डन किया, सही दाम्पत्य के आधार व समन्वय को खोज में काफी वैज्ञानिक काम किया।

प्रबन्ध युग में कविता और 'सेक्स' दंपति रहे, भाव कविता युग में दोनों तलाक ले चुके। इस नये जमाने ने वैज्ञानिक आयाम प्रदान किये हैं, खासकर आधुनिक कहानी ने। इस के शिखरस्थ साहित्यकार हैं राचकोंड, मुय्याल्ल। अब कविता और सेक्स ने शादी कर ली, घर बसाने के चाव के साथ।

अनु०—डॉ० जी० बाल सुब्रह्मण्यम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्पताल में / एम० एस० मूर्ति

'क्या बीमारी है आपको कि इतनी रात गए अस्पताल में आये ?'

'मैंने सूई निगल डाली । क्या मैं बचूँगा ? मर तो नहीं जाऊँगा ? बड़ा डर लग रहा है ।'

'डरने की कोई बात नहीं। डाक्टर बड़े योग्य व्यक्ति हैं ।'

'पर मैंने तो सुई निगल डाली ।'

'अब आपको क्या तकलीफ है ?'

'फिर वही बात पूछ रहे हैं ? अजी सूई मेरे गले से नीचे उतर गई है पेट में जा पहुँची है। लगता है अब मैं यों खड़े-खड़े ही मर जाऊँगा ।'

'परवाह नहीं । जरा धीरज रखिए । सब ठीक हो जाएगा । लेकिन यह तो बताइए कितनी देर हुई सूई पेट में गए ?'

'एक घंटे से ऊपर हो गया ।..... आप को क्या बीमारी है ? यहाँ कितने दिन से इस अस्पताल में आराम फरमा रहे हैं ।'

'मैंने सूई नहीं निगली । मैंने जहर खाया है। कल मैं जब संज्ञाहीन हो गया था तो लोगों ने मुझे उठा कर यहाँ ला पटका ।— हां, तो फिर आपने सूई निगल डाली है न ?'

'जी हाँ । बिल्कुल यही बात है । एक घंटे से भी ऊपर हो गया । हाय मेरी प्यारी जान ।'

'सचमुच आपने बड़े जीवट का काम कर डाला । अजीऽऽ आपने सूई निगल डाली, समझे। यह कोई छोटी मोटी बात नहीं ।'

'हाँ, यही मैं भी कह रहा था । इतनी जरा सी सूई पेट में चली गई और मैं देखता ही रह गया । हे भगवान ! यह कैसा काम तुमने मुझसे करवा डाला ?'

'इतने साहस का काम आप जैसा व्यक्ति ही कर सकता है । सूई निगल जाना मामूली बात थोड़े ही है ।'

'ओह ! आप मुझे और भी डरा रहे हैं मैं वैसे ही मर रहा हूँ ।'

'सचमुच आप मर रहे हैं । मैंने काल-कूट का पान किया था लेकिन अब मैं जीवित हूँ । मरना तो आप जैसे सूई निगलनेवालों को ..... '

'मुझ जैसा दलिद्दर तो इस दुनिया में कोई न होगा ।'

'आपको बिल्कुल निरुत्साहित नहीं होना चाहिए । सूई है कि तमाशा । अणु में ब्रह्माण्ड होता है फिर तो सूई में तो—।'

'अब क्या होगा ?'

'डाक्टर आकर बतायेंगे ।'

० ० ०

'हाय इतनी जल्दी जा रहे हैं ? क्या कहा डाक्टर ने ?'

'कहते हैं पेट में सूई कहीं नहीं दीखी ।'

'कितने भाग्यवान है !'

'वह तो आप हैं । मैंने तो तभी सोचा था.....।'

'क्या ?'

'कि शायद मैंने सूई नहीं निगली होगी ..... भ्रम हो गया होगा मुझे ।'

'तो फिर अस्पताल क्यों चले आए ?'

'रात की गाड़ी से उतारा गया था टिकट न लेने के कारण । सोचा कि यहाँ रात भर आराम कर लूँगा ।'

'डाक्टर कम्बख्त कितना निर्दय है ?'

'आप चिन्ता न कीजिए । उस सामने-वाले मकान के बरामदे में रात काट लूँगा । लगता है घरवाले सब सो गए हैं ।'

अनु० — दयावन्ती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह स्ट्रीकिंग तो नहीं है / के० कृष्ण मूर्ति मीनन

'हैं ! स्ट्रीकिंग ।' किसी ने पार्क में से पुकारा ।

'कहाँ ? कौन ?' पार्क में से सभी लोग सड़क पर दौड़ आए ।

एक दुबली लम्बी-सी युवती सड़क पर नंगी दौड़ रही थी । उसके ताँबे के रंग के लम्बे बाल हवा के कारण बिखर रहे थे । शाम की धूप में उसकी काली देह जंग लगी काँसे की मूर्ति के समान, जीवन्त दौड़ते हुए वीनस के समान थी ।

मेन रोड पर ट्रैफ़िक जहाँ की तहाँ रुक गया । मोटरों की भोंपू, रिक्शाओं की घंटियों की ध्वनियाँ साइकिलों की आवाजें —कोलाहल ही कोलाहल था । किन्तु उस युवती के मन में यह कुछ भी नहीं था । वह मशीन के समान दौड़ती ही जा रही थी । दौड़ दौड़कर, एक जगह रोड से उतरकर, ताड़वन के बीच से एक छलाँग लगा कर एक झोंपड़ी में घुस गायब हो गई ।

० ० ०

रात भर सीतालू को नींद नहीं थी । पौ फटने पर मामा आ जाएगा । उसी के ख्यालों से मन मन्दिर को भरकर, रातभर जाग कर, वह तारे गिनती रही ।

दो वर्ष हुए, रामू नौकरी की खोज में शहर चला गया था । इतने दिनों के बाद वह अब आ रहा है । वह भी ऐसे वैसे नहीं, सीतालू के साथ शादी कर, उसे साथ ले जाने आ रहा है । यह ज्ञात होते ही, सीतालू को ऐसा लगा कि मानो सिर से कुछ बोझ उतर गया है । अब तहसीलदार के यहाँ दिन भर कड़ी मेहनत करने की आवश्यकता नहीं रहेगी । उनके यहाँ के माली से लेकर, उनके बूढ़े बड़े भाई तक सभी तरह के लोगों की बुरी नजरों को सहते रहने की आवश्यकता नहीं रहेगी । तहसीलदार का छोटा लड़का छिगुनी भर का भी नहीं है पर आँख मारता है । नहीं तो कुत्ते को भड़काता है । छिः छिः कैसी जिन्दगानियाँ हैं । गरीबी में पैदा होना ही महा पाप है । खैर, अब और कितने दिन ? बला टल ही जानेवाली है । हाथ पीले करके, मामा शहर ले जाएगा । सुना है, शहर में कई नई-नई चीजें—थियेटर, सिनेमा, सर्कस होते हैं । बिना इंजन की रेलगाड़ियाँ, डबल बसें होती हैं । बस, सब देखने का अवसर मिलेगा । पता नहीं, मामा वहाँ क्या कर रहा होगा ? जो भी हो, मुझ तो सिर्फ घर बैठ रसोई पकाना होगा । तहसीलदार की घरवाली के समान घर में ही रह सकती हूँ । सबेरे-सबेरे उठकर खाना पकाऊँगी । मामा के लिए कैरियर भर कर भेज दूँगी । शाम को सब काम पूरा करके, स्नान कर, धुली साड़ी पहन, जूड़े में फूल खोंस, मामा की प्रतीक्षा में बैठी रहूँगी । तहसीलदार का बेटा और पतोहू दोनों शाम को सैर करने चले जाते हैं । रात को देर से आकर, एक ही थाली में खाकर, उसके बाद ····· उसके बाद सीतालू सोच नहीं सकी । अनजाने में ही उसके मुखड़े पर मुसकान की लहरें भर आईं ।

यह सब निहारती हुई चल्लालू से आगे रहा नहीं गया । उसने पूछ ही लिया—'क्यों री, यह क्या अपने आप में हँस रही है ?'

सीतालू सकपकाई । पलभर के बाद बोली— कुछ भी नहीं दीदी । यूँ ही हँसी आ गई ।'

'अरी, चुप रह । झूठी कहीं की । यूँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही हँसी आएगी ? कोई मीठी कहानी होगी। क्यों सीतालू ? तहसीलदार के लड़के की नजर पड़ गई क्या ?'

'थू - थू'।

'फिर क्या बात है ?'

'ऊँ ·····आँ ····· कुछ नहीं· ···मामा की याद जो आई। आज आएगा न ?'

'क्या कहा ? रामू आ रहा है ? यह बात है ! इसीलिए तो ?'

सीतालू लाज के मारे सिकुड़ गई। लगा मानों कोई गुदगुदी कर रहा है, कोई देह पर गुलाब जल छिड़क रहा है। सीतालू को देखती खड़ी रह गई चल्लालू। उसकी खुशी को देख देखकर चल्लालू को आप बीती याद हो आई। "बचपन में ही वह बर्मा चला गया था। पाँच साल के बाद जब पता चला कि वह लौट रहा है, तो बादलों को देखनेवाली मोरनी के समान हो गई थी मेरी हालत। लगता था सारी दुनिया नन्दनवन है, उसमें मैं और वह—बस दो ही विचर रहे हैं। लेकिन किसी ने मुझे यह नहीं बताया कि उसकी आँखों के लिए खूबसूरत लगना चाहिए, साज-सिंगार कर उसका मन मोह लेना चाहिए। वह उम्र ही वैसी थी। बर्मा को सुन्दरियों के हाव-भावों का आदी वह, मेरी तरफ आँख उठा-कर देखे बिना ही चला गया। वहीं किसी से शादी कर, बच्चों का बाप बन, वहीं बस गया। उसके लिए कितने ही दिनों तक पलक पाँवड़े बिछाए रही। कई बरस सूना और एकाकी जीवन बिताया।"

एक दिन अकेली घर पर बैठे-बैठे कल्पनाओं में विचर रही थी। उस दिन कोशिश करने पर भी अपनी इच्छाओं को काबू में न रख सकी। जवानी अकेलापन दोनों मिलकर मानों नोच खा रहे थे। वह शारीरिक वासना-तृप्ति को नकारने की हालत में नहीं थी। कल्पनाएँ पंख लगा कर, पता नहीं कहाँ उड़ाए ले जा रही थीं। ऐसे समय अकस्मात् टट्टर को धकेलकर सत्तय्या भीतर आया।

'यह क्या ? इतनी रात गए ?'

'अरी तुम ही कह रही हो रात है ? फिर जानती नहीं क्यों आया ? तेरे लिए।'

'मजाक की बातें छोड़ दो। यहाँ से चले जाओ। कोई देख लेगा तो अच्छा नहीं रहेगा।'

'देख ले तो क्या हुआ ? हमें डर किसका ? शादी कर लेंगे।'

'ऐसी बातें मत करो। मेरी तो शादी हो चुकी है।'

'बड़ी हुई शादी। वह भी कोई शादी है ? उसने कभी तुम्हारा स्पर्श भी किया है ? अरी पगली ! तुमने दुनिया को जाना भी नहीं। वह तो वहाँ अपनी औरत के साथ मजे में है और तुम यहाँ अकेली आसमान के तारे गिनती रहो। इससे कामनाएँ पूरी होती हैं ? अब कबतक उसकी इंतजारी में जवानी को गँवा दोगी ? आओ हम शादी कर लें। आओ न।'

"कोई दूसरा वक्त होता तो पता नहीं क्या जवाब देती, पर उस समय तो सत्तय्या की हर बात सोलह आने सच लग रही थी। शरीर गर्मी से तप्त था। पूछ लिया - 'सचमुच शादी कर लोगे ?'

'सच्च, तुम्हारी—नहीं-नहीं मेरी कसम।'

"उसके बाद कैसे इनकार करती ? जरूरत पूरी हो जाने के बाद सत्तय्या फिर दिखाई नहीं पड़ा। जिस दिन पता चला कि माँ बनने जा रही हूँ, उसी दिन रातों रात गाँव छोड़कर यहाँ आ गई। इस समाज में अकेले जीना संभव नहीं है, यह जान लेने के बाद, हर रात किसी नए व्यक्ति के साथ जीवन बिताना पड़ रहा है। अभी तक मन कचोटता रहा है कि इस दुर्गति का कारण उस दिन अपने मर्द को आकर्षित न कर लेना ही है।"

चल्लालू का सपना मानो टूट गया। वह बोली—'अरे अभी ऐसी ही क्या बैठी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है ? जा, जरा नहा ले और धुली साड़ी पहन ले । उसके आने तक जरा साज सिँगार कर ले । वह तो शहर से आ रहा है ···· ।'

सीतालू ने कोई जवाब नहीं दिया ।

'क्यों ? अच्छी साड़ी नहीं है ?'

नहीं है न ·· ।' सितालू के स्वर में दीनता थी ।

'चोली तो नहीं है. अच्छी साड़ी है । दे दूँ ?'

'न न····· तुम्हारी साड़ियाँ अच्छी रहती हैं । मेरे पास मैली हो जाएगी ।'

'साड़ी मैली हुए बिना कैसे रहेगी ? मैली होगी तो होगी । आज तुम्हारा मर्द तो साड़ियाँ लाएगा ही । एक मुझे दे देना ।'

उस मुहल्ले में चोली पहननेवाली सिर्फ चल्लालू ही है । शेष सभी कोई न कोई मोटा कपड़ा लपेट लेती हैं । वह कपड़ा कभी अपनी सामर्थ्य के अनुसार उनके स्त्रीत्व को छिपा देता है तो कभी वह भी नहीं ।

सीतालू ने उस दिन खूब सिर नहा लिया । चल्लालू की दी कंघी से बाल गूँथकर, जूड़ा बना लिया । चल्लालू की दी साड़ी को ही पहनकर दिनभर मामा की प्रतीक्षा करती रही ।

किन्तु वह आया ही नहीं ।

दिन ढल रहा था । उधर तहसीलदार के घर जूठे बरतन उसकी प्रतीक्षा करते होंगे । जल्दी वहाँ न पहुँचेगी तो उनकी घरवाली पागल कुत्ते सी टूट पड़ेगी ।

वह प्रतीक्षा करते करते ऊब गई और साड़ी बदल कर अपनी मोटी साड़ी पहनने के लिए तैयार हुई ।

'क्यों री सीतालू ? वह नहीं आया क्या ?'

'नहीं ·····।' सीतालू के स्वर में निरुत्साह था ।'

'फिर साड़ी क्यों बदल रही हो ?'

'फिर करूँ क्या ? काम पर जो जाना है ।'

'जाना है तो जाओ । पर साड़ी काहे को बदल रही हो ? साड़ी से तो तुम अपसरा सी लगती हो । तुम्हें कहीं कोई उड़ाकर न ले जाए । जाओ, आज के लिए ऐसी ही जाओ ।'

० ० ०

शिकार न मिलने पर तड़पने वाली शेरनी की तरह तहसीलदार की श्रीमती आग बबूला हो रही थी । पुत्र और पतोहू के पार्क जाने का समय हो गया था । थोड़ा बहुत नाश्ता खिला कर उन्हें भेजना चाहिए । सितालू ने अभी बरतन माँजकर नहीं दिए । वह सितालू की प्रतीक्षा में बैठी थी ।

सीतालू के दिखाई पड़ते ही, वह गरज उठी । 'आहा, आ गई माताजी । राजकुमारी बन गई हो । क्या कोई उड़ाकर ले गया था और अब छोड़ दिया ?'

सीतालू चुपचाप पिछवाड़े के नल के पास चली गई । शायद शेरनी की भूख मिटी नहीं । वह भी सीतालू के पीछे ही चली आई ।

'ओह । नई साड़ी पहनकर दुलहिन सी दीख रही हो । क्या बात है ? अरी । ··ओ बहू ! रमा ! इधर आओ तो ।' वह चीख उठी ।

'क्या है माँ जी ।'

'देख बेटी । इसके अंग पर जो साड़ी है, वह तुम्हारी नहीं है ?'

'अरे हाँ माँजी । मेरी ही तो है ।'

'री ! इतना साहस तेरा ? हमारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साड़ी चुराकर, फिर उसे पहनकर हमारे ही घर इठलाती आई हो ?'

'नहीं अम्माजी। यह साड़ी तो आपकी नहीं है।' सीतालू घबरा उठी।

'फिर किसकी है ? कहाँ से आई है ? बोल तो।'

'.....अम्माजी ..... वह .....वह' वह बोल नहीं सकी। उनका सन्देह और बढ़ गया।

'चोर कहीं की ! हफ्ते भर से हल्ला मचा है कि साड़ी चोरी गई तो गूँगी-सी चुप रही। और आज उसी साड़ी में सजकर आई हो ?'

'नहीं माँ जी। मैं चोर नहीं हूँ।'

'झूठ काहे को बोल रही है ? आओ बहूरानी। इसको सबक सिखाना चाहिए।' कहते-कहते उसने साड़ी पकड़ कर खींच ली। सीतालू की जवानी का उभार खुलकर दीखने लगा।

सीतालू दोनों हाथों से छाती छिपाकर, अनुनय करने लगी—'नहीं नहीं, माँ जी, यह साड़ी आपकी नहीं है।..... मैं चोर नहीं हूँ।' कहते-कहते उसने पैर पकड़ लिए।

मालकिन ने एक लात मारी तो सीतालू नीचे गिर गई। लात पर लात जमाते मालकिन ने साड़ी खींच ली। 'माँजी। पैर पड़ती हूँ। कपड़े का पुराना टुकड़ा तो दे दीजिएगा। शरम के मारे मरी जा रही हूँ।'

'क्या कहा ? शरम आ रही है ? बेशरम कहीं की। कपड़ा चाहिए ? रे बेकन्ना।'

'न न मांजी। किसी मर्द को मत बुलाइए, पैर पड़ती हूँ, उसे मत बुलाइए।'

सीतालू कह ही रही थी कि वह परम आज्ञाकारी चाकर दौड़ता आ ही रहा था।

सीतालू उठकर तीर-सी भाग निकली।

० ० ०

झोंपड़ी में टाट पर लौट कर, जमीन से सिर पटक-पटक कर रो रही थी वह। रो-रोकर वह वैसी ही लेटी रही। बलिष्ठ लम्बी उँगलियों के पीठ पर पड़ते ही पलभर के लिए सिर उठाकर, उसे देख, टाट से अपने को ढँककर रो पड़ी। 'नहीं मामा ! मैं ने साड़ी नहीं चुराई। मैं चोर नहीं हूँ.. चोर नहीं हूँ।'

रामू कुछ बोला नहीं, उसे अपने में ले लिया। पलभर उसकी आँखों में आँखें डाल कर देखा, वह कबूतर के समान उसमें समा गई, आँसू बहाती हुई।

चल्लालू यह सब देखती रही।

सारी कथा मालूम होने पर चल्लालू के मन में तहसीलदार के माली की बात आई।

'निगोड़ा कहीं का। चोर कहीं का ! चोरी की साड़ी ला दी मुझे .....।' कहती हुई झट से वह निकल पड़ी उसे ढूँढ़ने।

अनु०—कुमारी बी० वाणी

देश की एकता के लिए सबसे पहली जरूरत भाषा की एकता की है। हमें अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति प्रेम जगाना होगा, तभी देश की एकता संभव हो सकेगी।

—गृहमंत्री चरण सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हार्ट पेशन्ट / पी० एस० नारायण

सूर्यनारायण को लॉटरी में तीसरा पुरस्कार घोषित हुआ था, पचास हजार। उस समाचार को सर्वप्रथम पड़ोसी राममूर्ति ने देखा। राममूर्ति और सूर्यनारायण में खासी मैत्री थी। रोज दोनों मिलकर ही अखबार मँगाते थे। राममूर्ति उसे पहले पढ़ लेता और शाम को सूर्यनारायण को दे देता। दोनों के घर वालों में भी अच्छी दोस्ती थी।

सूर्यनारायण रोज ही कहता कि मुझे लॉटरी में रकम मिलनी चाहिए। ऐसा मेरी जन्म पत्री में लिखा हुआ है। इसलिए जहाँ भी लॉटरी टिकट दिखाई पड़े, वह खरीद डालता। राममूर्ति सवेरे ही अखबार पढ़ लेता है न। इसीलिए उसे सूर्यनारायण ने टिकटों के सभी नंबर दे रखे थे।

उस दिन के अखबार में सूर्यनारायण की बात सच बन बैठी। पिछले दिन शाम को सूर्यनारायण ने कहा भी था। राममूर्ति को सचमुच प्रसन्नता हुई कि उसके मित्र को प्रदेश की लॉटरी में पचास हजार रुपये मिलने जा रहे हैं। वह बनियान पहने था, वैसे ही निकल पड़ा। किन्तु मन में आया कि यह बात अपनी पत्नी के कान में डाल दे। पत्नी ने झट रोका और कहा, 'अरे, कहीं आप पागल तो नहीं बन गए? सूर्यनारायणजी तो हार्ट पेशेन्ट हैं। एकदम यह बात मालूम हो जाए तो उनके दिल पर असर नहीं पड़ेगा? यह धीरे से सावधानी से उन्हें बतानी होगी। समझे?

'हाँ, ठीक तो है। तब क्या किया जाए?'

पत्नी ने सलाह दी, 'डाक्टर साहब को बुला लीजिए। पड़ोस के वेंकटरावजी को तथा जगन्नाथराव जी को भी बुलाइए। सोच समझकर काम कीजिए नहीं तो बाद में कुछ हो जाए तो सब आपके सिर दोष मढ़ेंगे।'

बस, राममूर्ति ने जगन्नाथराव और वेंकटराव से सलाह-मशविरा किया। डाक्टर को मेडिसिन-किट के साथ आने के लिए खबर भिजवाई।

डाक्टर के आने के बाद उन्हें सब कुछ बता दिया गया। सभी ने राममूर्ति के घर पर ही तय कर लिया कि किस-किस को क्या करना चाहिए। आगे-आगे राममूर्ति, पीछे डाक्टर, उनके पीछे जगन्नाथम् और वेंकटराव चल पड़े। तबतक आठ बज गए थे और धूप भी तेज हो गई थी।

तीनों ने एक साथ सूर्यनारायण के मकान में प्रवेश किया। सूर्यनारायण बैठा-बैठा कॉफी पी रहा था। जरा हटकर देहली पर बैठी थी उसकी पत्नी।

एक साथ आनेवाले इन लोगों को देखकर सूर्यनारायण ने कहा, 'आइए, आइए। कुछ खास बात होनी चाहिए जो एक साथ इतने लोग आ रहे हैं।' पत्नी की ओर मुखातिब होकर कहा, 'देखो, जरा सब के लिए कॉफी भेज देना।'

'देखिए सूर्यनारायणजी! हम मनुष्य हैं उमर भी ढलती जा रही है। सुख या दुख की बात जरा हल्के ढंग से लेने का प्रयास करना चाहिए' कहा राममूर्ति ने।

तभी तक डाक्टर मेडिसिन-किट टेबिल पर रख, उसपर हाथ डालकर तैयार पोजिशन में खड़ा हो गया। पीछे वेंकटराव ने पोजिशन ले ली। दाईं तरफ जगन्नाथम् खड़ा हो गया।

'अब हुआ क्या है?' सूर्यनारायण के स्वर में उतावलापन था।

'कुछ भी नहीं। आपको हमारा मुँह मीठा करना चाहिए। कॉफी पीने की सोचकर आपके यहाँ आए हैं। बस, इतनी सी बात है। पहले चीनी का डिब्बा तो मँगाइए।' राममूर्ति ने कहा।

डाक्टर ने किट ओपन कर लिया।

जगन्नाथम् ने कुर्सी पकड़ ली मानो सूर्यनारायण को पकड़ रहा था।

'अरे बता दीजिए न। कुछ लॉटरी-वाटरी के परिणाम निकले हैं क्या? इस

(शेष पृष्ठ २६ पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्टरव्यू / इन्द्रगंटि जानकीबाला

मेज पर रखी फाइल को अनमने ढंग से, बेसब्री से उठाया अफसर ने । बाहर छः उम्मीदवार खड़े थे इंटरव्यू के लिए । उनकी परीक्षा लेनी है । वह सब रस्म अदाई के लिए था । बस, बला टल जाए तो सही ।

पहला आवेदन पत्र उठाकर उस उम्मीदवार को बुलाने का आदेश दिया । वह बेरोजगार बा-अदब आ खड़ा हो गया ।

'तुम्हारा नाम ?' बस पूछना था, पूछ लिया । आँखों में न चमक, न सुनने की चाह न जलने वाले बल्बों के समान थीं आँखें ।

'मेरा नाम पेरिशास्त्री है । हमारा परिवार काफी बड़ा है । चार वर्ष हुए मेरे पिताजी का देहान्त हो गया है । बी० ए० पास किए तीन साल हो गए । दो बहने हैं, दो छोटे भाई हैं । इन सबका भार मेरे सिर पर है । इसलिए सविनय निवेदन है' अवसर मिल गया, बस वह अपना दुखड़ा सुनाता गया ।

'हूँ···' अफ्सर का स्वर गुफा में से शेर-शावक की भाँति गुर्राहट से भरा था । पेरिशास्त्री सहम गया ।

'अब आप जा सकते हैं ।'

'सर····· ।'

'आइ विल सी । यू केन गो ।' लाचार पेरिशास्त्री बाहर चला गया ।

दूसरा नाम था वेंकट रत्नम् । साँवला सा, भरा-पूरा सा । आवेदन पत्र में जो विवरण थे, उन्हीं के बारे में पूछकर उसे भी भेज दिया गया ।

अफसर की सहनशक्ति समाप्त होती जा रही थी । सभी आवेदन पत्रों को उलट-पलट कर वह क्रोध के मारे काँप उठा । फिर भी अपने आपको सम्हालकर उसने नरसिंहराजु को बुलवाया । वह नवयुवक था, नुकीली नाक, घुँघराले बाल किन्तु ये तो नहीं चाहिए । एकाध प्रश्न कर उसे विदा कर दिया ।

वेंकटेश्वरराव आया था, चौधरी जी की सिफारिश लेकर । वह सिफारिश पत्र पढ़कर, कुछ बोले तो नहीं, फिर भी कह दिया, 'आइ विल कनसिडर यू फॉर ए बेटर पोस्ट ।'

बरहालू सविनय नमस्कार करता हुआ आया । पाँच प्रश्न करके उसे भेज दिया । अब निराश बने अफसर ने छठे उम्मीदवार को बुलाया । अंतिम उम्मीदवार को थर-थर कँपा देकर भेज देने के बाद अफसर ने हेड-मुंशी को बुलाया और उसपर टूट पड़ा फाइल उसके मुँह पर फेंकते हुए बोले, 'क्यों जी, घर में कपड़े धोने वाले प्यून की जरूरत थी न । उसीके लिए था न यह इन्टरव्यू ?'

अफसर की बातों में उस एक बात को भूला मुंशी सिर खुजलाता हुआ बाहर चला गया ।

अनु०—निर्मल

(पृष्ठ २५ का शेषांश)

महीने तो पुरस्कार मिलकर रहना चाहिए ।' उसके स्वर में काफी उत्साह था ।

'परवाह नहीं, ठीक लाइन पर ही आ रहा है ।' ऐसा मन में सोचते राममूर्ति ने कदम आगे बढ़ाया । मानो सूर्यनारायण को गिरने न देना चाहता हो, कंधों पर हाथ डाल दिए । जगन्नाथम् और वेंकटराव भी सावधान हो गए ।

'यूँही एक्साइट मत होइए । आपको··· लॉटरी में थर्ड प्राइज पचास हजार··· मिल रहे हैं। बधाई हो ।' राममूर्ति ने कहा ।

सूर्यनारायण ने राममूर्ति की ओर तीखी नजरों से देखा । उसकी भौंहें तन गईं । 'थर्ड प्राइज ! पचास हजार ही । फस्ट प्राइज नहीं ?··· याने डेढ लाख का नुकसान ?' वह एकदम एक ओर को झुक गया ।

डाक्टर साहब के इंजेक्शन की सिरिंज निकालने से पहले ही डेढ़ लाख के नुकसान के भागीदार सूर्यनारायण का शरीर ठंडा पड़ गया ।

अनु०—निर्मल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धिजीवि / वी० वी० एस० किशोर

विश्व की समस्याओं को
मस्तिष्क से जूझते, बोरियत से भर
टहलने निकला बुद्धिजीवि
रास्ते में—
गैरम्मा लच्चम्मा वाक्युद्ध कर रही थीं
'जा री मुँहझौंसी' एक कर्कश स्वर चीखा तो दूसरी ने कहा—
'गारी दी तो जबान खैंच लूँगी राँड़ !'
बुद्धिजीवी को यह सब 'सिली' लगा। सोचने लगा—
कितने गए बीते हैं इन्सान ?

क्यों लड़ते हैं आखिर ये ?
परस्पर द्वेष घृणा-ईर्ष्या इनमें क्यों होती है ?
सबका एकमात्र कारण है 'ईगो', हाँ 'ईगो'।

मस्तिष्क बुद्धिवादी का दौड़ने लगा वेगवान
'ईगो' के विस्तृत कैनवास पर विहरने लगा
वर्ग संघर्ष - जाति भेद - हिंसाकाण्ड - विश्वयुद्ध
ये सब 'ईगो' के ही विकार।

वाक्युद्ध के बैक ग्राउण्ड में
अश्ववेग से दौड़ते विचारों को सहसा झटका लगा।

वैंकट्या, नरसय्या पड़ौस से निकल आये
वीर नारियों को उन्होंने परस्पर छुड़वाया
उसमें से एक ने बुद्धिजीवि से पूछा
बाबू ! यह सब तुम तमाशबीन बने देख रहे हो ?

अनु०—दयावन्ती

एक प्रवाह / सी० नारायण रेड्डी

एक प्रवाह बन
प्रभंजन से वेगवान
जा रहे थे सब जाने किस ओर।
हिरनी जैसे
कुलाँचे भरते
किरण-शरों सम
कुछ भाग रहे थे उस ओर
मनौती अर्पित करने अंजुली में सुमन भरे।
पर अकेला खड़ा रहा मैं
निस्तब्धता बन
निशीथ कालिमा बन।
वाष्प समान
श्वास समान
सहम कर दिशायें खोजता रहा मैं,
मैं ने भी पग आगे रखे
तब हाथों में अंगार लिए।

अनु०—दयावन्ती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मौन क्रान्ति / दुर्गानन्द

मैं एक कर्मचारी हूँ ।
निश्चय ही मैं दस बजे खाना खाता हूँ ।
वह एक बेरोजगार है ।
निश्चय ही वह दस बजे खाना न खा पाएगा ।
—कभी दो या तीन बजे खा पाएगा ।
मैं डंके की चोट कह सकता हूँ—
दस बजे निश्चय ही खाना खाऊँगा ।
वह गैरंटी के साथ कह नहीं सकता कि खाएगा या नहीं ;
इसीलिए तो भय, शंका और अविश्वास के साथ खाएगा ।
बेरोजगार का मतलब है—भय और शंका ।
उन्हें हटा दे तो वह भी रोजगार बनता है ।
रोजगारी दिखाने का मतलब
कहीं से धन लाना नहीं
जो अन्न नहीं है, उसकी सृष्टि करना कदापि नहीं ।
खानेवालों की समय-सारिणी को सुधारना है ।
जो अन्न है, उसके अंतर को मिटाना है ।
भूख और अन्न के बीच 'मैच' बैठाना है ।
यह छोटा परिवर्त्तन न कर पाने की स्थिति में
भारी क्रान्ति के स्वागत के नारे लगते हैं ।
परिभाषा न बदलने की स्थिति में
सबको बेरोजगार बनाते हैं ।
खाने के अभाव में कोई नहीं मरता ।
समय पर खाने की स्थिति को सरकार कहते हैं ।

अनु०—बा० रेड्डी

मेरा देश-मेरे लोग / गुन्टूरि शेषेन्द्र शर्मा

पता नहीं, पिछला बसन्त,
नदी-सा बहकर कहाँ चला गया ।
पता नहीं, बहकर,
किन उपवनों में जा सो गया ।
किन्तु वह फिर लौट आया .....
हमारे पिछवाड़े के
आम के पेड़ को ढूँढ़ता हुआ ।
इस बिम्ब में हर वस्तु प्रवाहशील है ।
वह बार बार लौटती है,
सौंदर्य को ढूँढ़ते हुए ।
पेड़ों की पत्तियों के पीछे
दीखते हैं, पक्षियों के चरण चिह्न
पिछले वर्ष उड़ चले क्षणों के चिह्न ।
श्रान्त इस यात्रा में,
किसी वृक्ष की छाया ही मेरा कुटीर है ।
पेड़ से गिरा पुष्प ही मेरा मेहमान है ।

यह है बसंत वर्ष का पहला स्वप्न,
इस स्वप्न में मैं अपने देश के शरीर पर
चल रहा हूँ, प्रभात पूर्व स्वप्न सा
चल रहा हूं अरण्यों को ओढ़कर,
नदियों की पगड़ी बाँधकर,
सड़कों के उत्तरीय पहनकर ।
रोते खेतों को हँसाते हुए
रूपके लिए प्रतीक्षा करनेवाले
देश के पहाड़ों को, सिंहों, हाथियों, ऊँटों
श्रमिकों तथा प्रेमिकों को स्वर्णिम इतिहासों में
रूपायित करना चाहता हूँ ।
उन्हें वाणी प्रदान करना चाहता हूँ ।
आ रहा है सूर्य किरणों की गाड़ी हाँकते हुए ।
मुझे देख आँसू बरसानेवाला पेड़
अब मेरे स्वप्न पर फूल बरसाता है ।

अनु०—निर्मल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचना–धर्म / कुंदुर्ति आंजनेयुलु

रचना में वस्तु से बढ़कर महत्व,
स्वयं देना मुझे नामंजूर है,
जिन्दगानी में जो मौजूद नहीं,
उसे 'उत्प्रेक्षा' में कल्पना के जरिये उतार,
बढ़ा-चढ़ा वर्णन करता नहीं,
सच न बता सकनेवाली पुस्तक समीक्षाओं की
फूल-मालाओं के लिये सर झुकाता नहीं,
जिंदगी के काव्यों के रसौचित्य पर बहस छेड़
अपनी आलोचना में दूँगा नहीं बढ़ावा
व्यक्ति दूषण व धार्मिक कलहों को .....

अनु०—डॉ० जी० बाल सुब्रह्मण्यम

रात का योद्धा / के० राममोहन राजु

नगर जब गहरी नींद सोता है,
जेल की घड़ी चार की घंटी बजा देती है।
अहो कैदी ! ओहो कैदी !
इस पवन में तुम्हारे नारों की उष्णता
प्रकंपित हो रही है।
तुम्हारी हथकड़ियों की आवाज
जगत पर चेतना की वर्षा कर रही हैं।
रात की अँगीठी में सुलगनेवाले
अग्निकण हैं ये नक्षत्र।
हम रुक कर पुकारेंगे।
अन्य कोई रास्ता नहीं,
जयकार करते चल पड़ेंगे।
यह सारा धुँधलापन
सबेरे तक अदृश्य हो जाएगा।
रात की कठपुतलियों का खेल
अब समाप्त होगा।
धरती के बदन की दरारों से
भयंकर विस्मृत रहस्य प्रकट हो जायेंगे।
जहाँ भी जो भी मोड़ लूं
तुम्हारे द्वारा निर्देशित सूत्र
मुझ में चेतना भर जब चलाते हैं,
तब मैं कैसे तुम्हारी याद भुला सकता हूं ?

अनु०—बा० रेड्डी

साम्यवेद / कुंदुर्ति आंजनेयुलु

यह है मेरी बात
यह न गीत, बात है मेरी।
इसमें न संगीत की मूर्च्छनाएँ।
न वीणा, वायोलीन के राग।
यह तो है मेरी बात।
यह है बात मेरी रूखी-सी
मजे में वसन्त की आराम-कुर्सी पर बैठी
कुसुमों का पराग सम्पत्ति नहीं है।
जलती सिगरेट के स्पर्श से
सिर झुकानेवाली
झोंपड़ियों के ज्वाला—रोदन के समाप्त होने पर
बची-खुची मुट्ठी भर भभूत का वैभव है।
यह है मेरी बात।
जो नींव से उड़ेगी तो
सीधे तेरे मन-मंदिर के शिखर पर बैठ जाएगी।
प्रजा के होंठ रूपी हिमशिखरों से उफन कर
व्यथाओं की खाड़ी में कूद पड़ती है।
चाल ढाल से मधुर, सदा नीर से भरी,
प्रजावाणी-सी पवित्र है।
समाज–सत्यरूपी सस्य इसकी बात मानता है।
यह है मेरी बात।
बचपन में मैंने जो लिखा
उसे भी सुना होगा कभी-कभार
यह संगीत से युक्त सामवेद नहीं,
यह है समस्त जनों का साम्यवेद।

अनु०—निर्मल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँसू / 'एन्वी'

मूल्यहीन आँसू तक
व्यय न करनेवाली कंजूस दुनिया है यह।
यदि हम चाहते हैं आँसू तो
प्रत्येक अश्रु बिन्दु का
मूल्य निर्धारण कर विक्रय करने वाले
वणिक प्रमुख हैं यहाँ के मानव।

अनु०—बा० रेड्डी

पट कुटीर / इन्द्रगंटि श्रीकान्त शर्मा

जन्मा था जब विरासत में मिला
शरीर रूपी पट कुटीर।
उसे ढोता हुआ
बंजारे-सा घूमता हुआ मार्ग में
अनेक कबीलों से मिलता हुआ
खयाली पुलाव खाता हुआ
आज यहाँ तो कल वहाँ
उत्सवों को देखता हुआ,
उत्साहों को खरीदता हुआ
आँसुओं के सागर से मोती चुन लेता हूँ,
दिन भर हरे भरे विशद मैदानों में
कोलाहल बीच विचरता हूँ।
मैत्री मानिकों को
कांक्षा-स्फटिक-मणियों को
प्रणय-कांचन-मालिकाओं को
छिपा छिपाकर,
ढेर के ढेर जमा कर,
अकेले में रातों में ही
अपने कुटीर में निहार लेता हूँ।
उन निधि-निक्षेपों को मस्तिष्क की अलमारियोंमें
स्नायुओं की परतों में छिपाकर
नसों की रस्सियों से कस लूँगा—
फिर, आकाश को चादर-सा ओढ़कर
चन्द्र-उपधान से टेक कर लेट जाऊँगा,
(और) रमणीय काव्य के पन्ने उलटता रहूँगा।
जानता हूं कभी कोई आवाज सुनाई पड़ेगी—
'ठीक है, जन्म लिया तब से भटक रहे हो,
अनुभूति की निधियों को जमा करते जा रहे हो।
(पर) 'आदि' का अन्त होगा
कुटीर जल जाएगा
तब यह सम्पत्ति साथ नहीं आएगी।'
जानता हूं, वह ऐसा प्रश्न करेगी ही।
'हुजूर! मृत्यु जी!'
पहचानता हूँ आपके स्वर को।
पटकुटीर को पटुतर संपत्तियों के साथ
जल जाने दीजिए।
बची मुट्ठी भर 'विभूति' को,
अपने अनन्तर के विकास-सा
वसीयत लिख दूँगा।
अपने आकाश को काँख में दबा वहीं जाऊँगा,
जहाँ आपका आदेश हो।

अनु०—निर्मल

शेष प्रश्न / कूरेल्ल

बिजली के पंखों की हवा में,
स्पंज कुशनवाली सोफाओं में
धूमपान में ऊभचूभ
'प्रजा-प्रतिनिधि,
रोटी, मकान, कपड़े के लिए,
जलती धूप में पसीना बहाने वाले
प्रजा प्रतिनिधि को
कहाँ तक सार्थक कर रहा है?
यही तो प्रश्न जुग जुग से चला आ रहा!

अनु०—निर्मल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे बढ़ रहा हूं / डा० सी० नारायण रेड्डी

'अरे । अबे । रुक जा रे ।'
'नहीं रुकूँगा ।'
'कहाँ जा रहा बे ?
'आगे ।'
'आगे तो अंगार है रे ।'
'अंगार ही मेरा दोस्त है ।'
'अंगार का अर्थ तो मृत्यु है रे ।'
'नहीं, वही सत्य है रे ।'
'रे ... ?'
'हाँ बे ।'
'रे (बे) कहा, क्षमा कर दो,
पर देखो, यह तो तेरी सिखाई विद्या है ।
अब असली बात बताता हूं,
ध्यान से सुन लो ।
अतीत है मृत्यु, भविष्यत् है अमृत ।
कल का ध्यान, इस पीढी की साँस ।
इसीलिए मैं बढ़ रहा हूँ, आगे और आगे ।
रात्रि के परिरंभ में शीतल बने सूर्य को ।
जलाने को, सुलगाने को ।

अनु० —निर्मल

युग युग की मानवता / अनन्त

ले छुरी पुष्पगुच्छों के, गले काट नहीं सकता ।
इत्र की खुशबू में, खून उँडेल नहीं सकता ।
दुधारी गोमाता के थन, काट नहीं सकता ।
आनन्द जहाँ उमड़ रहा हो
अंगार बिखेर नहीं सकता ।
मधु की माधुरी में, कटुता सोच नहीं सकता ।
छिपकर दुग्धपात्र में, गरल मिला नहीं सकता ।
उजाला जहाँ विकसित हो रहा
अंधकार बन उस नहीं सकता ।
भूख की कथाएँ, सुन,
खिलखिल हँस नहीं सकता ।
निरे गरीबों के क्रन्दन को
उपेक्षा से देख नहीं सकता ।
अत्याचारों की सभा लगाकर
वक्रगीत गा नहीं सकता ।
हृदय हृदय में, ज्योत्सना-मंदिर सा विराजूँ,
युग युगों की जगती के लिए
बची मानवता का प्रतीक बनूँ ।

अनु० —निर्मल

आलोचना—लोचन / दाशरथी

अंधकार की साड़ी पहनकर,
भूख की चोली धारण कर,
शोक से कुढनेवाली लोककन्या को,
बन्दी बना रहा है काल राक्षस ।
सितारे देख रहे हैं,
सियार चिल्ला रहे हैं,
आसरा न दे सके नादान प्राणी
पीछे कदम डाल रहे हैं ।
ज्वालाएँ बन निराशाएँ भटक रही हैं,
दुराशाओं के नगाड़े बज रहे हैं ।
आशा की आयु पूरी हो गई ?
छिप गई अशान्ति की यवनिका में यवनि ?
यह कथा नहीं, जलती चिता है,
यह हृदय में चलता शोर है ।
इसे कबतक सहें ?
चलें, समर करें, बढ़ें ।
दृष्टि के सर्चलाइट को
रोक खड़ी यह अंधकार-गंगा,
आलोचना-लोचन के क्रांतिपथ में
पल भर में काफूर हो जाएगी ।
यह भयंकर व्यथामयी धात्रि
अब प्रियंकर बनेगी यह रात्रि ।
फैल रही हैं नवकान्ति की ज्वालाएँ
हैं मानवता की मंदार मालाएँ ।

अनु० —निर्मल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक समीक्षा

मदुरा और तंजौर के तेलुगु कवि

मदुरा और तंजौर दोनों ही दक्षिण भारत में तमिल-भाषी क्षेत्र हैं, किन्तु सोलहवीं शताब्दि में यहाँ तेलुगु कविता का अद्‌भुत विकास हुआ था। तेलुगु गद्य का प्रथम ग्रन्थ भी इसी अंचल में लिखा गया था। इस अंचल में १६वीं शताब्दि के नायक वंशी राजन्य वर्ग स्वयं बड़े विद्वान, विद्या व्यसनी और कवि थे, अतः स्वाभाविक था कि उनके संरक्षण में दरबार में कवियों का पर्याप्त सम्मान हो और वह श्रेष्ठ कवियों से सुशोभित रहे। उनके राज्यत्व काल में और उनके बाद शासन करनेवाले मराठा शासकों के काल में भी तेलुगु-काव्य ने एक विशिष्ट भंगिमा के साथ प्रथक् धारा के रूप में विकास किया था, जो तेलुगु-साहित्य के इतिहास का एक गौरवमय पृष्ठ है। इस युग की काव्य-धारा और कवियों का वर्णन श्री तिम्मवज्झल कोदण्डरामय्या ने अपनी 'दी तेलुगु पोएट्स ऑफ मदुरा एण्ड तन्जौर' नामक अंग्रेजी पुस्तक में किया है। पुस्तक का कलेवर क्षीण है, किन्तु सामग्री उसमें ठोस है।

तत्कालीन सांस्कृतिक समृद्धि की परंपरा का संधान करने के लिए विद्वान लेखक ने पहले विजयनगर साम्राज्य के शीर्षस्थ शासक महाराज कृष्णदेव राय के राज्यत्व का कुछ आभास देकर बताया है कि किस तरह चारों ओर घिरे हुए मुसलमान शासकों से रक्षा के लिए अपने अधीन समस्त अंचलों को उन्होंने दो भाग 'भंडारवाड़' अंचल, और 'अमरम' अंचल में विभाजित कर लिया था। भंडारवाड़ के ग्राम सीधे महाराज को कर देते थे, किन्तु 'अमरम' अंचल चुने हुए नायक, जागीरदारों को दे रखे थे। ये नायक प्रजाजनों से स्वयं कर उगाहते थे, किन्तु एक निश्चित राशि उन्हें राजकोश में जमा करनी पड़ती थी, तथा निश्चित संख्या में एक सैन्यदल अपने मातहत तैयार रखना पड़ता था, ताकि आवश्यकता पड़ने पर राज्य की रक्षा करने के लिए तत्पर रहे। 'अमर' शब्द वस्तुतः फारसी के 'अमल' का रूपान्तर है।

कालान्तर में सन् १५६५ में तल्लीकोटा में विजयनगर की सेना पराजित हुई, और इस भगदड़ में, कुछ नायकों ने, जो युद्ध क्षेत्र से दूर थे, स्वयं अपनी अमलदारी स्थापित की और स्वाधीन हो गए। धुर दक्षिण में मदुरा और तंजौर के नायकों ने भी इस अव्यवस्था का लाभ उठाया और अपने आपको स्वाधीन घोषित कर लिया।

काफी दक्षिण में बसे होने के कारण वहाँ अपेक्षा कृत शांति थी ही, और युद्ध से प्रताड़ित विजयनगर दरबार के बहुतेरे विद्वान्, कवि, कलाकार और श्रेष्ठि-वर्ग मदुरा तथा तंजौर में आ बसे। नायक वंश के इन शासकों ने उनका स्वागत किया, और मदुरा और तंजौर समृद्धि का शिखर चूमने लगे। राज्य का संरक्षण पाकर साहित्य बड़ी तेजी से विकसित होने लगा। तेलुगु साहित्य में इसे दक्षिणी धारा के नाम से अभिहित किया जाता है। मदुरा और तंजौर वस्तुतः तमिल क्षेत्र में परिगणित होते हैं, किन्तु उस क्षेत्र में सन् १५३० ई० में गोल्ल बासवेन्द्र के वंशजों द्वारा तेलुगु प्रवर्तित हो चुकी थी।

तंजौर में नायक वंश में सबसे प्रसिद्ध शासक रघुनाथ नायक हुआ, जिसने सन् १६१३ से १६३१ तक शासन किया। उसके दरबार में कई कवि और कवयित्रियाँ थीं, जो तेलुगु और संस्कृत दोनों में निष्णात थे। इनमें सबसे प्रसिद्ध थे चेमकुरा वेंकट-कवि, कृष्णाध्वनि, रामभद्राम्मा, और मधुर-

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाणी। स्वयं रघुनाथ नायक अच्छा कवि था और उसकी लिखी १०० पुस्तकें बताई जाती हैं, जिनमें से केवल दो 'रघुनाथ रामायणमु' और 'वाल्मीकि चरितमु' उपलब्ध हैं। इस रामायण के भी केवल बालकाण्ड के तीन सर्ग और चौथे सर्ग का कुछ भाग मिलता है। दूसरे सर्ग की ऋष्यश्रृंग की कथा कवि-कर्म का अद्भुत उत्कर्ष है। कवयित्रि मधुरवाणी ने इसी रामायण का संस्कृत में अनुवाद किया है। इसके अतिरिक्त दो सर्ग की एक कथा 'श्रृंगार सावित्री' भी रघुनाथ नायक रचित मानी जाती है। कहा जाता है कि उसने 'परिजातापहरण' नामक काव्य दो याम में लिख डाला था, जिससे प्रभावित होकर उसके पिता अच्युतप्प नायक ने उसका 'कनकाभिषेक' किया था। कवयित्री रामभद्राम्मा ने अनेक ग्रन्थों की रचना की बताई जाती है, किन्तु उसका एक ही संस्कृत ग्रन्थ रघुनाथ नायक की प्रशस्ति में लिखा 'रघुनाथाभ्युदय' पाया जाता है। रघुनाथ के दरबार की दूसरी कवयित्री मधुरवाणी का भी एक ही संस्कृत ग्रन्थ रामायण उपलब्ध है जो 'रघुनाथ रामयणमु' का स्वतंत्र संस्कृत अनुवाद ही है। मधुरवाणी का भी स्वर्णाभिषेक हुआ था।

चेमाकुरा वेंकट कवि की प्रसिद्धि उनके 'वजय विलासमु' नामक ग्रन्थ से है, जिसका नायक महाभारत का अर्जुन है। उनका दूसरा काव्य 'सारंगधर चरित्रमु' है। कृष्णा ध्वनि का काव्य श्लेष आदि अलंकारों के प्रयोग से द्वयार्थक है, और उसमें रघुनाथ नायक रचित नल चरित्र और पारिजातापहरण दोनों काव्यों की कथा है। रघुनाथ नायक का पुत्र विजयराघव नायक (१६३३-१६७३ ई०) भी अपने पिता के समान ही विद्वानों और कवियों का संरक्षक और स्वयं बड़ा विद्वान था। उसकी सभा के राजकवि चेंगल्वा कालकवि ने अपने ग्रन्थ राजगोपाल-विलासम्' में विजय राघव की प्रशस्ति गाई है। विजयराघव की विद्वत्परिषद् का नाम 'विजय राघव विलास' था, जहाँ उसके सम्मुख 'शारदाध्वज' फहराया जाता था। विजयराघव के लिखे हुए तीस ग्रन्थ बताए जाते हैं, जिनमें २३ नाटक हैं। उपलब्ध केवल पाँच ग्रन्थ ही हैं। कोनेटि दीक्षित चन्द्र का लिखा हुआ एक नाटक (ओपेरा) 'विजयराघव कल्याणमु' उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त विजयराघव के दरबार में 'विजयराघव चन्दिका विलासमु' नामक नाटक का रचयिता राजकवि वेंकटपति सोमयाजि, श्रृंगार रस के कई ग्रन्थ और पदों की रचना करनेवाली कवयित्री पणु-पुलेटि रंगजम्मा, जिसका कि कनकाभिषेक भी हुआ था, तथा 'तञ्जापुरान्नदान-महा नाटकमु' के कवि पुरुषोत्तम दीक्षित आदि प्रसिद्ध हैं। कहा जाता है कि विजयराघव प्रतिदिन ५०,००० ब्राह्मणों को भोजन कराता था, और इसलिए उसे 'अन्नदाता' का विरुद प्राप्त था। कवयित्री रंगजम्मा एक देवदासी थी। कहते हैं राजा विजय-राघव रंगजम्मा की बुद्धि और सौंदर्य से अत्यंत प्रभावित था और सदा उसी की संगति में बना रहता था। विजयराघव का पुत्र मन्नारु देव भी कवि था, उसके दो ग्रन्थ 'विजयराघवाभ्युदय' और 'हेमाब्जनायिका स्वयंवर' लिखे बताए जाते हैं, जिनमें से दूसरा ग्रन्थ यक्षगान के रूप में उपलब्ध है।

इसी के समय में तंजौर पर मराठों का आक्रमण हुआ और लड़ाई में विजय-राघव और मन्नारु देव दोनों खेत रहे। १६७४ से १८५४ ई० तक मराठों का शासन रहा, किन्तु मराठा शासकों ने नायकों की परम्परा का निर्वाह किया और उनके शासन में भी तेलुगु काव्य की पर्याप्त प्रगति हुई। मराठा शासक शाहजी का शासन साहित्य के लिए स्वर्णयुग कहा जाता है। शाहजी को 'अपर भोज' भी कहा जाता है। स्वयं शाहजी ने दो संस्कृत शब्द कोश 'शब्द रत्न समन्वय' और 'शब्दार्थ संग्रह' की रचना की। तेलुगु में उनकी रचना 'शंकर पल्लकि सेवाप्रबन्धमु' और 'विष्णु-पल्लकि सेवा प्रबन्धमु' प्रसिद्ध हैं। उनके काल में निवृत्ति शेषाचल कवि, (जो, 'आन्ध्रपाणिनी' कहलाते हैं), गिरिजा कवि, वेंकटगिरि, बालकवि सुब्बन्ना आदि प्रसिद्ध कवि थे। शाहजी के बाद शरभोजी प्रथम, तुलजाजो प्रथम, एकोजी द्वितीय, आदि ने भी अपने पूर्व पुरुषों की परंपरा निभाई। नेल्लुरि शिवरामकवि, मुद्दु पलणी, त्याग-राजस्वामी, वेंकटकृष्णकवि, पल्लवी गोपालय्या, मेरत्तुर, वेंकटराम शास्त्री आदि कवियों ने तंजौर अंचल में तेलुगु-कविता की प्रगति में पर्याप्त योगदान किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तंजौर की तरह मदुरा का भी तेलुगु साहित्य में विशिष्ट महत्व है, खासकर इसलिए भी कि तेलुगु गद्य का प्रथम ग्रन्थ 'रायवचकमु' है, जो मदुरा के स्थानापति विश्वनाथ की रचना कही जाती है। मदुरा के नायक राजाओं में चोक्कानाथ नायक का सौतेला भाई मुद्दल्ल अलगिरि, और उसका पौत्र विजयरंग चोक्कानाथ कवियों और विद्वानों के पृष्ठपोषक थे। विजयरंग चोक्कानाथ की साहित्यिक रुचि तो उसके राजकाज में बाधक भी बनी। मुद्दल्ल अलगिरि का राज्यत्व बहुत थोड़े समय तक रहा, पर उसका साहित्यिक अवदान इतना महत्वपूर्ण है कि उसे 'आन्ध्र वाचोनाथ' और 'भव्य साहित्य भोज' के विरुद से जाना जाता था। उसके समय के श्री कामेश्वर कवि का 'सत्यभामा सन्त्वनमु' काव्य उसी को समर्पित है। दूसरे कवि गणपवरपु वेंकट कवि का 'विद्यावती दण्डक' नामक काव्य उपलब्ध है। वह वैयाकरण भी थे। उनका दूसरा ग्रन्थ उत्पल मालिका के रूप में पेड्ड अलगिरि विजयमु' भी प्रसिद्ध है।

विजयरंग चोक्कानाथ के युग में विकट-कवि, गोपाल कवि, समुखम वेंकटकृष्णप्पा नायक, शेषमु वेंकटपति, कुंदुर्त्ति वेंकटाचल कवि, वड्डेपुड़ी येराभूपति, वेलगपूडि कृष्णयामात्य, श्यामराय कवि, तिरुमल कवि, विलिगंदला अलागिरि और श्रीपति रामभद्र कवि प्रसिद्ध हो गए हैं, जिन्होंने अनेकों ग्रन्थ लिखकर तेलुगु साहित्य की श्री वृद्धि की है। स्वयम् विजयरंग चोक्कानाथ के दो ग्रन्थ 'श्री रंगमाहात्म्यमु' और 'माधमाहात्म्यमु' प्रसिद्ध हैं। विजयरंग चोक्काराव का समय सन् १७०६ से १७३२ तक माना जाता है।

इन सारे कवियों के और काव्यों के संक्षिप्त परिचय के साथ विद्वान लेखक ने तंजौर के नायक राजाओं की, मराठा शासकों की, और उसी तरह मदुरा के नायक राजाओं की वंशावलियों के साथ, तंजौर के नायक और मराठा शासन के कवियों की तथा मदुरा के कवियों अलग अलग सूचियाँ दी हैं, जिससे शोध के इच्छुक विद्यार्थियों के लिए पुस्तक काफी उपयोगी हो गई है।

इतनी उपयोगी पुस्तक में भाषा की तथा मुद्रण की कुछ अशुद्धियाँ खटकती हैं। भाषा की अशुद्धियाँ संभव है मुद्रण के कारण भी हों।

— मनस्वी

दी तेलुगु पोएट्स ऑफ मदुरा एण्ड तंजौर (अंग्रेजी) : लेखक - तिम्मवज्झल, कोदण्डरामय्या, प्रकाशक - आन्ध्र प्रदेश साहित्य अकादमी, हैदराबाद, १९७७ पृ० ५६, १८ सेमी० मूल्य २.००

बसेरे से दूर

डा० हरिवंश राय बच्चन की आत्म कथा के अब तक दो भाग 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' और 'नीड़ का निर्माण फिर' प्रकाशित हो चुके हैं। उसी क्रम का यह तीसरा भाग 'बसेरे सेदूर' उनके जीवन का १९५२ से १९५५ तक की अवधि का वर्णन प्रस्तुत करता है। श्री बच्चन अंग्रेजी के प्रसिद्ध आयरिश कवि विलियम बटलर ईट्स के काव्य पर शोध करने के उद्देश्य से कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय गए थ, और वहां उन्हें २ वर्ष तक रहना पड़ा था। इस बीच उन्हें जीवन के किन किन मधुर-कटु अनुभवों के बीच गुजरना पड़ा, प्रस्तुत पुस्तक में इसीका सांगोपांग और बड़ी हृदयग्राही शैली में वर्णन किया गया है। अपनी शोध के सिलसिले में टी० आर० हेन, ग्रैहम हफ, श्रीमती ईट्स, आरलैंड अशर, सालकेल्ड ब्लेनेड, वर्टी एण्डरसन आदि जिन व्यक्तियों से वे मिले कैम्ब्रिज आक्सफोर्ड, डबलिन. ट्रिनिटी कॉलेज डबलिन स्लाइगो, डूनी राक, रासेज प्वाइंट, डूम-क्लिफ, जहाँ ईट्स की समाधि है. किलार्नी आदि स्थान जहाँ-जहाँ वे गए. उन सबका कवित्वमय और विश्लेषणात्मक वर्णन लेखक ने प्रस्तुत किया है। इसके साथ ही नक्षत्र पुरुष विश्वनाथ दत्त, रनवीर सिंह बावा आदि की स्मृतियाँ भी लेखक ने बड़ी हार्दिकता और प्यार के साथ उकेरी हैं। लेखक कवि है, अतः प्रत्येक वर्णन के साथ उसकी सहज-स्फुरणा के अनुसार स्वयं की, दूसरों की, हिन्दी की, अंग्रेजी की कविताएँ वर्णनों को मूर्त्तिमान और सजीव कर देती हैं।

यदि अपने आत्मचरित के दूसरे खण्ड में बच्चन अपने कवि व्यक्तित्व के प्रति अधिक सचेत रहे तो इस खण्ड में वे अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोधक-रूप में अधिक सचेत रहे हैं। उनका कवि रूप तो जीवन के साथ जुड़ा हुआ है ही। कवि सम्मेलन में अपने आकस्मिक प्रवास के अवसर पर भी उनका कवि अनायास मुखर हुए बिना नहीं रहता और वे गा उठते हैं :—

मैं जहाँ खड़ा था कल उस थल पर आज नहीं
कल इसी जगह फिर पाना मुझको मुश्किल है।
ले मापदण्ड जिसको परिवर्त्तित कर देती
केवल छूकर ही देशकाल की सीमाएँ
जग दे मुझ पर फैसला उसे जैसा भाए
लेकिन मैं तो बेरोक सफर में जीवन के
इस एक और पहलू से होकर निकल चला—

लेखक ने प्रसंग पाने पर अपने अनुभवों का विश्लेषण और तथ्यों का अनुसंधान भी किया है। जैसे वे कहते हैं, 'विज्ञान की अधुनातनता, अद्यतनता से कविता होड़ नहीं ले सकती न उसे लेना चाहिए। उसकी गरिमा समय से कुछ पीछे रहने में है या फिर समय से बहुत आगे रहने में।' हिन्दी की आधुनिक कविता के पाठकों से अलगाव का एक यह भी कारण हो सकता है।- अपने यहाँ के हिन्दी पाठ्यक्रमों की इस स्थिति के साथ कि 'कविजी साइकिल पर सड़क पर चले जा रहे हैं, और क्लास में उनकी कविता पढ़ाई जा रही है', इंगलैंड में 'कोई साहित्य पाठ्यक्रमों में स्थान तभी पाता है, जब वह अंग्रेजी-समाज अथवा जीवन में कोई स्थान बना लेता है।' इस स्थिति की तुलना करना उपयोगी होगा। आगे वे कहते हैं 'वहाँ साहित्य एक स्वस्थ वृक्ष के समान जब जीवन में समाज में अपनी जड़ें गहरे जमा लेता है, तब अपनी शाखाएँ, अपने फूल-फल यूनिवर्सिटी की छतों तक पहुँचाता है। यहाँ हम यूनिवर्सिटी की छतों पर उसकी जड़ों को जमाने का प्रयत्न कर उसकी शाखाओं को, फल फूल को समाज की धरती तक उतारने का प्रयत्न करते हैं। लगता है 'ऊर्ध्व मूलमद्यः शाखम्' का पाठ हमने बहुत ध्यान से पढ़ा है।' काश ! हिन्दी की पाठ्यक्रम निर्धारक समितियाँ इस तथ्य पर ध्यान दे सकें।

अपने विषय के प्रति और शोधार्थी शिष्यों के लिए गुरु का क्या महत्व और कर्त्तव्य हो सकता है, इसके लिए मि० हेन की भूमिका अनायास भारतीय गुरुकुलों के आचार्य की याद दिला देती है।

विश्वविद्यालम के छात्रों को लाभ पहुँचाने के जिस उद्देश्य से डॉ० बच्चन कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय गए और उन्होंने अपनी शक्ति व्यय की, वह उद्देश्य किस तरह इलाहाबाद विश्वविद्यालय की गुटबन्दी और जोड़-तोड़ की दुराग्रही नीति से निष्फल हो गया, बच्चनजी का यह प्रसंग हमारे विश्वविद्यालयों पर एक करारा व्यंग्य है, पर क्या इससे स्थिति के सुधरने की कभी आशा की जा सकती है ?

लेखक ने इसी प्रसंग में अपने समकालीन साहित्यकारों — इलाहाबादी साहित्यिक परिदृश्य का भी बड़ा बेलौस वर्णन प्रस्तुत किया है। किलार्नी की यात्रा का वर्णन बड़ा ही कवित्वमय है।

पुस्तक की शैली प्रसादगुण से युक्त और कवित्वमय है। एक बार पढ़ना प्रारंभ करने पर छोड़ने को जी नहीं चाहता। लेखक ने इसे अपने आत्म चरित्र की अंतिम किश्त कहा है, हालांकि १९५५ के बाद उनका भारत सरकार के विदेश-विभाग का तथा राज्य सभा की सदस्यता का अनुभव और भी अधिक वैविध्यपूर्ण होगा। क्या उनसे आशा की जाए कि वे इस भाग को भी लिख डालें ?

—स० ओझा

बसेरे से दूर—डा० हरिवंश राय बच्चन, प्रकाशक, राजपाल एण्ड सन्स, १९७७, पृ० सं० ३०६, १८ सेमी०, मूल्य-२०.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशिष्ट प्रकाशन

(इस स्तंभ में किसी भी विषय के श्रेष्ठ, नये दृष्टिकोण से लिखे या किसी पुस्तकालय में स्थाई रूप से स्थान पाने के अधिकारी ग्रंथ सटिप्पण प्रस्तुत हैं। प्रकाशकों और विषय-विशेष के प्रेमियों से अनुरोध है कि वे कृपया इस स्तंभ को ध्यान से देखें और महत्वपूर्ण स्तरीय प्रकाशित ग्रंथों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करें। लेखक के नाम के सामने यथासंभव जन्म और मृत्यु वर्ष दे दिया गया है। पुस्तकों के नाम के बाद प्रकाशक विवरण, पृष्ठ संख्या (भूमिका और पुस्तक के पृष्ठ) और अंत में पुस्तक की लंबाई तथा मूल्य हैं। पृष्ठ और आकार का विवरण पुस्तकालयों में सूचीकरण-कार्य में सुविधा की दृष्टि से दिया गया है। कोष्ठक में विषय का स्पष्टीकरण, विषय-सीमा या विशेषता आदि की ओर संकेत है।—संपादक)

अंग्रेजी

ग्रिफिथ, राल्फ टी० एच०

दी टेक्स्ट्स आफ दी व्हाइट यजुर्वेद, वाराणसी, चौखम्बा संस्कृत सिरीज आफिस, १९७६. पृ० २०-३४५, २२ सेमी. मू० ५०-०० (शुक्ल यजुर्वेद की टीका और टिप्पणी)

घोष प्रदीपकुमार

माउंट स्टुअर्ट एल्फिन्स्टन्स एम्बेसी एण्ड पूना अफेअर्स (१८११-१८१८). लखनऊ, भारत प्रेस, १९७७, पृ० ६-२५५, २२ सेमी. मू० ४०-०० (मराठा साम्राज्य के पतन सम्बन्धी ऐतिहासिक तथ्य)

झा अखिलेश्वर

इंटलेक्युअल्स एट दी क्रॉसरोड्स (दी इंडियन सिचुएशन), नई दिल्ली, विकास-पब्लिशिंग हाउस, १९७७, पृ० ११२, २२ सेमी. मू० ३६-००

बारेह हैमलेट

दी लैंग्वेज एण्ड लिटरेचर ऑफ मेघालय, शिमला, इंडियन एंस्टीट्यूट ऑफ एडवाँस्ड स्टडीज, १९७७, पृ० १०८, २२ सेमी. मू० २५-००

मुखर्जी अमूल्यधन

संस्कृत प्रॉसीडी : इट्स इवोल्यूशन, सुनीति कुमार चटर्जी की भूमिका सहित, कलकत्ता, सारस्वत लाइब्रेरी, १९७६, पृ० ७-२६१, २२ सेमी. मू० ६०-०० (संस्कृत छंदशास्त्र का विवेचन)

रामकृष्ण एस—१९२१—

दी एपिक म्यूज : दी रामायण एण्ड पैरेडाइज लॉस्ट, नई दिल्ली, पीपल्स पब्लिशिंग हाउस, १९७७, पृ० १९-२१५, २२ सेमी. मू० २६-०० (तमिल की कम्बन रामायण और मिल्टन के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन)

डिस्सेंट, प्रोटेस्ट एण्ड रिफार्म इन इण्डियन सिविलीजेशन

एस. सी. मलिक द्वारा सम्पादित, शिमला, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एडवान्स्ड स्टडीज, १९७७, पृ० ३९१, २४ सेमी मू० ९०-०० (भारतीय सभ्यता के विविध आयामों पर २६ अधिकारी विद्वानों के लेखों का संग्रह)

दी वासुदेवहिन्दी-एन ऑथेण्टिक जैन व्हर्शन ऑफ दी बृहत्कथा

डॉ० जगदीश चन्द्र जैन द्वारा सम्पादित, अहमदाबाद, एल, डी. इंस्टीट्यूट आफ इण्डोलॉजी, १९७७, पृ० १६-७४०, २४ सेमी. मू० १५०-०० (गुणाढ्य कृत बृहत्कथा का अंग्रेजी अनुवाद एवं बृहत्कथा श्लोक संग्रह कथासरित्सागर बृहत्कथा मंजरी, के चुने हुए अंशों से तुलना सहित)

फोर इंडियन क्रिटिकल एसेज-सम्पादक शिशिर कुमार घोष

कलकत्ता, जिज्ञासा, १९७७ पृ० ७५ २२ सेमी मू० ८-०० (सर्वश्री कृष्णचन्द्र भट्टाचार्य, ब्रजेन्द्रनाथ सील, रवीन्द्रनाथ ठाकुर और अरविन्द घोष के साहित्य और कला सम्बन्धी चार लेखों का संग्रह)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजराती

अजवाणी एल० एच०

सिंधी साहित्य नां इतिहास नीं रूपरेखा. नई दिल्ली, साहित्य अकादमी, १९७७ पृ० २६५, २२ सेमी. २१.०० (नवीन रावल द्वारा अनूदित)

कलवाच वाला, प्रा० फिरोज शा. सं०

प्रावैधिक परिभाषिक शब्द संग्रह. सम्पादक-प्रा० कलवाच वाला एवं प्रा० निरंजन आर० दवे. अहमदाबाद, यूनिवर्सिटी ग्रन्थ-निर्माण बोर्ड, १९७७. पृ० १०-७२५, २४ सेमी. मू०-३५ ००

मराठी

कोलटकर, अरुण

अरुण कोलटकरच्या कविता. बम्बई, प्रास प्रकाशन, १९७७. १३१ पृ०, २० सेमी. मू०-२०.०० (कविता)

गोखले, अरविंद

समान्तर. बम्बई, वाल्मीक प्रकाशन, १९७७. १२७ पृ०, २० सेमी. १४.०० (१२ कथालेख, साहित्यकृतियों के बारे में अनूठे ढंग के फीचर्स)

जोशी श्रीपाद रघुनाथ

वालवंटातील चंद्रकोर. पुणे, श्री विद्या प्रकाशन, १९७७ १७४ पृ०, २१ सेमी. मू० १२.०० (अरब देशों के यात्रा संस्मरण)

पगारिया सुशील

केसर. जलगाँव, क्रांति प्रकाशन, १९७७ ८० पृ०, १८ सेमी मू०-७.०० (कविता)

फडके, य० दी०

शोध बालगोपालांचा. पुणे, श्री विद्या प्रकाशन, १९७७. २२६ पृ०, २१ सेमी. १८ ०० (बाल गंगाधर तिलक एवं गोपाल गणेश आगरकर के विषय में पुनर्मूल्यांकन)

बापट वसंत

मानसी. बम्बई, मौज प्रकाशन, १९७७. ४८ पृ०, १६ सेमी. मू०-५.०० (कविता)

बहेरे, ग० बा०

कटाक्ष. पुणे, अस्मिता प्र०, १९७७. १४८ पृ०, २१ सेमी. मू०-१०.०० (ललित निबंध)

लिमये, अरुण, संपा०

झिरपलेली किरणे. पुणे, १९७७. १३२ पृ०, १८ सेमी. मू०-५.०० (कविताएँ जो आपात काल में प्रकाशित न हो सकीं)

शहाणे, मनोहर

ससे. बम्बई, वाल्मीक प्रकाशन, १९७७. १६० पृ०, २१ सेमी. मू०-१६.५० (उपन्यास)

सावकार, इंद्रायणी

गोवा. बम्बई, रंजना प्रकाशन, १९७७. ५२३ पृ०, १८ सेमी. मू०-४०,०० (उपन्यास)

मलयालम

कृष्ण वारियर एन० व्ही०

समाकलनम, त्रिवेन्द्रम, नवधारा, १९७६, पृ० १०६, २१ सेमी मू० ९-०० (मलयालम काव्य सम्बन्धी ११ लेख)

कुन्तीरामन नायर पी०, १९०६—

एन्ने तिरयुन्नान्नान, कोट्टायम. डी. सी. बुक्स, १९७७, पृ० १८८ १८ सेमी. मू० ६-०० (एक प्रसिद्ध कवि के आत्म चरित्र के संस्मरण)

परमेश्वरन पी०

भवियुते दार्शनिकन : श्री अरविन्दन, कोजी-कोट, जयभारत १९७७, पृ० १०-२११, २१ सेमी. मू० १०-०० (श्री अरविन्द का जीवन चरित्र)

माधवी कुट्टी (नलप्पुट्टु कमला) १९३२—

मुन्नु नोवलुकल. त्रिवेन्द्रम, नवधारा, १९७७, पृ० १००, २१ सेमी. मू० ६-०० (३ लम्बी कहानियों का संग्रह)

वेणु जी०

कथकलियिले कैमुद्रकल, त्रिचूर, केरल संगीत नाटक अकादमी, १९७७, पृ० ७८ सचित्र, मू० २५-०० (कथकली में हस्त-मुद्राओं के सम्बन्ध में)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजस्थानी

चन्द्रप्रकास देवल—१९४९—
पागी. गोटीपा पोस्ट कल्लभनगर. देवल प्रकाशण. १९७७ पृ० १०६ २२ सेमी, मू०-१५.०० (कवि की २८ कविताओं का संकलन)

महर्षि सीताराम
मछली मन म्हारो. रतन गढ़, कल्पना प्रकासण, १९७७. पृ० ५१, २२ सेमी. मू०-५ ०० (कवि की ५१ कविताओं का संग्रह)

संस्कृत

इंदहंस गणि
भुवण भाणु केवलि चरियं, मुनि श्री रमणीक विजय द्वारा सँपादित अहमदावाद, लालभाई दलपत भाई भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर, १९७६. पृ० १४-१५०, २४ सेमी. मू०-१६.०० (वि० सं० १५५४ में प्रणीत प्राकृत-काव्य, संस्कृत टीका सहित)

एलुत्तच्छन के० एन० - १९११—
केरलोदय: पट्टम्बी (लेखक से प्राप्य) १९७७ ४८८ पृ०, २२ सेमी. मू०-५०.०० (ऐतिहासिक चरित्र काव्य)

जगन्नाथ पंडित
रसगंगाधर : केदार नाथ ओझा कृत रसचन्द्रिका व्याख्या सहित. वाराणसी, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय. भाग प्रथम. १९७७. पृ० ३४४ २३ सेमी मू०-२२.००

जैमिनी
जैमिनीयं सामगानम्. विभूति भूषण भट्टाचार्य द्वारा संपादित. वाराणसी, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय १९७६. ३५४ पृ०, २४ सेमी. मू०-४५ ५० (सामवेद)

मीनराज
वृद्ध यवन जातकम्. डा० डविड पिंग्री द्वारा सम्पादित, बड़ौदा, ओरिएण्टल इन्स्टीट्यूट, १९७६. पृ० ४४०, २८ सेमी. मू०-९४.०० प्रथम भाग (चौथी शताब्दि में लिखा ज्योतिष शास्त्र का ग्रन्थ, सम्पादक के हस्तलेख से फोटो ऑफसेट मुद्रण प्रणाली में मुद्रित)

शशधर
न्याय सिद्धांत दीप. गुणरत्न सूरि कृत टिप्पणी सहित, विमल कृष्ण मोतीलाल द्वारा शोधपूर्वक सम्पादित, अहमदाबाद ला० द० भारतीय संस्कृति विभाग, १९७६. पृ० २८-२३२, २४ सेमी. मू०-४५०० (नवन्याय)

स्वामी प्रभुपाद भक्तिवेदांत
भगवत-संदेश (प्रथम स्कन्ध) बम्बई अभिवेदांत बुकट्रस्ट १९७६ पृ० ३५१ २२ सेमी. (हिन्दी अनुवाद सहित)

हिन्दी

अग्रवाल डॉ० (श्रीमती कुसुम
बीसवीं शताब्दि : दो दशक, वाराणसी, नागरी प्रचारिणी सभा, १९७६, पृ० २०२, २२ सेमी. मू० १६-०० (पत्र पत्रिकाओं के साहित्यिक अवदान विषयक ग्रन्थ)

अमृता प्रीतम
तेरहवां सूरज, दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स, १९७७, पृ० १४३, १८ सेमी. मू० १०-०० (उपन्यास)

अज्ञेय ही० स० वात्स्यायन
जोग लिखी, दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स, १९७७, पृ० १९९, १८ सेमी. मू० १२-०० (लेखक के साहित्य चिंतन सम्बन्धी २० लेखों का संग्रह)

चन्दर प्रताप चन्द्र
अजगर, अनु० हंसकुमार तिवारी, दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स, १९७७, पृ० ९१, १८ सेमी, मू० ९-०० (लेखक के मूल बंगला उपन्यास का अनुवाद)

चमड़िया चिरंजीलाल, १९३६—
चाय विज्ञान, कानपुर, ओरिएण्टल पब्लिशिंग हाउस १९७५ पृ० १८४-१५, २२ सेमी. मू० २०-००

जैन इन्दु
झुरमुट, दिल्ली, पंजाबी पुस्तक भंडार, १९७७, पृ० १३८, १८ सेमी. मू० ९-०० (ललित निबन्ध)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डेविड ह्यूम

मानव प्रकृति एक अध्ययन, अनुवादक हिम्मत सिंह सिन्हा, चण्डीगढ़, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, १९७७, पृ० ११-५६०, १९ सेमी. मू० ३०-००

बच्चन, हरिवंश राय १९०७

बसेरे से दूर, दिल्ली, काश्मीरी गेट, राजपाल एण्ड सन्स, १९७७, पृ० ३०६, १८ सेमी. मू० २०-०० (लेखक की आत्मकथा का तीसरा भाग)

बिहारी सतसई

सुधाकर पाण्डेय द्वारा सम्पादित मूल सम्पादक एवं टीकाकार लल्लूजी लाल, जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन की भूमिका, टीका और टिप्पणी सहित पृ० १९-५-४६२-२०५-१०, २४ सेमी म० १००-००

माचवे डॉ० प्रभाकर सं०

नागार्जुन—आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि, दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स, १९७७, पृ० १०२, १८ सेमी. मु० ५-०० (कवि की जीवनी और चुनी हुई कविताएँ)

सम्पूर्णानन्द डॉ०

चरित चर्चा : जीवन दर्शन, वाराणसी, नागरी प्रचारिणी सभा, १९७६, पृ० १८३, २२ सेमी. मू० १६-०० (लेखक के २० लेखों का संग्रह)

कामता प्रसाद गुरु (जन्मशती ग्रन्थ)

सुधाकर पाण्डेय एवं करुणापति त्रिपाठी द्वारा सम्पादित, वाराणसी, नागरी प्रचारिणी सभा, १९७७, पृ० २०७, २० सेमी. मू० ५१-०० (हिन्दी भाषा, व्याकरण और श्री गुरुजी के जीवन से सम्बन्धित २२ लेखों का सग्रह)

तुलसीदास-मूल्यांकन

वेणीशंकर झा की अध्यक्षता में सम्पादक मण्डल द्वारा सम्पादित, वाराणसी नागरी प्रचारिणी सभा, १९७७, पृ० ६-४८६, २२ सेमी. मू० ५१-०० (तुलसी साहित्य पर विविध विद्वानों के ३६ लेख)

केशव कोश

डा० विजयपाल सिंह द्वारा सम्पादित, वाराणसी, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १९७६, पृ० २-४०९, २४ सेमी. मू० ४५-००

तुलसीदास

सुभाषित और काव्यांग, वेणीशंकर झा की अध्यक्षता में सम्पादक मण्डल द्वारा सम्पादित, वाराणसी, नागरी प्रचारिणी सभा, १९७७-पृ० १०-४६४, २२ सेमी. मू० ३०-००

इवान तुर्गनेव १८१८-१८८३ अनु०

शिवदान सिंह चौहान और विजय चौहान, मेरा पहला प्यार, दिल्ली, काश्मीरी गेट, शिक्षा भारती, १९७७, पृ० १७०, १८ सेमी. मु० १२-०० (प्रसिद्ध रूसी लेखक के दो उपन्यासों का हिन्दी अनुवाद)

अनुसंधान

मराठी

ढेरे, रा० चि०

शोध-शिल्प. पुणे, विश्वकर्मा साहित्यालय, १९७७. पृ० २१६ २१ सेमी. म०-२०.०० (मराठी साहित्य के आदि काल संबंधी शोध निबंध)

मिराशी, वा० बि०

संशोधन-मुक्तावलि. खंड ८वाँ. नागपुर, विदर्भ-संशोधन मंडल १९७७. पृ० २४८ १८ सेमी. मू०-१०.०० (भारतीय इतिहास एवं संस्कृत वाङ्मय विषयक गवेषणात्मक निबंध)

हिन्दी

रैणा, डॉ० कृष्णा

हिन्दी और काश्मीरी निर्गुण संतकाव्य : तुलनात्मक अध्ययन नई दिल्ली, शारदा प्रकाशन, १९७७. पृ० ३३६ २२ सेमी. मू० ५१.०० (शोध प्रबंध)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिषद वार्त्ता

गुजराती साहित्य गोष्ठी

दिनांक ५ नवंबर १९७७ को संध्या ४ बजे परिषद के सभाकक्ष में गुजराती के यशस्वी साहित्यकार और कवि प्रो० यशवंत त्रिवेदी का हिन्दी में 'गुजराती साहित्य में आधुनिक काव्यधारा' विषय पर एक व्याख्यान आयोजित किया गया। आयोजन की अध्यक्षता गुजराती के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री शिवकुमार जोशी ने की। विद्वान वक्ता ने अंग्रेजी में गुजराती काव्य की प्राचीन और नवीन दोनों शैलियों का सम्यक विवरण देते हुए स्थान-स्थान पर उदाहरण के रूप में मूल कविताएँ प्रस्तुत कर श्रोताओं को प्रभावित किया। व्याख्यान के बाद श्रोताओं में से अनेक ने प्रश्न किए जिनका विद्वान वक्ता ने समुचित समाधान दिया। श्रोताओं के अनुरोध पर प्रो० त्रिवेदी ने अपनी कई स्वनिर्मित कविताएँ भी सुनाईं जिन्हें उपस्थित सज्जनों ने बहुत सराहा।

उपस्थिति काफी संतोषप्रद थी। गुजराती साहित्य के अनेक प्रेमी महिला और पुरुषों के अतिरिक्त अनेक साहित्यकारों ने आयोजन में भाग लिया।

चाय गोष्ठी

कलकत्ता स्थित विविध भाषा-भाषी साहित्यकारों और पाठकों के बीच पारस्परिक विचार-विमर्श द्वारा एक नियमित कार्यक्रम निश्चित करने और प्रायः मिलते रहने के लिए एक मंच की स्थापना के उद्देश्य से परिषद ने शनिवार दिनांक १७ दिसम्बर १९७७ को अपराह्न ४-३० बजे एक चाय गोष्ठी का आयोजन किया, जिसमें हिन्दी बंगला, गुराती, मराठी, पंजाबी, सिंधी आदि भाषाओं के साहित्यकारों और साहित्यप्रेमियों ने भाग लिया। साहित्य प्रेमी अपनी-अपनी रुचि के अनुकूल अलग-अलग छोटे-बड़े समूहों में बँटकर विचार-विमर्श करते रहे। उपाहार और चाय पान के बाद अनायास एक बहुभाषी कवि सम्मेलन हो गया जिसमें मराठी. हिन्दी, गुजराती और पंजाबी के कवियों ने अपनी एकाधिक रचनाएँ सुनाईं। अन्त में डा० प्रतिभा अग्रवाल ने इस आयोजन के उद्देश्य पर विस्तृत प्रकाश डाला। विचार-विमर्श बड़ा उपयोगी रहा। विभिन्न भाषा-भाषी साहित्यकार एक दूसरे के निकट आए, और यह निश्चय किया गया कि ऐसे अनौपचारिक आयोजन और होने चाहिए। उपस्थिति अच्छी थी, और साहित्यप्रेमियों में पर्याप्त उत्साह था। धन्यवाद के पश्चात् आयोजन समाप्त हुआ।

सुमित्रानन्दन पंत

हिन्दी के मूर्धन्य साहित्यकार छायावादी काव्यधारा के अन्यतम स्तंभ, चिन्तक और युगद्रष्टा महाकवि श्री सुमित्रानन्दन पंत को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए नगर के साहित्य प्रेमियों की एक सभा बृहस्पतिवार ५ जनवरी १९७८ को परिषद के सभाकक्ष में कलकत्ता विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष प्रो० कल्याणमल लोढ़ा के सभापतित्व में हुई। यह सभा भारतीय भाषा परिषद के अतिरिक्त नगर की अन्य सांस्कृतिक-साहित्यिक संस्थाएँ, भारतीय संस्कृति संसद, अनामिका, बड़ाबाजार लाइब्रेरी, श्री बड़ाबाजार कुमार सभा पुस्तकालय, पश्चिम बंग हिन्दी साहित्य सम्मेलन, कलकत्ता विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग. माहेश्वरी पुस्तकालय. बंगीय हिन्दी परिषद और हनुमान मन्दिर न्यास के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित की गई थी। सर्वप्रथम श्री पंतजी के चित्र को संस्थाओं की ओर से माल्यार्पण किया गया। प० विष्णुकांत शास्त्री, डा० कृष्ण बिहारी मिश्र, श्री भवरमल सिंधी, श्री सीताराम सेकसरिया और अध्यक्ष श्री लोढ़ा ने महाकवि के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित की। सभा में एक शोक प्रस्ताव पारित किया गया, और समस्त सभा ने दिवंगत आत्मा के सम्मान में मौन खड़े होकर उसकी शांति के लिए प्रार्थना की। शेष में महाकवि की कतिपय चुनी हुई रचनाओं में से कुछ व्यक्तियों ने सस्वर पाठ किया। सभा में काफी लोगों ने एकत्र होकर योगदान दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य मंच

अरविन्द संगोष्ठी

सोमवार, दिनांक २४ अक्तूबर तथा मंगलवार दिनांक २५ अक्तूबर, १९७७ को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की सहायता से 'योगिराज अरविन्द और उनकासाहित्य एवं दर्शन' विषय पर पुणें विद्यापीठ के हिन्दी विभाग द्वारा दो दिन की एक संगोष्ठी आयोजित की गई। संगोष्ठी का उद्घाटन श्री देवदत्त दाभोलकर (कुलगुरु पुणें विद्यापीठ) ने किया। आपने सामयिक स्थिति में अरविंद दर्शन का विचार करने के लिए विद्वानों का आवाहन किया। संगोष्ठी का आयोजन डा. आनन्द प्रकाश दीक्षित (प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, पुणें विद्यापीठ) ने इस दृष्टि से किया था कि अरविन्द के दर्शन, साहित्य एवं सांस्कृतिक कृतित्व का सम्यक् रूप संगीष्ठी में चर्चित निबन्धों के माध्यम से उभर सके और हिन्दी साहित्य पर पड़े अरविन्द के प्रभाव का भी मूल्यांकण हो जाये। दो दिनों की यह विद्वत्तापूर्ण संगोष्ठी उद्देश्य की दृष्टि से पूर्णतः सफल रही। डा. राममूर्ति त्रिपाठी तथा श्रीयुत गोवर्धन दवे मुख्य अतिथि थे। डा आनन्दप्रकाश दीक्षित, प्रा सी. राजगुरु, श्री ना. स. पाठक प्रा. सुधाकर दीक्षित, प्रा जी. एन. जोशी, डा. एस. आर. तलघट्टी, श्री एम. जी. पलनिटकर, डा कृष्ण दिवाकर, डा. चन्द्रकान्त बांदिवडेकर तथा एस. एन भावसार इत्यादि विद्वानों ने अरविन्द के दर्शन, साहित्य, कृतित्व एवं उनके हिन्दी साहित्य पर पड़े प्रभाव का विश्लेषण, मूल्यांकण करने वाले निबन्ध पढ़े और गर्मागर्म बहस भी की। वक्ताओं ने हिन्दी के अतिरिक्त मराठी और अंग्रेजी में भी अपने निबन्ध पढ़े। अरविन्द के समस्त कृतित्व के प्रति प्रगल्भ जिज्ञासा उभाड़ने का उत्तेजक कार्य इस गोष्ठी से सम्पन्न हुआ।

साहित्यकार का अभिनन्दन

दिनांक १० दिसम्बर १९७७ को कलकत्ता नगर की सांस्कृतिक संस्था 'अर्चना' ने भारतीय भाषा परिषद के सभाकक्ष में वाराणसी के प्रसिद्ध साहित्यकार और काशी के ठलुआ क्लब के महासचिव श्री विश्वनाथ मुखर्जी का राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा के लिए अभिनन्दन किया और उन्हें २१,०००/- की राशि भेंट की। आयोजन की अध्यक्षता प्रसिद्ध राष्ट्रसेवी श्री गंगाशरण सिंह ने की। श्री मुखर्जी की साहित्यिक सेवाओं और उनकी जिन्दादिली की प्रशंसा करते हुए आचार्य श्री सीताराम चतुर्वेदी, श्री सीताराम सेकसरिया, श्री भागीरथ कानोड़िया, श्री रामकुमार भुवालका, डा भानुशंकर मेहता, सर्वश्री कल्याणमल लोढ़ा, विष्णुकान्त शास्त्री, गुलाब खण्डेलवाल, मुरारीलाल केडिया आदि ने मुखर्जी का भावभीना अभिनन्दन किया। डा. भानुशंकर मेहता ने श्री मुखर्जी रचित ग्रन्थों से कुछ पंक्तियों का पाठ किया।

आयोजन के प्रधान वक्ता बंगला के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार श्री विमल मित्र ने साहित्य के महत्व पर प्रकाश डालते हुए भाषा के तत्व को गौण बताया और श्री मुखर्जी की, भाषा की संकीर्णता से ऊपर उठकर हिन्दी-सेवा की सराहना करते हुए श्री मुखर्जी की सरलता और साहित्य के प्रति उनके समर्पण की भावना का उल्लेख किया और कहा कि इस युग में अपने को भूल कर साहित्य की आराधना करनेवाले मुखर्जी जैसे अक्खड़ किन्तु सरल-स्वभाव व्यक्ति समाज में दुर्लभ हैं।

श्री विश्वनाथ मुखर्जी ने अभिनन्दन का समुचित उत्तर देते हुए कहा कि वे सदा से फटीचर हैं और फटीचर रहना ही पसन्द करते हैं, क्योंकि सार्थक साहित्य का निर्माण ऐसी ही अवस्था में संभव है। समर्थ होने पर साहित्यकार कूड़ा देने लगता है। उन्होंने कहा कि यह २१,०००/- की राशि संस्था अभी अपने पास रखे। अभी वे शरत-साहित्य के ऊपर कार्य कर रहे हैं इसके समाप्त हो जाने पर आवश्यकता होगी तब वे यह राशि ले लेंगे।

इस अवसर पर सुप्रसिद्ध समाज सुधारक और साहित्यकार स्व श्री रामेश्वर प्रसाद टाँटिया के सुपुत्र श्री नन्दलाल टाँटिया ने

-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घोषणा की कि अपने पिता की स्मृति में गठित न्यास से वे दो लाख रुपये साहित्य एवं साहित्यकारों के लिए सुरक्षित रख रहे हैं ताकि इस राशि में से बीस-पच्चीस हजार रुपया प्रतिवर्ष इस कार्य में व्यय किया जा सके।

भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार

भारतीय ज्ञानपीठ का सन् १९६०-६९ की अवधि में भारत की पन्द्रह भाषाओं में रचित सर्वश्रेष्ठ सर्जनात्मक साहित्य पर एक लाख रुपये का १९७६ का पुरस्कार बंगला की सुप्रसिद्ध उपन्यास लेखिका श्रीमती आशापूर्णा देवी को उनके उपन्यास 'प्रथम प्रतिश्रुति' पर घोषित किया गया है। श्रीमती आशापूर्णा देवी ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त करनेवाली पहली महिला हैं, और इसके पूर्व ग्यारह पुरस्कार घोषित हो चुके हैं। बंगला-साहित्य में यह पुरस्कार इसके पहिले श्री ताराशंकर वन्द्योपाध्याय और श्री विष्णु दे को दिया जा चुका है।

श्रीमती आशापूर्णा देवी बंगला के प्रथम श्रेणि के साहित्यकारों में परिगणित होती हैं। वे गत तीन दशाब्दियों से सर्जनात्मक साहित्य की रचना करती आ रही हैं। अबतक उनके ११० से अधिक उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं, जिनमें कई प्रथम-श्रेणि के माने जाते हैं। 'प्रथम प्रतिश्रुति' उपन्यास पर उन्हें बंगला साहित्य का सर्वश्रेष्ठ रवीन्द्र पुरस्कार भी प्राप्त हो चुका है।

सन् १९०९ में जन्मी श्रीमती आशापूर्णा देवी ने १३ वर्ष की अवस्था में ही लिखना प्रारम्भ कर दिया था, तब वे केवल बच्चों के लिए ही लिखती थीं। किन्तु सन् १९३७ में अपने जीवन के २८वें वर्ष में 'प्रेम ओ प्रयोजन' नामक उपन्यास से उन्होंने साहित्य के विस्तृत क्षेत्र में पदार्पण किया और तब से वे बराबर लिखती आरही हैं। उनका १५ वर्ष की अवस्था में विवाह हो गया था।

स्व० यशपाल पुरस्कार

हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार और क्रांतिकारी यशपाल की स्मृति में स्थापित यशपाल प्रतिष्ठान की ओर से लखनऊ में देश की नई पीढ़ी के तीन रचनाकारों को पुरस्कृत किया गया। दो हजार रुपए का पहला पुरस्कार श्रीमती शीला रोहेकर को उनके हिन्दी उपन्यास 'दिनान्त' के लिए और पन्द्रह सौ रुपए के दो अन्य पुरस्कार, श्री इब्राहीम शरीफ (मरणोपरान्त) उनके हिन्दी कहानी-संग्रह 'कई सूरजों के बीच', और श्री पी. सच्चिदानन्द को उनके मलयालम उपन्यास 'अलकुट्टम' को दिया गया। पुरस्कार स्व. यशपाल की पत्नी श्रीमती प्रकाशवती पाल ने एक समारोह में प्रदान किए। पुरस्कृत साहित्यकारों में श्रीमती रोहेकर की मातृभाषा मराठी है, स्व. श्री शरीफ की मातृभाषा तेलुगु थी। पर इन दोनों रचनाकारों की कृतियाँ मूल हिन्दी में ही हैं।

ये पुरस्कार सभी भारतीय भाषाओं के लिए स्थापित किए गए हैं।

तृतीय विश्व-पुस्तक मेला

नई दिल्ली में दिनांक ११ फरवरी से २० फरवरी १९७८ तक तृतीय विश्व पुस्तक मेले का आयोजन किया गया है। विश्व के और देश के विभिन्न भाषा-भाषी प्रकाशकों के साथ 'अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ' ने भी इस बार मेले में एक हिन्दी-मण्डप की आयोजना की है, जिसमें हिन्दी के सामान्य प्रकाशकों के अतिरिक्त हिन्दी भाषा में प्रकाशन करने वाली सार्वजनिक, धार्मिक स्वशासी, तथा सरकारी एवं अर्द्ध-सरकारी प्रायः सभी प्रकाशन-संस्थाएँ भाग ले रही हैं। यह आशा की जाती है कि इसमें देश के साहित्यकारों, पत्रकारों, पाठकों, शिक्षाविदों, पुस्तकालयाध्यक्षों आदि को प्रकाशकों और पुस्तक विक्रेताओं के साथ एक मंच पर विचार-विमर्श का भी अच्छा अवसर मिलेगा। इस मण्डप में हिन्दी की अनेक विधाओं और विषयों की नई-पुरानी अनेक पुस्तकें प्रदर्शित की जाएँगी जिससे अनायास ही हिन्दी की व्यापकता का अनुमान हो सकेगा। यह भी सूचना मिली है कि मेले के दिनों में ही हिन्दी प्रकाशक संघ 'हिन्दी प्रकाशन के नए आयाम' विषय पर एक त्रिदिवसीय गोष्ठी का आयोजन कर रहा है जिसका उद्घाटन उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री और समापन राजस्थान के मुख्य मंत्री कर रहे हैं।

इसी अवसर पर १७, १८ और १९ फरवरी १९७८ को बम्बई का हिन्दी लेखक सम्मेलन एक लेखक-सम्मेलन की आयोजना कर रहा है जिसमें लगभग ५०० हिन्दी लेखकों के भाग लेने की संभावना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नलिनी बाला देवी

असम की प्रख्यात कवयित्री तथा असम साहित्य सभा की भूतपूर्व अध्यक्षा श्रीमती नलिनीबाला देवी का दिनांक २४ दिसम्बर १९७७ को गुवाहाटी में देहान्त हो गया। उनकी अवस्था ८७ वर्ष थी। असमिया कविता में उनका महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है। उनके परिवार में एक पुत्र और दो पुत्रियाँ हैं। उनके पति का बहुत पहले ही निधन हो गया था।

सुमित्रानन्दन पंत

हिन्दी के महाकवि श्री सुमित्रानन्दन पंत का दिनांक २८ दिसम्बर १९७७ की मध्यरात्रि को इलाहाबाद के तेज बहादुर अस्पताल में हृदयगति रुक जाने से निधन हो गया। प्रसाद और निराला के साथ छायावाद की वृहत्त्रयी में उनका नाम गिना जाता था। उनके निधन से हिन्दी काव्य के एक युग का अन्त हो गया। पन्तजी का जन्म कूर्मांचल के एक रमणीय ग्राम कौसानी में २० मई १९०० को हुआ था। उनकी माता का उनके जन्म के कुछ ही घंटों बाद देहान्त हो गया था। उनका जन्म नाम गुसांई दत्त था, जिसे उन्होंने अपने अध्ययन काल में बदल कर सुमित्रानन्दन कर लिया था। उनके पिता का नाम पं० गंगादत्त पंत था।

उनकी शिक्षा कौसानी अल्मोड़ा, बनारस और इलाहाबाद में हुई। १९२१ के असहयोग आन्दोलन में उन्होंने अध्ययन छोड़ दिया और कुछ समय तक वे महात्मा गाँधी के साथ भी कार्यरत रहे। किन्तु उन्होंने अपना अधिकांश समय अंग्रेजी, बंगला, संस्कृत और हिन्दी साहित्य के अध्ययन-अनुशीलन में बिताया। उन पर महाकवि कालिदास, रवीन्द्रनाथ और अंग्रेजी के कवि कीट्स, शैली वर्डस्वर्थ आदि का प्रभाव माना जाता है। वे मूलतः प्रकृति के गायक कवि थे। कालाकाँकर के साहित्यिक वातावरण में वे काफी समय तक रह कर काव्य रचना करते रहे। १९५० से वे आकाशवाणी से सम्बद्ध हुए, और तबसे उनका सम्बन्ध विविध रूपों में आकाशवाणी से बराबर बना रहा। सन् १९६१ में उन्हें पद्मभूषण अलंकरण से सम्मानित किया गया। उसी वर्ष उन्हें 'कला और बूढ़ा चाँद' कृति के लिए साहित्य अकादमो पुरस्कार प्राप्त हुआ। सन् १९६५ में उन्हें 'चिदम्बरा' नामक काव्य संग्रह के लिए ज्ञानपीठ पुरस्कार प्रदान किया गया!

सन् १९५८ में प्रकाशित चिदम्बरा की कविताओं में रूमानी आदर्शवाद और दैहिक व्यापारों के आध्यात्मिक बोध का दर्शन होता है। सन् १९६० के लगभग उनका काव्य रूप की अपेक्षा कथ्य की ओर अधिक प्रवृत्त हुआ है। अपने प्रारंभिक जीवन में उन्हें साहित्य अकादमी का मानद सदस्य मनोनीत किया गया था। उनके लिखे हुए ५० से अधिक ग्रन्थों में एक उपन्यास, और दो समीक्षात्मक निबन्धों के संग्रह भी है। पल्लव, गुंजन, वीणा, ग्राम्या, चिदम्बरा और लोकायतन उनकी सर्वोत्तम रचनाओं में परिगणित होते हैं।

वे अविवाहित थे।

डा० श्रीमन्नारायण अग्रवाल

प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री, गाँधीवादी विचारक और अर्थशास्त्री डा. श्रीमन्नारायण अग्रवाल का २ जनवरी १९७८ को दिल का दौरा पड़ने से ६५ वर्ष की उम्र में ग्वालियर अस्पताल में देहान्त हो गया। वे दिल्ली से ट्रेन द्वारा नागपुर जा रहे थे कि मार्ग में अचानक उनका स्वास्थ्य खराब हो गया। उन्हें ग्वालियर स्टेशन पर उतार कर अस्पताल

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ले जाया गया, जहाँ उनकी मृत्यु हो गई। उनका शव दिल्ली लाया गया जहाँ ४ जनवरी को प्रातःकाल निगमबोध घाट पर उनका अन्तिम संस्कार किया गया।

डा. श्रीमन्नारायण महात्मा गाँधी के सहयोगी थे, और कई शिक्षण-संस्थाओं में अध्यापन करने के अतिरिक्त वे कांग्रेस के जनरल सेक्रेटरी रहे। वे योजना-आयोग के सदस्य थे और उन्होंने योजना-आयोग की मद्य-निषेध जाँच समिति के अध्यक्ष पद पर भी कार्य किया था। १९६४ से १९६७ तक वे नेपाल में भारतीय राजदूत और उसके बाद १९७३ तक गुजरात के राज्यपाल रहे।

वे हिन्दुस्तानी प्रचार सभा के एक न्यासी, और बुनियादी शिक्षा समिति के सदस्य थे। गाँधी स्मारक निधि के अध्यक्ष-पद के अतिरिक्त उन्होंने अखिल भारतीय कांग्रेस की त्रैमासिक पत्रिका 'आर्थिक समीक्षा' का सम्पादन भी किया था।

उन्होंने अर्थशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, राजनीति आदि पर कई ग्रन्थ लिखे हैं। हिन्दी में भी उनके कई निबन्ध और कविताएँ प्राप्त हैं। वे नागरी लिपि परिषद के अध्यक्ष थे।

जी० शंकर कुरुप

मलयालम के महाकवि जी. शंकर कुरुप का २ फरवरी १९७८ को ७६ वर्ष की अवस्था में त्रिवेंद्रम के मेडिकल कॉलेज अस्पताल में देहावसान हो गया। महाकवि वल्लथोल के बाद वे मलयालम के सबसे बड़े कवि और उनके उत्तराधिकारी गिने जाते हैं। उनका जन्म केरल के एक साधारण से ग्राम में हुआ था। उनकी शिक्षा भी कोई विशिष्ट नहीं हुई थी। मद्रास विश्वविद्यालय की विद्वान् परीक्षा उत्तीर्ण करके ही वे सन् १९२१ में अध्यापक हो गए थे। सन् १९५६ में महाराजा कॉलेज एर्नाकुलम से व्याख्याता के पद से अवकाश ग्रहण करने के बाद वे त्रिवेन्द्रम के आकाशवाणी केन्द्र में प्रोड्यूसर के रूप में नियुक्त हुए और दूसरे वर्ष वहाँ के साहित्य परामर्शदाता बने। सन् १९६३ में उन्हें अपनी कृति विश्वदर्शन के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार, और दो वर्ष बाद अपने कविता-संग्रह 'ओटक्कुझल' (बाँसुरी) के लिए भारतीय ज्ञानपीठ का प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया। सन् १९६८ में उन्हें भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण अलंकार से समलंकृत किया गया। उनके २५ के लगभग कविता-संग्रह चार साहित्यिक निबंधों के संग्रह, और इतनी ही पद्य नाटिकाएँ उपलब्ध हैं। इन्होंने रवीन्द्रनाथ ठाकुर की गीतांजलि एवं एकोत्तरशती, फिट्ज्जेरल्ड की रुबाइयात, कालिदास के मेघदूत का मेघसन्देशम् और भास के मध्यमवायोग का अनुवाद भी किया था।

वे केरल साहित्य परिषद के अध्यक्ष और केरल साहित्य अकादमी के सदस्य भी रहे। सन् १९६८ में उन्हें राज्यसभा का सदस्य भी नामांकित किया गया था।

> हर कृतिकार कृति के द्वारा मुक्त होता है। अगर उस मुक्ति का लाभ और बोध उसको नहीं होता, तो फिर उसने जो लिखा है वह रचना नहीं है। अगर होता है तो जहाँ तक रचना का प्रश्न है, वह निष्पत्ति पा चुकी है! और यही उसका पुरस्कार है।
>
> —स० वात्स्यायन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवर्ष के विभिन्न भाषा-भाषियों के बीच एक

सहज सेतु-निर्माण और

भावनात्मक एकता तथा सांस्कृतिक अभिन्नता

को चरितार्थ करने के उद्देश्य से

पढ़िए

भारतीय भाषा परिषद् की

द्वैमासिक पत्रिका

संदर्भ भारती

सर्वत्र विद्वानों द्वारा प्रशंसित,

प्रत्येक अंक में

देश की किसी एक भाषा के स्वातंत्र्योत्तर-कालीन साहित्य की

प्रमुख प्रवृत्तियों का स-विवेचन दिग्दर्शन,

प्रत्येक अंक उसी भाषा के विद्वान् द्वारा सम्पादित,

शिक्षण-संस्थाओं, साहित्यकारों और साहित्यप्रेमियों के लिए समान उपयोगी

अबतक **गुजराती, बंगला, हिन्दी, कन्नड़, मराठी** और **असमिया**

के साहित्यांक प्रकाशित हो चुके हैं।

वार्षिक चूल्य १२) मात्र प्रत्येक अंक २)

आज ही आदेश भेजिए

व्यवस्थापक : संदर्भ भारती

भारतीय भाषा परिषद, ४, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-७०० ०१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजीयन—आर० एन० २७१४६/७५

भारतीय भाषा परिषद

भारतीय भाषा परिषद, ९, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७
के लिये श्री परमानन्द चूड़ीवाल द्वारा प्रकाशित एवं
एसकेज, ६, शोभाराम बैशाख स्ट्रीट, कलकत्ता-७०९ से मुद्रित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

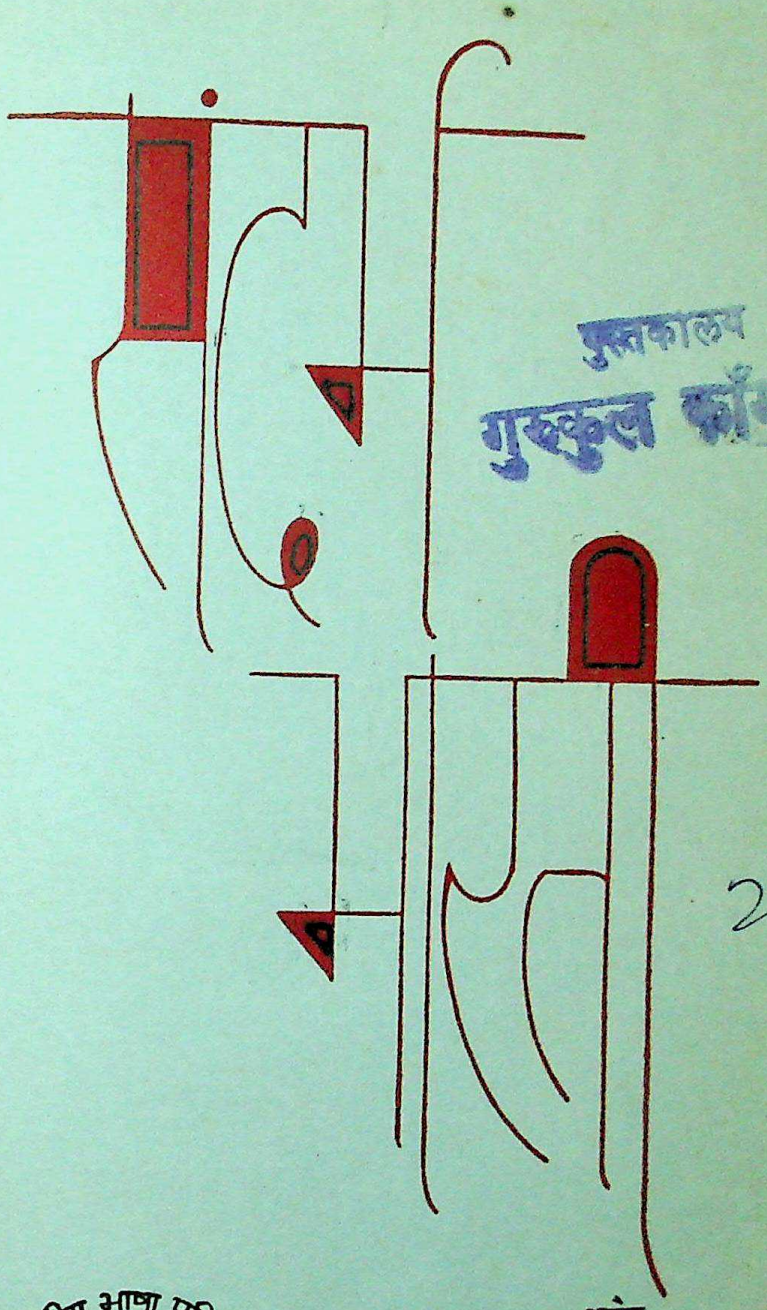

पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी

281

अप्रैल
१९७८

ओड़िया साहित्य अंक

भारतीय भाषा परिषद्
कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय भाषा परिषद के उद्देश्य

- भारतीय भाषाओं में पारस्परिक सहयोग-सौहार्द ।
- भारतीय भाषा-साहित्य की विलुप्त राशि की खोज और शोध ।
- विशिष्ट विषयों पर भारतीय विद्वानों की वक्तृताएँ और उनका प्रकाशन ।
- भारतीय भाषाओं के मौलिक एवं अनूदित ग्रन्थों का प्रकाशन ।
- भारतीय भाषाओं और अन्तरराष्ट्रीय महत्व के संदर्भ ग्रन्थों का अनुवाद ।
- उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पत्रिका-प्रकाशन ।
- उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रेक्षागार, संदर्भ पुस्तकालय, वाचनालय, प्रकाशन विभाग, शोधकर्त्ताओं एवं साहित्यकारों के लिये शोधकक्षों और साहित्यकार-आवास की व्यवस्था ।

परामर्श मंडल

अंग्रेजी	:	श्री शमीक बनर्जी, कलकत्ता
असमिया	:	डॉ० बीरेन्द्र भट्टाचार्य, गुवाहाटी
ओड़िया	:	डॉ० गोपालचंद्र मिश्र
कन्नड़	:	डॉ० मे० राजेश्वरय्या, मैसूर
कश्मीरी	:	डॉ० शिब्बन कृष्ण रैणा, नाथद्वारा
गुजराती	:	श्री गुलाबदास ब्रोकर, बंबई
तमिल	:	श्री र० शौरिराजन, मद्रास
तेलुगु	:	श्री बालशौरि रेड्डी, मद्रास
पंजाबी	:	डॉ० हरभजन सिंह, दिल्ली
बंगला	:	प्रो० अलोकरंजन दाशगुप्त
मणिपुरी	:	श्री नीलकंठ सिंह, इंफल
मराठी	:	प्रो० वसंत बापट, बंबई
मलयालम	:	डॉ० एम० मलिक मोहम्मद, कालीकट
संस्कृत	:	डॉ० विद्यानिवास मिश्र, वाराणसी
सिंधी	:	डॉ० मोतीलाल जोतवाणी, नई दिल्ली
हिंदी	:	डॉ० प्रभाकर माचवे, नई दिल्ली

संपादक

सन्हैयालाल ओझा

पत्राचार के लिए :—

संपादक, संदर्भ भारती, भारतीय भाषा परिषद
९, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००१७
दूरभाष : ४३-२४१६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्व भाषा सरस्वती

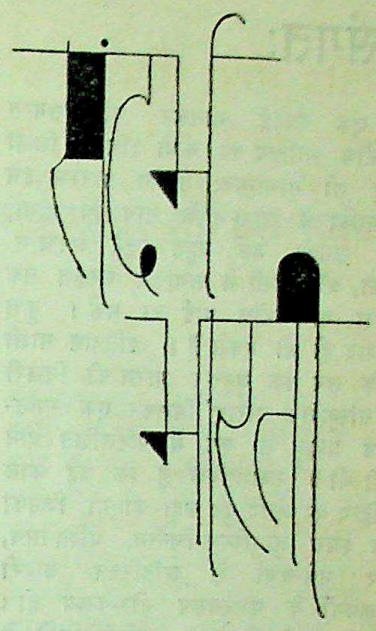

वर्ष ४ : अंक २

अप्रैल १९७८

ओड़िया साहित्य अंक

इस अंक के संपादक :

डॉ० गोपालचन्द्र मिश्र

द्वैमासिक पत्रिका

वार्षिक : १२.००

एक अंक : २.००

प्रसंगतः २
सम्पादकीय : स्वातन्त्र्योत्तर ओड़िया साहित्य
डॉ० गोपाल चन्द्र मिश्र ३
अन्धारुआ—सुरेन्द्र महान्ति ११
मधुमत्ता की रात—सुरेन्द्र महान्ति १२
गोरैया की लघुकथा : अच्युतानन्द पति १३
ख़ुशामद के पक्ष में : स्व. वामाचरण मित्र १३
कोठरी (नाट्यांश) : विजयकुमार मिश्र १४
यौवन की वापसी (कहानी) :
डॉ० कृष्ण प्रसाद मिश्र १५
कविताएँ : दीपक मिश्र, प्रहराज सत्यनारायण नन्द, विनोद चन्द्र नायक, सुरेन्द्र महान्ति, सरोजरंजन महान्ति, हरिहर मिश्र, ज्ञानीन्द्र वर्मा, गुरुप्रसाद महान्ति, कृष्णचन्द्र त्रिपाठी, डॉ० गोपालचन्द्र मिश्र, कालिन्दीचरण पाणिग्राही, सच्चिदानन्द राउतराय, डॉ० मायाधर मानसिंह और बैकुण्ठनाथ पट्टनायक २१
विदेशी कलम : २८
पुस्तक समीक्षा : मिस्टकल डाइमेन्शन्स ऑफ इस्लाम, चलित शताब्दीर भारतीय साहित्य, अन्धा मन, तेरहवाँ सूरज ३१
विशिष्ट-प्रकाशन : अंग्रेजी, कन्नड़, गुजराती, तमिल, तेलुगु, पंजाबी, बंगला, मराठी, मलयालम, संस्कृत, सिंधी, हिन्दी ३७
अनुसंधान : मराठी, हिन्दी ४४
साहित्य मंच : ४५
परिषद वार्ता : ४६
श्रद्धांजलि : ४७

भारतीय भाषा परिषद

९ कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसंगतः

एक इकाई मानकर यदि समस्त भारतीय साहित्य का कभी इतिहास लिखा जाए तो सामान्यतः उसका प्रारम्भ इस सहस्राब्दि के प्रारम्भ के साथ ही होगा, चाहे उसकी जड़ें बहुत गहरे अपभ्रंश, प्राकृत, और पाली से लगाकर संस्कृत तक प्रत्यक्ष या परोक्ष पाई जा सकें। कुछ अपवाद हो भी सकते हैं। इतिहास साक्षी है कि तब तक बृहत्तर भारत की बिखरी हुई सांस्कृतिक धाराएँ मिलकर एक स्पष्ट-स्थूल प्रवाह के रूप में परिलक्षित होने लगी थीं। स्वाभाविक है कि वह काल साहित्य का आदि युग कहा जाएगा, जिसका मूल स्वर आमुष्मिक-चिन्तन, भक्ति-तत्व, और धर्म-चर्चा के अतिरिक्त बाहरी आक्रमणों के फलस्वरूप वीर-काव्य हो। मध्यकाल की विशेषता परिस्थितियों से समझौते के कारण आत्मचिंतन और आत्म-रति से आँकी जासकती है, जिसमें बड़े-बड़े प्रबन्ध काव्य, रीति ग्रन्थ लिखे गए। उत्तर काल को हम आधुनिक काल कह सकते हैं, जिसका आविर्भाव पाश्चात्य संपर्क से पैदा हुआ नवोन्मेश है। साहित्य के इन संक्रमणों को ऐतिहासिक घटनाओं के क्रम में स्पष्ट देखा जा सकता है।

भारत में अंग्रेजों के प्रवेश और अंग्रेजों से सम्पर्क से समस्त भारत के साहित्यिक वातावरण को मानो नई खिड़की की राह एक सर्वथा अपरिचित दिशा की प्रतीति हुई, उसके सामने विचारों का, भाव-प्रवणता का नया क्षितिज उद्घाटित हुआ, साहित्य को चिन्तन, विवेचन, गवेषण, संचार, प्रचार आदि के कई नए आयाम मिले और गद्य की अनिवार्यता प्रचारित हुई। स्वाधीनता-प्राप्ति के बाद भारतीय साहित्य के क्षितिज और विस्तृत हुए। उसके स्वर में उदात्तता, वैश्विक संवेदना और दायित्व की संचेतना प्रबुद्ध हुई। अन्य किसी साहित्य की तरह ओड़िया साहित्य को भी इसी परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए।

ओड़िया की अपनी विशिष्ट लिपि है, जो देवनागरी लिपि की तरह ही ब्राह्मी लिपि से विकसित हुई है, यद्यपि देखने में वह देवनागरी से बड़ी भिन्न दिखाई देती है। भिन्नता का एक मात्र कारण उसकी शिरो-रेखा है, जो देवनागरी में तो सीधी रेखा है किन्तु ओड़िया में वर्तुल हो गई है और मुख्य संकेत की अपेक्षा अधिक स्थान घेर लेती है। इसका कारण यह बताया जाता है कि ओड़ीसा में पहले तालपत्र पर लोहे की कलम से लिखने की प्रथा थी, और सीधी रेखा खींचने में तालपत्र कट जाने का भय था। ओड़िया की व्याकरण भी हिन्दी से कुछ मानों में विशिष्ट है। ओड़िया में 'ने' विभक्ति का प्रयोग बिलकुल नहीं होता। ओड़िया वाक्यों में निषेधात्मक अव्यय भी क्रिया के पीछे वाक्य के अन्त में ही आता है।

ओड़ीसा प्रदेश का पृथक निर्माण अभी कुछ ही वर्ष पूर्व हुआ है। उसके पूर्व उसके कुछ भाग बिहार में, कुछ बंगाल में, कुछ मध्यप्रदेश एजेन्सी में और कुछ तेलुगु भाषी मद्रास प्रान्त में विभाजित थे। अतः ओड़िया भाषा में संथाली, मुण्डारी, बंगला और तेलुगु के शब्द तथा प्रभाव बराबर प्रकट हुए हैं। ओड़ीसा की समस्त जनसंख्या लगभग १५० लाख तो ओड़िया बोलती ही है, ओड़ीसा के आसपास के अंचलों में भी इसके बोलने वाले कम नहीं हैं।

ओड़िया साहित्य का प्रारम्भ, जिसे आदि युग, इतिवृत्त युग या सारलादास युग कहा जाता है, ग्यारहवीं शताब्दि के प्रथमार्ध से माना जाता है, यद्यपि तब ओड़िया का भाषिक रूप पड़ोसी प्रदेश की बंगला और असमिया से बहुत कुछ समान था। आठवीं और नवीं शताब्दि के 'बौद्ध गान ओ दोहा' को असमिया, बंगला और ओड़िया वाले समान रूप से अपने साहित्य की प्रारम्भिक निधि मानते हैं। किन्तु चौदहवीं शती तक ओड़िया ने अपनी स्पष्ट भंगिमा प्राप्त कर ली थी। ओड़ीसा के प्राचीन कला वैभव की समृद्धि विश्व-विश्रुत है। २ शताब्दि ईसवी पूर्व की खण्डगिरि-उदयगिरि की जैन गुफाओं से लगाकर खजुराहो, पुरी भुवनेश्वर तथा तेरहवीं शताब्दि के कोणार्क मन्दिरों तक स्थापत्य और मूर्त्ति-शिल्प की एक अविच्छिन्न धारा बराबर देखी जा सकती है। जिस प्रदेश का प्राचीन कला-वैभव इतना उन्नत हो, उसका स्पष्ट साहित्यिक स्वरूप चौदहवीं

(शेष पृष्ठ ११ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय

स्वातंत्र्योत्तर ओड़िया साहित्य

यह कहा जा सकता है कि स्वाधीनता-परवर्ती ओड़िया साहित्य का विकास पहले की राष्ट्रीय भावना और बाद के देशाभिमान की एक समन्वित अभिव्यक्ति के रूप में हुआ है। सन् १९४७ ई० के पहले स्वाधीनता के लिए जनमानस में जो राष्ट्रीय दुःख और क्षोभ विद्यमान था, वह १४ अगस्त, १९४७ ई० की मध्य रात्रि में दीपमालिका की ज्योति और भव्यता के मध्य दब गया। किन्तु देश में शताब्दियों से जो अभाव, दरिद्रता तथा अनेकानेक राष्ट्रीय समस्याएँ विद्यमान थीं, उन्होंने उभर कर भारतवासियों को और भी विचलित कर दिया। स्वयं को एक विराट अन्धकारमय परिस्थिति में महसूस करने तथा इन परिस्थितियों के संघर्ष में स्वाधीनता का आश्वास क्रमशः विलीन होता जा रहा था। भारत-पाकिस्तान विभाजन, सीमाओं पर व्याप्त संघर्ष आन्तरिक दैन्य और दुर्विपाक, तथा समाजव्यापी बेरोजगारी ने भारतीय साहित्य में एक विलक्षण ध्वनि का सृजन किया। जिन ओड़िया कवियों ने भारत की राजनीतिक स्वाधीनता की वन्दना कर काव्यांजलि समर्पित की थी तथा जिन लोगों ने कांग्रेस द्वारा परिचालित राष्ट्रीय संग्राम में अपने आपको झोंक दिया था, उन्हें समस्त संग्राम की समाप्ति के उपरान्त मुक्ति की यज्ञवेदिका से मात्र अंजलि-अंजलि अग्नि ही प्राप्त हुई। उस अग्नि ने देश के युवा वर्ग को और भी अधिक उत्तप्त बना दिया।

ओड़िया साहित्य में राधानाथ युग बीत चुका था। कांग्रेस के सत्याग्रही तथा असहयोग में सक्रिय रूप से भाग लेने वाले राष्ट्रवादी नेता गोपबन्धु दास आदि ने ओड़िया साहित्य को स्वाधीनता की वाणी से झंकृत कर दिया था। स्वाधीनता संग्राम के युग में जो उच्छ्वासपूर्ण गीत लिखे गए थे और राष्ट्र की जो परिकल्पना की गई थी वह स्वाधीनता के बाद अन्तर्राष्ट्रीय बौद्धिक चेतना में पर्यवसित हुई। ओड़ीसा के अन्धकारपूर्ण गड़जात अंचल में जिन मनीषियों ने विद्रोह की ज्योतिशलाका प्रज्वलित की थी और वन-पर्वत, जीव-जन्तु तथा मनुष्य समाज को अपनी कविताओं से अनुप्राणित किया था, उनमें कालिन्दी चरण पाणिग्राही, सच्चिदानन्द राउतराय, गोदावरीश महापात्र, मनमोहन मिश्र, वीरकिशोर दास, बांछानिधि महान्ति तथा गोपालचन्द्र मिश्र उल्लेखनीय हैं। किन्तु सन् १९४७ ई० के बाद इन कवियों के काव्य में प्राचीन तथा परम्परागत रूप विद्यमान नहीं रह सके। विशेषकर **सच्चिदानन्द राउतराय** ने ओड़िया कविता के शिल्प को पूर्णतः एक नई पद्धति से गढ़ने का उपक्रम किया। इसका फल यह हुआ कि स्वाधीनता के बाद २५ वर्षों के भीतर ओड़िया कविता का शिल्प पद्यात्मकता से रहित होता गया और उसमें गद्यात्मकता का समावेश होने लगा। ओड़िया कविता के इस रूपान्तर एवं वस्तु-परिवर्त्तन का श्रेय **शचि राउतराय** को दिया जाता है। इस परिवर्तित परिप्रेक्ष्य में कविता के भावगत परिवर्तन का पौरोहित्य **डा० मायाधर मानसिंह, कालिन्दीचरण पाणिग्राही,** तथा **वैकुण्ठनाथ पट्टनायक** ने सम्पन्न किया।

बीसवीं शताब्दि के प्रथम चालीस वर्षों में स्वाधीनता की जो अग्नि और उसका उत्ताप परिव्याप्त हुआ था वह ओड़िया कविता में एक ऐतिहासिक प्रेरणा-सूत्र के रूप में प्रतिफलित हुआ। उस युग में कविता मुक्ति-प्रमत्त जनता की भावप्रवणता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की प्रकाशक थी। साथ ही उसमें जहां समसामयिक कठोर यथार्थ, पराधीनता से मुक्त होने की दुर्निवार आकांक्षा, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व के समस्त भागों के साथ एकता स्थापित करने की अभिलाषा प्रखर लक्षणों के रूप में उदित हुई थी, वहीं रोमाण्टिक, निगूढ़ सामाजिक, गम्भीर दार्शनिक तथा साम्यवादी विचार धाराएँ भी चेतना के विभिन्न आयामों में विद्यमान थीं। उत्कल का भावाकाश भारतीय भावाकाश के साथ आदर्शवादी दृष्टि के माध्यम से कविता के साम्राज्य में सम्मिलित हो गया था। इस युग में कवि व्यक्तिगत जीवन की समस्याओं से ऊपर उठकर सामाजिक समस्याओं की भूमि का स्पर्श करने में समर्थ हो सका था।

स्वाधीनता के पहले तक कवि ने देशवासियों को मुक्ति का सन्देश सुनाया था किन्तु स्वाधीनता के बाद उसका मोह भंग हो गया। सामाजिक व्यवधान, विषमता, प्रशासनिक शिथिलता, देश की दरिद्रता तथा न्याय के लिए संघर्ष के प्रति संशय आदि तत्वों ने उसकी कविता को व्यक्तिनिष्ठ बना दिया। ऐसा लगता है कि मानो कल्पना और भावुकता के स्थान पर एक तीव्र बौद्धिकता ने आधिपत्य स्थापित कर लिया हो। सन् १९५० ईस्वी के उपरान्त ओड़िया कविता में सहज सरल रोमाण्टिक तथा देशात्मबोध से युक्त आवेग के स्थान पर गम्भीर आत्मचिन्तन के स्वर गुंजरित हो उठे। बीसवीं शताब्दी के मध्य भाग के उपरान्त ओड़िया कवि को मानो अपने दायित्वों का बोध हुआ और उसने सब के विरुद्ध अपनी आवाज उठाई। इस प्रकार कवि प्रतिष्ठित - परम्परा, स्थापित संस्था तथा युगव्यापी प्रचलित विधि-विधानों के समक्ष एक उग्र प्रतिवाद के रूप में उपस्थित हुआ। द्वितीय महायुद्ध के उपरान्त विश्व-साहित्य में जिस अस्तित्ववाद और यथार्थवाद का प्रवर्तन हुआ था उसकी भावधारा ने ओड़ीसा की काव्य-चेतना को भी अनुप्राणित किया। व्यक्तिनिष्ठ मानसिक स्थिति तथा सचेतनता की धारणा ने ओड़िया कविता को एक नूतन दृष्टिकोण से चिह्नित किया। लोग उसे बामपंथी विप्लव की धारा कह सकते हैं। किन्तु यहाँ संक्षेप में इतना कहना ही पर्याप्त है कि सन् १९५० ईस्वी के बाद अर्थात् वर्तमान शताब्दी के षष्ठ दशक में ओड़िया कविता को बामपंथी वैप्लविक धारा, रसधर्मी काव्यधारा और संस्कारधर्मी काव्यधारा के अन्तर्गत विभक्त किया जाता है। **सच्चिदानन्द राउतराय** और **मनमोहन मिश्र** आदि की कविता बामपन्थी चिन्ताधारा से आप्लावित है। ये काव्यधाराएँ युद्धोत्तरकालीन सामाजिक प्रतिक्रिया, स्वाधीनता-प्राप्ति के बाद की निराशा, जीवन के प्रति व्यक्ति का अविश्वास तथा परम्पराविरोधी प्रतिक्रिया, संघर्षशील जीवन का यथार्थवादी दृष्टिकोण, तथा उच्छृंखल रोमाण्टिक भावानुवेग जैसी प्रवृत्तियों से युक्त हैं।

युगगत यंत्रणा का भाव इन तीनों धारा के कवियों की कविताओं में क्रमशः अभिव्यक्त हुआ। छठे दशक में यथार्थवादी चेतना ने ओड़िया कविता को मात्र प्रभावित ही नहीं किया, प्रत्युत् इसने सातवें दशक में ओड़िया कविता के स्वरूप-परिवर्तन के लिए भित्ति-भूमि का भी सृजन किया। इसके पहले समसामयिक ओड़िया कविता में काल्पनिक रीति और काव्यगत प्रतिक्रिया का समारम्भ हुआ था। इन तीनों भावधारा के कवियों की कविता के रूप और भाव पक्ष के परिवर्तन के मूल में पाश्चात्य कविता का प्रभाव तथा समसामयिक गड़जात की प्रजा का आन्दोलन कार्यरत थे। **गोपालचन्द्र मिश्र** की अनेक कविताएं गड़जात आन्दोलन को लेकर लिखी गई थीं तथा उन्होंने एक हलचल की सृष्टि कर दी थी। इस समय देश और समाज की पृष्ठभूमि पर राष्ट्रकवि **बीरकिशोर दास, बांछानिधि महान्ति** तथा **बांछानिधि दास** आदि कवियों ने अनेकानेक कविताओं की रचना की। किन्तु इनकी कविता में परम्परा का प्रभाव अधिक था। इन्हें हम **गोपबन्धु** के द्वारा प्रवर्तित राष्ट्रवादी परम्परा की परिणति के रूप में विवेचित कर सकते हैं। रसधर्मी काव्यधारा के अन्तर्गत **मायाधर मानसिंह, राधामोहन गड़नायक, कृष्णचन्द्र त्रिपाठी, ज्ञानीन्द्र वर्मा, विनोद चन्द्र नायक**, तथा **प्राण कृष्ण सामल** आदि की काव्यसृष्टियों का समाहार होता है। श्रीयुत् **कालिन्दी चरण पाणिग्राही** की छठे दशक में लिखी गई अनेक कविताएं नूतन, मूल्यबोध से युक्त हैं, अर्थात् उनमें स्थापित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परम्परा के विरुद्ध प्रतिक्रियाएँ अभिव्यक्त हुई हैं। विचारक की दृष्टि में **नित्यानन्द महापात्र, कुंजबिहारी दास** आदि कवियों की कविताओं को संस्कारधर्मी काव्यधारा के अन्तर्गत रखा जा सकता है।

स्वातंत्र्योत्तर काल में ओड़िया कविता में जो भावगत परिवर्तन लक्षित हुआ उसके मूल में सन् १९३६ ईस्वी में सम्पन्न स्वतन्त्र ओड़ीसा प्रदेश का गठन भित्ति के रूप में कार्य कर रहा था। सन् १९४५ से लेकर सन् १९६० के बीच ओड़ीसा को अनेक बार बाढ़, अकाल और आर्थिक संकट की विभीषिकाओं को झेलना पड़ा है। इसीलिए कविगण यथार्थवादी बनने के लिए बाध्य हो गये। **कालिन्दी चरण पाणिग्राही, सच्चिदानन्द राउतराय, मायाधर मानसिंह, बैकुण्ठनाथ पट्टनायक** आदि प्रतिभाशाली कवियों से अनुप्राणित होकर महाविद्यालयीन शिक्षा में दीक्षित एक अन्य युवा वर्ग ने ओड़िया कविता के राज्य में पदार्पण किया। इनमें **गुरुप्रसाद महान्ति, गोपालचन्द्र मिश्र, चिन्तार्मणि बेहेरा, जदुनाथदास महापात्र** उल्लेखनीय हैं। इस वर्ग का अनुकरण करते हुए ओड़िया के काव्य-साम्राज्य में **रमाकान्त रथ, सीताकान्त महापात्र, दुर्गाचरण परिड़ा, जीवनानन्द पाणि, विभुदत्त मिश्र, कृष्णचरण बेहेरा, रवि सिंग** आदि भी प्रविष्ट हुए। सन् १९६० से सन् १९७७ ईस्वी के मध्य जिन प्रगतिवादी, यथार्थवादी, भावनिष्ठ तथा बुद्धिजीवी तरुण कवियों ने ओड़िया काव्य-कविता की श्रीवृद्धि की है उनमें **दीपक मिश्र, नित्यानन्द पति, चन्द्र कुमार महान्ति, प्रमोदकुमार महान्ति, मनोरमा महापात्र, तुलसी ओझा, ब्रह्मोत्री महान्ति, सरोज रंजन महान्ति, सुजाता प्रियंवदा, प्रहराज सत्यनारायण नन्द, उमाशंकर पण्डा, बंशीधर षडंगी, फनी महान्ति, सदाशिव दास, सौभाग्य मिश्र, प्रतिभा शतपथी, कैलास लेंका, सौरीन्द्र बारीक, प्रकुल्लकुमार त्रिपाठी, राजेन्द्र पण्डा, श्रीकुमार महान्ति, चण्डीचरण कर, एकादशी प्रसाद बोइताइ, पद्मा दाश, गोपालकृष्ण रथ, हरप्रसाद दास** आदि प्रमुख हैं। किन्तु इन कवियों की कविताएं अनेक स्थलों पर शिल्प और संरचना की दृष्टि से **सच्चिदानन्द राउतराय** की काव्य-चेतना से प्रभावित प्रतीत होती हैं। सातवें और आठवें दशक के अनेक नवागत स्रष्टाओं की लेखनी की उष्णता, शक्तिशाली भाषा और आधुनिक छन्द-विधान के माध्यम से दुःख, निराशा, धूलिधूसरित पृथ्वी और विषाद-गम्भीर समाज की व्यथा और उत्ताप का प्रभावी प्रकाशन हुआ है। ये कवि अपेक्षाकृत अधिक तरुण और युवा हैं तथा इनकी कविताओं में जीवन-जिज्ञासा, जीवन-निःसंगता, साम्प्रतिक सामाजिक करुणा, क्षत-विक्षत तारुण्य की भावचेतना, शान्ति और संघर्ष की वाणी तथा मनुष्य का आकुल-व्याकुल रूप समुचित रूप से प्रतिफलित हुए हैं। पाठकों की दृष्टि इन दो दशकों की ओड़िया कविता में निबद्ध भाव-प्रवणता की अपेक्षा तन्निहित प्राच्य की बौद्धिक और तीव्र आत्मिक चेतना की ओर अधिक आकर्षित होती है। ये युवा कवि आवेग के स्थान पर गम्भीर चिन्तन के द्वारा परिचालित हैं। इन दो दशकों के कवियों की कविता आवेशशून्य है, वहाँ केवल बुद्धि का आलोक ही विकीर्ण हुआ है। उनकी भाषा परम्परित भाषा नहीं है। उन्होंने जनप्रचलित गद्य की भाषा को काव्यभाषा बनाया है। नये अलंकार और नये प्रतीक अत्याधुनिक कविता के आधार हैं। आधुनिक कविता का भाषा की रीति और प्रबन्धात्मकता के साथ कोई सरोकार नहीं है। इसीलिए कवि की भावप्रवणता के सम्मुख नये प्रयोग और अभिनव परीक्षण पथावरोध के समान उपस्थित हैं। वस्तुतः नव्य-कविता में युगीन मानसिक संकट और संताप पूर्णरूपेण प्रतिफलित होता है। आधुनिक ओड़िया कविता में यही संकट और यंत्रणा प्रतिफलित हुए हैं इसलिए युवा कवियों के पास यही एकमात्र स्पष्टीकरण है। आधुनिक कविता के विरोध में पाठकों के द्वारा एकमात्र यही अभियोग प्रस्तुत किया जाता है कि आधुनिक कविता दुर्बोध है। किन्तु इस अभियोग को यथार्थ नहीं कहा जा सकता। कवि यह स्पष्टीकरण प्रस्तुत करते हैं कि अत्याधुनिक कविता का जन्म पारिपार्श्विक परिस्थिति और सामाजिक परिवेश से हुआ है तथा इसके फलस्वरूप समाज का आकार-प्रकार, चाल-ढाल, व्यक्ति का आचरण, जीवन-जिज्ञासा तथा मानवीय मूल्य-बोध आधुनिक कविता को प्रज्ञानुचालित एवं दुर्बोध बना रहा है। जीवन का रहस्योद्घाटन करना नव्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता का लक्ष्य है। आधुनिक कविता उसी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए पूर्ण रूप से सचेष्ट है।

षष्ठ एवं सप्तम दशक में पूर्वयुग के अनेक प्रतिभाशाली कवियों ने भी कविताएँ लिखी हैं। इनकी कविताओं में पारंपरिकता और आधुनिकता का सम्यक् सामंजस्य लक्षित होता है। पारंपरिक-सांस्कृतिक चेतना तथा समसामयिक युगचेतना इनकी कृतियों को सार्थक करती है किन्तु अपेक्षाकृत नवागत तरुण कवियों की कविताओं में सामाजिक यथार्थ और पीड़ा-ग्रस्त असहाय युग के नवीन भाव-बोध ने अधिक गहराई प्राप्त की है। इन नवयुवकों के काव्य-शिल्प में पाश्चात्य प्रभाव अधिक है। चीनी आक्रमण, पाकिस्तानी आक्रमण, राजनैतिक उलटफेर, सांस्कृतिक परिवर्तन, सामाजिक संकट और मुख्यतः एक नैतिक दुर्विपाक ने इन गत बीस और तीस वर्ष की कविताओं को पूर्णतः आधुनिक समाज के पास पहुँचा दिया है। भिन्न-भिन्न आंगिक प्रयोग और चित्रकल्प (चित्र योजना) की योजना युवा कवियों की कविताओं के उल्लेखनीय लक्षण हैं। प्रतिष्ठित कवियों की कृतियों की पृष्ठभूमि में आज के युवा कवियों की कविताएँ नूतन परीक्षण-निरीक्षण द्वारा अधिक स्पष्ट हैं। कहा गया है कि बौद्धिकता आधुनिक कविता का यथार्थ लक्षण है और मुक्तक छन्द उसका अलंकार। आधुनिक मनुष्य के 'अतिमानव' और 'साधारण मानव' के बीच जो मानसिक द्वन्द्व है उसी ने भाव प्रवण कवियों को आक्रान्त किया है। रोमाण्टिसिज्म, जातीयता, ईश्वर - चिंता, आध्यात्मिकता, व्यर्थ जीवन की पराजय आदि ने अनिश्चितता के परिप्रेक्ष्य में पूर्णरूप से एक नया रूप धारण किया है। स्वाधीनता की परवर्ती ओड़िया कविताएँ एक बहुरंगी कार्पेट के समान हैं, जो भिन्न-भिन्न दर्शकों की दृष्टियों में विभिन्न भावों की 'सामग्री' उपस्थित करती है। सत्तरोत्तर ओड़िया कविता में गुणात्मक एवं परिमाणात्मक दृष्टि से प्रतिभा के विकास की संभावना स्पष्ट है। सत्तरोत्तर काव्य-पुरुष को एक उज्ज्वल प्रज्ञामय व्यक्तित्व का प्रकाशक कहा जा सकता है। विभिन्न अभिव्यक्ति की चेतना इस दशवर्षीय ओड़िया कविता में हमेशा परिलक्षित हुई है।

स्वाधीनता के बाद ओड़िया की छोटी कहानी परिमाणात्मक एवं गुणात्मक अभिवृद्धि की दृष्टि से विशिष्ट है। ओड़िया साहित्य में 'नव जागरण युग' के प्रवर्तक के रूप में कहानीकार **फकीर मोहन** का वैशिष्टय एवं स्वातन्त्र्य (मौलिकता) सर्वमान्य है। उनकी परंपरा में स्वाधीनता के पहले ही **कालिन्दी चरण पाणिग्राही, कान्हुचरण महान्ति, गोपीनाथ महान्ति, कमलाकांत दास, राजकिशोर राय, राजकिशोर पट्टनायक, लक्ष्मीधर नायक, नित्यानन्द महापात्र, सच्चिदानन्द राउतराय, अनन्तप्रसाद पण्डा, गोदावरीश** महापात्र आदि प्रतिभाशाली कहानीकारों ने ओड़िया साहित्य की छोटी कहानियों को प्रतिष्ठा प्रदान की थी। स्वाधीनता के परवर्तीकाल में भी वे बराबर क्षुद्रगल्प लिखते रहे हैं। मार्क्सवादी वैप्लविक चिन्ताधारा से लगाकर उनकी कहानियों में वर्ग वैषम्य, राजनैतिक शोषण, व्यक्ति तथा समाज के बीच का संघर्ष, सामाजिक-जीवन की असफलता और मानसिक असहायता संवेदित भावावेग के साथ चित्रित हुई हैं। किन्तु स्वाधीनता के बाद की ओड़िया कहानी का सबसे अधिक आकर्षणीय लक्षण है शिल्पगत अभिव्यक्ति। **कालिदी चरण पाणिग्राही** की 'मांस का विलाप', **गोदावरीश महापात्र** की मागुणिर शगड़ (मागुणि की बैलगाड़ी), **नित्यानन्द महापात्र** की 'एगार टा' (ग्यारह) और **अनन्तप्रसाद पण्डा** की 'राजभाग' गल्पों को आधुनिक प्रतारणा-पूर्ण समाज के व्यंग तथा चित्रधर्मी गल्प कहा जा सकता है। समाज की सचेतनता, तीव्र वास्तवता का बोध एवं व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण उपर्युक्त लेखकों की कहानियों में पूर्णरूप से प्रतिफलित हुए हैं। इनमें से कोई रोमाण्टिक कलाकार, कोई सामाजिक चित्रांकण करने में सचेत, कोई पीड़ित और शोषित साधारण समाज का महान शक्तिशाली चित्रकार है। कवि **सचि राउतराय** की 'मशाणिर फुल' (मसान का फूल), 'माटिर ताज' (मिट्टी का ताज), 'अन्धारुआ' (अँधेरा), और **अनन्तप्रसाद पण्डा** की 'टाइप फोर' कहानियाँ रुग्ण समाज की अन्तर्वेदना तथा संशय-बोध को व्यक्त करने में समर्थ हैं। इन लेखकों में से अधिकांश ने सत्तर के बाद भी गल्प, कहानी तथा क्षुद्रगल्पों की रचना की है। तथापि गत तीस वर्ष के बीच ओड़िया गल्प-साहित्य में जिन नवागत लेखकों के दर्शन हुए और जिन्होंने अपनी जीवन्त शैली से छोटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानियों के क्षेत्र को समृद्ध बनाया है उनमें **सुरेन्द्र महान्ति** का नाम सर्वप्रथम उल्लेखनीय है। उनकी कहानियों में नूतन मूल्यबोध, नवीन अभिव्यक्ति तथा सुस्पष्ट जीवन-भाव परिलक्षित होते हैं। ओड़िसा के छोटे गाँव के उपेक्षित साधारण मनुष्य, तथा आधुनिक शिल्प सौन्दर्य से समृद्ध नगर तथा कारखानों में नियुक्त क्लर्क एवं श्रमिकों के चित्र इनकी कहानियों में अंकित हैं। कथावस्तु की नूतनता की अपेक्षा उनकी कहानियों की भाषा गौरवपूर्ण एवं स्वाद्य है। उनकी कतिपय कहानियाँ—'भारत आविष्कार', 'अम्बापाली', रोटी और चाक', 'कृष्ण चूड़ा', 'मेंढा खाइ' (भेड़ खानेवाली), 'सबुजपत्र ओ धूसर गोलाब' (हरे पत्ते और धूसर गुलाब), 'ओः कालकाटा' में टूटते हुए समाज और संस्कृति की क्रिया-प्रतिक्रियाएँ प्रतिफलित हुई हैं।

इसी प्रकार गत बीस वर्षों में छोटी कहानी लिखकर प्रसिद्ध होनेवाले लेखक हैं—**मनोज दास**। इनकी कहानियों में सामाजिक संघर्ष, तीखे व्यंग्य एवं सामाजिक विरूपताएँ दृष्टिगोचर होती हैं। इस प्रसंग में उनकी कई कहानियाँ उल्लेख्य हैं—समुद्र की क्षुधा, बाबा, आरण्यक आदि। इनके अतिरिक्त **वामाचरण मित्र**, **प्राणबंधु कर**, **विभूति भूषण त्रिपाठी**, **वसन्त शतपथी**, **फतुरानन्द**, **विभूति पट्टनायक**—आदि कहानीकारों ने ओड़िया के क्षुद्रगल्प की दिशा को आलोकित किया है।

१९६० से ६५ ई० के समय जिन युवा कहानीकारों ने ओड़िया क्षुद्रगल्प के उद्देश्य, प्रवृत्ति एवं रचना प्रक्रिया में परिवर्तन किया उनमें श्री **ब्रह्मानन्द पण्डा**, **अच्युतानन्द पति**, **अखिल मोहन पट्टनायक**, **किशोरीचरण दास**, **शांतनु कुमार**, **आचार्य**, **वीणापाणि महान्ति**, **महापात्र नीलमणि साहु**, **कृष्ण प्रसाद मिश्र**, **कल्पना कुमारी देवी**, **लक्ष्मीनारायण महान्ति** तथा **रामचन्द्र बेहेरा** आदि उल्लेखनीय हैं।

षष्ठ एवं सप्तक दशक में ओड़िया की छोटी कहानी अत्यन्त परीक्षण-निरीक्षण के रास्ते से गुजरी है। सामाजिक यथार्थ और वैयक्तिक चेतनाएँ इस युग की कहानियों में प्रतिबिम्बित हुई हैं। तरुण कहानीकार कहानीके निश्चित पारम्परिक रूपों पर विश्वास नहीं करते। वे छोटी कहानी को एक सामाजिक कला के रूप में स्वीकार करते हैं और इसलिए वे मुख्यतः व्यक्ति की यथार्थवादी असहायता को आधुनिक कहानी के केन्द्र बिन्दु के रूप में व्यक्त करते हैं। आधुनिक क्षुद्रगल्प में आदर्श के रूप में न चरित्र, न विषयवस्तु न परम्परागत कहानी-कला है। गत दस वर्षों में युवा कहानीकारों ने बहुधा क्षुद्रगल्प की तथ्यपूर्ण परीक्षा की है। प्रायः 'अस्तित्ववाद' के ऊपर आधृत इन कहानियों में विशेषरूप से पाश्चात्य प्रभाव दिखाई देता है। अनेक कहानियों में नग्न अश्लीलता के चित्र भी देखने को मिलते हैं। सत्तर के बाद के ओड़िया कहानी साहित्य ने निर्दिष्ट कथा-वस्तु, खास चरित्र, विशिष्ट भाषा या शैली के लिए प्रतीक्षा नहीं की। विचार-विश्लेषण के पक्षधर कतिपय लेखक कहानी में घटना को बिलकुल महत्व नहीं देते। निर्दिष्ट चरित्र की सूचना या विकास के लिए भी वे चिंतित नहीं हैं। उनके अनुसार क्षुद्रगल्प में किसी निर्दिष्ट आदर्श की आवश्यकता नहीं है। इन सब के बावजूद कहा जा सकता है कि उभय रूप-संरचना एवं शिल्प की दृष्टि से ओड़िया की छोटी कहानी ने विशेष प्रगति की है। तीव्र सामाजिक चेतना अधिकांश क्षुद्र-गल्पों का अन्तःस्वर है। प्रतिष्ठित एवं नवीन कहानीकारों की साधना के कारण ओड़िया की क्षुद्रगल्प का विकास आज उज्ज्वल है।

उपन्यास के क्षेत्र में स्वाधीनता के पहले उपन्यास लिखकर उत्कलीय संस्कृति एवं समाज का प्रतिनिधित्व करने में जो समर्थ थे, स्वाधीनता के बाद उनकी लेखनी और अधिक तीव्र हो चली है। आधुनिक युग गद्य का युग है। इसलिए प्रत्येक उपन्यासकार चाहता है कि आधुनिक उपन्यास समाज एवं व्यक्ति का यथार्थ प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करे। फकीर मोहन के समय के उपन्यासों में कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, घटना आदि जिन तत्वों की प्रमुखता थी, आधुनिक उपन्यासों में वे त्याज्य समझे जा रहे हैं।

सन् १९३० ई० में **कालिंदीचरण पाणिग्राही** का 'माटिर मणिष' (मिट्टी का मनुष्य) प्रकाशित हुआ था। उसकी लोकप्रियता सर्वमान्य है। किंतु उनके परवर्तीकाल के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपन्यासों में यथा 'लुहार मणिष' (लौह मानव), 'आजिर माणिष' (आज का मानव) और 'मुक्तागड़र क्षुधा' (मुक्ता गढ़ की भूख) में पूर्णरूप से विषयगत एवं शिल्पगत नये रूप प्रकाशित हुए हैं।

अधिक संख्या में उपन्यास लिखनेवाले—**कान्हुचरण महान्ति, गोपीनाथ महान्ति, राजकिशोर पट्टनायक, चन्द्रमणि दास** और **रामप्रसाद सिंह** ने ओड़िया उपन्यास के सांगठनिक रूप तथा शिल्प विधान को बिलकुल बदल दिया है। **गोपीनाथ महान्ति** के अमृतसंतान, परजा, माटिमटाल, **कान्हुचरण महान्ति** का ७ का' उपन्यास सर्व भारतीय स्तर में स्वीकार्य हुए हैं। **राजकिशोर पट्टनायक** के उपन्यास पाठकों द्वारा बहुत प्रशंसित हुए हैं। **कमलाकान्त दास** (बोउ' मा) **लक्ष्मोधर नायक** (हाय रे अभागा देश), **अनन्तप्रसाद पण्डा** (भाग्यचक्र, कुली), **नित्यानन्द महापात्र** (भंगा हाड, टूटी हड्डी), हिडमटि (मेड़ की मिट्टी), जीअन्ता मणिष (जिंदा आदमी), **रामप्रसाद सिंह** (प्रतिहिंसा, मरु का साथी, पूजा की बली) **प्राणकृष्ण सामल, सुरेन्द्र महान्ति** (अंध दिगन्त, नीलशैल, शताब्दी का सूर्य) आदि उपन्यास लेखक ओड़िया उपन्यास की गुणात्मक एवं परिमाणात्मक श्री की वृद्धि करने में समर्थ रहे हैं। **गोपीनाथ महान्ति** के उपन्यासों में ओड़ीसा के आदिवासी जीवन और मध्य वित्त शिक्षित जीवन के चित्र झलकते हैं। **कान्हुचरण, चन्द्रमणि दास** और **कमलाकांत दास** के उपन्यासों में ओड़ीसा के ग्राम्य जीवन के यथार्थ चित्र, **अनंतप्रसाद पण्डा** के उपन्यासों में मध्यवित्त वर्ग की सामाजिक स्थिति, और **रामप्रसाद सिंह** के उपन्यासों में उत्कलीय संस्कृति के अनावलोकित रूप लक्षित होते हैं। ऐसे ही **राजकिशोर पट्टनायक** के उपन्यासों में नागरिक बुद्धिजीवियों के दृश्य, आधुनिक-शैली तथा नवीन पद्धति में प्रकट हुए हैं। **हरेकृष्ण महताब** के कतिपय उपन्यासों में भारत के स्वाधीनतान्दोलन के चित्र देखने को मिलते हैं। **पर्शुराम मुण्ड** का 'उपन्यास 'मूलिया पिला' (मजदूर का बच्चा) उपन्यास उसी तरह एक साधारण जीवन का चित्र प्रस्तुत करता है। संक्षेपतः कहा जा सकता है कि स्वाधीन भारत की अनेक समस्याएँ—अर्थनैतिक दारिद्र्य, राजनैतिक-प्रतिक्रिया, व्यक्ति-जीवन की व्यर्थता, ग्लानि आदि इन उपन्यासों में सामाजिक चेतना के प्रौढ़ मनोभाव के साथ आलोचित हुई है। आधुनिक समस्याओं से जर्जरित प्रपंचपूर्ण जीवन की प्रत्येक दिशा की ओर इन लेखकों ने ध्यान दिया है। पतनोन्मुख सामंतवाद के नग्नरूप, समस्या-केन्द्रित शहरी प्रतारणा एवं प्रवंचनामय जीवन अधिकांश उपन्यासों के उपजीव्य रहे हैं। **कुंतला कुमारी पट्टनायक** ने ओड़ीसा के पारिवारिक चित्र को पारंपरिक पद्धति में अपने उपन्यास अमडावाट में अंकित किया है। इसी तरह **कल्पना कुमारी देवी** ने अपने अधिकांश उपन्यासों में दुःख तथा दर्द-कवलित मनुष्यों की सुख-दुःख की कहानियों को मर्मस्पर्शी भाषा में लिपिबद्ध किया है। ग्राम-बहुल ओड़िया जीवन की मौलिक शक्ति, प्रेरणा, दुर्बलता, व्यर्थता आदि ने इन प्रतिभाशाली लेखक-लेखिकाओं को आकृष्ट किया है। यौन-व्यभिचार तथा नग्न-यौन चित्र भी कुछ उपन्यासों में दिखाई देते हैं। १९६० ई० के समय जो नवागत युवा लेखक ओडिया साहित्य क्षेत्र में लक्षित हुए उनमें—**विभूति पट्टनायक, वामा चरण मित्र, फतुरानन्द, दशरथ सामल, शांतनु कुमार आचार्य, महापात्र नीलमणि साहु, कृष्णप्रसाद मिश्र, नरसिंह चरण साहु** आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इनकी रचनाओं में बाढ़ग्रस्त ओड़िसा के चित्र भी अंकित है। **सुरेन्द्र महान्ति** जैसे प्रतिभा-सम्पन्न लेखक स्वातंत्र्योत्तर भारत वर्ष की विफलता तथा ग्लानियों को 'अंध दिगन्त' उपन्यास में व्यक्त करने में सफल रहे हैं। ओड़ीसा की संस्कृति तथा देशभक्ति पूर्ण भाव का जीवन्त उदाहरण उनका 'नील शैल' उपन्यास है।

विश्व उपन्यास के क्षेत्र में लक्षित होनेवाली नवीन प्रवृत्ति ओड़िया उपन्यासों से बहिर्भूत नहीं है। 'चेतना प्रवाह' ने कतिपय लेखकों के उपन्यासों में प्रमुख स्थान प्राप्त किया है। 'अमावास्या का चंद्र' 'नरकिन्नर' 'लय विलय' आदि उपन्यास इसके उदाहरण हैं।

संक्षेप में कहा जाय तो **फकीर मोहन** अथवा सबुज युग की उपन्यासधारा प्रचुर परिमाण में विगत तीस वर्ष के अन्दर पूर्णतः बदल गई है। क्षुद्रगल्प तथा उपन्यास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों ही ओड़िया पाठकों के आदर की वस्तु है। टेकनीक का नयापन एवं जीवन के प्रति निबिड़ दृष्टिकोण आधुनिक कथा साहित्य के प्राणस्पन्द के रूप में स्वीकार किए जा रहे हैं। पत्र-पत्रिकाओं के प्रचलन से कथा-साहित्य की अधिक प्रगति सम्भव हुई है, यह कथन अत्युक्तिपूर्ण नहीं है।

बालकों के लिए लिखे गये उपन्यासों के लेखक **श्री भगवान पति, चन्द्रशेखर पण्डा, कृष्णचंद्र कर, चक्रधर महापात्र, नरसिंह प्रसाद गुरु, दुर्गाप्रसाद पट्टनायक** तथा **महेश्वर महान्ति** आदि अधिक प्रसिद्ध हैं। राष्ट्रीय चेतना, कुसंस्कार-ग्रस्त समाज, विज्ञान, पशु-पक्षी, खेल, आदि विषयों को लेकर स्वाधीनता के परवर्ती युग में ओड़िया शिशु-गीत का साम्राज्य समृद्ध हुआ है। विभिन्न राग-रागिणियों के साथ विविध प्रकार के लोक गीत के छंद भी इनमें सम्मिलित हैं। शिशुशीत रचयिता के रूप में **उपेन्द्र त्रिपाठी, गोदावरीश महापात्र, डा० कालीचरण पट्टनायक डाक्टर गोपालचन्द्र मिश्र, डाक्टर मायाधर मानसिंह, पुण्यप्रभा देवी, स्नेहलता महान्ति, डाक्टर कुंजबिहारी दास, रामकृष्ण नन्द, महेश्वर महान्ति** आदि उल्लेख्य हैं।

विनोद कानूनगो, उदयनाथ षडंगी डाक्टर गोपालचन्द्र मिश्र, रामप्रसाद सिंह, गोदावरीश महापात्र, विनोद राउत राय आदि लेखकों ने महामनीषी, पण्डित, वैज्ञानिक, ऐतिहासिक, जननायक आदि के जीवन वृत्तांत को बालोपयोगी शैली में प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। इसी तरह बालकों के लिए नाटक लिखने में **आनन्द शंकरदास, बासुदेव पाठी, सुधाकर दास, सुलोचना महान्ति, योगेन्द्र पट्टनायक, प्रफुल्लचन्द्र मिश्र** सुपरिचित हैं।

ओड़िया शिशु साहित्य को विकसित एवं समृद्ध बनाने में बाल-पत्रिकाओं की देन भी अविस्मरणीय है। अन्य कई शिशु-पत्रिकाओं के अलावा ओड़िसा शिशु साहित्य कमेटी की तरफ से 'शिशु लेखा' पत्रिका अनेक चित्र विचित्र एवं साजसज्जा के साथ मनोहर होकर प्रकाशित होती है।

स्वाधीनता के उपरान्त ओड़िया में नाट्य-साहित्य का भी प्रचुर विकास हुआ। स्वाधीनता के बाद जो उत्कट समस्याएँ प्रस्तुत हुईं, यथा अर्थनैतिक अव्यवस्था, पारिवारिक अशान्ति, शरणार्थी समस्या, अकाल, वे ही ओड़िया नाटक में उद्घाटित हुईं। प्राचीन पौराणिक ऐतिहासिक नाटकों की परम्परा स्थगित हो गई। रंगमंच का भी विकास हुआ।

स्वातंत्र्योत्तर ओड़िया-साहित्य में परंपरागत नाटकों का संस्कार किया वस्तुतः **कालीचरण पट्टनायक** ने। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व लिखा इनका महान सामाजिक नाटक 'भात' समग्र ओड़िसा में हलचल मचा चुका था। नाटकों में कथावस्तु का निर्णय तथा संकलन, नाट्यकला का संयोजन, रंगमंच से सम्बन्धित कला-कौशल और साज-सज्जा की नूतन टेकनीक **कालीचरण पट्टनायक** की एक अनोखी देन है। इनके अन्य नाटक हैं: फटा भूंई, बेकार, रक्तमन्दार, गर्ल स्कूल, चक्री, जयदेव आदि। बाद में जिन नाट्यकारों का उदय हुआ, वे **कालीचरण पट्टनायक** से पूर्णतः प्रभावित हैं। इन नाट्यकारों में **गोपाल छोटराय, कार्तिक घोष, भंज किशोर पटनायक, रामचन्द्र मिश्र, मनोरंजन दास** आदि का नाम उल्लेखनीय है। ये सब नाटक रंगमंच को सामने रखकर लिखे गए हैं। बेतार और चलचित्र के प्रभाव के कारण रंगमंच के विकास में अवश्य कुछ बाधा उपस्थित हुई भी, किन्तु नाट्यकारों ने इसकी चिन्ता न करके नाट्य-कला और रंगमंच की भावधारा को रचना के नये उन्मेश द्वारा बनाए रखा। इन नाट्यकारों में प्रमुख हैं—**विजय कुमार मिश्र, कार्तिक कुमार रथ, प्रफुल्ल कुमार रथ, व्योमकेश त्रिपाठी, रत्नाकर चइनि, रमेशचन्द्र पाणिग्राही** और **अक्षय महान्ति, मनोरंजन दास** के 'वनहंसी' और "अरण्य फसल" नाटक में चरित्रों के मानसिक संघर्ष का चित्रण है। **विजय मिश्र** का 'शववाहक मनि' और **'अक्षय महान्ति** का 'संवित' नाटक भी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

एकांकियों के विकास में आकाशवाणी का अवदान स्पष्ट है। ओड़िया के एकांकी-संग्रहों में **प्राणबन्धु, गोपाल छोटराय, हरेकृष्ण महताब, गोपाल चन्द्र मिश्र, सुरेन महान्ति, नरसिंह महापात्र, हिमांशु भूषण साबत** आदि के संग्रह महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वाधीनता प्राप्ति के उपरान्त राजनीति, अर्थनीति, विज्ञान और संस्कृति से साधारण जीवन काफी प्रभावित हुआ है। चेतना का धरातल अन्तर्राष्ट्रीय हो जाने से प्रभावित साहित्य-समीक्षा के सिद्धान्त भी बदले। संस्कृत-शास्त्र की आलोचना प्रणाली को जगह नूतन आदर्श प्रतिष्ठित हुए। पाश्चात्य साहित्य का प्रभाव और उसका प्रसार विशेष रूप से आलोचना के क्षेत्र में दिखाई दिया। मूल्यांकण की दृष्टि वस्तुनिष्ठ हुई। केवल ऐतहासिक या परिचायात्मक आलोचना के स्थान पर विश्लेपण-धर्मी आलोचना के साथ तुलनात्मक आलोचना के मानदण्ड स्थापित हुए। नव्य आलोचना के क्षेत्र में **डा० कुंजबिहारी दास, प्रहलाद प्रधान, डा० जानकी बल्लभ महान्ती, डा० नरेन्द्र नाथ मिश्र, डा० कृष्ण चरण बेहेरा, डा० विचित्रानन्द महान्ति, डा० नटबर सामन्तराय, डा० बासुदेव साहु, डा० धनेश्वर महापात्र, डा० गोपाल चन्द्र मिश्र, डा० बेणी माधव पाडि, डा० श्रीनिवास मिश्र, डा० कान्हुचरण मिश्र, डा० वंशीधर महान्ति** आदि के नाम ओड़िया प्रबन्ध और आलोचना साहित्य में महत्वपूर्ण हैं। इनके अलावा **रत्नाकर पति, विपिन बिहारी राय, शशिभूषण राय, नीलकंठ दास, गिरिजा शंकर राय, कालिंदी चरण पाणिग्राही, अन्नदा शंकर राय, कालिया पाणिग्राही, हरेकृष्ण-महताब, वंशीधर सामंतराय, मायाधर मानसिंह, परमानंद आचार्य, कृष्णचंद्र पाणिग्राही, सत्यनारायण राजगुरु, केदारनाथ महापात्र, नित्यानंद महापात्र** आदि आलोचक भी बराबर लिखते रहे हैं।

जीवन-चरित्र साहित्य एक देश या जाति के लिए महान तात्पर्यपूर्ण साहित्य है। यद्यपि ओड़िया में जगन्नाथ चरितामृत, चैतन्य चरितामृत आदि जीवन-चरित्र पहले से विद्यमान हैं किन्तु जीवनी-साहित्य का वास्तविक प्रारम्भ स्वातंत्र्योत्तर काल में ही संभव हुआ है।

गोपबंधु, फकीर मोहन, वैष्णव पाणि, गोपाल चंद्र प्रहराज, ब्रजसुन्दर दास, बिच्छन्द पटनायक आदि के संस्मरणों में न केवल उनका जीवन-चित्र प्रकाशित हुआ है, बल्कि ओड़िया साहित्य और संस्कृति का चित्र भी प्रकाश में आया है।

सुरेन्द्र महांति के उत्कल-गौरव मधु-सूदन के चरित्र पर आधारित उपन्यास 'शताब्दीर सूर्य' के अलावा **नंदकिशोर दास** का 'उत्कल गौरव मधुसूदन', **पं० सूर्यनारायण दास** का 'देश प्राण मधुसूदन', **जानकी बल्लभ पटनायक** का 'गौतम बुद्ध' और **डा० गोपाल चंद मिश्र** का 'टालसटाय और गान्धी' भी बड़ी समर्थ रचनाएं हैं। इसके अतिरिक्त कवि **कालिंदी चरण पाणिग्राही** का 'भक्त कवि मधसूदन' **चिंतामणि दास** का 'भक्त कवि-जीवन समीक्षा', **असित कवि** की 'गंगाधर जीवनी', **अनंत पद्मनाभ पटनायक** का 'कवि सम्राट उपेन्द्र भंज' **नित्यानंद शतपथी** का 'हे साथी, हे सारथि' आदि का नामोल्लेख भी किया जा सकता है।

पं० नीलकंठ दास की 'आत्म जीवनी', **गोदावरीश मिश्र** का 'अर्द्ध शताब्दीर ओड़िसा ओ तहिरे मोर स्थान', **लक्ष्मीनारायण साहु** का 'मोर बाखुला जीवन', **रामकृष्ण नंद** का 'जीवन तरंग', **उदयनाथ रथ** का 'जीवन पथे', **पवित्र मोहन प्रधान** का 'मुक्तिपथे सैनिक', **मायाधर मानसिंह** का 'शिक्षाविद्र गाथा' **कालीचरण पटनायक** का 'कुम्भार चक,' **कुंजबिहारी दास** का 'मो काहानी' आदि कतिपय आत्म जीवनियां भी प्रकाशित हुई हैं।

स्वातंत्र्योत्तर सर्जनात्मक ओड़िया-साहित्य की यही संक्षिप्त रूपरेखा है। इस काल में मनुष्य के भावनात्मक-क्षितिज का कई दिशाओं में विकास हुआ है, और सजग ओड़िया साहित्यकार सभी दिशाओं को नाप लेने के लिए आतुर हैं। किसी भी साहित्य के लिए यह एक शुभ लक्षण है।

—डा० गोपालचंद्र मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्धारुआ/सुरेन्द्र महान्ति

गले में अस्थि की माला। दाँत में तिनका दबाए हुए। जीभ रखते हुए भी तोतली बोली में पहले प्रभात घर-घर जाकर भिक्षा माँगने लगा।

गहन अन्धकार के बीच अपने मोटे तथा काले दोनों दाँत ऊपर उठाकर गाँव की सीमा के नजदीक बैठकर वह पहले गरजते हुए सबों को अपने मन की बात कहने की चेष्टा करता है। अनेकों बहानों के द्वारा वह ग्राहकों की कमर से एक आध पैसा लेने के लिए बढ़ रहा है। कोई देता है। कोई मुँह मोड़कर चला जाता है। अधिकांश उसको और उसके दाँत को दिखाकर खिलखिला कर हँसते हैं चिढ़ाते हैं। वह पहले मिट्टी उलटता है। बालों को बिखरा कर हाथों से इशारा कर जाने क्या क्या बोलता है। सभी कहते हैं, बहाना कर रहा है।

उसका काला शरीर, फटा वस्त्र, फूली तथा चौड़ी छाती, अन्धेरी रात के साथ मिलकर कुछ मालूम नहीं पड़ता। जिद्दी बच्चे को, खीर नहीं खाने पर माताएँ भय का प्रदर्शन करती हुई कहती हैं, वह वहाँ अन्धारुआ आ गया। गाँव की सीमा में बैठकर जीभ दिखा रहा है।

वह पहले पुरी जाएगा। रास्ते में शाम होने पर निकट के गाँव में रात्रि के लिये रुक जाता है। सूर्यास्त होने के पहले कुछ खाने के पश्चात किसी के बरामदे में पुआल बिछाकर अपने शरीर को फैलाकर लेट जाता है। वह जिस गाँव में जाता है, उस गाँव में शोर मच जाता है कि अन्धारुआ का आगमन हो गया है। उसके पीछे-पीछे लड़के बोली मारते हुए चलते हैं, घूमते हुए कुत्ते भी भौं-भौं करते हुए उसे आतंकित करते हैं। फिर सूँ-सूँ करते हुए उसके पैरों के बीच में ऊपरी भाग को सूँघ लेते हैं।

अन्धारुआ दिन भर रास्ता तय करता है। और सन्ध्या की बेला में भीख माँगता है।

अनु० : पंकजिनी मिश्र

(पृष्ठ २ का शेषांश)

शती से पहले क्यों नहीं स्पष्ट हो सका, इसके कारणों की खोज दिलचस्प हो सकती है। तब भी एक बात स्पष्ट है, तेरहवीं शती के बाद स्थापत्य-कला की वह परंपरा जब अवरुद्ध हो गई तो वह साहित्य के माध्यम से पुनः प्रकट हुई। ओड़ीसा के प्रथम जातीय कवि सारलादास का काल कोई १३२८-५२ ई० बताते हैं और कोई १४३५-३७ ई०।

ओड़िया साहित्य का आधुनिक युग भारत में अंग्रेजों के आगमन से उत्पन्न परिवर्तनों के साथ प्रारम्भ होता है। विशिष्ट लेखकों और प्रवृत्तियों के नाम पर इस युग के भी उपभेद प्रसिद्ध हुए हैं, जैसे राधानाथ-युग, गोपबन्धु-युग या सत्यवादी युग, रोमाण्टिक युग, सबुजयुग और प्रगतियुग या अत्याधुनिक युग। आगे का इतिहास तो प्रस्तुत अंक के सम्पादकीय में सम्बलपुर विश्वविद्यालय में ओड़िया-विभाग के अध्यक्ष और ओड़िया-साहित्य के प्रतिष्ठित साहित्यकार डॉ० गोपालचन्द्र मिश्र ने अपने अग्रलेख में स्पष्ट किया ही है। हम उन्हें, इस अंक के अन्य लेखकों और अनुवादकों को धन्यवाद देते हैं कि उनके सक्रिय सहयोग से पाठकों के हाथों में यह समस्त सामग्री पहुँच पाई है। भाषा के बावजूद साहित्य की कोई पृथक जाति नहीं होती। वह तो 'सहितता' का भाव है। भाषा केवल उसका परिवेश है। विदेशी भाषा के परिवेश में हमें भिन्न संस्कृति का भी दर्शन हो सकता है, किन्तु सहितता के स्वभाव की आत्मा तो सर्वत्र एक है। और यहाँ तो यह एकात्म भारतीय संस्कृति के साहित्य-रूप की ही उपासना है :

—स० ओझा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मधुमत्ता की रात / सुरेन्द्र महान्ति

'उसके बाद नग्न शरीर में समस्त संकोच को परित्याग कर मधुमत्ता ने मुझे प्रगाढ़ आलिंगन में आबद्ध कर, शराबी श्वासों से मेरा कण्ठावरोध करते हुए मुझ से कहा—"मुझे पुनः जन्म दो शमण ! मैं चाहती हूँ। इस मरणशील शरीर को लेकर फिर से एक बार नया जन्म पाने के लिये लालायित हूँ !"—किशा ने कहा, 'उसके बाद मुझ से और कुछ जिज्ञासा नहीं करना उत्पल। उस दिन से मैं और विदेह को वापस नहीं गई। उस दिन के कलंक की कालिमा को मिटाने के लिये कठोर व्रत और तपस्या कर रही हूँ। किन्तु तुम कह सकोगे उत्पल, किस कामना से मधुमत्ता चाह रही थी पुनः जन्म ?'

धीरे-धीरे धूमिल होते हुए चन्द्रमा के प्रकाश की ओर देखता रहा उत्पल ! किशा ने ही कहा—ऐश्वर्य और प्रवृत्ति के कारागार में आजीवन बन्दिनी रहकर मधुमत्ता शायद कामना कर रही थी एक ग्रामहीन जनपद के अख्यात तथा अज्ञात कोने में किसी एक सामान्य कुटिया के सफेद आँगन की !'

उत्पल ने पूछा—'पुनर्जन्म है किशा ? मैं भी चाहता हूँ पुनर्जन्म।'

किशा ने कहा—'किन्तु क्या तुम निर्वाण के अभिलाषी नहीं हो उत्पल ? शमण की फिर पुनर्जन्म के लिये आकांक्षा ?'

उत्पल ने कहा—'तुम भ्रान्त हो किशा ! जीवन यदि मोह-ग्रस्त है, माया-मय है,— बुद्धिग्रस्त मन की परिकल्पना मैं भी चाहता हूँ। पुनर्जन्म—किन्तु पुनर्जन्म नहीं है, नहीं है। यह—प्रियंगुवीचिका के पत्र-शीर्ष से यह जो रात विदा लेती है,- वह फिर लौटेगी नहीं। तुम मिथ्यावादिनी हो किशा। तुम ठग, तुम मिथ्याचारिणी हो। मुग्धा मधुमत्ता को तुमने मिथ्या कहा है।'

उत्पल आँधी के समान वहाँ से उठकर चला गया। पश्चिम क्षितिज में ज्योत्स्नालोक मन्दगति अस्तमित हो रहा था। लज्जा-वंती उषा के राग रंजित कपोल के ऊपर धीरे-धीरे कुहरे का घूँघट गिर रहा था।

अशोक कुंज के झुरमुट में प्रभात-कालीन पक्षियों के कण्ठ से वैतालिक का गान प्रगट हो उठता था। किशा मूर्ख की तरह देख रही थी ·····उत्पल अवहेलित होकर दण्ड और कमण्डलु को बगीचे में फेंककर फटे कपड़ों से सारा शरीर ढ़ँककर आजीविका परित्याग कर चम्पा के राजपथ में चल पड़े।

अनु० : पंकजिनी मिश्र

टाइप फोर / अनंतप्रसाद पण्डा

रमेश बाबू सेक्रेटेरियट में काम करते हैं। कटक शहर की एक गली के अन्दर उनका घर है। ईंट से जुड़ी दीवार, फर्श पक्का, ऊपर छप्पर। कितने काल से दीवार पर सफेदी नहीं हुई है। लेकिन उस टीले के भीतर यही घर सबसे अच्छा घर कहा जा सकता है। घर के बगल में साइकल मरम्मत करने वाले की झोपड़ी लगी हुई है। एक तरफ को दीवार गिर चुकी है। बाँस के ऊपर मिट्टी लगाई गई थी, जो कि कब की गिर चुकी है। बाँस सभी स्पष्ट नजर आ रहे हैं। उसके एक ओर गाड़ीवान कालू खाँ का घर है, सिर्फ एक कमरा। उसके अधिकतर हिस्से में कालू खाँ के चितकबरे दोनों बैल रहते हैं और आधे हिस्से के दो भाग किये गये हैं—एक में रसोई होती है और एक कालू खाँ के सोने का घर। उसके दूसरी तरफ वरा गुलगुला का घर। उसकी अवस्था भी वैसी ही। छप्पर से आधे फूस उड़ चुके हैं। दिन को धूप और रात को तारे नजर आते हैं। इस तरह कितने रोजगार करने वालों के घर उसी टोले में हैं, किन्तु उनके बीच एकमात्र बाबू हैं रमेश बाबू।

अनु० : अमरेन्द्र नारायण यादव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोरैया की लघु कथा / अच्युतानंद पति

उड़ते समय चिड़िया का पैर एक छोटी-सी भूला के जाल में धोखे से फँस गया। वह अचानक उसी में उलझ गई। चोंच में छोटे से फूल लगे तिनके को मुँह में पकड़े हुए नीचे गिर पड़ी। प्रतिभा उद्दण्ड शिकारी की भाँति शिकार को अपने चंगुल में आये देखकर उसपर बाज की भाँति झपट पड़ी। उसकी आँखों से निकली क्रोध की अग्नि मानों उसे जला देना चाहती थी। कभी उसके नेत्रों में दया भाव देखकर मैंने अनेक बार अपनी सुध-बुध खो दी थी। आज उसके क्रोध से जलते हुए नेत्रों को देखकर मेरा पुरुषत्व सशंकित हो उठा। उसके बाद सैकड़ों सिंहों के पराक्रम की भाँति वह हाथ में लाठी लेकर धीरे-धीरे आगे बढ़ी। चिड़िया मुक्त होने के लिए कठोर प्रयास कर रही थी। किन्तु वह संघर्ष ही मृत्यु का कारण बना। भूला के घूम जाने के फलस्वरूप वह पूर्ण रूपेण उसमें फँस गई। अत्यन्त व्याकुल होकर चीत्-कार करते हुए अपने पंख और चोंच के सहारे वह फाँस मुक्त होने का अभी भी अथक प्रयास कर रही थी। प्रतिभा प्रतिशोध भाव से उत्पन्न आनंद से उल्लसित होकर प्रतिशोध के लिए आगे बढ़ रही थी। शायद वह चिड़िया की निर्दयता पूर्वक हत्या करेगी। मेरी आँखों से लगा जैसे जुगनू निकल पड़ा। अचानक दौड़कर मैंने प्रतिभा के हाथ को थाम लिया 'यह क्या करती हो ? इस बेचारी को मत मारो वह माँ बनने वाली है। देखती नहीं हो वह तिनके को पकड़ घोंसला बनाने के लिए कितने आग्रह के साथ आ रही थी ? अण्डा देने के पहले चिड़ियाँ अपने बच्चों की सुविधा के लिए लकड़ी तथा कागज के टुकड़ों को संग्रह कर घोंसला बनाती हैं। तुम माँ जो हो। तुम बच्चे के बारे में सोचती नहीं हो ?' कहते-कहते मैं थूक घोटने लगा। मेरा मुँह करुणा से रो उठा।

प्रतिभा ने मुझे केवल बकझक करते हुए देखा, उसके हाथ से लाठी नीचे गिर पड़ी। प्रतिभा ने दौड़ते हुए अपने शिशु को गोद में लेकर छाती से लगा लिया।

अनु० : पंकजिनी मिश्र

खुशामद के पक्ष में / स्व० बामाचरण मित्र

पत्नी और प्रेमिका की खुशामद करना एक सम्पूर्ण अलग कला और विज्ञान, तथा कठिनतम कला और विज्ञान है। इस विषय में यह अधम जो कुछ जानता है कहेगा। फिर भी यहाँ इतना कह दूँ कि पत्नी की खुशामद करने के विषय में मेरा प्रत्यक्ष ज्ञान है, कारण दुर्भाग्य से हो या सौभाग्य से हो, आज से तीस वर्ष से मेरी एक पत्नी है। लेकिन प्रेमिका के विषय में प्रत्यक्ष ज्ञान बिल्कुल नहीं है, कारण मेरे जीवन में कोई प्रेमिका आई ही नहीं। अतएव एक प्रेमिका पाने के लिए इस ब्रह्म ने क्या नहीं किया ? और जिन्होंने पाया भी है उन्होंने अधिक किया ही क्या है ? प्रेमिका को आकर्षित करने के लिए यह ब्रह्म श्रेष्ठ खिलाड़ी बना, काठजोड़ी में जिस समय भयानक बाढ़ आई हो, इधर से उधर तैरा, गीत गाना सीखा, खींचतान कर साहित्य का निर्माण किया, और प्रेमिका मिलने पर उसी से शादी करने की इच्छा रख कर यौवन बिता, तीस वर्ष की आयु में निराश हो विवाह किया। फिर भी किसी ने दृष्टि-पात तक किया नहीं। न देखें, सब की सब वाहियात हैं। यदि आती तो तुम्हीं लोगों ने योग्य पति पाया होता। इस ब्रह्म का क्या हो गया होता ? सुनूँ तो सही ! अतएव प्रेमिका को खुशामद करने का सुयोग न मिलने के कारण इस कला के विषय में मेरा सीधा सलख ज्ञान नहीं। फिर भी विज्ञान के विषय में किताब पढ़कर और संगी साथियों से सुनकर थोड़ा बहुत जानता हूँ। इसलिए इसके बारे में आपलोगों को चौधरी महाशय अथवा ट० सं० बतला सकते हैं।

अनु० : अमरेन्द्र नारायण यादव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कोठरी' / विजयकुमार मिश्र

पात्र परिचय

जार्ज—४०-४१ वर्ष का प्रौढ़। अविवाहित। अभिज्ञता की मार खा-खा कर अभिज्ञ। किसी एक गैर सरकारी फार्म का हेड असिस्टेण्ट।

जेकब—बेकार युवक। दो वर्ष हो चुके इतिहास में एम० ए० किये। उम्र २८-२९ वर्ष।

नवीन—अपर डिविजन क्लर्क, विवाहित। तीन बच्चों का पिता। उम्र ४०-४१ वर्ष। और

सामुएल—जर्नलिस्ट। उम्र-४५ वर्ष के करीब। निर्लिप्त और निरासक्त।

(मंच के आलोकित होते ही पीछे की ओर काले पर्दे पर एक परचा 'कोठरी' झूलता हुआ नजर आता है। दोनों तरफ के विंग्स में यथाक्रम उत्तर दक्षिण लिखा हुआ है। दो विपरीत दिशाओं से जार्ज और सामुएल प्रवेश करते हैं।)

जार्ज—(सामुएल को थोड़ी देर देखने के बाद) आप।

सामुएल—हां। मैं भी।

जार्ज—आपका परिचय ?

सामुएल—क्या प्रयोजन ?

जार्ज—(हल्के भाव से) नहीं, ऐसे ही···

सामुएल—मैं सामुएल पात्र। जर्नलिस्ट।

जार्ज—मैं जार्ज पटनायक। कॉमर्शियल इन्टरप्राइज में हेड असिस्टेन्ट।

सामुएल—जरूरत नहीं।

जार्ज—क्या ?

सामुएल—(अनासक्त भाव से) यही, आपका परिचय।

जार्ज—(आश्चर्य से) आप सामाजिक प्राणी हैं या·····?

सामुएल—रोबिन्सन क्रूसो बनने की मेरी इच्छा अथवा आकांक्षा नहीं।

जार्ज—तो फिर।

सामुएल—एक ही ख्याल। अकेले जीने का एक मोह। अलग रहने का एक व्यसन।

जार्ज—लेकिन आत्मकेन्द्रित मनोवृत्ति समाज के लिए क्षतिकारक हो सकती है।

सामुएल—हो सकती है, लेकिन मैं एक कठपुतली हूँ (थोड़ा ठहर कर) दोष नचाने वाले का, मैं नाचने वाला हूँ।

जार्ज—(प्रसंग बदलकर) यहाँ कैसे ?

सामुएल—मैं भी यही प्रश्न करने वाला था आपसे।

जार्ज—(कुछ देर सोचकर) ओह। ठीक कह नहीं सकता।

सामुएल—क्या मतलब ?

जार्ज—शहर के नजदीक एक साधारण घर में एक आदमी के पास रात भर के लिए सोया था। (थोड़ा रुककर) हठात एक स्वप्न देखा।

सामुएल—क्या स्वप्न ?

जार्ज—कोई अदृश्य शक्ति मुझे उठाकर लिये जा रही है।

सामुएल—उसके बाद।

जार्ज—(खीझकर) उसके बाद और क्या ? नींद टूटने के बाद अपने आपको यहाँ पाया।

सामुएल—उसके बाद आपने क्या किया ?

जार्ज—रोया। अपना आवरण छूट जाने के कारण, साम्राज्य खण्ड हो जाने के कारण रो-रो कर विकल हो इधर-उधर दौड़ा।

सामुएल—बहुत इन्ट्रेस्टिंग है।

जार्ज—हर तरफ दीवार ही दीवार। किन्तु ये आँखों से देखी नहीं जा सकती, मात्र इनका अनुभव किया जा सकता था।

अनु० : अमरेन्द्र नारायण यादव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यौवन की वापसी / डॉ. कृष्णप्रसाद मिश्र

'जीवन है या नरक-निवास ? दीर्घ यंत्रणा है।' कुंजनाथ ने कहा।

'छिः। ऐसे जीवन पर थूकता हूँ!' भूतपति ने योग दिया।

'सुबह उठो, तो वही घर, वही रास्ते में फैलता नाली का गंदा पानी, वही काठजोड़ी नदी, वही दुर्गन्ध, वही रिक्शावाला।'

'मेरी और ज्यादा उमर भी नहीं है। वही स्त्री, वही बाल-बच्चे वही कोर्ट, वही मुकदमेबाजी करते-करते जीवन रेखा छोटी हो आई।'

'एक दिन नहीं, छह महीना नहीं, वर्ष नहीं—वर्ष के बाद वर्ष, बयालीस साल बीत गये एक ही जगह पर। ले-देकर कभी पुरी, नहीं तो सम्बलपुर या फिर ब्रह्मपुर। आदमी ऊब नहीं जायेगा इस जीवन से ? इसे ही जीवन कहते हैं ?' पूछा था भूतपतिनाथ ने एक दिन काठजोड़ी के किनारे किनारे शाम को टहलते समय।

'तुम्हारी उम्र क्या होगी ?'

'गत दिसम्बर में बयालीस पूरे हो गये। तुम्हें ?'

'मैं तुमसे नौ महीने बड़ा हूँ। इसका मतलब हमलोगों के अस्थाई जीवन के और दस-बारह वर्ष शेष समझ लो।'

'हाँ, दस-पन्द्रह नहीं, तो बीस-पचीस समझो, उससे अधिक नहीं। सच, कुछ तो किया जाना चाहिए। एक तो मिला जीवन, वह भी इतना घटना-विरल हो जाएगा, किसने सोचा था ? स्कूल में पढ़ते समय कितनी-कितनी कल्पनाएँ की थीं ? कुछ याद है, भूतपति ? तुम्हीं तो कह रहे थे ग्रीनलैंड जाकर एस्किमो लड़की से शादी कर उसके साथ में कुछ दिन बिताने की इच्छा है।'

'ग्रीनलैंड ही क्या, जिसकी खोज थी, उसे ही पा जाते, तो कितनी बातें हो जातीं।'

भूतपति की बात के बाद दोनों हठात् चुप हो गए। पुरानी स्मृतियाँ मानों उनके सामने आकर पैरों से लिपट गई हों। ललिता भूतपति की प्रेमिका और उसके बाद जो कुछ हुआ—

भूतपति चलते-चलते अचानक सींग से बनी छड़ी रास्ते पर टेककर खड़े हो गये।

'कुंजनाथ।'

'क्या बात हुई ?'

'अभी समय है। जीवन को व्यर्थ नहीं होने देंगे। चलोगे ?'

'कहाँ ?'

'आज अखबार में छपा है कि हिल स्टेशन जाने के लिए रेलवे कंसेशन मिलता है। ज्यादा पैसे भी नहीं लगेंगे। चलो, किसी हिल स्टेशन पर जाकर मन के सारे अरमान पूरे कर आएँ।'

कुंजनाथ ने हाँ-ना कहे बिना ही भूतपति को कसकर आलिंगन में बाँध लिया।

'वाह क्या प्रस्ताव है! कटकचंडी की दया से, बस, हो जाए।'

'राजी हो ?'

'हाँ, हाँ। मेरे मन की बात ही कह डाली तुमने तो।'

'तो मैं सारी व्यवस्था शुरू करता हूँ।'

'हां. ताकि दस-पन्द्रह दिन में निकल पड़ें। पर देखो, इस बात की खबर घर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में किसी को न हो। पन्द्रह दिन के लिए चलेंगे। यह घर, यह संसार, इन सबकी बातें दस-पन्द्रह दिन के लिए भूल जाएँ। जीवन के ये पन्द्रह दिन ही सार्थक बनें।'

भूतपति का प्रस्ताव अमल में लाया गया। कटक की शहरी आबोहवा से संतप्त वे दोनों सज्जन अपने परिवार के लोगों को कह गए कि कलकत्ता जा रहे हैं, लेकिन उन्होंने सियालदा से लखनऊ की ओर जाने वाली पठानकोट एक्सप्रेस पकड़ी। किसी यार-दोस्त को भी खबर नहीं। वैसे भी शहर में क्यों कोई याद रखेगा ? सब अपने काम में डूबे हैं। पठानकोट एक्सप्रेस के स्लीपर कोच में अनजान लोगों के बीच भारत के अनेक भाषा-भाषियों की किचिर-पिचिर में ये उन्मुक्त होकर ओड़िया में बातें करने लगे। पुरी एक्सप्रेस में या कलकत्ता में वह संभव न था, क्योंकि वहां कोई ओड़िया-भाषी मिल सकता था, वह पहचान लेता, सुन लेता, कटक जाकर कहता-है रे, वह फलाँ वकील बच्चों की तरह कर रहा था। नहीं तो कहेगा— सुनते हो, फलाँ प्रोफेसर तो साला एकदम लफंगा है। पर वह डर पठानकोट एक्सप्रेस में कहाँ ? अतः····· कटक। कटक भी कोई शहर है ? कटक शहर मुर्दाबाद····कटक मुर्दाबाद। सुभद्रा और पार्वती ये लोग क्या आदर्श पत्नियाँ हैं ? उनके आदर्श से हमारा क्या आता-जाता है ? धत् तेरी की, सुभद्रा····पार्वती पंद्रह दिन के लिए ही सही, मुर्दाबाद····मुर्दाबाद। वकालत और प्रोफेसरी, ये भी कोई धंधे हैं ? भाड़ में जाएँ ऐसे धंधे !

कंपार्टमेंट में बैठे लोग इन दो प्रौढ़ सज्जनों का आचार-व्यवहार देखकर अचंभित और अवाक थे। हर स्टेशन पर खाने-पीने की चीजें खरीदी जा रही हैं··· भूतपति का कहना है कि लम्बी यात्रा में खाली पेट रहना ठीक नहीं है। पेट सदा भरा रहना चाहिए—'ऐ चायवाले। दो कप चाय लाओ। लो भई, चाय पियो। हम टूरिस्ट आदमी हैं। ऐ पानवाले, दो पान। एक सादा, बिना चूने का और एक बिना कत्थे का जर्देवाला।' पान मुँह में गया नहीं कि आवाज सुनाई पड़ी— 'दही-बड़े। अच्छा, लाओ आठ आने के दही-बड़े।'

'दोस्त। जिन्दगी इसी का नाम है। खाओ, पियो, मौज करो। भूतपति ने होठों से दही पोंछते हुए पता नहीं क्या सोचा और शरीर से कमीज-बनियान निकाल डाले। पिछले स्टेशन पर एक पंजाबी जोड़ा कंपार्टमेंट में आ गया था। स्त्री का शरीर कसा और भरा हुआ था। वह चंपकलता-सी थी।

भूतपति को कमीज निकालते देखकर कंपार्टमेंट के लोग आश्चर्य में भर गए। उनके मन में कौतूहल था कि आखिर ये हैं कौन ? कितने उत्साही, कितने सुखी दिखते हैं ?

भूतपति छाती फुलाकर कह रहा था, उस समय पंजाबी जोड़े में से स्त्री की दृष्टि उसकी रोयेंदार मांसल छाती पर टिकी थी—'कुंजनाथ, हिल स्टेशनों में नैनीताल सर्वश्रेष्ठ हैं। नैनी की तुलना में ऊटी, दार्जिलिंग, शिमला कुछ नहीं है। जो हो, इतने दिन बाद हम जीवन में कुछ करने जा रहे हैं।'

'और भी कुछ है, यार, और भी कुछ···'कुञ्जनाथ कोई गुप्त रहस्य खोलता सा भूतपति की ओर सीट पर झुककर बोला···"नैनीताल में नाइट क्लब होने की संभावना है जहाँ जीवन की क्लांति नृत्य के एक-एक ताल पर मिट जाती है। वहाँ नाइट क्लबों में बिजली की तेज रोशनी की जगह होता है मोमबत्ती का धुँधला प्रकाश, जो अजीब परिवेश बनाता है। उसी धूप-छाँव से वातावरण में तन्वंगी परिचारिकाएँ तुम्हारे आस-पास मँडराती रहेंगी, तुम्हें खाना-पीना देती हुई। वहाँ जाना ही होगा।'

भूतपति ने उच्छ्वसित होकर कहा— 'लाइफ ! वाह, क्या जिन्दगी है !'

अंधकार को चीरती हुई, कोयले का चूरा उड़ाती हुई, उल्का उड़ाती हुई चली जा रही है एक्सप्रेस गाड़ी—मृत्यु से जीवन की ओर, कटक से दूर, नैनीताल की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर ·····नैनीताल की ओर·····

इंडिया होटल के दो-मंजिल वाले कमरे में खा-पीकर कुंजनाथ और भूतपति सो गए आराम से, भूतपति के निर्देशानुसार खाओ-पियो-सोओ। शरीर स्वस्थ रहेगा, तभी तो भोग कर सकोगे।

जब कुञ्जनाथ उठा, तब तक भूतपति बिस्तर से उठ चुका था और झरोखे के पास मुँह ले जाकर रास्ते की ओर देख रहा था।

'बड़ी जल्दी उठ गए ?'

'बिलकुल नींद ही नहीं आयी।' अनासक्त होकर भूतपति ने कहा।

'क्यों ?' कुञ्जनाथ बिस्तर पर बैठ गया। रास्ते की थकावट दूर हो गई थी। अब तो उछल-कूद करने की इच्छा हो रही थी।

'सड़क पर कोई युवती जा रही है।'

'यहाँ तो सारा शहर इन युवतियों से ही भरा है—किसी एक युवती को क्या बात···'

तेरह साल पुरानी बात याद आ गई। ललिता के साथ इस युवती की समता देखकर मैं चौंक उठा।'

भूतपति तेरह वर्ष पूर्व ललिता को दिल से प्यार करता था। यह बात कुञ्जनाथ को मालूम है। ललिता सुन्दरी थी।

'तब तो अच्छी बात है। तुम्हारी मनोकामना यहीं तेरह साल बाद पूरी होगी। पर वह युवती गई कहाँ ?'

'पहाड़ के ऊपर वाले होटल में—होटल एवरेस्ट।'

'तब ठीक है, उसके साथ तुम मित्रता करो, गप-शप करो। उसे तुम अपनी पुरानी प्रेमकथा सुनाओ। उसके हृदय में सहानुभूति पैदा करो। नारी करुणामयी होती है।'

'कुञ्जनाथ, तुम्हें मजाक सूझ रहा है। ललिता के बिना मेरी जिन्दगी व्यर्थ हो गई। पार्वती ललिता का स्थान न ले सकी।' कहते-कहते भूतपति मानो थक-कर चूर हो गया। बिस्तर पर लेट गया।

'अच्छा, यह बात काठजोड़ी नदी के किनारे पर ही कर लेते तो क्या न चलता ? यहाँ क्यों आए ?'

भूतपति गुस्से में भरकर बोला, 'आदमी अपने अतीत को भूल नहीं सकता, फेंक नहीं सकता।'

'पर पंद्रह दिन के लिए हम वही करने आए हैं। सब कुछ इतनी जल्दी भूल गए ?'

कुंजनाथ की बात पर भूतपति खड़ा हो गया। ललिता को उसने तेरह साल पहले फेंक दिया है। और नैनीताल आए हैं अपने तेरह साल के सामान्य घटनाविहीन जीवन की प्रतीक 'पार्वती' को फेंकने ! अब पीछे हटने से नहीं चलेगा। माल रोड पर अनेक जोड़े ! असंख्य स्त्री-पुरुष। ओड़ीसा से आए दोनों उनकी ओर ईर्ष्या से देखते-देखते चल रहे हैं।

भूतपति ने कहा—'कुंजनाथ, तुम अभी क्या सोच रहे हो, मैं बता सकता हूँ।'

अच्छा।'

'तुम सोच रहे हो कि अपनी स्त्री को लाकर इस तरह सजाकर माल रोड पर घूमते ! मुझे साथ लाकर तुमने भूल की है।'

'नहीं-नहीं. मैं तो सोच रहा था कि मेरी जगह तुम्हारे साथ ललिता या पार्वती होती, तो कितना अच्छा होता !'

'पार्वती नहीं, ललिता !'

बात फिर कटक की ओर ढलती देख कुञ्जनाथ सतर्क हो गए।

'अब प्रोग्राम बनाया जाए। यहाँ जितने दिन रहें, आराम से रहेंगे।'

कुञ्जनाथ की बात पूरी भी न हुई थी कि चार घोड़ों में तीन पर युवतियाँ और चौथे पर एक किशोर झील के बराबर वाले रास्ते पर गैलपिंग करते चले गए।

'भूतपति।' व्याकुल से कुञ्जनाथ ने मौन तोड़ा।'

'हूँ।'

'देखा जीवन ? इस जिन्दगी की तुलना में हम क्या हैं ? पोखर के पानी की तरह हम कटक में सड़ नहीं रहे थे बँधकर ? कभी देखा था ऐसा दृश्य ? घोड़े मस्त ! उनके सवार भी मस्त !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जीवनी शक्ति के कारण सब मस्त ! ऐसी शक्ति चाहिए। ऐसी शक्ति हम में है ? ऐसी शक्ति हो तो आदमी पाप-पुण्य की परवाह नहीं करता। ऐसी मस्ती ऊबड़-खाबड़, ऊँच-नीच कुछ नहीं मानती। वैसी स्त्री, वैसा चेहरा, सुग्गे-सी नाक, कमल की पाँखुरी-सा रंग—ऐसी युवती से विवाह करते तो हमारा जीवन और ही दिशा की तरफ गति न करता ?'

घोड़ों की तेज टाप ने भूतपति को भी काफी प्रभावित किया था।

'हाँ, मैं अनुमान कर सकता हूँ। देखो-देखो, वे दूसरे राउंड पर हैं।'

कुञ्जनाथ ने देखा। तीर की तरह वे चले जा रहे हैं। शरीर घोड़े की पीठ छूता है कि नहीं, फिर ऊपर उठ जाता है। आते हैं··· दौड़ा ले जाते हैं··· ये आए, सारे शरीर से शक्ति फूट रही है। रास्ता काँप रहा है—टपा-टप टपा-टप···ये लो आ गए···आ···चले गए।

भूतपति को लगा, स्वयं घोड़ा चला रहे हैं। उसने पूछा—क्या, हम भी घोड़े पर चढ़ें ?'

'अवश्य चढ़ेंगे। हम घोड़ों को उनसे भी तेज हाँकेंगे। वे यदि नए-नए नैनी में आकर घोड़े को इतने जोर से हाँक सके, तो हम क्यों नहीं हाँक सकेंगे ? कल शाम को उनके साथ हमारी प्रतियोगिता होगी।'

'पहले कभी घोड़े पर चढ़े हो ?'

'नहीं।'

'तो चलो, आज थोड़ा अभ्यास कर लें। आज से अभ्यास करेंगे, तभी तो कल जोर से हाँक सकेंगे। जहाँ ये चंचल युवतियां दो दिन के लिए नैनी आकर तीर की तरह घोड़ा भगा सकती हैं, वहाँ हम उनके साथ प्रतियोगिता करने के लिए पहले से घोड़े पर चढ़ना सीखेंगे ? लज्जा नहीं है हम में ? तुम आज चढ़ो। मैं देखता हूँ. तुम कैसी घुड़सवारी करते हो। घुड़सवारी मेरे लिए तो जातीय गुण ठहरा। जानते हो, मैं भार्गव गोत्री ब्राह्मण हूँ।'

'हा-हा। ब्राह्मण कभी घोड़े पर चढ़ा हो. मैंने तो नहीं सुना। मैं क्षत्रिय हूँ, राज घराने का। मुझे आज घोड़े पर चढ़ने की जरूरत नहीं, कल ही चढ़ेंगे। देखना कैसे जमकर बैठता हूँ। घोड़े को भी लगेगा, इतने दिन बाद कोई क्षत्रिय आदमी चढ़ा है।'

'अच्छा चलें, आज कोई घोड़े पर नहीं चढ़ेगा। कल एकबारगी ही चढ़ेंगे, पर चढ़ेंगे जरूर।'

'हाँ-हाँ, चढ़ेंगे जरूर, नैनीताल आकर घोड़े पर न चढ़े, तो फिर आए क्यों ?' भूतपति ने कहा।

अचानक झील के किनारे सीमेंट से बने मन्डप में कुमाऊँ रेजिमेंट की बैंड पार्टी ने किसी फिल्मी धुन को बजाया। लोग इकट्ठे हो गए, कुञ्जनाथ और भूतपति भी वहाँ जाकर खड़े हो गए। बहुत रोमांटिक वातावरण बन गया। गीत बहुत जम रहा है। कुञ्जनाथ तन्मय हो रहा है। कुञ्जनाथ की तन्मयता बढ़ती जा रही थी कि उस भीड़ में किसी ने उसे खींच लिया, जोर से। इसके बाद वह और ठहर न सका। भावलोक से उतरते-उतरते अनेक झटके खाये उस भीड़ के बाहर। इस तरह असभ्य और अशोभनीय ढंग से सबका ध्यान आकर्षित कर भीड़ से निकल आने के कारण उसे गुस्सा लगा।

'क्यों, पागल हो गए थे क्या ?' कुञ्जनाथ ने गुस्सा दबाते हुए भूतपति से पूछा।

'चुप, चुप। भयंकर विपत्ति ! देखो तुम्हारा मनीपर्स ठीक है तो ?'

'मनीपर्स ?' कुञ्जनाथ की छाती ठक से रह गई। पैंट की पाकिट कुञ्जनाथ ने टटोल डाली।

'मनीपर्स तो है। पाकिटमार था क्या ?'

'पहले लौट चलो। यहाँ से लौट जाना ही ठीक है।'

कुछ दूर जाने के बाद जब साँस ठीक से चलने लगी, तो भूतपति बोला—'उस भीड़ में तुम सब तन्मय होकर सुन रहे थे, मैं सावधान होकर खड़ा इधर उधर देख रहा था हठात् देखा, खुले सिर दो युवतियाँ हमारी ओर देखकर हँस रही है। मुझे आश्चर्य हुआ, बाद में जाने क्या इच्छा हुई कि मैं भी उनकी ओर देखकर मुसकाया। इसके बाद देखा, वे हँसना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोक, चुपचाप कुछ बातें कर रही हैं। इसके बाद एक हमारी ओर आगे बढ़ी। ऐसा लगा, मानों वह हम दोनों को पहचानती हो और बिना कुछ कहे हम दोनों के बीच से निकल गई।'

'और उसी समय तुम मुझे खींच लाए? वे तो बाघ हैं न, हमें खा जातीं! कुमाऊँ की पहाड़ियों में नरभक्षी आदिम जातियाँ हैं, ऐसा मैंने किसी टूरिस्ट गाइड में पढ़ा था। रास्कल!'

'देखो, मुझे गाली न दो।'

'गाली न दूँ? अच्छा होता, मैं अकेला नैनीताल आता। तुम्हारे साथ आने से कुछ फायदा नहीं हुआ। सब गड़बड़ हो रहा है। तुम इतने डरपोक भी हो, मैं नहीं जानता था। तुम नैनी में करोगे क्या? उन दोनों के साथ झील के उस ओर घंटे-दो घंटे बातचीत करते, तो क्या वेद अशुद्ध हो जाते?'

भूतपति को कुञ्जनाथ की भर्त्सना बहुत चुभी।

'यह बात है। तो कल तुम्हें 'जगह' पर ले चलता हूँ। भले की कहने पर उलटा समझते हो। यदि वे सचमुच पाकिटमार होतीं तो?' 'जगह' शब्द सुनते ही एक आदिम भय और जीवन को उपभोग करने का अदम्य कौतूहल, दोनों मिलकर कुंजनाथ को चुप करा बैठे।

होटल पास आ रहा था। माल रोड की भीड़ में किसी युवती से भूतपति को धक्का लग गया। भूतपति तैयार न था। युवती 'आई एम सॉरी' कहती हुई भीड़ में खो गई। पर भूतपति मुड़-मुड़कर पीछे की ओर देख रहा था। उसके शरीर में रोमांच हो आया। कुंजनाथ की भर्त्सना कुछ देर पहले तक कचोट रही थी, पर अब भूलने को हो आई।

दूसरे दिन, शाम को सात-आठ बजे होंगे। वे दोनों चारों ओर एक राउण्ड लगा चुके थे। पैदल ही भूतपति ने अनुभव किया, कुंजनाथ बहुत खिन्न हो रहा है। 'कुंजनाथ, नैनी शहर अब अच्छा नहीं लगता क्या?'

'सिर्फ झील के चारों ओर चलने आए थे? जब देखो खाली झील के चारों ओर चक्कर मार रहे हैं। चलो, बोटिंग करें? नहीं। झील छियानबे फुट है और हम ठीक से तैरना नहीं जानते, फिर खुद डाँड चलाना हमसे होगा नहीं। पानी से मजाक भी क्यों करें? क्यों बाबू, घुड़सवारी कितनी दूर गई? हां जल्दी क्या है? इतने दिन रहना है, चढ़ लेंगे!'

भूतपति बिना बोले चल रहा था। कहा—'मेरे सिर में दर्द होने लगा है। थकावट भी लग रही है। चलो, कहीं बैठें।'

'यह देखो मधुशाला। ब्लैकनाइट व्हिस्की का कितना बड़ा विज्ञापन लगा है! एक पैग ब्रांडी पीने पर तुम्हारा शरीर बिल्कुल ठीक हो जाएगा। क्यों, चलोगे?'

कुंजनाथ के शरीर में सिहरन दौड़ गई। जन्म से आज तक शराब छुई न थी। मद्यपान निषेध! सारी शिक्षा-दीक्षा कहती आई है मद्यपान वर्जनीय है, किंतु सारी 'वर्जनीय' बातों की ओर यह आकर्षण कैसा? 'ब्रांडी' नाम सुनते ही शरीर में शेर की-सी ताकत आ जाती है। पीने के लिए अपरिमित कौतूहल उत्पन्न हो जाता है। कौन जानता है, कौन देखता है यहाँ पी लेने पर?

'मुझे कल से ठंड भी लगी है। ब्रांडी या व्हिस्की जो मिले, पी जा सकती है।' कुंजनाथ ने स्वर में स्वाभाविकता लाते हुए कहा, मानो वह बहुत दिनों से शराब का अभ्यस्त हो।

'ताल की ओर चलो, वहीं पिएँगे।'

दोनों चले गए माल रोड से ताल की ओर। दोनों के हृदय में अपार स्फूर्ति के साथ उद्वेग और साथ में आशंका भी काफी मात्रा में बढ़ गई थी। जीवन में अब तक जो अननुभूत रहा, उसे आज अनुभव करने जा रहे हैं किन्तु उनका जीवन ही कब था? जीवन तो आज से आरम्भ होगा।

ताल की तरफ उन छोटे-छोटे आठ-नौ घरों वाली उस गली में बिजली भी नहीं गई है। सब घरों से लालटेन का प्रकाश दरवाजों और खिड़कियों की ओर से रास्ते पर पड़ रहा है। गली में प्रवेश करते ही शीत की अधिकता के कारण कुंजनाथ का शरीर काँप उठा। इतनी ठंड तो कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगती नहीं। आज ठंड कुछ अधिक है। भूतपति कदम बढ़ाते हुए आगे चल रहा है और पीछे-पीछे कुंजनाथ। कुछ समय से उनकी बातचीत भी बन्द हो चुकी है। दोनों आने वाली अनुभूति की प्रतीक्षा में आशंका-ग्रस्त होकर मौन हैं।

एक टिन और स्लेट के छप्पर से बने छोटे एक मंजिले घर में दोनों घुसे। सीढ़ी पर थोड़ी दूर चढ़कर भूतपति ने मुड़कर देखा—कुंजनाथ पहली सीढ़ी पर ही पत्थर की मूर्ति बनकर रुक गया है। काँच की तरह स्थिर आँखों से अगली सीढ़ी की ओर देख रहा है। कुंजनाथ की मुद्रा देखकर भूतपति सहम गया और फुस-फुसाते हुए बोला—'क्यों रुक गए? रात तुम्हारे लिए ही आ रही है क्या?'

कोई उत्तर नहीं। कुंजनाथ वैसे ही चित्र-सा बना रहा। आँखों में आँसू भी आए। यह डर गया है क्या? हठात् उसे क्या हो गया?

'कुंजनाथ। वहाँ क्या देख रहे हो? ऊपर आ जाओ।'

'नहीं भूतपति, मैं नहीं जा पाऊँगा। मुझे सुभद्रा का मुँह स्पष्ट दिख रहा है। वह वहीं सीढ़ी के पास रो रही है। वह मुझे ऊपर जाने से रोक रही है। देखो, देखो, वह कैसे बिलख-बिलखकर सीढ़ी पर लोट-पोट हो रही है। बेचारी से मैं विश्वासघात नहीं कर सकूँगा, मैं लौटता हूँ। तुम जाओ। मेरी तो सुभद्रा ही भली, काफी है....यथेष्ट।'

कुंजनाथ इतना कहकर लौट गया और गली से माल रोड पर दौड़ने लगा। पीछे भूतपति पुकार रहा था, 'मैं आता हूँ कुंजनाथ। ठहरो, मैं आ रहा हूँ।'

इसके बाद पीछे भूतपति दौड़ने लगा। मानो कुंजनाथ के बहाने दोनों बच गए हैं। दौड़ते समय भूतपति में क्या-क्या मानसिक परिवर्तन हुए, पता नहीं, लेकिन होटल में आकर उसने कुंजनाथ को बाँहों में भींच लिया।

'तुम्हीं मेरे सच्चे मित्र हो। तुम्हीं सच्चे दोस्त हो। आज न लौटता तो कितना घृणित कार्य कर बैठता? तुम्हीं ने तो बचाया मुझे! बेचारी पार्वती का क्या कसूर था? क्या वह अपना कर्तव्य नहीं करती? दिन-रात चौबीस घंटे रहट की तरह घूमती है मेरे लिए। पर मैं ललिता पर गुस्सा करके, क्योंकि ललिता ने मुझसे विवाह नहीं किया, अतः जीवन बरबाद करने पर तुला हूँ। उधर ललिता घर-द्वार बसाकर खूब आनन्द में है। एक दिन भी उसने मेरी बात नहीं सोची। हाय! पार्वती, इस चांडाल को माफ करना। अब की घर पहुँचने पर मैं तुम्हें सारी बात बता दूँगा। वह बेचारी क्या जानती है, मैं कितना बड़ा कृतघ्न हूँ, उसे प्यार करता हूँ' कहते समय वह क्या जानती है कि तब मेरे हृदय में ललिता होती है? सारी बात खुलकर पार्वती से कहे बिना मुझे चैन न मिलेगा। नैनीताल की कीर्ति भी कहूँगा। हे भगवान, मुझे माफ करना।'

कुंजनाथ ने व्याकुल भूतपति को सांत्वना दी, आदमी के जीवन में कभी कभी ऐसा होता है। वह अध्यापक है, बहुत किताबें पढ़ी हैं। आदमी के मन और आत्मा दो चीजें हैं। आत्मा तो पार्वती है, चेतन है, पर मन तो जड़ है। कितना उसे सँभालोगे? पर वे सँभाल ले गए हैं। और आधा घंटे में तो सब कुछ समाप्त हो जाता।

दोनों बिस्तर से उठकर झूमते से बरामदे की ओर गए। आज खाना-पीना बंद। सामने माल रोड असहाय-सी होकर पड़ी है। इसके बाद पेड़ों की पंक्ति, और तब नैनी झील। कोई कुली फटा कंबल ओढ़कर होटल के गलियारे में सो गया है। दोनों को चुपचाप बैठे कुछ समय बीता होगा कि नन्दा-सुनंदा के मंदिर से घंटा बजने पर दोनों ने ऊँघना छोड़ एक-दूसरे की ओर देखा।

सुबह को बेड टी लेकर आते ब्वाय ने देखा—दोनों सज्जन अपने-अपने बेडिंग बाँधने में लगे हैं।

अनु० शंकरलाल पुरोहित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिशिष्ट / दीपक मिश्र

इतनी सारी चीजें हैं मेले में
इधर और उधर,
पर तुमने चाहा सिर्फ नारियल का फूल

नारियल फूल का कीड़ा
उसके गीत में कितनी पीड़ा।
डुलाता है वह मौत का झालरा
माना अपने को गोकुल का भौंरा।

इतनी सारी चीजें हैं
दूकानें बाहर-भीतर भरी हैं
तुमने चाहा सिर्फ एक दीप मिट्टी का
दीप का दिल जले
बंद मुँह देवालय में,
मैं देवता हूं, अन्नहीन-वस्त्रहीन
दो. दो, अपनी देह का नैवेद्य-व्यंजन ॥

अथाह जलधि है
तुम्हारे सुशोभित स्थल खण्ड को घेर कर,
तुमने चाहा बंधु, एक सशब्द शिशिर
भूल गई—उत्तप्त साँझ और सबेरे
उस पार का हाहाकार
इतने सारे रत्नों और मणियों के होते हुए
तुमने फरमाया सिर्फ म्लान स्फटिक का
एक चन्द्रहार।

कितने ही पंछी और सब के चंचल डेने हैं।
तुमने माँगा, वही बाण-विद्ध निर्दोष हंस,
रुको, रुको, तजो अभिमान का सिंहासन
मत जाओ वन।

रक्त-सने बाण लेकर सुपुरुष
देवदत्त आता होगा मेरे पास।
दूँगा, दूँगा, जरूर एक हंस दूँगा
भले तुम्हें न हो, पर बाहु-बन्धन को
अन्यथा मैं वचन देता हूं कि
मैं उसे मुक्त करूँगा
और भेजूँगा उसे प्रिय परिवार में।

सब कुछ हुआ और तुमने पाया जो चाहा था
लेकिन दिन-ब-दिन तुम्हारी आन
प्रेमपूर्ण सेवा के बदले, अनर्थ का कारण है
देखो, देखो,
जबान का दोहरा रंग है—
कोलाहल और शंखनाद ॥

अनु : डॉ० अर्जुन शतपथी

अश्वमेध / प्रहराज सत्य नारायण नन्द

अब धेनु दो
अब धन दो
और
अब संतान।
यदि तुम अतृप्त हो,
लोल-लोल जीभ दिखाकर
इतना मत डराओ
आओ—
चले आओ, मेरे अन्दर।

अनु० डॉ० अर्जुन शतपथी

सोने की खोपड़ी / प्रहराज सत्य नारायण नन्द

बारह हाथ वाली, लम्बी पगड़ी के नीचे
सोने की खोपड़ी
कोई बम् गिराये तो गिराये,
कोई बुलेट मारना चाहे तो मारे,
और डंडे से भी पीट जाये
मेरी बारह हाथ वाली पगड़ी के नीचे
सोने की खोपड़ी।

अनु० डॉ० अर्जुन शतपथी

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निद्रित कमल से / विनोद चन्द्र नायक

इस झील के अँधेरे में आता रात का आकाश
ले ज्योति पुरुष का रास ।
झील की लाजवन्ती नारी खींच लेती
घूँघट कुहेलिका
मृणाल-मर्कत-बाहु के स्नेह-स्पर्श से
कृष्ण सर्प फन देता झुका ।

पद्म-पलंग पर तंद्रालस कोमल तरंगें
चूमती हैं ताराओं के होंठ ।
उस हृद के शैबाल स्तर पर
नम्र एक निद्रित कमल.
ऊपर विस्मित नील, नीचे नील मरकत जल ।

वह कमल है मेरे इस हृदय का कमल
अविरल अंधार - उत्सव में
निर्दय निद्रित,
पराग केशर में रख कर
एक विष पतंग का दंशन
सूर्य स्नेह से करता अहा मानस चित्रित ।
बिखरा सब ओर चंद्र झिलमिलाता ।
ऊर्णनाभ सूत्र से ग्रथित
ज्योत्स्ना की मणिमाला
टप-टप शिशिर शब्द—
नीरव - निस्तब्ध - निस्तब्ध ।

कब होगा अन्त इस रात्रि का
गरल दंशन कब होगा बंद,
सकल आनन्द बोलो कब मिलता है
कब होता है परम मिलन ?

सूर्यमुखी मन कभी पाता है सूरज को ?
उदय अस्ताचल पर करता बस दृष्टिपात,
झड़ कभी बैसाख का वज्र का आघात,
और फिर वृष्टिपात ·· वृष्टिपात ।

सुनो मेरे हृदय कमल,
चक्रव्यूह इस तिमिर का यद्यपि है हिंस्र अविचल,
कुचक्री सप्तरथी साध रहे शत शर-फलक ।
तथापि रे विषकण्ठ
लग्न तेरा नहीं है निष्फल ।

इस सघन रात्रि तट पर सुन लो
घर्घर रथचक्र उदय भानु का,
और आवाज खुरों की सप्ताश्वों के ।
अफुरन्त आलोक प्रवाह आता बंदना के लिए।
खोल दो हृदय अनूढ़ा
फैला कर अपनी शत-सहस्र पँखुड़ी ।

अनु : शंकरलाल पुरोहित

कुईं फूल / सुरेन्द्रनाथ महान्ति

फूली कुईं की गमक से भर गए हैं
सारे ओर-छोर पोखर के घाट
काटकर अतल-अथाह पानी को
कीचड़ खिलता है रात के सन्नाटे में,
तारे सब मिल-जुल शरत में
एक बड़ी हाट लगा गए हैं ।
कुईं फूल की महक से काँपती छाती
बार-बार तेज साँसों में,
नाविक खेता नाव
शरत की दूर नदी के जल में ।
मेरे शहर में कितनी कुईं
कितनी लम्बी-लम्बी वेणी,
कुईं फूल की माला लेकर
हमारी ग्राम-बाला कितनी पूजती मंगला को

बालने को अपनी जिन्दगी में
कुईं की रोशनी ।
पंक होती कुईं फिर
मांसल पर्दे के पीछे
कुईं की कुहुक से
कितने तूफान और कितने ही पहाड़ !
हमारे गाँव के पोखरे में
कुईं के लिए जमती कितनी भीड़ !
मेरे मन में कुईं के लिए है लालच घड़ा भर
खोजते-ढूँढ़ते नहीं बुझती प्यास,
सुबह का भौंरा चल देता मारकर लम्बी गप्प
छाती मेरी सुनसान है पड़ी
उस कुईं के लिए ।

अनु० : राधाकान्त मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बदलेयर / प्रहराज सत्य नारायण नन्द

चूल्हे का रंग सब्ज है
आँख का रंग लाल।
तुम डरो मत,

मन की तूलि में
सभी रंग घुलते हैं
तुम डरो मत।

अनु० : डॉ० अर्जुन शतपथी

काला तिल / सरोज रंजन महांति

हम दोनों के सम्बन्ध का
खूब-खूब, अनहोना फैलाव है।
वही, उससे क्यों इतना डर है, सुन्दरि ?
वह तो तेरे रूप का काला डिठौना है।
तेरी ठोढ़ी के नीचे वाला
काला तिल जितना सत्य है
ठीक उतनी ही हम दोनों के
सम्बन्ध में सत्यता अनिवार्य है।
और
उसकी परिणति क्या है ?
दोनों का मिलन-मुहूर्त्त !
हमारे स्नेह और सम्बन्ध की एक शुभ दिशा
सुयश व सूर्योदय की नाईं रति का ओंकार गीत

गीत ईर्ष्यालु आँखों से देखा नहीं जाता।
वह तो तेरे सीने के तिल के समान है।
सुयश के पंख कहाँ, अगर हों भी,
छोटे—बहुत छोटे निहायत मामूली,
लेकिन अपयश की गति
आलोक से बढ़कर खूब है,
वह पल भर में दूर-दूर संचरित होता है।
सुन्दरि ! और चारों ओर
फहर फहर फहराता है हमारा झंडा।
अपयश ऐसा कि
वह पहले पहुँच जाता है।

अनु० : डॉ० अर्जुन शतपथी

अनूठी सुन्दरी / हरिहर मिश्र

मौत के रहस्य का
अब पर्दा फाश हो गया है।
अब उसके पत्थर. पत्थर नहीं रहे,
शिल्पी को क्या परवाह है ?
उसकी मूर्त्ति धीरे धीरे बात करने लगी है
भविष्य में उसकी मूर्ति होगी
रानी की जीती-जागती साक्षात अनुकृति,
इसलिए कोतवाल जवान बंदी ले रहे हैं।
शिल्पी की मूर्ति
कोई इसे सरस्वती मानता है तो कोई दुर्गावती
पर अनुरागमयी रानी ने
आज घोषित किया है—
'वह अपनी साक्षात अनुकृति
उन्होंने आज अपने को ही पाया है।'
वह जो हैं — सब कुछ हैं
देश की कला और संस्कृति,
वैशाली की स्वर्णिम भौंह,

यमुना के सपने,
कोणार्क की सिंह-कटि,
अजन्ता के लास्य
और
आदिवासी रमणी का कृष्ण शिला रंग।
शिल्पी निर्वाक···
उसकी कृति का इतिहास
शिल्पी पत्थर है, लेकिन
उसकी मूर्ति है प्राणवान।
रानी की इच्छा से
मूर्ति का काया कल्प
मूर्ति रूप लेगी रानी का,
हट गये अस्तबल और ऊँट-शाल
बनने को अजायब घर माननीय कवि
और शिल्पियों का।

अनु० : डॉ० अर्जुन शतपथी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर /

असमर्थ, अयोग्य मैं व्यर्थ का जीवधारी,
मैं विज्ञापति न करके कैसे तुम्हारी
सेवा करूँ 'सारलादास' ?
सतर्क प्रतिच्छाया में प्रलंबित है, नीरवता की
लता : 'सर्व धर्मान् परित्यज्य
मामेकं शरणं व्रज' हाथ जोड़ कर, इस प्रकार
मेरी देह की संपूर्ण केंद्रीभूत शक्ति
छिटक पड़ती है, मुक्त वायुमंडल में—
जन्म लेती है एक विकृत सरसता ।
निहायत अवांतर,
अदृश्य अस्तित्व, जिसे मैं अनुभव करता हूं,
मैंने सोचा : यह केवल मिथक है :
किससे क्या कहूं ?
सम्मुखीन है काँच के फ्रेम में जड़ा सुडौल
गंभीर एक चित्र, नाम है उसका 'ईश्वर' ।
दुर्भाग्यवश परिचय हुआ । अनिर्वाण प्रत्यय-
'ईश्वर मेरा सर्वश्रेष्ठ बंधु है' ।
उसी दिन से दौड़ रहा हूं,
क्रीतदास की अवधि गिनकर
मेरे मुखारविंद पर उम्र की,
उत्तप्त प्रगाढ़ दोपहरी के चिह्न हैं ।
क्या लाभ है हाथ मर्दित कर कोई मुझे
प्रलुब्ध नहीं करता ।
विद्रोह एक संभावना है ।
पवन छिपा रहता है पत्र-संधि में,
निरुद्देश्य सत्य की खोज :
वया को क्या फर्क पड़ता है
पवन झकोरों से ?
घोंसला प्रकंपित होता रहे ।
निर्वाक और निर्वेद ईश्वर—
तर्क वितर्क करते हुए, एक दिन हँस पड़ा ।
मेरी आँखों में झूल रही थी
वैदिक दुःख की छाया ।
मैं विस्मित और स्तब्ध था
मैंने धिक्कार कर धो दिया
निष्पाप परिक्षेत्र का नक्शा
ईश्वर एक दायित्वहीन स्रष्टा है,
और मेरा बंधु—
उसने चाहा, मेरे कुछ कहने के पूर्व,
व्यर्थ ही निर्दय हो जाना ।

अनु० : डॉ० श्रीमती माया अरोरा

स्वर्णयुग की पद ध्वनि / ज्ञानीन्द्र वर्मा

पुनः सुनाई देती है पद-ध्वनि
सुन पड़ती फिर बातें उन भूले दिन की
लौट पुनः वे आती जैसे युग के बाद
काट कुहासा काल-चक्र का
आलोक-पंथ संधान किए ।
तप-सा पावन तंदुल पूप
क्षीर सुजाता की, गणिका का दान
निबिड़-तिमिर में बन उठे ज्योति का गान
सचमुच उस अतीत का हो जैसे पुनरागम ।
मार्ग करो प्रशस्त, पथ छोड़ो
रोको उस विभ्रान्त शब्द को
आत्म-प्रवंचना, शोभा-यात्रा तज
गाओ स्वर से मात्र अहिंसा के पद ।
शेष समय परीक्षा का
नहीं साधना का क्षण बाद युगों के
जन को अधिक नहीं बहलाओ
नहीं जरूरी ऊँचा स्वर, धीमे अपनी बात कहो
इतिहास साक्षि है
बाद रात्रि के—घोर निशीथोपरान्त
स्वर्णिम-युग का आया सदा स्वर्ण-प्रात ।
जागो हे बसुधा कुटुम्बजन ! उठो—
अमिताभ-बुद्ध का संदेश दिव्य
विकसित करता दिशि-दिशि
पुनः-पुनः आशा के कदम्ब कुसुम ।

अनु० : बलराम दास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँख का कबूतर मेरा / गुरुप्रसाद महान्ति

आँख का कबूतर मेरा
आकाश के कठिन लौह शरीर में बाधा देकर
हर रोज लौट आता है इसी धरती को
जहाँ पर तुम करते हो
हर रोज एकान्त प्रतीक्षा !
बुढ़ापा-मरण-व्याधि
फिर जीवन का अर्थ समझने के लिए
समुद्र की तरंग संकुल
छोटी-छोटी हथेलियों से
स्थविर बालू की देह जब सहला-सहला देता
मैं दुःखित होकर भेदन कर
धूप दोपहर का ताप
धूसरता मेरे पूर्वजों की स्मृति ढूँढकर
तुम्हारी इस विवर्ण देह में
कहानी कहो, कहो घास और पत्तों की कहानी,
कन्दरा बनानी तथा जंगल की बातें,
काँई, घोंघा समुद्र की समग्र कहानी !

विवर्ण रात के छिन्न बादलो !
विवर्ण चाँद के इस तट से बहकर
उस किनारे मरने की बात
चैत की जीर्ण देह इस बालू की
छोटी-छोटी लहरों के बीच
इधर उधर उड़ उड़कर तुम लेते हो बटोर
बटोर कर तुम फिर प्यार करते हो
तुम पुनः हाथ पकड़ कर बुलाते हो
तुम्हारी आत्मा है भी कहाँ ?

आँख का कपोत जब मेरा लौट आता है
आकाश के भ्रमण को पार कर
तुम्हारी देह की यह क्लान्ति
और भूख प्यास उत्तेजना और कोह के अन्दर
मेरे शरीर के स्वप्न को पकड़
बहजाती समय की नदी ।

निस्तब्ध दोपहर में पतझड़
न सुनाई देता है धाम को
स्वाँस झाड़ जंगल मिल जाता है
धुआँ बन नभ-बीच
याद मुझे नहीं कब मेरी आँख के कबूतर को
तुम्हारा पता मिला था एक दिन
कटक या उज्जयिनी शहर के पास ।

अनु० : बलराम दास

असमापिका / कृष्ण चन्द्र त्रिपाठी

अधर की सुसकान उसके हृदय का अमृतमय स्नेह,
क्या है बड़ा उससे कहो कवि का परम-सम्बल ?
संसार में वे ही मुझे रख सके जीवित कहाँ
दैन्य हाहाकार कितने नित्य पीड़ित करें !
कुछ कर नहीं पाए कभी वे ।

इस जगत के रजकणों से मैंने बसाई स्वप्न-नगरी
वेदना से मैंने लिया आनन्द-निर्झर नित्य-शाश्वत
और पाई विचित्रता की कुहुकिनी-माया
हुए जिससे तार मेरी बीन के झंकृत ।

जिस दिन मलिन-निष्प्रभ मधुर
उसके अधर का हास होगा
और मैं असमर्थ उसके मधुर-उर का प्यार पाने
खोज में रत धरा को इस छोर से उस छोर तक
पुकारूँगा, अथक मेरी वह निधि छिपी है कहाँ ?

ढूँढता ही अपलक रहूँगा उन्मत्त बन
नयन सावन की घटा से झरते रहेंगे
अश्रु की हर बूँद मेरे
प्यार की शत कोटि सुधियाँ ले
झरेंगी स्वतः मेरे हृदय की यह अनन्त कविता ।

और धर कर नभ-धरा को, दिक्काल-नापूँगा
कि जग की सभी कविता स्फुटित उसके लिए हो
और जीवन की आशाएँ सभी संतुष्टि
सीमाहीन पाकर
गीत गाए एक शाश्वत जो समाप्त कभी न हो ।

अनु० : बलराम दास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धरित्री समुद्र और आकाश / डॉ० गोपालचन्द्र मिश्र

समुद्र की अनंत प्यास है,
इसलिए वह गरजता है
फेनशीर्ष लहरोंके होठों में,
सर्वग्रासी निदाघ के तृष्ण तर्पण ।

आकाश का अनन्त विरह
इसीलिए उमड़ते हैं शिशिरके आँसू
सीमाहीन क्षितिजों की छाती पर
पथभ्रष्ट वर्षाका है आकुल संधान,
प्रांतरका चिर अफसोस है
कि उसके वक्षमें लोटते हैं,
कई चम्पे के फूल ।

फिर भी निःसंग का अफसोस
धरित्री का चिर दुःख है कि
उसकी आत्मलिपि कभी कोई समझता नहीं
आकाश, समुद्र, पावस व प्रान्तर
हैं अत्यन्त अस्थिर क्षुधा और पिपासा में ।

अनु० : डॉ० अपन्ना प्रधान

वह खुद मैं ही हूँ / कालिन्दी चरण पाणिग्राही

मेरा मन उतातला है
अपनी प्रेमिका को देखने को,
उसी को सपने में देख-देखकर
मेरी सारी रात बीतती है ।
उसी के सोच में आखिर
पड़े-पड़े बीतता है वक्त
उसी के सुखसे सुखी और दुःख
उसका देख हो जाता स्वेद-सिक्त ।
इसी राह से आती है वह,
इसी पेड़ तले खड़ी रहती है ।
सुकुमारी लता-सी, मृणाल-सम आयु में युवा
उसकी हँसी दीखती है काँस की तरह सफेद
चंचलमना चलती रहती है इसी रास्तेपर ।
मानो उसके आँसुओं से झरता है कोई सन्देश
उसी की याद में उजागर हैं मेरे दिन और रात
किसी ओर नजर न डालके
वह मृगनैनी वेणी नचाए ।
असंख्य वासनाएँ होठों तले
छिपाये वह चल रही है
किसी युग की वह अति परिचिता जीवन में जो
रोज मिलती है वह, कोई और नहीं,
खुद मैं ही हूं ।

अनु० : डॉ० अपन्ना प्रधान

योजनागन्ध / सच्चिदानन्द राउतराय

न रूप न रस का परस, न शब्द
केवल तुम्हारे शरीर की गंध
और मैंने कितनी ढूँढी है
क्षितिज से क्षितिज तक ?
उज्ज्वल जल की धारा में
फाँदकर पानी की वक्रता
कितनी तीव्रता से छूटा हूँ मैं
ठीक नाक के सीधे ?
पानी की क्वचित सुगन्ध,
या किसी बादल का महकना
या सुबह की सूर्य-किरणों की
धुँधली सुगन्धप्रभा-किरणों को
ढूँढा है मैंने घूम-घूमकर जल-थल-मेघों में
आसमान में कितने योजनों तक ?
तुम्हीं को ढूँढा है परस में और संगीत में
पर पाया है केवल घ्राण में ।
दूर-दूरांत में, दिनांत में, भोर में
मत्स्यगन्धा ! मेरे अवचेतन में ।

अनु० : डॉ० अपन्ना प्रधान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्ण / डा० मायाधर मानसिंह

जिसकी नीलिमा महान् अंतरिक्ष तक छाई है,
जो उषा और प्रदोष में पीतवस्त्र पहनता है,
जिसके सिरपर चन्द्रिका-गुच्छ सोहता,
और जो विद्युत्वंत मेघ जैसा है।

देखी है मैंने उसकी रासलीला पूर्णिमा की रातमें
जिस समय आकाश-प्रांगण है निर्मल कपूरकीर्ण
ज्योत्स्ना के उत्तरीय ले नक्षत्र-रूपिणी गोपियाँ
जब उस श्यामघन को घिरी हुई रहती हैं।

सृष्टि यमुनातट में, प्रेमवृक्ष के नीचे
अहरह बजती है उसकी वंशी, घरछुड़ानेवाली,
उसी ध्वनि के उन्माद से शून्य में करोड़ धराश्रेणी
भागती हैं, मानो किसी अलभ्य वस्तु की
खोज में हों।

वही फिर पृथक दीखता कुरुक्षेत्र के
कामना व कर्तव्य के संगर में,
सुनता है निःशब्द कक्षमें भागवत की वाणी—
'पंकज हो ओ वत्सो, पंकिल-भव में'।

सामने, पीछे, ऊपर, नीचे, बाएँ व दाएँ
नमता हूँ ओतप्रोत हो उसी श्यामरंग को,
छाया-पथ, जिसके वक्ष की शुभ्र वनमाला है,
कोई क्यों न होगा गोपी,
सब सौंप उसके चरणों में ?

अनु० : डॉ० अपन्ना प्रधान

प्रभात निशा / बैकुण्ठनाथ पट्टनायक

मेरी सारी सम्पदाएँ ले लें
तो भी गुलाब का बगीचा
छोड़के कहीं न जाऊँगा।
इसी पेड़के नीचे ! पास ही
हँसता है काठ-चम्पे का फूल,
दिशांतों तक फैली है माँ की कृपा।

मीलों तक फैले हैं हरे धान के खेत,
करोड़ों विहंग भोर से इकट्ठे हैं.
झील में खिले हैं पीले, लाल सफेद कुमुद कितने
इन खेतों जंगलों का यह जीवन कहाँ है ?

न मुझे चाहिए प्रिया, न सुन्दरी
हाथ में हो एक पोथी और एक लेखनी
बोऊँगा नये जीवन के सपन
राजधानी का भोग, नहीं है ये भाग्य में।

गुलाब व कुमुद प्रभात की संवर्धना—
राज सम्मान के सिरपर
मानो मुक्के की चोट
कवि का धीरज टूटता है।

अनु० : डॉ० अपन्ना प्रधान

प्राचीन साहित्यिक पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाएँ यदि आपके पास हों और आप उनसे मुक्त होना चाहते हों तो परिषद उन्हें साभार स्वीकार करेगी। अन्य कई पाठक उनसे लाभान्ति होंगे।

—सम्पादक

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

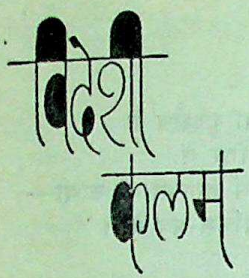

साहित्य में उदात्त

नोबेल अभिभाषण

सन् १९७६ का साहित्य-विषयक नोबेल पुरस्कार अमरीका के प्रसिद्ध यहूदी लेखक साँल बेलो को प्रदान किया गया था। स्टॉकहोल्म की स्वेडिश अकादमी में १२ दिसम्बर १९७६ को पुरस्कार-प्राप्ति के समय उन्होंने जो अभिभाषण पढ़ा था, आधुनिक साहित्य के परिप्रेक्ष्य में, मुख्यतया औपन्यासिक विधा के संदर्भ में, वह पर्याप्त महत्वपूर्ण है। उन्होंने अपने ऊपर प्रसिद्ध अमरीकी उपन्यासकार जोसेफ कॉनरेड का प्रभाव स्वीकार किया है, जिसकी मान्यता थी कि 'कला वही है जो दृश्यमान जगत को उच्चतम न्याय देने का प्रयत्न करती है, जगत के जड़ और चेतन में उन तत्वों को खोजने का प्रयत्न करती है, जो मौलिक हों, अनिवार्य हों और नित्य हों। मौलिक-तत्वों की प्राप्ति का लेखक का तरीका, विचारक या वैज्ञानिक के तरीके से जो जगत को योजनाबद्ध परीक्षण द्वारा जानने का प्रयत्न करते हैं, भिन्न होता है। कलाकार अपनी निस्संगता में अपने ही अन्तस के निभृत-अंचल में प्रविष्ट होकर अपनी रुचि, अपील की शर्त्तों को खोजता है।—वह अपने अस्तित्व के उस अंश को अपील करता है जो आनन्द और विस्मय की अनुभूति के लिए एक वरदान है, जो अर्जित उपलब्धि नहीं! दया और पीड़ा का हमारा बोध, समस्त-सृष्टि के साथ बंधुत्व की हमारी सुप्त-भावना, और एकात्मता का सूक्ष्म किन्तु अपराजेय दृढ़ संप्रत्यय, असंख्य एकाकी हृदयों को एकत्र बुन देता है, और मानवता के क्षेत्र में मृतकों को जीवितों से और जीवितों को अजन्माओं से जोड़ देता है।'

बेलो कहते हैं कि वे उस पीढ़ी के लेखक हैं, जो 'अपराजेय संप्रत्यय' या 'मानवता' जैसे उन उदात्त शब्दों की लम्बी सूची से परिचित हैं, जिन्हें अर्नेस्ट हेमिंग्वे-जैसे लेखकों ने अस्वीकार कर दिया था। हेमिंग्वे उन सैनिकों की ओर से बोले थे, जिन्होंने वुडरो विल्सन और अन्य आडम्बरपूर्ण राजनेताओं की प्रेरणा से प्रथम विश्व युद्ध लड़ा था। इन नेताओं के बड़े बोल उन तरुणों के मुर्दों को लक्ष्य करके होते थे जिनसे बर्फ से ढँकी खाइयाँ युद्धभूमि में पट जाती थीं। हेमिंग्वे के युवा-पाठकों की यह धारणा बद्धमूल हो गई थी कि बीसवीं शती की विभीषिकाओं के मारक-विकीरण ने मानवीय विश्वासों को रुग्ण करके हनन कर दिया था। कॉनरेड के कथनानुसार अकेले व्यक्ति की भावना दुर्बल ही प्रतीत होगी, वह अपनी दुर्बलता ही अनुभव करेगा, किन्तु यदि उसने अपनी दुर्बलता और अपनी प्रथकता अनुभव की और अपने अकेलेपन को गहराने के लिए उसने अपने अन्तर में प्रवेश किया तो उसे अन्य अकेले पड़े कई व्यक्तियों से एकात्मता अनुभव होगी।

फ्रेंच साहित्य के प्रसिद्ध लेखक एलेन रोब ग्रिलेत का कथन है कि पात्रगत उपन्यास अतीत की वस्तु हो गए हैं। आज की सार्त्र की 'नोशिया', कामु की 'स्ट्रेंजर' या काफ्का की 'दी केसल' जैसी महान कृतियों में पात्र नहीं हैं। इन उपन्यासों में व्यक्ति नहीं, अपितु व्यक्ति-सत्व मिलेगा। स्वयं रोब ग्रिलेत स्वीकार करता है, कि यह कोई स्थिति का सुधार नहीं है किन्तु वस्तुस्थिति यही है। व्यष्टि का लोप हो गया है। वर्त्तमान युग प्रशासनिक संख्याओं का युग है। अब विश्व की नियति कुछ चुने हुए विशिष्ट व्यक्तियों या परिवारों के उत्थान-पतन के साथ नहीं आँकी जाती। इस युग ने मनुष्य की सर्व-शक्तिमत्ता का परित्याग कर दिया है। किन्तु यह युग अधिक महत्वाकांक्षी भी है, क्योंकि इसकी दृष्टि सुदूर भविष्य की ओर है। मानव की एकान्तक आराधना अब मानव केन्द्रित कम होकर वृहत्तर चेतना को समर्पित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो गई है। रोब-ग्रिलेत के इस कथन से सॉल बेलो सहमत नहीं हैं। वे पूछते हैं, चरित्र का अनुसन्धान क्या अब आवश्यक नहीं रहा ? मनुष्य में जो वस्तु इतनी स्पष्ट है वह क्या सचमुच समाप्त हो गई ? क्या यह संभव है कि मनुष्य एक बन्द-गली में पहुँच गया ? क्या व्यक्तित्व सचमुच ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों पर इतना निर्भर है ?

सॉल बेलो कहते हैं कि यदि उपन्यास की योजना माँगती हो तो चरित्र को छोड़ देने में कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन इसे केवल इस सिद्धांत के आधार पर छोड़ देना कि व्यष्टि के उत्कर्ष का युग समाप्त हो गया है, निरी मूर्खता है। प्रति वर्ष हम वर्त्तमान मनुष्य की अवस्था को अंकित करनेवाला साहित्य पढ़ते हैं। कभी ये वक्तव्य बुद्धिमत्तापूर्व, कभी सहज सामान्य कभी असंयत, कभी सनसनीखेज और कभी निहायत भ्रष्ट होते हैं। सभी बताते हैं कि हम कैसे संकट में हैं, जबकि वे यह भी बताते हैं कि इनके बारे में हमें क्या करना चाहिए। जिस अव्यवस्था और उलझन का ये उपचार करना चाहते हैं, उसकी ही तो ये उपज हैं! मनुष्यों की चरम नैतिक संवेदना, पूर्णता प्राप्त करने की उनकी इच्छा, समाज की विकृतियों के प्रति उनकी असहिष्णुता, उनकी हास्यास्पद कोटि की असीम किन्तु हृदय को छूने वाली माँगें, उनकी व्यग्रता, चिड़चिड़ापन, उनके हृदय की कोमलता, मन का आलोड़न, भीतर की अच्छाई, और जिस निरंकुशता के साथ वे बम और नशीले द्रव्यों का प्रयोग करते हैं, एक लेखक के तौर पर सॉल बेलो इन सब तत्वों की अवधारणा करते हैं, लेकिन उसी तरह जिस प्रकार माइकेलेंज़िलो का शिल्पी एक पत्थर खण्ड में अपने आप को पूर्ण होकर प्रकट होने का असमाप्त संघर्ष देखता है।

हम अभी भी सोच सकते हैं, अनुभव कर सकते हैं और अच्छे बुरे का विवेक कर सकते हैं। शुद्धतर, सूक्ष्मतर और उदात्ततर प्रवृत्तियाँ अभी उत्तेजना या मूर्खता का शिकार नहीं हुई हैं। पुस्तकें लिखी जाती हैं और पढ़ी जाती हैं। एक आधुनिक पाठक के हलचल भरे मन तक पहुँचना कठिन हो सकता है, किन्तु शोर-शराबे को काट कर शांति का क्षेत्र पाया जा सकता है। उस शांत मनोभूमि में हमारी उत्सुकता से प्रतीक्षा की जा रही है। प्रथम विश्व-युद्ध के समय से ही संकटों के न समाप्त होनेवाले चक्र ने एक विशेष प्रकार के मनुष्य का निर्माण किया है, जिसे भयानक और अनजाने तथ्यों के साथ रहना पड़ा है, जिसमें पूर्वाग्रहों का संकोच, निराशोत्पादक आदर्शों का विसर्जन, कई प्रकार के पागलपन के बीच रहने की क्षमता, और सत्य या स्वाधीनता या बौद्धिकता जैसे कई प्रकार के टिकाऊ मानवीय आदर्शों की स्पृहा सहज देखी जा सकती है।

कला के अभाव में न हम अपने आपको जान सकते हैं न किसी दूसरे को। दम्भ, वासना, बौद्धिकता, आदि वास्तविकता का छद्म लेकर आज विश्व को घेरे हुए हैं, जिसे केवल कला ही भेद सकती है। सच्ची वास्तविकता वह है, जो हमें नहीं दिखाई देती, किन्तु हमें संकेत भेजती रहती है। कला के अभाव में हम उन संकेतों को ग्रहण नहीं कर सकते। इधर विज्ञान की प्रगति के साथ कला का सम्बन्ध प्रमुख मानवीय-उद्यम से नहीं रह गया है। मनुष्य की केन्द्रीय ऊर्जा अब कला के स्थान पर विज्ञान की तार्किक खोज की कठोर-भावना के साथ जुड़ गई है। यदि इस केन्द्रीय ऊर्जा को पुनः विज्ञान के इन बाह्य उपकरणों से हटा कर हृदय की सहज और सत्य की भावना से नियोजित करने की पुकार उठे तो आज लेखक क्या करे ? केवल इच्छा करने मात्र से हम केन्द्र में नहीं पहुँच जा सकते, किन्तु यदि सचमुच हमारी केन्द्र में आवश्यकता हो और यदि संकट की गहराई हमें वहाँ बुलाती हो तो इसका महत्व है। लेखकों को क्या करना चाहिए यह कोई नहीं कह सकता। कल्पना को स्वयं अपना मार्ग खोजना होगा। हम इतना ही सोच सकते हैं कि हमें इधर-उधर न भटकते रहकर केन्द्र में पहुँचना चाहिए। इस समय हम, लेखक, मानव-जाति का पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं करते।

सॉल बेलो आगे इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाते हैं कि बुद्धिजीवी-समाज में ऐसी मनोवृत्तियों की काफी बड़ी मात्रा है, जो सम्मानजनक हो गई हैं जैसे सामाजिक धारणाएँ, मानव-स्वभाव, वर्ग चेतना, राजनीति, सेक्स, मन, भौतिक-विश्व या जीवन के विकास से संबन्धित मनोवृत्तियाँ। इन रूढ़ियों या मनोवृत्तियों को पुनः परखने का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयत्न सर्वश्रेष्ठ लेखकों में से भी बहुत थोड़े लेखकों ने किया है। केन्द्र में आज क्या है? इस समय केन्द्र में न विज्ञान है, न कला, किन्तु अंधकार और उलझन में तड़फड़ाता हुआ प्रयत्नरत मानव अवश्य है, चाहे वह टिके या चूर हो जाए। पूरी मानव-जाति इस तड़पन में ग्रस्त है। ऐसे समय हमें सब बाधाओं को झाड़कर अपने आपको हलका करना होगा, ताकि हम अपने निर्णय स्वयं लें और तदनुसार स्वयं कार्यरत हों। कॉनरेड सही था, जब उसने हमें अपने अस्तित्व के उस भाग से अपील करने के लिए कहा था, जो कि हमें वरदान में मिला है। हमें कई प्रणालियों के मलवे के ढेर के नीचे दबे उस अंश की तलाश करना चाहिए। इन प्रणालियों की असफलता हमें गुमराह करने वाली अतिपरिभाषित चेतना और मान्यता से मुक्ति दिलाएगी। बेलो स्वयं केवल सम्मानार्थक मतवादों को त्यागते जा रहे हैं और यह समझने का प्रयत्न कर रहे हैं कि आखिर किस आदर्श के लिए वे स्वयं तथा अन्य जी रहे हैं। हमारे दुर्गुण ही, हमारे जख्म ही, यह बताते हैं कि हम विचार और संस्कृति में कितने समृद्ध हैं, हम कितना जानते हैं, हम अनुभव तक कितना कुछ करते हैं! जो संघर्ष हमें आन्दोलित करता है, वह हमें सहजता की ओर पुनः सोचने के लिए प्रेरित करता है, उस दृखावह दुर्बलता को झाड़ फेंकने के लिए प्रेरित करता है, जो हम लेखकों और पाठकों को भी सहज और ईमानदार होने से रोकती रही है।

लेखकों का बड़ा सम्मान किया जाता है। बौद्धिक जनता आश्चर्यजनक रूप में उनके प्रति सहिष्णु है, और निराशा पर निराशा होने पर भी उनको पढ़ती रहती है कला से वह सन्देश सुनने के लिए, जो उसे धर्म, दर्शन, समाजशास्त्र, या शुद्ध विज्ञान से सुनने को नहीं मिलता नहीं मिल सकता। केन्द्र में इस संघर्ष से एक बड़ी त्रासद इच्छा जागृत हुई है कि हम मनुष्य क्या हैं, कौन हैं, और यह जीवन किस प्रयोजन से है, इसका अधिक विस्तृत, अधिक गहरा, अधिक लचीला अधिक समन्वित, अधिक व्यापक वर्णन प्रस्तुत हो। केन्द्र में मानव-समाज आज अपनी सामूहिक शक्ति से स्वाधीनता के लिए संघर्ष कर रहा है, जबकि व्यक्ति निर्वैयक्तिकता के साथ अपनी आत्मा के लिए संघर्ष कर रहा है। यदि लेखक पुनः इस केन्द्र में नहीं आते, तो वह इसलिए नहीं कि केन्द्र पहले से अधिकृत है। वह अधिकृत नहीं है, और यदि लेखक केन्द्र में प्रवेश करना चाहें तो वे इसके लिए स्वतंत्र हैं। जीवन के सारभूत-तत्वों को प्रूस्त तथा टाल्स्टाय जैसे मनीषियों ने 'सत्व-संभावों' का नाम दिया है, जो किसी जटिलता, उलझन या पीड़ा की स्थिति में हमारी चेतना में झलक जाते हैं, और लुप्त हो जाते हैं। उनके लुप्त हो जाने पर हम फिर संशय में डूब जाते हैं, किन्तु जिस गहराई से ये उद्भूत होते हैं उस गहराई से हमारा कभी सम्बन्ध नहीं छूटता। साहित्य का महत्व इन 'सत्व-संभावों' की पहचान करने में है। सॉल बेलो के अनुसार एक उपन्यास एक ओर भौतिक जगत की वस्तुओं, व्यापारों और प्रतीतियों से लगाकर दूसरी ओर सत्व-संभाव के उद्गम, अंतर्जगत की सीमाओं के बीच झूलता रहता है, और हमें यह विश्वास दिलाता है कि इन तमाम बुराइयों के बीच हमें भीतर से जकड़े रहने वाली अच्छाई कोई भ्रम नहीं है।

जिसने वर्षों उपन्यास लेखन में बिताए हैं उनमें से कोई भी इस तथ्य से अनभिज्ञ नहीं है। उपन्यास की तुलना किसी प्रबन्ध काव्य या काव्यात्मक नाटक से नहीं की जा सकती। उपन्यास को एक आधुनिक आश्रम कहा जा सकता है जिसके सायबान में आत्मा आश्रय ले सके। एक ओर इन 'सत्व संभावों' और दूसरी ओर अन्य कई मिथ्या-संभावों के बीच, जिनसे कि प्रायः यह जीवन बना है, एक उपन्यास संतुलन बनाए रखता है। वह बताता है कि प्रत्येक व्यक्ति के लिए अस्तित्वों की प्रचुरता है, कि अकेला एक अस्तित्व अपने आप में भ्रम है, और ये समस्त अस्तित्व मिलकर किसी वैशिष्टय का संकेत देते हैं किसी वैशिष्ट्य का संपोषण करते हैं, किसी वैशिष्ट्य को तृप्त करते हैं। वह हमें किसी अर्थ की, किसी समरसता की, न्याय की भी प्रतिति देता है। कॉनरेड के मत का समर्थन करते हुए सॉल बेलो का कथन है कि कला इस ब्रह्माण्ड में, भौतिक द्रव्यों में और जीवन के तत्वों में, उसकी खोज का प्रयत्न करती है जो मौलिक है, अनिवार्य है, और स्थाई है।

—स० ओझा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक समीक्षा

इस्लाम में सूफी सन्त

इस्लाम के अध्ययन के क्षेत्र में जर्मनी के प्रमुख प्राच्य विद्याविदों में डॉ० एनामेरी शिमेल का नाम भी परिगणित होता है। भारत-इस्लामी अध्ययन में उन्हें जर्मनी का प्रमुखतम विशेषज्ञ कहा गया है। सूफीवाद की उत्पत्ति, विकास, उसके चार या सात सोपान, और उसके इस्लामी-गैर इस्लामी कवियों पर अनेक ग्रन्थ उपलब्ध हैं, किन्तु डॉ० शिमेल का ग्रन्थ, 'मिस्टिकल डाइमेन्शन्स ऑफ इस्लाम' प्रथम बार पार-राष्ट्रीय आधार पर सूफीवाद का इतिहास प्रस्तुत करने के कारण संतोष देनेवाला ग्रन्थ है। कई दृष्टियों से परखे जाने के कारण व्याप्त कठिनाई के बावजूद यह ग्रन्थ सूफीवाद को परिभाषित करता है और अरबी, फारसी, तुर्की, सिंधी, पंजाबी और पश्तो में प्राप्त तत्संबन्धी काव्य में उसके विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश प्रक्षिप्त करते हुए उसके रहस्य-वादी आन्दोलन के धुँधले मूल पर विचार विमर्श प्रस्तुत करता है। तब भी 'भारत-पाकिस्तानी अंचल में सूफीवाद' सम्बन्धी अध्याय में, जो हमारे पाठकों की अधिकतम दिलचस्पी का विषय हो सकता है, पुस्तक सम्बन्धी कुछ टेढ़े सवाल उठ खड़े होते हैं, यद्यपि इससे लेखिका की गहन विद्वत्ता के प्रति आश्चर्य के भाव में कोई कमी नहीं आती।

सूफीवाद को केवल इस्लाम की ही घटना क्यों माना जाए? लेखिका ने इस दृष्टिकोण का समर्थन किया है कि सूफीवाद सामान्यतः इस्लामी रहस्यवाद का ही नामांतर है। किन्तु क्या इस्लाम में सूफियों के लिए कभी कोई स्थान रहा है? मंसूर अलहल्लाज से लगाकर सरमद तक, सूफियों ने इस्लाम के कट्टर पंथियों के हाथों शहादत ही हासिल की है। स्वयं शिमेल कहती हैं, कि दिल्ली के अठारहवीं शती के महान रहस्यवादी मीर दर्द अपने आप को एक सूफी की बनिस्बत 'एक सच्चा मुसलमान' कहलाना पसन्द करते थे। आश्चर्य है कि लेखिका सूफीवाद पर शताब्दियोंतक इस्लामी विचारों की चमक चढ़ी चलती मानती हैं। यद्यपि कुरान के 'जिधर भी तुम देखो, अल्लाह का रुख ही नजर आएगा' या 'खुदा तुम्हारे गले की नस से भी तुम्हारे ज्यादा नजदीक है'—जैसे विचारों से उद्भूत होने पर भी सूफीवाद अपने अद्वैतवादी और सर्वेश्वरवादी विचारों के कारण इस्लाम के कट्टर पंथियों की घृणा का पात्र रहा है। सच तो, अभी भी इस्लाम के भक्त कुरान के उपयुक्त विचारों को वह अर्थवत्ता या महत्व नहीं देते जो सूफी देते हैं। आज भी सम्प्रदायवादियों द्वारा सूफी शब्द का प्रयोग निन्दात्मक अर्थ में होता है।

मन्सूर अलहल्लाज ने जिसने प्रथम बार अपने भावोद्गारों में तात्विक चिन्तन का आभास दिया था, शिमेल के शब्दों में ही 'सम्पूर्ण सिंध की विस्तृत यात्रा की और इस देश के धर्मगुरुओं से सात्विक समस्याओं पर विचार-विमर्श किया।' और एक उतना ही बड़ा लेखक हमें स्मरण दिलाता है, 'अलहल्लाज का कथन, 'अनलहक' (मैं-ही सत्य हूँ,) उपनिषद की एक उक्ति, 'अहम् ब्रह्मास्मि' (मैं ही ब्रह्म हूं,) की एक प्रतिध्वनि ही है।' क्या सूफीवाद भारतीय विचारधारा से बहुत प्रभावित नहीं था? शिमेल ने ठीक ही इस मत का खण्डन किया है कि वेदान्त या योगदर्शन का इस्लामी स्वरूप ही सूफोवाद है, किन्तु उन्हें यह स्वीकार करना चाहिए कि वह शुद्ध इस्लामी भी नहीं है। मगर हमें ऐसी खतरनाक तुलनाओं से बचकर चलना चाहिए, क्योंकि जैसा कि हम अब जानते हैं सूफीवाद न इस्लामी है न हिन्दुई, हालाँकि वह यह दोनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही हो सकता है। सूफीवाद कोई पन्थ नहीं है, यह अपने आप में एक विचार धारा है, जीवन-पद्धति है, जो विभिन्न धार्मिक विचारों, और क्षेत्रीय-मानस पर अवलंबित होते हुए भी इनसे मुक्त है।

दूसरे, शिमेल क्यों उर्दू सिंधी, पंजाबी और पश्तो भाषाओं को इस्लामी भाषाएँ मानती हैं, और उनकी कविताओं को इस्लामी काव्य कहती हैं? सारी पुस्तक में डॉ० शिमेल ऐसा ही मानती चली हैं, यद्यपि इन भाषाओं को 'गैर-अरबी मूल की भाषाएँ' कहकर थोड़ी छूट देती हैं। हम जानते हैं कि इन गैर-अरबी भाषाओं के विकास में हिन्दुओं और मुसलमानों ने योगदान किया है और इन भाषाओं का सूफी काव्य इन संकीर्ण-मान्यताओं से एकदम ऊपर है। 'पैगम्बर मुहम्मद के सम्मान में 'नात' की रचना में कई हिन्दुओं ने अपने मुस्लिम भाइयों का साथ दिया और कभी कुरान और कभी वेद में 'अबु हनीफ' और' हनूमान' के रूप में व्यंजित हस्ती की मूलभूत एकता का गान करने के लिए कई मुस्लिम शायर नहीं हिचकिचाए। सूफीवाद में धार्मिक ग्रहणशीलता के स्पष्ट तत्व के कारण सूफी काव्य कभी हिन्दू विचारधारा, कभी मुस्लिम विचारधारा के बीच निरंतर झूलता रहा। उदाहरण के लिए शाह अब्दुल लतीफ के इस बैत की

'सदा चिन्तन करो इस शब्द का
तुम्हारे सब कष्टों का अपहारक
'मीम' अपने मन में रखो,
और रखो 'अलिफ' उसके पहले।'

व्याख्या सर्वांशतः दोनों, हिन्दु-विचारधारा के अनुसार 'ओम्' (जो अरबी लिपि में लिखे जाने पर अलिफ से शुरू होकर मीम पर समाप्त होता है,) और मुस्लिम विचारधारा के अनुसार 'अल्लाह में मुहम्मद' (अलिफ से अल्लाह और मीम से मुहम्मद), के रूपों में की जा सकती है, यद्यपि शिमेल ने इस्लामी विचारधारा के अनुसार ही इसका निर्वचन किया है।

इसके अलावा अन्तिम अध्याय 'भारत-पाकिस्तान में सूफीवाद' में, जिसमें सिंधी, पंजाबी और पश्तों के रहस्यवादी काव्य की विवेचना की गई है, इस उपमहाद्वीपीय सूफीवाद के अध्ययन में हिन्दी, बंगला और बंगलादेश की सूफी कविता का भी विवेचन करना न्यायतः उचित था। दूसरे शब्दों में, अपने सूफीवाद के इस्लामी कठघरे को एक तरफ रखकर शिमेल को हिन्दी के प्रेममार्गी छन्दों और बंगला के बाउल-गीतों पर भी विचार करना चाहिए था। यत्र-तत्र पुस्तक में इनके कहीं कहीं संकेत और संदर्भ हैं, किन्तु नाकाफी होने के अलावा, उनमें निहित संवेदना के साथ वे सदा न्याय भी नहीं कर पाते। उदाहरण के लिए एक स्थान पर शिमेल कहती हैं, 'रहस्यवादी कविता का एक बड़ा समूह पूर्व बंगाल में पाया जाता है, जो 'मारिफत' के नाम से प्रसिद्ध अपूर्व सौंदर्य, कोमलता और संगीत से भरे यहाँ के लोकगीत हैं। ये नदियों पर गाए जाते हैं, और परम रहस्यमय मुहम्मद नाविक के रूप में प्रकट होता है जो रूह को सुरक्षित किनारे पहुंचाता है।' सूफी विचारों से समृद्ध बंगाली बाउल गीत, धार्मिक मतवाद के प्रपंचों में नहीं उलझते। पश्चिम बंगाल (भारत) के या बंग्लादेश के एक अधिक प्रातिनिधिक गीत को लिया जा सकता है 'ओ मेरे मालिक, तेरी पुकार मुझे सुनाई दे रही है, पर मैं नहीं आ सकता, क्योंकि मुर्शिद (गुरु) मेरा रास्ता रोके हुए है। तेरे दरवाजे पर शास्त्र, कुरान, माला आदि के कई ताले लगे हुए हैं।'

—डॉ० मोतीलाल जोतवाणी

मिस्टिकल डाइमेन्शन्स ऑफ इस्लाम (अंग्रेजी)— डॉ० अन्नामेरी शिमेल, यूनिवर्सिटी ऑफ नॉर्थ केरोलिना प्रेस, १९७५ पृ० ५०६ मूल्य डॉ० १४.९५

वर्तमान शताब्दि का भारतीय साहित्य

डॉ० गोपाल चन्द्र मिश्र की ओड़िया पुस्तक 'चलित शताब्दीर भारतीय साहित्य' भारत की १४ आंचलिक भाषाओं का इतिहास है। असमिया मलयालम, कन्नड़, तेलुगु, तमिल, मराठी, गुजराती, उर्दू, पंजाबी, बंगाली, हिन्दी, कश्मीरी, मैथिली,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और ओड़िया भाषाओं में लिखे साहित्य को दृष्टिगत रखते हुए, अपने विषय के विद्वान डॉ० मिश्र ने योग्यतापूर्वक भारतीय साहित्य के परिदृश्य का अध्ययन किया है। जहाँ तक उनके शोध और विश्वास का प्रश्न है, जिस सिद्धांत को उन्होंने अपनाया है, वह भारतीय साहित्य को एक वृक्ष के रूप में समझना है। भारतीय महादेश की और भारत वासियों के सांस्कृतिक, मनो-वैज्ञानिक तथा धार्मिक विचारों की मौलिक एकता में दृढ़ विश्वास होने से डॉ० मिश्र ने साहित्य अकादमी का यह सिद्धांत-वाक्य (अपनी भूमिका में) स्वीकार किया है कि भारतीय साहित्य, अनेक भाषाओं में लिखा जाकर भी एक है। डॉ० मिश्र द्वारा प्रस्तुत इस अध्ययन को इस प्रकाश में देखने से, सम्पूर्ण कृति में प्रवाहित यही तत्व निर्णायक तत्व प्रतीत होता है।

आंचलिक भाषाओं को अभिव्यक्ति का आत्म-विश्वास वैष्णव भाव-धारा से प्राप्त हुआ है। जनता की बोलचाल का माध्यम रहने के बाद इन भाषाओं ने प्रायः मध्य युग में लिखित भाषा का पद प्राप्त किया था जब कि वैष्णव कवियों ने, बाद के युग में गद्य के क्षेत्र में मिशनरियों और पादरियों की तरह ही, अपने मतवाद को सामान्य जन तक पहुँचाने के लिए सामान्यजन की भाषा में व्यक्त करने की आवश्यकता महसूस की। भारतीय इतिहास की मध्य शताब्दियों में भारत की विभिन्न भाषाओं में वैष्णव काव्य के विवेचन का डॉ० मिश्र का प्रयत्न धार्मिक क्षेत्र में उतना नहीं, जितना भारतीय साहित्य में अभिव्यक्ति के क्षेत्र में भारतीय मानस की अटूट एकता की खोज का है। यह डॉ० मिश्र द्वारा विवेचित अनेक उदाहरणों में से एक है। असमिया में शंकर देव, तेलुगु में कृष्णदेव राय, बंगला में चैतन्य युग, हिन्दी में मीरा बाई, मैथिली में विद्यापति, और ओड़िया में वैष्णव युग ने भारत की सतत प्रवहमान बौद्धिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विचार-धारा के आधार पर एक अविराम काव्य-प्रवृत्ति का निर्माण किया था। साहित्य में इन विचारों की सक्रियता पर अंतर्दृष्टि के कारण डॉ० मिश्र ने अपने इस विवेचन को अनायास भारत के सांस्कृतिक इतिहास का रोचक अध्ययन बना डाला है।

'चलित शताब्दीर भारतीय साहित्य,' अपनी विवेचित विषय-वस्तु के कारण, जिस तरह साहित्य का इतिहास है उसी तरह वह भारत की संस्कृति का इतिहास भी है। जहाँ तक भारतीय भाषाओं का प्रश्न है संस्कृत एक जीवंत प्रपात है जिसने विभिन्न परिस्थितियों में इन्हें जल देकर युगों से पोषित करते हुए, अभिव्यक्ति के स्वतंत्र माध्यम के रूप में जीवित रहने की क्षमता और स्फूर्ति दी है। संस्कृत उर्वर मिट्टी है, और भारतीय देशी भाषाएँ एक ही प्रजाति के उससे उगे हुए इस विस्तृत उर्वर देश में वृक्ष हैं। भूमिका में इस तथ्य से आरंभ कर डॉ० मिश्र आगे अपने विवेचन में गहरे प्रविष्ट हुए हैं। पौर्वात्य-संदर्भ में संस्कृत ही संस्कृति है, और इस अध्ययन की मुख्य विषयवस्तु इस केन्द्रीय विचार पर आधारित है कि सभी युगों में भारतीय साहित्य भारतीय संस्कृति की अभिज्ञता की ही अभिव्यक्ति है। इस अर्थ में भारतीय साहित्य विभिन्न भाषिक-माध्यमों में लिखा होने पर भी, भारत की सांस्कृतिक एकता का द्योतक है, वह सर्वसम्मति से अभिन्न रूप से एक स्वर में बोलता है। यह ग्रन्थ यद्यपि ओड़िया में लिखा हुआ है, इस से डॉ० मिश्र ने समग्र रूप से भारत के आलोचना-साहित्य को समृद्ध किया है। समस्त भारतीय साहित्य के विशद बोध के लिए यह ग्रन्थ आदर्शात्मक और क्रियात्मक दोनों दृष्टियों से भारतीय साहित्य के बौद्धिक-पथ पर निश्चय ही मील का पत्थर है।

—एस. एन. रथ

चलित शताब्दीर भारतीय साहित्य, (ओड़िया) लेखक डॉ० गोपाल चन्द्र मिश्र, प्रकाशक, जसोधरा, कटक १९७४. मूल्य-४०.००

अन्धा मन या अन्धा भाग्य ?

कर्मफल जीवन की एक अनिवार्य नियति है, पिता के कर्मफल स्वयं पिता के जीवन में न फल कर पुत्र के जीवन में भी फल सकते हैं, और भविष्य की इन घटनाओं का ज्योतिष विद्या के द्वारा पूर्व-दर्शन भी संभव है, यह तथ्य प्रचारित करता है ओड़िया के प्रसिद्ध कथाकार डॉ० कृष्णप्रसाद मिश्र के उपन्यास 'सिंह - कटि' का हिन्दी अनुवाद 'अंधा मन'।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओड़ीसा के एक सामान्य देहात में महाजनी कारोबार में सम्पन्न मधुसूदन षडंगी के तीन पुत्र हैं, रमाकान्त जो कटक में डॉक्टरी करता है, देवीपाद पढ़ाई छोड़ वेद-वेदान्त और तंत्र-मंत्र में रुचि के कारण अन्यमनस्क घर-बार से उदासीन हो घर पर ही रहता है, और तीसरा पुत्र शिवनाथ पाठशाला में दसवीं कक्षा का छात्र अपनी सहपाठिनी, और बाणपुर के जमींदार गोविन्द महापात्र की लड़की सुकेशी का प्रणय प्रार्थी है। देवीपाद की जन्मकुण्डली देखकर एक ज्योतिषी स्वामीजी ने भविष्य कथन किया कि उसको एक ही साथ प्रव्रज्या और महाभोग का योग है, कि वह अपने बाप के पाप अपने कंधों पर लेकर उसके कुल का उद्धार करेगा, और यह भी कि एक भाई उसका भार बँटा सकता है।

अपने यौवन में मधुसूदन का पीताम्बर रथ की नई दुलहन सारसी से अवैध सम्बन्ध हो गया था, जिससे एक सन्तान यादव-किशोर भी पैदा हुई थी। यही पाप था जिसका फल उसके बेटे देवीपाद और शिवनाथ को भोगना था।

देवीपाद के ऊपर भी पड़ोस के गरीब घराने की लड़की स्नेहप्रभा अनुरक्त थी; देवीपाद भी उसे चाहता था, किन्तु देवीपाद की मां वसुन्धरा स्नेहप्रभा की गरीबी के कारण इस सम्बन्ध के लिए तैयार न थी। उधर कटक में रमाकान्त भी एक कुरूप किन्तु धनवान लड़की रजनी को अपने प्रेम-जाल में फँसाए हुए था, उसकी सम्पत्ति हथियाने के लिए। शिवनाथ की प्रेमिका सुकेशी इसी बीच आगे अध्ययन के लिए कटक पहुँच जाती है और वह भी रमाकान्त की लोलुप-दृष्टि का शिकार हो जाती है।

मधुसूदन षडंगी की मृत्यु पर जब स्नेह-प्रभा का विवाह बालेश्वर के एक धनी सज्जन रमेश के साथ हो जाता है तो निराश होकर देवीपाद घर से बाहर निकल जाता है, और कलकत्ता पहुँचकर एक गुप्त अराजक दल के दलपति किन्तु प्रकट में व्यवसायी सुकुमार बैनर्जी के कारोबार में स्थान पा लेता है। कालान्तर में अराजक दल की एक योजना बनती है धनी रमेश के घर डाका डालने की, जब कि उसकी पत्नी स्नेह अपने पीहर गई हुई थी। पीताम्बर रथ और देवीपाद उस घर में प्रवेश करते हैं। उन्हें पता नहीं है कि रमेश की पत्नी और एक जमाने की देवीपाद की प्रेमिका स्नेह-प्रभा देवीपाद के छोटे भाई शिवनाथ के साथ ससुराल लौट आई है। रमेश को बाँध कर पीताम्बर तिजोरी से रुपए निकालता है। देवीपाद स्नेह को अस्त-व्यस्त कपड़ों में सोई देखकर अपने आपको रोक नहीं पाता और उसे जगाकर प्रणय-निवेदन करता है। स्नेहप्रभा के विरोध करने पर देवीपाद उत्तेजित हो उठता है, किन्तु इसी बीच दूसरे कमरे से शोर सुनकर शिवनाथ आ उपस्थित होता है। देवीपाद इस आकस्मिक विरोध से निपटने के लिए बिना पहचाने शिवनाथ के पेट में छुरा भोंक देता है, और उसका काम तमाम कर देता है। इस तरह बाप के पाप पुत्रों के जीवन में फलीभूत हुए और ज्योतिषी का भविष्य कथन सत्य प्रमाणित हुआ।

कहानी अवश्य रोचक है, और अंत तक पाठक को बाँधे रखती है। अनुवाद भी निर्दोष है। किन्तु उपन्यास के न ओड़िया नाम 'सिंह कटि' की, न अनुवाद के नाम 'अंधामन' की कुछ संगति बैठती है। लेखक का उद्देश्य भी स्पष्ट नहीं हो पाता। शुद्ध मनोरंजन हो तो कर्मफल और ज्योतिष के निर्वचन की क्या सार्थकता है? कर्म-फल का सिद्धान्त भी यदि दार्शनिक दृष्टि से देखा जाए तो, पिता के कर्म की फलवत्ता पुत्र के पक्ष में कहाँ तक न्याय्य कही जा सकती है? पहले तो नर और नारी का परस्पर अनुकूलता के आधार पर मिलन चाहे सामाजिक मान्यता के प्रतिकूल हो पर वह पाप क्यों हो? पुत्र पिता की भौतिक संपत्ति का उत्तराधिकार तो होता है, पर आवश्यक नहीं कि उसकी नैतिक या आध्यात्मिक प्रवृत्ति का भी उत्तराधिकार उसे मिले। लेखक दर्शनशास्त्र का विद्वान और वैज्ञानिक युग की उपज है। उससे अधिक सजगता और बौद्धिकता की अपेक्षा अस्वाभाविक नहीं थी।

—मनस्वी

अन्धा मन : मूल लेखक डॉ० कृष्ण प्रसाद मिश्र, अनु० शंकरलाल पुरोहित, नई दिल्ली सस्ता साहित्य मण्डल, १९७७, पृ. १४४, १८ सेमी. मू० : ८,००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेरहवाँ सूरज

जिन पाठकों ने अमृता प्रीतम की आत्म कथा 'रसीदी टिकट' पढ़ी है, वे सहज ही समझ लेंगे कि सूरज के प्रति उनकी निष्ठा, आवेश बल्कि मनोग्रस्तता (ऑब्सेशन) के दर्जे तक पहुँची हुई है। और इस तथ्य से लेखिका स्वयं अवगत है। सूर्य उनके लिए प्रकाश का, उत्साह का, आशा का, एक नए जीवन का प्रतीक है। उक्त पुस्तक में स्वयं उन्होंने खोज-खोज कर सूर्य-विषयक अपनी सूक्तियां गिनी हैं। अतः आश्चर्य नहीं कि उसके बाद लिखे इस उपन्यास को उन्होंने तेरहवें सूरज की संज्ञा दी। पुराणों और स्मृतियों में प्रत्येक मास को एक-एक विशिष्ट सूर्य दिया गया है। यह सूर्य समय की परिधि से परे तेरहवां सूर्य है। सूर्य है, इसलिए प्रकाश, और जीवन का दाता तो है ही, वह तेरहवाँ सूर्य है, अस्त होने वाला नहीं, सदा आकाश पर चढ़ा रहने का वर पाए हुए !

प्रकाश का यह स्तम्भ इस धरती पर लेखक का मस्तिष्क है, जो समाज के विवेक का रखवाला, कान्शन्सकीपर है। उसे चिन्तन की दिव्य दृष्टि मिली हुई है। इन्सान का सारा दर्द और सारा चिन्तन उस मस्तिष्क की रोशनी है। यह दिव्य दृष्टि महाभारत युद्ध में संजय को प्राप्त हुई थी। महाभारत का युद्ध कभी समाप्त नहीं होता। यह समाज में और मनुष्य के मन में अनवरत चलता रहता है। मनुष्य इसे सहज देखना नहीं चाहता क्योंकि यहाँ उसके द्वारा उसके ही कुल का नाश हो रहा है। वह आँखों से हीन ही रहना चाहता है।—उसे यदि इस युद्ध का समस्त प्रकट-अप्रकट वृत्तान्त जानना हो तो वह संजय से, एक लेखक से मालूम हो सकता है क्योंकि ऐसी दिव्य दृष्टि केवल संजय को, तेरहवें सूरज इस लेखक को ही प्राप्त है। 'तेरहवाँ सूरज' का नायक, संजय एक ऐसा ही लेखक है।

अपनी आत्म कथा में लेखिका ने स्वीकार किया है कि जीवन की देखी, सुनी या बीती घटनाएँ कब और किस प्रकार लेखक की रचना का अंश बन जाती हैं, कभी चेतन तौर पर और कभी बिलकुल अचेतन तौर पर, यह किसी हिसाब की पकड़ में नहीं आता। यदि रचना का नायक या पात्र लेखक ही हो तो स्वाभाविक है कि वह रचनाकार का प्रतिनिधि ही नहीं, प्रतिमूर्ति भी हो जाता है। लेखिका के जीवन के चढ़ाव-उतार से परिचित पाठक सहज ही समझ लेगा कि तेरहवाँ सूरज का नायक संजय बहुत कुछ स्वयं अमृता प्रीतम हैं। संजय के जीवन की सभी घटनाओं का प्रतिबिम्ब कमोवेश लेखिका के जीवन की घटनाओं में खोजा जा सकता है। इस दृष्टि से संजय केवल महाभारत का द्रष्टा ही नहीं तेरहवाँ सूरज में वह अच्छे-बुरे का स्रष्टा भी है। उसकी वाणी, उसकी कलम की शक्ति लहू लुहान अक्षरों में डूबी हुई है।

संजय की दुनिया लेखक की दुनिया है। वह मानता है कि दुनिया में जितने भी लोग हैं वे दो वंशों से हैं, एक वंश जो अक्षरों को कत्ल करता है और दूसरा जो अक्षरों से कत्ल होता है। वह स्वयं दूसरे वंश का है। प्रकाशक है हिटलर के समय के एक कन्सेंट्रेशन कैम्प का डाक्टर रोजेनथाल, जो उन कैदियों को, जिनके दाँत में सोने की कीलें थीं, इलाज करते हुए मार कर उनके दाँत से सोना निकाल लेता था। बेचारा लेखक, प्रूफरीडरी और अनुवाद करके अपना गुजारा करता है, पर वहाँ भी उसे यह रेट नहीं मिलती जो सरकार द्वारा दी जाती है। अफसरों, पाठ्य पुस्तकों आदि का एक दुष्चक्र जो फैला हुआ है चारों ओर !

एक पात्र है संजय का एक पाठक, देहात से आया हुआ जिसके मन में कुछ सुलगन है। पर मजबूर है। उसके पास पैसे-टके बहुत हैं गुजारे लायक। 'जमीन भी अपनी, शरीर भी अपना, पर यह सुसरी जिन्दगी ही अपनी नहीं होती।'—किसी गुरु के पाखण्ड से अपने को मुक्त नहीं कर सकता।—विद्रोह उठता है उसकी छाती में से आग की लपट की तरह, पर गले में आकर अटक जाता है। गले में से रोटी का ग्रास भी तो लँघाना होता है। और एक पात्र है प्रेस का मशीनमेन अपढ़ करीम मियाँ, दो बीवियों का खाँविन्द और बुल्लेशाह का भगत। उसका भी शादी के पहले किसी मुमताज से इश्क हुआ था, जिसने करीम से कहा था 'तुम मेरे कुरान शरीफ हो।'—लेकिन शिया-सुन्नी की बाधा बीच में आ गई, और जो विवाह उसके लिए उड़ान हो सकता था, वह पिंजरा बन गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और है मीता, अपने खूसट धनी पति द्वारा परित्यक्त, नानी के साथ जीवन की घड़िया काटती हुई। उसके जीवन की विडम्बना का प्रतीक है, फूलों को चूहों की तरह पकड़ने के लिए पिँजरा।—वह संजय की कृतियाँ पढ़ती है आवश्यकता के समय उसकी सहायता स्वीकार करती है, और उसके प्रति आकृष्ट होती है। बस, ये चार पात्र—संजय. उसका अनाम पाठक, करीम मियाँ और मीता, 'एक ही गाँव' के निवासी एक ही तरह सोचने और तड़पने वाले हैं।

किन्तु ये सभी पात्र मूल संजय के चरित्र को उद्‌घाटित और विकसित करने के लिए साधन भर हैं—मिसेस चौधरी, अतरचन्द, मदान, प्रकाशक आदि भी, जो 'उसके गाँव के' निवासी नहीं है। मिसेस मेनका चौधरी यदि शरीर को वस्त्रों के समान ही उपयोग करती है, तो तर्क के लिए उसका दोष क्या है? वस्त्रों का उपयोग और मेनका के शरीर का उपयोग भी संजय ने किया ही था। और शरीर को 'आत्मा' या 'अपने' से बढ़कर वह स्वयं मानता हो इसका प्रमाण भी तो कहीं नहीं है।

मीता में उसकी अनायास आसक्ति भी सकारण नहीं लगती। यह आकस्मिक आसक्ति क्या प्रथम - दर्शन का फल नहीं है? किन्तु तब मन की आदिम गुहा में अनायास प्रवेश कर युक्तियों के सूत्रों को खोज लाने वाला संजय इस तथ्य को क्यों नहीं पकड़ पाया? अपनी सद्य प्रकाशित कहानी के नायक 'राहुल' के व्याज से अपने बचपन में प्रवेश कर अपने अवैध जन्म का, सौतेले भाई के व्यवहार का और माता-पिता के संबंध का इतिहास, और फिर अभी भी माँ की टांग से सटकर खड़े होने की विवशता का विश्लेषण वह कर सकता है, और मीता के साथ अपनी आकस्मिक अनुरक्ति का नहीं? दरिया की प्यास, दूसरे दरिया से मिल कर ही बुझती है, पर वह दरिया मीता ही क्यों हो?

शैली मनोविश्लेषात्मक है। चेतना-प्रवाह, सहचार और सुझाव के द्वारा संजय एक प्रसंग से दूसरे और तीसरे पर बड़ी स्वाभाविकता से पहुँच जाता है? वह बहुपठित है, उसे अपने संजय नाम का बोध है, और वह महाभारत के संजय से अपना तादात्म्य अनुभव करता है। बचपन का उसका सही नाम क्या था, पता नहीं, किन्तु उस गोल कबूतर ने शायद यह नाम जान बूझ कर, अपने पूरे दायित्व को हृदयंगम करके ही रखा होगा। वह इतिहास के परिप्रेक्ष्य में जीवन के रथ को बढ़ते देख रहा है। उसका मन कई सदियाँ चीर कर वहाँ चला गया था जहाँ आदम की जात ने पहली बार अपने अक्षरों को अंकित करने के लिए स्याही बनाई थी। ऐसे मन से महामानव के इर्द गिर्द घटनाएँ अनायास ही घिर जाएँ तो क्या आश्चर्य है?

चित्र व्यक्तियों के न हों, पर साम्प्रतिक समाज के दो टूक चित्रों से कथानक बड़ा मनोरम है। भाषा बड़ी प्रवाहमई, और उसमें व्यञ्जना की अद्‌भुत लाक्षणिक क्षमता है। जगह-जगह पर प्रसंगानुकूल तिलमिला देने वाले अर्धगर्भ फिकरे कसे हैं, जैसे: 'देखो मियां। अल्लाह को भी लाइसेंस मिला था आदमी बनाने का, लेकिन उसने भी लाइसेन्स आगे बेच दिया—किसी कारीगर को बेचता तो कोई बात थी, वह आदमी गढ़-गढ़ कर बनाता, लेकिन उसने इसकी भी तमीज नहीं की, न जाने किस अनाड़ी को दे दिया और वह रोज ठेके पर आदमी गढ़ने लगा' .... या फिर 'जब ईश्वर भी किसी के अस्तित्व के सामने छोटा हो जाता है, उसने वह क्षण जी लिया है।' या 'खुदावन्दा' देखो, अपने बन्दे के आँसू, जो तुमसे भी पोंछे नहीं जाते।' या 'तुम्हें भी सारी उम्र अपनी छाँह में बैठना है, और अपनी धूप में खड़े होना है।'

गरीबी, शराब, सिगरेट, अकौलीन्य और चरित्र के अभाव के बावजूद संजय का चरित्र एक आदर्श चरित्र है। वह इसी सदी के आठवें दशक का पात्र है पर उसे इतिहास का सारथि बनाया गया है। उसे साधारण मनुष्य के मानदण्ड से कैसे नापा जा सकता है?

—स० ओझा

तेरहवां सूरज : ले. अमृता प्रीतम, प्र. राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली १९७७. पृ. १४३ १८ सेमी. मू. : १०-००.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशिष्ट प्रकाशन

(इस स्तंभ में किसी भी विषय के श्रेष्ठ, नए दृष्टिकोण से लिखे या किसी पुस्तकालय में स्थाई रूप से स्थान पाने के अधिकारी ग्रंथ सटिप्पण प्रस्तुत हैं। प्रकाशकों और विषय-विशेष के प्रेमियों से अनुरोध है कि वे कृपया इस स्तंभ को ध्यान से देखें और महत्वपूर्ण स्तरीय प्रकाशित ग्रंथों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करें। लेखक के नाम के सामने यथासंभव जन्म और मृत्यु वर्ष दे दिया गया है। पुस्तकों के नाम के बाद प्रकाशक विवरण, पृष्ठ संख्या (भूमिका और पुस्तक के पृष्ठ) और अंत में पुस्तक की लंबाई तथा मूल्य हैं। पृष्ठ और आकार का विवरण पुस्तकालयों में सूचीकरण-कार्य में सुविधा की दृष्टि से दिया गया है। कोष्ठक में विषय का स्पष्टीकरण, विषय-सीमा या विशेषता आदि की ओर संकेत है।—संपादक)

अंग्रेजी

एडकिन्स, रेवरंट जोसेफ

चाइनीज बुद्धिज्म. वाराणसी, चौखम्बा अमर भारती प्रकाशन १९७५. पृ. ३३-४५३. २२ सेंमी. मूल्य–७५ ०० (चीन में बौद्ध-धर्म)

कणवी चेन्नवीर

माडर्न कन्नड़ पोएट्री. धारवाड़ कर्नाटक यूनिवर्सिटी १९७६ पृ. २३-१२५ २२ सेंमी मू. १५-००

खरे आर. एस.

कल्चर एण्ड रिएलिटी. शिमला, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एडवान्स्ड स्टडीज १९७६ पृ २१-२१० २२ सेंमी. मूल्य ३८.००

ख्वाजा, जमाल १९२६—

क्वेस्ट फॉर इस्लाम. बम्बई, एलाइड पब्लिशर्स १९७७. पृ. १६-२९२ २२ सेंमी. मूल्य-५०.००

घोष शिशिर कुमार

फोर इंडियन क्रिटिल एसेज. कलकत्ता, जिज्ञासा, १९७७. पृ. ७२ २२ सेंमी. मूल्य-८.००

जस्सावाला आदिल सं०

न्यू राइटिंग इन इंडिया. लंदन, पेंग्विन बुक्स १९७७. पृ. ३२० १९ सेंमी. मूल्य-९ ०० (भारत में नव लेखन)

डोरोथी ईगल एण्ड हिलेरी कार्नेल, सं०

द ऑक्सफोर्ड लिटररी गाइड टु द ब्रिटिश आइल्स ऑक्सफोर्ड, क्लैरंडन प्रेस १९७७. पृ. ४१३ २०समी. मूल्य- ६५.००

डॉ० नगेन्द्र सं०

तुलसीदास, हिज माइण्ड एण्ड आर्ट. नई दिल्ली, नेशनल पब्लिशर्स १९७७. पृ. ३१८ २२ सेंमी. मूल्य- ४०·००

नारायण आर. के.,

माई डेज. लन्दन, चैट्टो एण्ड विण्डस १९७५ पृ. १८६ १९ सेंमी. मूल्य-५३ ९५ (आर.-के. नारायण की आत्म जीवनी)

पंडित स्नेह

एन अप्रोच टु द इंडियन थ्योरी ऑफ आर्ट एण्ड एस्थेटिक्स. नई दिल्ली, स्टर्लिंग-पब्लिशर्स १९७७. पृ. ८-१४८ २२ सेंमी. मूल्य-४०.०० (कला और सौंदर्यशास्त्र के भारतीय सिद्धांत का विवेचन)

प्रताप चन्द्र

द हिन्दू माइण्ड. शिमला, इन्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ एडवान्स्ड स्टडीज १९७७. पृ १५२ २२ सेंमी. मूल्य- २०.५०

फेडर लीलिअन

एंशण्ट मिथ इन पोएट्री. प्रिन्स्टन. पी. यू. प्रेस १९७७. पृ ४३१ २३ सेंमी. मूल्य- ४५.०५

बेनर्जी सुरेश चन्द्र

ए कम्पेनिअन टु मिडिल इन्डो-आर्यन लिटरेचर. कलकत्ता, फर्मा के एल. एम. १९७७. पृ १२-३५१ २२ सेंमी. मूल्य-६०.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बर्जर मोरो

रीअल एण्ड इमेजिण्ड वर्ल्डस ऑफ द नावेल एण्ड सोशल साइन्स. कैम्ब्रिज, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस १९७७. पृ. ३०३ २१ सेंमी. मूल्य- १३६.५०

भट्टाचार्जी अमल

फोर एसेज ऑन ट्रेजेडी. कलकत्ता, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस १९७७ पृ. ११३ २० सेंमी. मूल्य- २५.००

माचवे प्रभाकर

फ्रॉम सेल्फ टु सेल्फ. नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस. १९७७. पृ. ११७ २० सेंमी. मूल्य - ४५.०० (हिन्दी लेखक के संस्मरण)

मैक ग्रेगर, आर. एस.,

आउट लाइन ऑफ हिन्दी ग्रामर. दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस १९७७. २६१ २२ सेंमी. मूल्य - २५.००

मैक डॉनेल, आर्थर ए ,

ए संस्कृत ग्रामर फॉर स्टुडेण्टस. लंदन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस १९७५. पृ. २६४ २० सेमी. मूल्य - ५८.१०

मुर्डोक आइरिस

द फायर एण्ड द सन—व्हाइ प्लैटो बेनिश्ड द आर्टिस्ट्स. लंदन, क्लैरंडन प्रेस १९७७. पृ. ८९ २१ सेमी. मूल्य - ४१.५०

सरस्वती बी. एन.

ब्राह्मनिक रिट्यूअल टूडिशन्स. शिमला, इन्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ एड्वान्स्ड-स्टडीज १९७७. पृ १५-२९९ २२ सेंमी. मूल्य - ५०.०० (ब्राह्मणों की कर्मकाण्ड-संबन्धी परंपराएँ)

सरोस कावसजी सं०

सो मेनी फ़ीडम्स. दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, १९७७. पृ. २०५ २१ सेमी. मूल्य-६०.०० (मुल्कराज आनन्द की मुख्य कथाओं का अध्ययन)

सेन सुकुमार

लिग्वा ए लितेरा, लिबेलस, — ओरिजिन एण्ड डेवेलपमेण्ट ऑफ द रामा लीजेण्ड. कलकत्ता, रूपा एण्ड कं०. १९७७. पृ. ३७ २५ सेंमी. मूल्य - १२.०० (रामाख्यान की उत्पत्ति और विकास)

व्हिटेकर, थॉमस आर.

फील्डस ऑफ प्ले इन माडर्न ड्रामा. प्रिंस्टन प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस, १९७७. पृ १९२ २२ सेमी. मूल्य - १००.००

हॉगेन आइनर

द स्कैंडिनेविअन लैंग्वेजेस. लंदन, फेबर एण्ड फेबर १९७६. पृ. ५०७ २३ सेंमी. मूल्य - ३३२.०० (स्कैंडिनेविअन भाषाओं के इतिहास की भूमिका)

हेनरी एण्ड मेरी गार्लैंड. सं०

द ऑक्सफोर्ड कम्पेनिअग टु जर्मन लिटरेचर. ऑक्सफोर्ड, क्लैरंडन प्रेस १९७६. पृ. ९७७ २३ सेंमी. मूल्य - १६६.०० (जर्मन साहित्य की कुञ्जी)

हैलिडेज, एम्. ए. के.

सिस्टिम एण्ड फंक्शन इन लैंग्वेज. सं. जी. आर. क्रेस, लंदन, ऑसफोर्ड यूनिवर्सिटी-प्रेस, १९७६. पृ. २५० २२ सेंमी. मूल्य - २४.५०

कन्नड़

गोपालकृष्ण, व्ही., सं०

कन्दरा. विद्यागिरि, डरिनायकनि पाल्या. १९७७. पृ ४-७२ १८ सेंमी. मूल्य-२.५० (विभिन्न लेखकों की आठ कहानियाँ)

जैन, एस. के.

औषधीय गिडगलु. अनु. ए. एस. रामस्वामी नई दिल्ली, नेशनल बुक ट्रस्ट, १९७६. पृ. १२-१७८ (सचित्र) १८ सेंमी. मूल्य-११.०० (मूल अंग्रेजी मेडिसिनल प्लांट्स का अनुवाद)

रामलाल

तालेयिल्लद गौतम. अनु. अब्दुल मजीद खान, बैंगलूर, समिति १९७७. पृ. ८-१३० १८ सेंमी. मूल्य-६.०० (उर्दू की १० कहानियों का कन्नड़ अनुवाद)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजराती

जोशी, उमाशंकर

पुराणों मा गुजरात अहमदाबाद, गुजरात विद्या सभा मूल्य : ४-००

ठाकर, धीरूभाई सं०

अभिनेय नाटको, बड़ौदा, एम. एस. यूनिवर्सिटी १९६८. मुल्य : ४-००

दवे, कन्हैयालाल

गुजरातनुं मूर्त्तिविधान, १९६३. मूल्य : १५-००

देवलुक, नन्दलाल

बृहत गुजरातनी अस्मिता भावनगर, योगेश एडवर्टाईजिंग सर्व्हिस, १९७०. पृ. १०४८ २२ सेमी. मूल्य : २०-००

देसाई रमणलाल

भारतीय संस्कृति, एक विहंगावहोकन बड़ौदा, एम. एस. यूनिवर्सिटी, १९७४. मूल्य : १५-००

देसाई, शम्भूप्रसाद

सौराष्ट्रनो इतिहास जूनागढ़, सोरठ शिक्षण अने संस्कृति संघ १९७०. मूल्य : १५-००

ध्रुव, आनन्दशंकर

आपनो धर्म, बम्बई, आर. आर. शेठ १९७३ मूल्य : ७-५०

नायक, रतिलाल

मुंशी अभ्यास : जीवन अने साहित्य अहमदाबाद, आनन्द बुक डिपो, १९७०, मूल्य ८-००

परमार, जयमल्ल

आपनी लोकसंस्कृति, अहमदाबाद, भारती साहित्य १९५७ मूल्य : ६-००

पारिख, रसिकलाल

गुजरातनी राजधानिओ, अहमदाबाद, गुर्जर १९५८. मूल्य ४-२५

प्रणवतीर्थ, स्वामी

कहेवत कथानको, बड़ौदा, एम. एस. यूनिवर्सिटी १९५८, मूल्य ६-५०

मुंशी, कन्हैयालाल

गुजरातनी कीर्त्ति गाथा अहमदाबाद, गुर्जर १९७०. मूल्य १६-००

मुंशी, कन्हैयालाल

नरसिंह युगनां कविओ, बम्बई, भारतीय विद्याभवन १९७२. मूल्य ३-००

मोदी, रमणलाल

गांधीजीनुं साहित्य, अहमदाबाद, नवजीवन १९७१. मूल्य १२-००

रावल, अनन्तराय

ग्रन्थस्थ वाङ्मय, बम्बई, व्होरा १९७०. मूल्य : १४-००

व्होरा, कलावती सं०

गुजरातनां साहित्य सर्जको, बम्बई, एस. ई. ए. सप्लायसं १९६९. मूल्य : २०-००

शास्त्री हरिप्रसाद

गुजरातनों प्राचीन इतिहास अहमदाबाद युनिवर्सिटी १९६८ मूल्य ९-००

सुन्दरम्

चिदम्बरा, बम्बई, आर. आर. शेठ, १९६९ मूल्य : १०-५०

तमिल

अखिलन (पेरुंगलुर वैद्यलिंगम अखिलंदम) १९२२—

चित्रप्पावई. मद्रास परिप्पुट, १९७६ (च. सं) पृ. ५०० १८ सेंमी. मूल्य-१५ ०० (भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा पुरस्कृत उपन्यास)

अखिलन (पेरुंगलुर वैद्यलिंगम अखिलंदम) १९२२—

नैचित अलाइकल. (ष सं) मद्रास, परिप्पुट १९७७ पृ. २८६ १८ सेंमी. मूल्य-८.०० (उपन्यास)

अटइक्कल स्वामी, मुत्तुरल १९३४—

तमिल इलक्किय वरतारू. मद्रास, शैव सिद्धान्त १९७६. पृ. ३०४ १८ सेंमी. मूल्य-८.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अयंगर, ए. एस. के.,

कम्यूनिज्म (१८४७-१९७५) अनरुमुटल इनरु वराई. मद्रास, भगत पब्लिशिंग हाउस १९७५. पृ. २४-५९८ २१ सेंमी. मूल्य-४०.००

कन्नपर, ए. आर.,

नमनाट्टु मुलिकाइकल. वेलूर, मुलिगाइमणि (७ भागों में) पृ. ९०० २१ सेंमी. मूल्य-३०.००

कोदण्डरामन. पी.,

उलकिल तमिषुम तमिषरुम. मद्रास, इंटरनेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ तमिल स्टडीज, १९७६. पृ. १६-९२ २१ सेंमी. मूल्य-८.००

टंकवेलु

इंटियक्कलई वरलारू. (दो भाग) मद्रास, तमिलनाडु टेक्स्ट बुक सोसाइटी १९७६. पृ. ९६९ २२ सेंमी. मूल्य-२४.१०

तमिल वनन (एल. रामनाथन)

हार्ट अटेक. मद्रास, मणि मेखलाइ १९७५. पृ. १४४ १८ सेंमी. मूल्य-६.०० (उपन्यास)

नागस्वामी, आर. सं०.

तरूमपुरी कलवेट्टुक्कल. मद्रास, तमिलनाडु सरकार का प्रकाशन विभाग, १९७५. पृ. ८-३१२ २५ सेंमी. मूल्य-९.५०

पिच्चमुट्टु एन.

पटईप्पिलक्कीयम. सेलम, थेन तमिष १९७६. पृ. १०४ १८ सेंमी मूल्य-४.५०

मुट्टुरामन

शैव चित्तन्तम. मद्रास, तमिलनाडु टैक्स्ट बुक सोसाइटी १९७५ पृ. १७८ २१ ५ सेंमी. मूल्य-५.१०

यशोदा पण्मुखसुन्दरम्

नलप्पोरलियल. मद्रास, तमिलनाडु टैक्स्ट बुक सोसाइटी १९७४. पृ. २१७ २१ सेंमी. मूल्य-४.८०

रामस्वामी, एम. एस.

तमिष नट्टुल चेप्पुट्टिरू मेनिकल. मद्रास, जिग्रालाजिकल सर्वे विभाग १९७६. पृ. ८४ १९ सेंमी.

वेंकटाचलपति एन.

मक्कलुम मरपुम. मद्रास, न्यू सेंचुरी १९७५. पृ. १८७ १८ सेंमी. मूल्य-६.००

वरदाराजन मुनिस्वामी १९१२-१९७४

अन्तनाल, (स सं.) मद्रास, परिप्पुट, १९७५. पृ. ६-१९८ १८ सेंमी. मूल्य-७.००

विपुब्रानन्द स्वामी-१८९२-१९४७

यपनुल एनुम इशैत्तमिपनुल. तंजौर, करणथई तमिल संधम् १९७४. स्फुट पृ. २५ सेंमी. मूल्य-२७.५०

सेडु पिल्लै, आर पी. १८७६-१९६१

तमिपिन्यम. मद्रास, पलनियप्पा १९७५. पृ. २४० १८ सेंमी.

तेलुगु

एटुकुरू बलराममूर्त्ति

लुडविग फेवरबाख एंगल्स सम्प्रदाय—जर्मन तत्वशास्त्र मुगिम्पु. विजयवाडा, विशालान्ध्र पब्लिशिंग हाउस, १९७७. पृ ६८ २२ सेंमी. मूल्य-०.८० (मूल जर्मन से अनुवाद)

कालिदास

कुमारस्वामी विजयमु. अनु. चार्ल गणपति शास्त्री, हैदराबाद, अनुवादक से प्राप्य १९७७. पृ. ४-९६ १८ सेंमी. मूल्य-४.०० (कालिदास कृत कुमार संभव का तेलुगु अनुवाद)

कालिदास

रघुवंश लहरी अनु चार्ल गणपति शास्त्री, हैदराबाद, अनुवादक से प्राप्य १९७७. पृ. २६८ १८ सेमी. मूल्य-१०.०० (मूल संस्कृत से अनुवाद)

गौतम

न्याय मीमांसा दर्शनमु. अनु. चार्ल गणपति शास्त्री, हैदराबाद, अनुवादक से प्राप्य १९७७ पृ. ८-१५३ १८ सेमी. मूल्य-३.०० (मूल संस्कृत से अनुवाद)

ठाकुर रवीन्द्रनाथ

अमृत गीतांजलि. अनु. चार्ल गणपति शास्त्री, हैदराबाद, अनुवादक से प्राप्य १९७१. पृ १४-२०७ १८ सेमी. मूल्य-७.०० (मूल बंगला से अनुवाद)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थेंगड़ी, दत्तात्रय बापूजी

कलादो सम्पत्तिना कम्यूनिज्म : तार्किक समीक्षा. अनु. पुराणपण्ड रंगनाथ, विजयवाड़ा साहित्य श्रवन्ति १९७७. पृ. ६-८२ १८ सेमी. मूल्य-२.५० (मूल मराठी से अनुवाद)

दण्डी

नारायणीय काव्यदर्शमु. अनु. चार्ल गणपति शास्त्री, हैदराबाद, अनुवादक से प्राप्य १९७७. पृ ६-१७४ १८ सेमी. मूल्य-२.५० (मूल संस्कृत से अनुवाद)

बापुनेनु. सं० राजन्ना और वेलुगु देविजयन्ती

निडुब्रोलु, किसान पब्लिकेशन्स १९७७ पृ. ७-१९६ १८ सेमी. मूल्य-७.५० (अंग्रेजी 'बापू ब्लेसेस' का तेलुगु अनुवाद)

वाल्मीकि

श्रीमद्रामायण रत्नमालिका, अनु. नल्लन चक्रवर्तुलु रघुनाथचायुलु वारंगल, सी. नरसिंहलु १९७७. पृ ४-१२० १८ सेमी. मूल्य-४.०० (मूल संस्कृत से गृहीत)

व्यास महर्षि

ब्रह्म मीमांसा दर्शनमु. अनु. चार्ल गणपति शास्त्री. हैदराबाद, अनुवादक से प्राप्य १९७७. पृ. २९६ १८ सेमी. मूल्य-१०.०० (मूल संस्कृत से अनुवाद)

पंजाबी

अमृता प्रीतम १९१९—

दस्तावेज० सं० इमरोज नई दिल्ली. नागमणि प्रकाशन १९७८ १४४ पृ. मू० १०-०० (अमृता प्रीतम के पत्रों का संकलन)

धींगड़ा महेन्दर

पंजाबी-हिन्दी कहानी : तुलनात्मक अध्ययन नई दिल्ली, पुष्प प्रकाशन १९७७, २९५ पृ० मू० ४०-००

बंगला

कर बिमल

बिमल करेर श्रेष्ठ गल्प. कलकत्ता, आशा प्रकाशनी १९७७. पृ. २७५ २२ सेमी. मूल्य-१७.००

घोष ईशान चन्द्र अनु०

जातक. (प्रथम खण्ड), कलकत्ता, करुणा प्रकाशनी १९७७. पृ. ३०९ २५ सेमी. मूल्य-३०.०० (बुद्ध के पूर्व जन्म के वृत्तान्त, मूल पालि से अनूदित)

घोष शंख

बावरेर प्रार्थना. कलकत्ता, देज पब्लिशिंग १९७८. पृ ६४ १८ सेमी. मूल्य ४.०० (१९७७ का अकादमी पुरस्कार प्राप्त काव्य)

दत्त सुधीन्द्र नाथ

सुधीन्द्र नाथ दत्तेर काव्य संग्रह. कलकत्ता, देज पब्लिशिंग १९७६. पृ. ४३८. २२ सेमी. मूल्य-२५.०० (बुद्धदेव बसु की भूमिका सहित)

दासगुप्त कल्याणकुमार

इतिहास ओ संस्कृति. कलकत्ता, सच्चिदानंद प्रकाशनी १९७७. पृ २२४ २२ सेमी, मूल्य-२५.००

बसु बुद्धदेव

बुद्धदेव बसुर रचनासंग्रह कलकत्ता ग्रन्थालय प्राइवेट लि. १९७८. पृ ५६४ २२ सेमी. मूल्य-२५.००

बसु राजशेखर (परशुराम)

परशुराम ग्रन्थावली (तृ. खण्ड) कलकत्ता, एम. सी. सरकार एण्ड सन्स १९७६. पृ. ४५१ २२ सेमी. मूल्य-२५.००

भट्टाचार्य लोकनाथ

तिक्ततार एइ रंगे जन्म, कलकत्ता, एम. सी. सरकार एण्ड सन्स १९७६. पृ. १७६ २२ सेमी. मूल्य-६.०० (देशी-विदेशी साहित्य विषयक लेखक के १३ प्रबन्धों का संकलन)

विष्णु प्रभाकर

छन्न छाड़ा महाप्राण कलकत्ता, आशा प्रकाशनी १९७७. पृ. २२०. २२ सेमी. मू. १८-०० (विष्णु प्रभाकर रचित शरच्चन्द्र की हिन्दी जीवनी 'आवारा मसीहा' का देवलीना बेनर्जी केजड़ीवाल द्वारा बंगाली अनुवाद)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शांति देवी सीता देवी

हिन्दुस्तानी उपकथा. कलकत्ता, मित्र एण्ड घोष पब्लिशर्स १९७६. पृ. १३९ (सचित्र) २२ सेमी. मूल्य-१०.०० (श्रीचन्द्र वसु द्वारा प्रणीत अंग्रेजी पुस्तक फॉक टेल्स ऑफ हिन्दुस्तान का अनुवाद)

सेनगुप्त श्री गौराङ्ग गोपाल

विदेशीय भारत विद्या पथिक. कलकत्ता, फार्मा के. एल. एम. १९७७. पृ. ३२४ २२ सेमी. मूल्य-२५ ०० (भारतीय प्राच्य विद्या के प्रेमी २५ विदेशी विद्वानों की दैन)

मराठी

'एस'

कामायनी, पुणे, देशमुख आणि कम्पनी, १९७६, पृ. ३४३ २१ सेमी. मू० २५-०० (गुटबंद उपन्यास लेखन का और एक प्रयास)

पेडणेकर, नारायण

शब्दस्फोट, बम्बई, कस्तुरीमृग प्रकाशन, १९७७, ४४ पृ. १७ सेमी. मू० ७-०० (कविताएँ)

प्रभु देसाइ, बालकृष्ण

जहाज, बम्बई. मौज प्रकाशन गृह, १९७७, पृ. १७० १८ सेमी. १५-०० (मराठी कहानी के क्षेत्र में नया सशक्त हस्ताक्षर)

मेश्राम, केशव

उत्खनन. बम्बई, पाप्युलर, १९७७ पृ. ८८ २१ सेमी. (दलित साहित्य के पुरोधा कवि का प्रथम कविता संचयन)

वह्राडपाण्डे, नी. र.

वाणी आणि वाङ्मय, पुणे, स्वाती प्रकाशन, १९७६, पृ. २७० १८ सेमी. मूल्य २०-०० (साहित्य परक निबंध)

शिरवाडकर, वि. वा.

प्रतिसाद, बम्बई, लोकवाङ्मय गृह, १९७६, पृ. ११३, २१ सेमी. मू० १२-०० (ललित निबन्ध)

साहित्य-समीक्षा, नासिक, सार्वजनिक वाचनालय, १९७६, पृ. ३६० २१ सेमी. मू०-२५-०० (कवि कुसुमाग्रज अभिनन्दन ग्रन्थ)

मलयालम

आर्यन नम्पूतिरि, पी. के.

नटुरम कविकल, कोट्टायम साहित्य प्रवर्त्तक १९७७, पृ. १६०, १८ सेमी. मु० ७-०० (मणि प्रवाल प्रस्थानम् एवम् नटुरम कवियों के सम्बन्ध में विवेचन)

कारूर नीलकण्ठ पिल्लै

कारूर, कोट्टायम, साहित्य प्रवर्त्तक १९७७, पृ. ३१८, २२ सेमी. मु० १२-५० (प्रसिद्ध गल्प लेखक कारूर के सम्बन्ध में विवेचन)

कृष्ण वारियर, एन. व्ही.

वल्लतोलिन्ते काव्यशिल्पम् त्रिवेन्द्रम, यूनिवर्सिटी ऑफ केरल १९७७, पृ. १०-१०८ २२ सेमी. मू० ४-५० (महाकवि वल्लथोल पर अभिभाषणों का संग्रह)

ज्यार्ज, के. एम.

तमिल साहित्यम् त्रिचूर, केरल साहित्य अकादमी १९७७, पृ. ६.३५७, २२ सेमी. मूल्य १५-००

राजशेखरन, एस.

कवितायुते जातकम, कोट्टायम, साहित्य प्रवर्त्तक १९७७, पृ. २१४, १८ सेमी. मूल्य १-०० (कतिपय मलयालम कवियों का अध्ययन)

रामचन्द्रन नायर, के. सं.

गवेषणट्रिन्ते प्रश्नांगल त्रिवेन्द्रम, यूनिवर्सिटी ऑफ केरल १९७६, पृ. १०-२५५; २२ सेमी. मूल्य ९-०० (मलयालम में शोध विषयक विवरण)

सुगत कुमारी

रात्रिमाझा, (कृष्ण पिल्लै की भूमिका सहित) कोट्टायम, नेशनल बुक स्टाल १९७७, पृ. १६-१२५, १८ सेमी. मू० ५-०० (कवयित्री की ४१ कविताओं का संग्रह)

विलासिनी (एम० के० मेनन)

तुटक्कम, कोट्टायम, साहित्य प्रवर्त्तक १९७७, पृ. ३८७ १८ सेमी. मू० १२-०० (एक उपन्यास)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कृत

अडयार लायब्रेरी एण्ड रिसर्च सेंटर

डिस्क्रिप्टिव्ह केटेलाग ऑफ संस्कृत मैन्यूस्क्रिप्टस, ई. आर. श्रीकृष्ण शर्मणा संकलित: अडयार, खं. १३ (दो भाग) विश्वभारती कलेक्शन, प्र भा. पृ. १५-६२१ २५ सेमी. (२ खंड) द्वि. भा. पृ. ४९१ मू० १८०-००

नागेश भट्ट

वैयाकरण सिद्धान्त मंजूषा, सं० कालिका प्रसाद शुक्ल, वाराणसी, सम्पूर्णानन्द संस्कृत वि. वि. १९७७, पृ. २३-३०३ २५ सेमी. मू० ३६-००

भर्तृहरि :

वाक्यपदीयम् हेलाराजकृत प्रकाश व्याख्या और रघुनाथ शर्माकृत अम्बाकर्त्री व्याख्या सहित, वाराणसी, सम्पूर्णानन्द संस्कृत वि. वि. १९७७, पृ. १२-६८२ २४ सेमी. मू० ६५-००

राम चन्द्राचार्य

प्रक्रिया कौमुदी, श्रीकृष्ण कृत प्रकाश टीका एवं मुरलीधर मिश्र टिप्पणी सहित सम्पादित वाराणसी, सम्पूर्णानन्द सं. वि. वि. १९७७, प्रथम भाग पृ. १२-४९० २४ सेमी. ५२-०० द्वि. भाग पृ. ४३६ २४ सेमी. ६७-००

वैद्य. परशुराम लक्ष्मण सं.

हरिवन्श. चिकित्सित पाठात्मक, पुणे, भाण्डार कर प्राच्य विद्या सन्शोधन मन्दिर, खण्ड ४ १९७६, खण्ड ५ पृ. २२४, २५ सेमी.

सिंधी

हरिकांत

मकान खाली आहे. दिल्ली, मल्लाह पब्लिकेशन, १९७७. पृ. ११८ १८ सेमी. मूल्य-७-०० (एकांकी संग्रह)

हरि दिलगीर १९१६—

पल पल जो परलाउ. उल्हास नगर (महाराष्ट्र) सिन्धी टाइम्स पब्लिकेशन, १९७७ पृ १०० २२ सेमी. मूल्य-५ ०० (कविता-संग्रह)

हिन्दी

अवध बिहारी लाल १९२२—

लोक नायक जयप्रकाश. दिल्ली, नवभारत प्रकाशन १९७७. पृ. ३८६ २१ सेमी. मूल्य-२०.०० (जीवनी)

खेरिया काशीप्रसाद

मौन व्यथायें (सं.) स्वदेश भारती, कलकत्ता, रूपाम्बरा प्रकाशन १९७७. पृ. ४० २४ सेमी. मूल्य-२५.०० (कवि द्वारा ली हुई प्रतिच्छवियों पर कवि की हस्तलिपि में ३३ कविताएं)

गहमरी मान्धाता सिंह १९३५—

गीता और विज्ञान. बक्सर, ज्ञान-विज्ञान ट्रंक सिण्डीकेट १९७७. पृ. ९-३७३ २३ सेमी मूल्य-३०.०० (गीता की विज्ञान के साथ तुलना)

तकषी शिवशंकर पिल्लै १९१४—

सीढ़ी के डंडे. अनु. डॉ. सुधांशु चतुर्वेदी. नई दिल्ली, नेशनल बुक ट्रस्ट, १९७७ पृ. ५५० २२ सेमी. मूल्य-२६ ००

तिवारी भोलानाथ १९२३—

शब्दों का जीवन. नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन (द्वि. सं.) १९७७. पृ. १३४ १९ सेमी. मूल्य-१०-००

देवसरे इकबाल बहादुर १८९६—

तानसेन. इलाहाबाद, साहित्य भवन १९७८. पृ. २०७ २२ सेमी. मूल्य २०-०० (ऐतिहासिक उपन्यास)

नागार्जुन १९११—

पारो. हापुड़, रेवती कुंज, संभावना प्रकाशन १९७५. पृ. ९४ १९ सेमी. मूल्य-८-०० (उपन्यास)

डॉ. जो. आर. परिहार, १९२२—

मराठा-मारवाड़ संबन्ध (१७२४-१८४३ ई.) जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी १९७७, पृ. २२२, २२ सेमी. मूल्य १६-०० (लेखक की मूल अंग्रेजी पुस्तक का लेखक द्वारा अनुवाद)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बर्थ्वाल हरिश्चन्द्र

तत्व विज्ञान. नई दिल्ली, दीनदयाल शोध संस्थान १९७७. पृ. ९४ २५ सेमी. मूल्य-१२-००

बिड़ला लक्ष्मी निवास

फूल और काँटा. नई दिल्ली, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, १९७७. पृ. १३६ २४ सेमी. मूल्य-१०-०० (लेखक की १९ कहानियों का संग्रह)

भट्ट राजेन्द्र शंकर

मेवाड़ के महाराणा और शहन्शाह अकबर, जयपुर, स्फटिक सन्स्थान—१९७६, पृ. ३४–५३१ (सचित्र) २२ सेमी. मू०-७५.००

भारत भूषण अग्रवाल १९१९-१९७५

उतना वह सूरज है. नई दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, १९७७. पृ. १११ २२ सेमी. मूल्य-१५-०० (८७ कविताएँ)

मिश्र, डॉ० कृष्ण प्रसाद, १९३३—

अन्धा मन, अनु शंकरलाल पुरोहित, नई-दिल्ली, सस्ता साहित्य मण्डल, १९७७, प. १४४ १८ सेमी. मू०-८,०० (प्रसिद्ध ओड़िया उपन्यास 'सिंह कोटि' का अनुवाद)

मिश्र, डॉ० कृष्ण प्रसाद. १९३३—

आलोक गंगा, दिल्ली, वाणी प्रकाशन, १९७८, प. ११६, १८ सेमी. मू० १० ०० (लेखक की ११ ओड़िया कहानियों का हिन्दी अनुवाद)

शर्मा डॉ. रामविलास

महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नव-जागरण. नई दिल्ली राजकमल प्रकाशन १९७७. पृ. ४०५ २२ सेमी. मूल्य-२५.०० (आलोचना और जीवनी)

स्वामी करपात्रीजी

रामायण मीमांसा. वाराणसी, विश्वविद्यालय प्रकाशन १९७७. पृ. ४२-४०-११३२, २५ सेमी. मूल्य-४०.०० (वाल्मीकि रामायण की मीमांसा)

डॉ. सुरेश कुमार

शैली विज्ञान. नई दिल्ली, मैकमिलन कं ऑफ इण्डिया लिमिटेड १९७७. पृ. २६१ २२ सेमी. मूल्य-२७.००

अनुसंधान

मराठी

शनवारे, ना. कृ.

राजकीय चलवल आणि मराठी नाट्यसृष्टी, बम्बई, पाप्पुलर, १९७७, पृ. २६०, २१ सेमी. मू० २०-०० (मराठी रंगमंच पर राजनीतिक प्रभाव का विमर्श : पी. एच. डी. शोधप्रबन्ध)

हिन्दी

कुमार, डॉ. वचनदेव

मानस अलंकार कोष दिल्ली, हिन्दी साहित्य संसार, १९७७ पृ. ३५८ २२ सेमी. ६०.०० (पटना विश्वविद्यालय की डी. लिट. उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य मंच

मध्य फरवरी १९७८ में नई दिल्ली के इंडिया इन्टरनैशनल सेण्टर में एशियाई लेखकों के कार्य शिविर में, भारत, हिन्देशिया और मलयेशिया के युवा लेखकों ने सही शब्दों की खोज विषय पर गोष्ठी में भाग लिया, जिसमें विश्वविद्यालय के प्रवक्ता, पत्रकार, शोध-छात्र, व्यवसाई और कतिपय गृहणियाँ भी सम्मिलित थीं। ६६ वर्षीय अंग्रेजी के प्रख्यात भातीय लेखक श्री का. ना. सुब्रह्मानियम ने 'सर्जनात्मक लेखन' विषय का प्रवर्त्तन करते हुए कहा कि प्रभावक शब्द-कोष के गम्भीर अध्ययन से और अवसर के उपयुक्त सही शब्द की अनवरत खोज से शब्द की ध्वनि, रंग और उसके वैशिष्ट्य का बोध हो सकता है।

अपने अंग्रेजी उपन्यास 'आजादी' के लिए १९७७ के साहित्य अकादमी पुरस्कार के विजेता श्री चमन नहाल का मत था कि वे लेखक को चिन्तक के रूप में नहीं, प्रत्युत एक कलाकार के रूप में देखना पसन्द करते हैं। लेखक की प्रमुख समस्या कथा को ठीक रूप देने से संबन्धित है। वे प्रेरणा, संरचना और शैली को अच्छे लेखन के बुनियादी तत्व मानते हैं। अवश्य प्रेरणा तार्किक नियंत्रण से बाहर की वस्तु है, किंतु समाज से तादात्म्य प्रेरणा में सहायक हो सकता है।

किन्तु ७२ वर्षीय श्री मुल्कराज आनन्द के अनुसार विभिन्न संस्कृतियों वाले विशाल देश में कोई लेखक कैसे किसी एक समाज से तादात्म्य कर सकता है? कार्य-शिविर के बिदाई भाषण में श्री आनन्द ने अपना अनुभव स्मरण करते हुए बताया कि उन्होंने अपना पहला उपन्यास कैसे लिखा था। नए लेखकों को उनकी सलाह थी कि वे अपने ही तौर पर अपना मार्ग स्थिर करें।

एक विकासशील देश में लेखक की भूमिका के बारे में जहाँ भारतीय लेखकों में परस्पर वैमत्य था, हिन्देशिया और मलयेशिया के लेखक एक मत थे कि विकासशील देश में एक लेखक की निश्चयात्मक भूमिका है। जकार्ता के राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के प्रवक्ता डॉ० जैनल आबिदिन ने कहा कि लेखक का लक्ष्य मनोरंजन से अधिक होना चाहिए। सामाजिक परिवर्त्तन में वे कैसे सहायक हो सकते हैं उन्हें यह सोचना चाहिए। मलयेशिया में एक बाल-पत्रिका के सम्पादक श्री अब्दुल जलील बिन अब्दुल रहमान का मत था कि लेखक संवेदनशील होते हैं और वे केवल पैसे के लिए ही काम नहीं करते। यह लेखकों का दायित्व है कि सरकार को अपने किए हुए और तोड़े जा रहे वादों का स्मरण कराए। मलयेशिया सरकार के प्रकाशन विभाग के एक सम्पादक श्री अयुब बिन यामिन ने शिकायत की कि मलयेशिया में जब कि अनेक भारतीय पुस्तकें मिल जाती हैं, दिल्ली में मलयेशिया की कोई पुस्तक दिखाई नहीं देती। उन्होंने बताया कि मलय सरकार अन्य एशियाई लेखकों की रचनाओं के अनुवाद की योजना कर रही है. जिनमें प्रथम जापान के यूकिओ मिशिया की कुछ कृतियाँ और भारत की कमला मार्कण्डेय की 'नेक्टार इन दी सीव्ह' (छलनी में अमृत) उपन्यास हैं।

श्री अब्दुल हसन ने, जो शिक्षा-विभाग (पुस्तक-उन्नयन) के विशेष अधिकारी हैं, बताया कि पाकिस्तान में रायल्टी से प्राप्त समस्त आय को कर मुक्त कर दिया गया है, और दक्षिण-पूर्व एशियाई राष्ट्रों के संघ ने अपनी दसवीं साल गिरह के अवसर पर ४,५०० मलय डालर का एक साहित्य-पुरस्कार घोषित किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिषद वार्त्ता

मार्च माह का होली का पखवाड़ा परिषद के पक्ष में भी काफी रँगारँग रहा। देश की कई भाषाओं के विद्वानों ने परिषद में पधार कर इसकी प्रवृत्तियों में रुचि ली। १७ मार्च को तेलुगु और हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान श्री बालशौरि रेड्डी और १९ मार्च को मराठी के प्रख्यात कोशकार श्री अमरेन्द्र लक्ष्मण गाडगील के सम्मान में साहित्य गोष्ठियों का आयोजन किया गया था। श्री रेड्डी ने तेलुगु साहित्य की गतिविधियों और अपनी पत्रकारिता के अनुभव सुनाए। श्री गाडगील ने सन् १९८१ में मनाए जानेवाले श्री समर्थ रामदास त्रिशताब्दी महोत्सव के सम्बन्ध में आयोजन की रूपरेखा स्पष्ट की, और समारोह को समुचित रूप से मनाने के लिए सहयोग की इच्छा व्यक्त की।

दिनांक २९ मार्च बुधवार की संध्या को परिषद ने तमिल के महान उपन्यासकार और भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता श्री अखिलन, मलयालम के मनीषी समीक्षक, कवि और पत्रकार श्री एन व्ही. कृष्णा-वारियर और बंगला के प्रख्यात उपन्यासकार श्री बिमल मित्र के अभिनन्दन में एक स्वागत समारोह का आयोजन किया। अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ के अध्यक्ष डा० गंगा शरण सिंह भी समारोह में उपस्थित थे।

परिषद की ओर से डॉ० प्रतिभा अग्रवाल ने विद्वान अतिथियों का स्वागत किया और उन्हें परिषद के मंत्री श्री-परमानन्द चूड़ीवाल द्वारा माल्यार्पण के बाद श्री अखिलन और उनके साहित्य का परिचय श्री कृष्णमूर्त्ति ने और श्री कृष्णा वारियर तथा उनके साहित्य का परिचय श्री पी. सी. विद्यार्थी ने दिया।

श्री अखिलन ने तमिल में अपने भाषण में देश की भावनात्मक एकता के लिए एक दूसरे की कृतियों को समझने की अनिवार्यता पर बल दिया, जबकि श्री कृष्णा वारियर ने अपने हिन्दी भाषण में राजनीति पर साहित्य की श्रेष्ठता प्रतिपादित की। उन्होंने कहा कि साहित्य के क्षेत्र में भी केरल का महत्व उल्लेखनीय है। कौटिल्य का अर्थ-शास्त्र सर्वप्रथम केरल में ही सुलभ हुआ था, उसी तरह मलयाली साहित्य पर रामायण, महाभारत, भागवत आदि का प्रचुर प्रभाव है। श्री बिमल मित्र ने साहित्य की मूल भावना पर बल देते हुए बताया कि भाषा तो भाव का परिधान मात्र है। वे भी हिन्दी ही में बोले।

श्री कृष्णा वारियर ने श्रोताओं के अनुरोध पर मलयालम में अपनी एक कविता भी पढ़कर सुनाई और उसका स्वयं उन्होंने हिन्दी में भावार्थ प्रस्तुत किया। सभी विद्वानों ने भाषाई एकता पर बल दिया और देश की सुदृढ़ एकता की दृष्टि से समन्वय के लिए एक दूसरे की भाषा के साहित्य के परस्पर अनुवाद की महत्ता प्रतिपादित की।

डॉ० गंगाशरण सिंह ने अपने वक्तव्य में कहा कि आज जो देश में भाषा की समस्या को लेकर एक विकृत मनोवृत्ति बन गई है उसे रचनात्मक प्रक्रिया से ही दूर किया जा सकता है। भाषा-सम्बन्धी संतुलित दृष्टिकोण रखनेवाले भारतीय भाषाओं के वरिष्ठ साहित्यकारों के बीच पारस्परिक आदान-प्रदान और सद्भावना बढ़े इस उद्देश्य से संघ ने विभिन्न-भाषा-भाषी साहित्यकारों द्वारा हिन्दी प्रदेशों की सद्भावना यात्रा का कार्यक्रम बनाया है। इसी क्रम में इस बार तमिल, मलयालम और बंगला के ये विद्वान् बिहार की सद्भावना यात्रा में पटना, राजगृह, गया, राँची, नालन्दा, भागलपुर तथा मुजफ्फरपुर जाएँगे, जहाँ स्थानीय साहित्यिक-सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेकर देश की भाषाई एकता में महत्वपूर्ण योगदान करेंगे। उन्होंने हिन्दी भाषा को भारत की विभिन्न भाषाओं के बीच सेतु की संज्ञा दी, और भारत की देवनागरी तथा अन्य लिपियों की ध्वन्यात्मक वैज्ञानिकता पर प्रकाश डाला।

अन्त में परिषद के अध्यक्ष श्री सीतारामजी सेकसरिया ने विद्वान् अतिथियों और समागत विद्वानों के प्रति धन्यवाद अर्पित किया और विश्वास प्रकट किया कि वे भविष्य में भी इसी प्रकार रुचि लेकर परिषद की प्रवृत्तियों में बराबर भाग लेते रहेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रद्धांजलि :

प्रतापनारायण श्रीवास्तव

प्रेमचन्द युग के हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री प्रताप नारायण श्रीवास्तव का कानपुर में १४ फरवरी १९७८ को देहावसान हो गया। उनका जन्म २४ सितम्बर १९०४ को हुआ था, और उनकी शिक्षा लखनऊ विश्वविद्यालय में हुई थी। वे गत कुछ वर्षों से बीमार चल रहे थे। हाथ की अँगुलियाँ जकड़ जाने से उनकी लेखन-क्षमता रुक गई थी, और इस विवशता का उन्हें रोग से भी अधिक दुःख था। १९२८ में लिखा उनका उपन्यास 'विदा' उन दिनों काफी चर्चित रहा। इसके अतिरिक्त उनके अन्य प्रसिद्ध उपन्यासों में बयालीस, विसर्जन, बेकसी का मजार, विषमुखी, वन्दना इत्यादि की गणना होती है।

पुरुषोत्तम शिवराम रेगे

मराठी के प्रसिद्ध कवि और उपन्यासकार श्री पु० शि० रेगे का १७ फरवरी १९७८ को सायंकाल बम्बई के जसलोक अस्पताल में संक्षिप्त बीमारी के बाद देहावसान हो गया। वे ६७ वर्ष के थे और ल्यूकेमिया (रक्ताल्पता) से बीमार थे।

वे साइडनहम कालेज में अर्थशास्त्र के प्राध्यापक के अतिरिक्त बम्बई के इस्माइल यूसफ कॉलेज तथा एलफिन्स्टन कॉलेज के प्राचार्य भी रहे। मराठी साहित्य में कवि के रूप में उनकी प्रभूत ख्याति थी। शब्दों की मितव्ययिता, प्रयोग और मांसलता उनकी कविता के खास गुण हैं। प्रयोगवादी होने के बावजूद परंपरावादी सन्त कवि भी उनकी प्रेरणा के स्रोत रहे हैं। उनके कई कविता संग्रहों पर राज्य सरकार द्वारा पुरस्कार दिया गया है। 'प्रियाल', 'हिमषेक', 'गंध रेखा', 'डोला' आदि उनके प्रमुख काव्य-संग्रह है। 'सावित्री', 'अवलोकित' और 'रेणु' उनके तीन विशिष्ट उपन्यास हैं।

उनके पीछे परिवार में दो पुत्र और एक कन्या हैं।

पॉल स्कॉट

अंग्रेजी के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री पॉल स्कॉट का २ मार्च १९७८ को लन्दन के मिडिलसेस अस्पताल में देहान्त हो गया। वे ५७ वर्ष के थे, और कैन्सर से पीड़ित थे। गत वर्ष ही उन्हें कथा-साहित्य के लिए ब्रिटेन का बड़ा महत्वपूर्ण ९,७५० डालर का बुकर पुरस्कार अपने उपन्यास 'स्टेइंग ऑन' के लिए प्राप्त हुआ था। यह उपन्यास कुछ ब्रिटिश लोगों के एक समूह के विषय में है, जिन्होंने १९४७ में स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भारत में ही रहना स्वीकार किया था। स्कॉट के ग्रन्थ प्रायः भारत में रहने वाले अंग्रेजों के जीवन का वर्णन प्रस्तुत करते हैं। उनकी सर्वाधिक चर्चित कृति सन् १९६६ और सन् १९७५ के बीच लिखी चार खण्डों की 'राज क्वार्टेट' है, जो भारत में जीवन-यापन के सम्बन्ध में है। स्कॉट इस शताब्दि के चौथे दशक में भारत में अंग्रेजी सैनिक सेवा में नियुक्त थे। परिवार में उनके पीछे उनकी पत्नी और दो कन्याएँ हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ० परशुराम लक्ष्मण वैद्य

संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान और प्राच्य विद्या विशारद डॉ० परशुराम लक्ष्मण वैद्य का शनिवार २५ फरवरी १९७८ को पुणे में हृदयगति अवरुद्ध हो जाने से देहावसान हो गया। वे ८८ वर्ष के थ। पुणे को भाण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट और बड़ौदा की रामायण इंस्टीट्यूट में रह कर वे भारतीय प्राच्य विद्या की शोध के कार्य में पूर्णत: समर्पित रहे और १९५२ से लगाकर १९७२ के बीच महाभारत एवं रामायण के आलोचनात्मक संस्करणों का सम्पादन किया। १९६३ में उन्हें संस्कृत के विशिष्ट राष्ट्रीय विद्वान का राष्ट्रपति-सम्मान प्राप्त हुआ था।

अपने पीछे परिवार में वे एक पुत्र और दो पुत्रियाँ छोड़ गए हैं।

संदर्भ भारती का प्रकाशन विवरण

(प्रपत्र ४ के अनुसार)

प्रकाशन का स्थान	: भारतीय भाषा परिषद, ९, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७
प्रकाशन अवधि	: द्वैमासिक (वर्ष में छह बार)
मुद्रक का नाम (क्या भारत के नागरिक हैं ?) पता	: परमानन्द चूड़ीवाल (भारतीय नागरिक) : द्वारा भारतीय भाषा परिषद ९, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७
प्रकाशक का नाम (क्या भारत के नागरिक हैं ?) पता	: परमानन्द चूड़ीवाल (भारतीय नागरिक हैं) : द्वारा भारतीय भाषा परिषद ९, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७
संपादक का नाम (क्या भारत के नागरिक हैं ?) पता	: सन्हैयालाल ओझा (भारतीय नागरिक हैं) द्वारा भारतीय भाषा परिषद ९, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७
उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों	×

मैं परमानन्द चूड़ीवाल एतद द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

२ मार्च १९७८

प्रकाशक के हस्ताक्षर
परमानन्द चूड़ीवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवर्ष के विभिन्न भाषा-भाषियों के बीच एक
सहज सेतु-निर्माण और
भावनात्मक एकता तथा सांस्कृतिक अभिन्नता
को चरितार्थ करने के उद्देश्य से
पढ़िए

भारतीय भाषा परिषद् की

द्वैमासिक पत्रिका

संदर्भ भारती

सर्वत्र विद्वानों द्वारा प्रशंसित,
प्रत्येक अंक में
देश की किसी एक भाषा के स्वातंत्र्योत्तर-कालीन साहित्य की
प्रमुख प्रवृत्तियों का स-विवेचन दिग्दर्शन,
प्रत्येक अंक उसी भाषा के विद्वान् द्वारा सम्पादित,
शिक्षण-संस्थाओं, साहित्यकारों और साहित्यप्रेमियों के लिए समान उपयोगी
अबतक

गुजराती, बंगला, हिन्दी, कन्नड़, मराठी, असमिया और तेलुगु

के साहित्यांक प्रकाशित हो चुके हैं।

वार्षिक मूल्य १२) मात्र　　प्रत्येक अंक २)

आज ही आदेश भेजिए

व्यवस्थापक : संदर्भ भारती

भारतीय भाषा परिषद, ९, केमक स्ट्रीट, कलकत्ता-७०० ०१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजीयन—आर० एन० २७१४६/७५

भारतीय भाषा परिषद

भारतीय भाषा परिषद, ९, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७
के लिये श्री परमानन्द चूड़ीवाल द्वारा प्रकाशित एवं
एसकेज, ६८ शोभाराम बैरागी स्ट्रीट, कलकत्ता-७० से मुद्रित

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

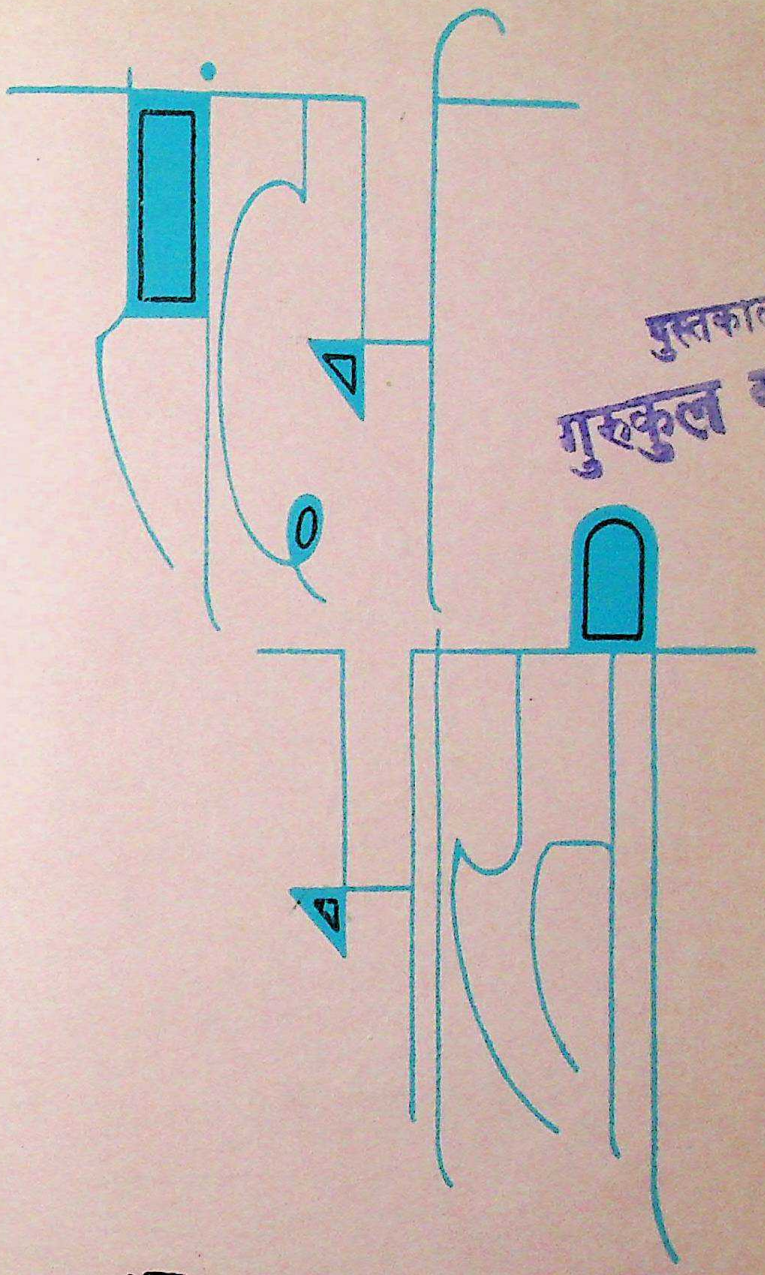

पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी

भारतीय भाषा परिषद
कलकत्ता

जून
१९७८

सिन्धी साहित्य अंक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय भाषा परिषद के उद्देश्य

- भारतीय भाषाओं में पारस्परिक सहयोग-सौहार्द ।
- भारतीय भाषा-साहित्य की विलुप्त राशि की खोज और शोध ।
- विशिष्ट विषयों पर भारतीय विद्वानों की वक्तृताएँ और उनका प्रकाशन ।
- भारतीय भाषाओं के मौलिक एवं अनूदित ग्रन्थों का प्रकाशन ।
- भारतीय भाषाओं और अन्तरराष्ट्रीय महत्व के संदर्भ ग्रन्थों का अनुवाद ।
- उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पत्रिका-प्रकाशन ।
- उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रेक्षागार, संदर्भ पुस्तकालय, वाचनालय, प्रकाशन विभाग, शोधकर्त्ताओं एवं साहित्यकारों के लिये शोधकक्षों और साहित्यकार-आवास की व्यवस्था ।

परामर्श मंडल

अंग्रेजी	:	श्री शमीक बनर्जी, कलकत्ता
असमिया	:	डॉ० बीरेन्द्र भट्टाचार्य, गुवाहाटी
ओड़िया	:	डॉ० गोपालचंद्र मिश्र
कन्नड़	:	डॉ० मे० राजेश्वरय्या, मैसूर
कश्मीरी	:	डॉ० शिब्बन कृष्ण रैणा, अलवर
गुजराती	:	श्री गुलाबदास ब्रोकर, बंबई
तमिल	:	श्री र० शौरिराजन, मद्रास
तेलुगु	:	श्री बालशौरि रेड्डी, मद्रास
पंजाबी	:	डॉ० हरभजन सिंह, दिल्ली
बंगला	:	प्रो० अलोकरंजन दाशगुप्त
मणिपुरी	:	श्री नीलकंठ सिंह, इंफल
मराठी	:	प्रो० वसंत बापट, बंबई
मलयालम	:	डॉ० एम० मलिक मोहम्मद, कालीकट
संस्कृत	:	डॉ० विद्यानिवास मिश्र, वाराणसी
सिंधी	:	डॉ० मोतीलाल जोतवाणी, नई दिल्ली
हिंदी	:	डॉ० प्रभाकर माचवे, नई दिल्ली

संपादक

सन्हैयालाल ओझा

पत्राचार के लिए :—

संपादक, संदर्भ भारती, भारतीय भाषा परिषद
९, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००१७
दूरभाष : ४३-२४१८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्व भाषा सरस्वती

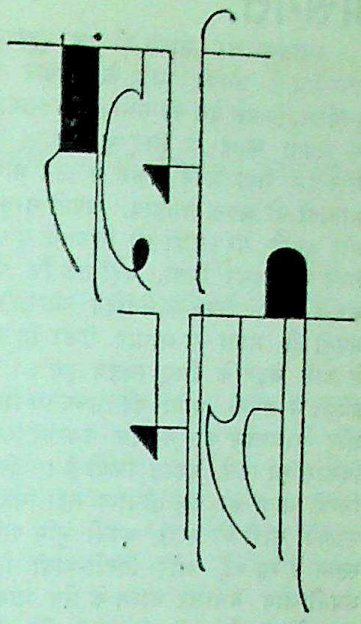

वर्ष ४ अंक ३

जून १९७८

सिन्धी साहित्य अंक

इस अंक के सम्पादक

डॉ० मोतीलाल जोतवाणी

(पृ० ७ से ३४ तक रचनाओं के अनुवादक भी डॉ० जोतवाणी हैं।)

द्वैमासिक पत्रिका

वार्षिक १२-००

प्रति अंक २-००

प्रसंगतः २

सम्पादकीय-समकालीन सिन्धी साहित्य
डॉ० मोतीलाल जोतवाणी ३

लेख—सिन्धी की भाषा वैज्ञानिक विशेषताएँ
डॉ० मुरलीधर जेतली ७

निबन्ध—गांधीजी के साथ सात दिन
श्री जयरामदास दौलतराम ११

कहानी—पीली बत्ती पर
डॉ० मोतीलाल जोतवाणी १७

एकांकी—जुहू के किनारे-गोविन्द माल्ही २६

कविताएँ—नारायण श्याम, अर्जुन हासिद, लक्ष्मण कोमल, वासुदेव मोही, अजिज-बेदी, हरिकान्त, दयाल आशा एम. जी. गुरनाणी, मोतीलाल जोतवाणी ३१

विदेशी कलम : ३५

पुस्तक समीक्षा : मुंहिंजो शहर, मुहिंजो माण्हू एक ही जगह, मेवाड़ के महाराणा और शहंशाह अकबर ३७

विशिष्ट-प्रकाशन : असमिया, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी, मलयालम, हिन्दी ४१

अनुसंधान : अंग्रेजी, हिन्दी ४४

साहित्य मंच : ४४

परिषद वार्ता : ४५

श्रद्धांजलि : ४६

भारतीय भाषा परिषद

९ कैमक स्ट्रीट कलकत्ता-१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसंगतः

स्वातंत्र्योत्तर भारत की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है उसका भाषा के आधार पर पुनर्गठन, जिससे देश की सभी प्रमुख भाषाओं को अपना कहने के लिए भूमि प्राप्त हुई, और इस तरह अपने अंचल में उन भाषा-भाषियों को अपना साहित्य, अपनी संस्कृति और अपनी परंपराओं को विकसित पुष्पित करने का अवसर मिला, यहाँ तक कि चाह कर वे अपने जीवन के दैनंदिन व्यापारों में अपनी ही भाषा का आधार लेकर सहजता से आगे बढ़ने के लिए स्वतंत्र हुए। कई प्रदेशों ने अपनी भाषा को उच्चतम-शिक्षा और राजकाज का माध्यम बनाकर अपने विकास का मार्ग प्रशस्त किया है। किन्तु सिन्धी भाषा को यह सौभाग्य नहीं मिला। उसकी सारी की सारी अपनी भूमि पाकिस्तान में रह गई, और सिन्धी-भाषी हिन्दू अपनी जान बचाकर भारत के शेष भाग में आ बसे। कैसी विडम्बना है कि जिस प्रदेश की सांस्कृतिक धरोहर, सिन्धुनद के ब्याज से उस प्रदेश ही का नहीं, समस्त देश का, प्रत्युत उसके निवासी और उसकी भाषा का भी नामकरण हुआ, वह प्रदेश, वह महानद उसके लिए बेगाने हो गए। सिन्धी भाषा की यह व्यथा इस अंक के विद्वान संपादक डॉ० मोतीलाल जोतवाणी के अग्रलेख में भी व्यक्त हुई है।

सिन्धी-भाषा अब भी भारत में उसी तरह उद्वस्त है, यद्यपि उसके बोलने वालों ने भारत की मूल धारा में घुल-मिलकर अपने आपको पूर्णरूप से एकात्म कर लिया है। और इसके लिए सिन्धी-भाषी अभिनन्दनीय हैं कि इस अवस्था में भी वे न केवल सिन्धी भाषा और साहित्य को भारतवर्ष में जीवित रखे हुए हैं, प्रत्युत अमन्द उत्साह के साथ भारत की अन्य भाषाओं के साहित्यके समान ही अपने साहित्य को भी नव नवोन्मेश के साथ प्रगति दे रहे हैं।

सिन्धी भाषा भारत में सम्प्रति दोनों लिपियों—देवनागरी और अरबी-फारसी में लिखी जाती है, और यह दुर्भाग्य की बात्त है कि लिपि के सवाल को लेकर वे दो गुटों में बँट गए हैं। यदि मूल में देवनागरी ही सिन्धी-भाषा की लिपि रही हो, और अरबी फारसी लिपि उस पर थोपी गई हो तो यह स्वाभाविक है कि राजनैतिक दबाव नष्ट होते ही वह पुनः अपने स्वत्व को प्राप्त करे। इसे इस भाषा के राष्ट्र-चेतना की मुख्यधारा और संस्कृति के निकट पहुँचने की सही कदम भी समझा जाना चाहिए। अरबी-फारसी लिपि के पक्षधरों का भावुकता के साथ ही यह आग्रह भी महत्वपूर्ण है कि इसी तरह सीमा पार रचे जा रहे समानान्तर सिन्धी-साहित्य से जुड़े रहा जा सके। देश के विभाजन और राजनैतिक चेतना के बावजूद साहित्य की अन्तःसलिला धारा किस तरह एकात्म होकर प्रवाहित होती है इसकी सुन्दरतम प्रतीति शायद सीमा के दोनों ओर रचा जा रहा साम्प्रतिक सिन्धी-साहित्य ही दे सकता है, जब हम देखते हैं कि विभाजन का सबसे अधिक मूल्य चुका कर भी इस साहित्य में किसी ओर उससे उत्पन्न कटुता, मारकाट, लूटपाट आदि का कहीं उल्लेख नहीं होता। इस परिप्रेक्ष्य में इस पार के साहित्य में लिपि को लेकर जिस कटुता के संकेत मिलते हैं, वे अवश्य स्थाई नहीं होंगे और यह आशा की जानी चाहिए कि दोनों दल एकजुट होकर अपनी समृद्ध साहित्यिक धरोहर की रक्षा और विकास करेंगे।

सिन्धी-साहित्य की बड़ी प्राचीन परंपरा है। भाषा की दृष्टि से देखा जाए तो आधुनिक हिन्दी आदि भाषाओं की अपेक्षा प्राचीन प्राकृत से उसका अधिक निकट का सम्बन्ध है। सूफी संतों की साधना-स्थली होने से सिन्धी-साहित्य न केवल हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रतीक रहा है, प्रत्युत उसमें आध्यात्मिक-चेतना की वेदान्तगत गरिमा भी प्राप्त है।

आधुनिक सिन्धी-साहित्य में भी वे ही प्रवृत्तियाँ कार्यरत हैं जो भारत की किसी अन्य भाषा के साहित्य में हैं। हिन्दी और सिन्धी में समान अधिकार से लिखने वाले इस अंक के विद्वान सम्पादक डॉ० मोतीलाल जोतवाणी ने अपने अग्रलेख में इन प्रवृत्तियों का बड़े ही सम्यक रूप से विवेचन और समकालीन सिन्धी साहित्य के प्रतिनिधि अंशों का चयन तथा अनुवाद प्रस्तुत किया है इसके लिए वे अभिनन्दनीय हैं। पाठकों की ओर से और अपनी स्वयं की ओर से हम उन्हें और सिन्धी-भाषियों को विश्वास दिलाना चाहते हैं कि सिन्धी भाषा की अपनी भूमि सारा भारतवर्ष है, और उसे अपने आप को यहाँ बेगानी समझने का कोई कारण नहीं है। साहित्य का मुख्य और महत्वपूर्ण भाग उसका अंतर्निहित भाव जगत है। भाषा तो शल्क मात्र है, जिसे मूल भाव के आस्वादन के लिए उतार देना होता है।

—स० ओझा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय

समकालीन सिन्धी साहित्य

देश स्वाधीन हुआ तो पंजाब और बंगाल तो लगभग आधा-आधा फिर भी भारत का अंग बना रहा, पर सिन्ध को तो पूरा का पूरा ही पाकिस्तान में खो जाना पड़ा। सिन्ध की हिन्दू जनता को विवश होकर भारत के विभिन्न भागों में जाकर बस रहने और जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं के जुटाने में लग जाना पड़ा। जो थोड़ा-बहुत साहित्य इन दिनों लिखा भी गया वह, चाहे गद्य हो या पद्य, इस कठिन संघर्ष और आक्रोश के भावों से अनछुआ नहीं है। एक अत्यन्त महत्वपूर्ण बात इस सन्दर्भ में अवश्य ध्यातव्य है : जहां विभाजन के बाद के उर्दू-पंजाबी और एक सीमा तक हिन्दी के भी साहित्य में आपसी मारकाट, लूट-अपहरण, और अन्धाधुन्ध बलात्कार की बातें मुखर हुईं, सिन्धी की मौलिक कृतियाँ इन बातों से मुक्त रहीं।

कारण इसका शायद यही कि सिन्ध सूफी सन्तों की साधना-स्थली थी और वहां हिन्दू और मुसलमान दोनों ही मेल-भाव से रहते आये थे, विभाजन के प्रभाव इस पारस्परिकता को विषाक्त नहीं कर पाये। उस काल के सिन्धी साहित्य के वर्ण्य विषय हैं : जन्ममूमि सिन्ध की याद, शरणार्थी विस्थापितों का कैम्प जीवन, तत्कालीन जीवन के स्वरूप और आर्थिक समस्याओं का वर्णन, और बदली हुई परिस्थितियों के अनुरूप जीवन को नयी भूमि और दिशा देने की कामना-भावना। इन विषयों को लेकर **लेखराज 'अजीज'** और **परसराम 'जिया'** की कुछ बड़ी सशक्त रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं। **'जिया'** की रचनाओं में तो हास्य-व्यंग्य का भी रंग खूब चटका है। अन्य सिन्धी कवियों ने एक ओर सूफियाना अन्दाज के बैत लिखे हैं तो दूसरी ओर सौन्दर्यबोध-युक्त रुबाइयाँ-गजलें और कतआत। इन रचनाओं की पंक्ति-पंक्ति में ज्ञान और अनुभूतियों का उजाला ओतप्रोत है।

पर इस सबके होते हुए भी इस समय के सिन्धी काव्य का मुख्य स्वर प्रगतिवाद का था—प्रगतिवाद, जो विभाजन से पहले समूचे भारतीय साहित्य के मानस पर हिलोर आया था और स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बहुत बादतक छाया रहा। सिन्धी के प्रगतिवादी कवियों ने, अन्यान्य भारतीय कवियों की तरह ही, रूस-चीन की उपलब्धियों की सराहना की, क्रान्ति के नारे बुलन्द किये, और प्रगतिवाद के नाम से साम्यवाद का मुक्त भाव से प्रचार किया। इस हिलोर का दम तब टूटा जब १९६२ में अचानक चीन ने भारत पर आक्रमण किया। यों, प्रचार और नारेबाजी को, इस काल के सिन्धी काव्य साहित्य से अलग करके देखें तो उसमें अनेक उदाहरण ऐसे मिलेंगे जहां किसान-मजदूर और अन्यान्य शोषित-पीड़ित वर्गों की वास्तविक स्थिति का चित्रण किया गया है। इतना ही नहीं, इस दौर में सिन्धी काव्य की भाषा और अभिव्यक्ति-शैली में भी परिवर्तन आया। दोनों ही जन-जीवन और लोक-व्यवहार के अधिक निकट और अनुरूप हो आईं। इस दौर के प्रमुख कवि हैं : **अर्जुन शाद, ईश्वर आँचल, कृष्ण राही, गोबंधन भारती** आदि।

पर जैसा अन्यान्य भारतीय भाषाओं के साहित्य में भी आगे-पीछे हुआ, चीन के आक्रमण और कला-साहित्य, एवं राजनीति के क्षेत्र में वहाँ की रीति-नीतियों के परिणाम स्वरूप, सिन्धी के कवियों और लेखकों में भी एक प्रकार की प्रतिक्रिया जागी और उनकी रचनाओं में अभिव्यक्त हुई। इस नयी धारा के कवियों में कुछ तो वे थे जो पहले प्रगतिवादी थे और कुछ वे जो नयी प्रतिभा कहलाये।[1] इन कवियों पर बड़ा प्रभाव

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाकिस्तानी सिन्धी कवि **अयाज** और भारतीय सिन्धी कवि **नारायण श्याम** की नव-क्लैसिकल विचारधारा का था। इस दौर में जाने-पहचाने और परम्परागत छन्दों को नया जीवन दिया गया, लोक-कथाओं को विस्मृति और उपेक्षा के अँधेरे से उबारा गया, उनके चरित्रों और भाव-भावनाओं को नये युग की नयी दृष्टि से निरखा-परखा गया और आधुनिक स्वर-संवेदनाओं को स्वागत दिया गया। दोहा, वाई, काफी, गजल, रुबाई आदि कविता के पुराने रूप रहस्यवाद, सूफीवाद और परम्परावाद के ढेर में से अँगड़ाई लेकर उठ पड़े और नयी भावात्मा और नया भाषा-परिधान ग्रहण करके सिन्धी काव्य में नये प्राण भरने लगे। सिन्धी काव्य साहित्य में इश्क और हुस्न और वहदत के स्थान पर बदले हुए परिवेश और बदले हुए सन्दर्भों को समस्याएँ मान-सम्मान पाने लगीं। **नारायण श्याम** के अतिरिक्त इस धारा के अन्य प्रमुख कवि हैं **कृष्ण राही, इन्द्र भोजवाणी** और **हरि दिलगीर**।

प्रगतिवादी और नव-क्लैसिकल प्रवृत्तियों के बाद, १९६५ के आसपास, सिन्धी में 'नयी कविता' की प्रवृत्ति विकसित होकर आयी। इस कविता में आज के परेशान इनसान के सही और सच्चे रूप-चित्रों का अंकन किया गया। जीवन के मूल्य इस युग में देखते-देखते बदल रहे हैं। लगता है कि हर पाँचवें वर्ष एक नयी पीढ़ी और एक नया दृष्टिकोण जन्म ले उठते हैं और हर व्यक्ति अपने ही जीवन-काल में अपने को कई-कई बार पुराना, पिछड़ा हुआ, देखने-मानने को मजबूर होता है। मानव विमूढ़ हुआ अपनी ही बढ़ती शक्ति के चमत्कार को असहाय भाव से देखता खड़ा है। जैसी और जो भी आज के मानव की अनुभूतियाँ हैं उन्हें ही 'नयी कविता' में अभिव्यक्ति दी जा रही है। यह अभिव्यक्ति यथार्थ, तीक्ष्ण, और प्रामाणिक भी हो, इस दृष्टि से इन कविताओं में ठेठ वास्तविक जीवन के प्रतीकों और बिम्बों का प्रयोग किया जाता है। कहा जाये तो आज का कवि जनसाधारण के 'प्रोजेक' जीवन का प्रतिनिधित्व करता है। इस प्रवृत्ति के कवियों में विशेष उल्लेखनीय नाम हैं: **हरीश वासवाणी, वासुदेव मोही, एम० कमल** और **आजिज बेदी**।

हरीश वासवाणी का 'चालीह-छहत्तर' (चालीस-छिहत्तर) कविता-संग्रह सिन्धी कविता के क्षेत्र में एक नया प्रतिमान स्थापित करता है। **हरीश वासवाणी** को स्वानुभूत सत्य, गरम, ताजा भाषा में व्यक्त करना खूब आता है। 'पुरुष वेश्या' कविता में वे कहते हैं: **'गलत स्थानों से बचने के इस नाटक में/सड़कों पर मुझे रोजी देकर/चहार दीवारियों में मेरे तन और मन से/व्यभिचार कर/यह शहर धीरे-धीरे/मुझे पुरुष-वेश्या का रूप देता जा रहा है।'**

कोरी रोमानियत से दूर, पाखंडी बौद्धिकता से परे, **हरीश वासवाणी** की रचनाएँ आज की पेचीदा जिन्दगी को रूपायित करती हैं।

सिन्धी कहानी ने भी स्वातन्त्र्योत्तर काल में अप्रत्याशित प्रगति की है। प्रारम्भ के कुछ वर्षों की सिन्धी कहानियाँ प्रायः अन्यान्य भाषाओं की कहानियों के अनुवाद हैं, जो थोड़ी-सी मौलिक हैं भी उनमें जीवन को छूने और प्रतिबिम्बित करने की शक्ति लगभग नहीं है। उनमें नारेबाजी है और है साम्यवाद का प्रचार। सिन्धी कहानी में प्राण और जीवन वास्तव में तब आया जब **लाल पुष्प, गुनो सामताणी** और **मोहन कल्पना** आदि इस क्षेत्र में आये। इनके संग्रह दायरो, अभिमान, चाँदनी ऐं जहर—शैली और कथ्य दोनों ही दृष्टियों से प्रतिनिधिक माने जाते हैं। तीनों में मानव-मन की ग्रन्थियों और आधुनिक परिप्रेक्ष्य की संवेदनात्मक अभिव्यंजना हुई है। **लाल पुष्प** और **मोहन कल्पना** की प्रारम्भिक रचनाओं में प्रगतिवाद या आदर्शोन्मुख यथार्थवाद और **गुनो सामताणी** की रचनाओं में शरत का रोमान्सवाद मुखर था। किन्तु तीनों की ही समकालीन रचनाओं में आज के मानव व्यक्ति की नाना समस्याओं-उलझनों को मनोविश्लेषण द्वारा सुलझाने का प्रयास देखने को मिलता है। तीनों ही अब यथार्थतः साहित्य के प्रति 'कमिटेड' हैं और फतवा या निर्णय देने की प्रवृत्ति से अपने को बचाते हुए व्यक्ति के सत्य को खोज पाने में लगे हुए हैं।

इन तीन के अतिरिक्त समकालीन सिन्धी कहानी साहित्य को समृद्ध करनेवाले अन्य नाम हैं: **के० एस० बालाणी, ईश्वर-**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्दर, आनन्द खेमाणी, विष्णु भाटिया, श्याम जयसिंहाणी, हारीश वास्वाणी, जयन्त रेलवाणी और गिनाया जा सके तो मोतीलाल जोतवाणी। ईश्वरचन्द के बारे में लाल पुष्प का कहना है कि वह एक-दो को छोड़ औसत कहानियाँ ही दे सके हैं। आनन्द खेमाणी और विष्णु भाटिया की कहानियाँ नयी कहानी की परिभाषा पर सही उतरने का भ्रम दे सकती हैं तो केवल इसी अर्थ में कि उनके नित नये प्रयोगों में नर-नारी के यौन सम्बन्धों का भरपूर चित्रण रहता है। श्याम जयसिंहाणी और हरीश वास्वाणी की रचनाएँ युग जीवन की जटिलताओं पर प्रकाश डालती हैं। जयन्त रेलवाणी और मोतीलाल जोतवाणी की दृष्टि में कहानी में सशक्तता किसी चमत्कार-तत्व से नहीं, कथावस्तु से ही आ सकती है। कहानी के क्षेत्र में तीन स्त्री-लेखिकाओं के नाम भी उल्लेखनीय हैं : सुन्दरी उत्तमचन्दाणी, पोपटी हीरानन्दाणी और तारा मीरचन्दाणी।

उपन्यास विधा के क्षेत्र में भी सिन्धी में पहले-पहले विभिन्न भारतीय भाषाओं के उपन्यासों के अनुवाद आये। सिन्धी का पहला उल्लेखनीय मौलिक उपन्यास तारा मीरचन्दाणी का 'कूमायल कलीं' है जिसका कथानक पुरुष की स्वार्थपरायणता पर आधारित है। गोबिन्द माल्ही का उपन्यास 'आँसू' विस्थापितों के कैम्प-जीवन को चित्रित करता है, 'जिन्दगी जी राह ते' और 'जीवन साथी' माल्ही के अन्य उपन्यास हैं. जिनमें संयुक्त परिवार और प्रेम-विवाह की समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है। इनके कई अन्य उपन्यास भी हैं, पर यह अपनी प्रत्येक रचना में 'साहित्य जीवन के लिए है' का उद्देश्य लेकर चलते हैं। राम पंजवाणी के तीन उपन्यास प्रसिद्ध हैं : जिन्दगी या मौत आहे न आहे, शल घीअर न जमनि। तीनों ही कलात्मक कम और उपदेशात्मक अधिक हैं। सुन्दरी उत्तमचन्दाणी की कृतियाँ 'किरन्दड़ दीवारूँ' और 'प्रीति पुराणी रीति निराली' नयी सामाजिक व्यवस्था-विधान की ओर इंगित करती हैं। गुनो सामताणी का 'वापस', लाल पुष्प का 'हिक सर्द दीवार' और मोहन कल्पना का 'रुअ ऐं पाछा' विशिष्ट लेखकीय दृष्टिकोणों का प्रस्तुतिकरण होते हुए भी सफल उपन्यास गिना जायेगा।

इस प्रकार विगत ढाई दशक में, यद्यपि संख्या को देखते उपन्यास-क्षेत्र में सिन्धी ने पर्याप्त उन्नति की है, ऐसा उपन्यास कोई सामने नहीं आया जिसे उसी अर्थ और भाव में 'सिन्धी उपन्यास' कह सकें जिस अर्थ और भाव में, उदाहरण के लिए, बंगला या हिन्दी के अमुक-अमुक उपन्यास का नाम गिनाया जा सकता है : अर्थात जिससे सम्बन्धित भाषा के साहित्य वहाँ के यथार्थ जीवन के स्वरूप, और जीवनगत समस्याओं एवं उनके समाधान का 'इमेज' उभरता हो। सचमुच एक भी सिन्धी उपन्यास नहीं है जो सिन्धी जाति के समग्र रूप का परिचय देता हो। अधिकांश रचनाओं के पात्र शहरी जीवन के रमेश-सुरेश आदि ही हैं जो सिन्धी में बोलते-चालते होते भी अन्य प्रान्त या जाति के हो सकते हैं।

नाटक सिन्धी में बहुत कम लिखे गये हैं। यों अपने में यह कला कठिन भी है। राम पंजवाणी के 'सिन्ध जा सत नाटक' सिन्ध की लोक-कथाओं पर आधारित हैं और काफी कुछ परिवर्तन करने पर भी मंचोपयोगी हो सकें तो हों। तीर्थ बसन्त के 'रस गालों' के साथ भी यही कठिनाई है, इनके नाटक नाटक' कम हैं, समसामयिक प्रश्नों-समस्याओं पर बहसें अधिक। दास तालिब और जेठानन्द नागराणी ने कई हास्य-व्यंग्यपूर्ण नाटक लिखे हैं, इनमें कहीं-कहीं विनोद के स्वर अच्छे उभरे हैं। एकांकी नाटकों को दिशा में मंधाराम मलकाणी के प्रयत्न, 'जीवन चहचिटा' और 'इखुबीता प्या टिमकनी' बहुत सिजल उतरे हैं। इस विधा के सन्दर्भ में कई अन्य नाम भी गिने जाने योग्य हैं। जैसे : हरिकान्त, मोतीप्रकाश, वासुदेव निर्मल। लक्ष्मण भाटिया के संगीत रूपक इस विधा-क्षेत्र में अपना एक अलग और विशिष्ट स्थान रखते हैं।

नाटक-मंचन के क्षेत्र में अत्यधिक गतिविधि होने के बावजूद सिन्धी-नाटक ने कोई महत्वपूर्ण प्रगति नहीं की है। अन्यान्य भाषाओं के कई नाटक सिन्धी में रूपांतरित होकर मंच पर आए हैं, परन्तु सिन्धी नाटक अधिक नहीं आए। कृष्ण जटवाणी का आशियानों (घोंसला) और गोबिन्दराम 'साईल' का 'निर्वासी' १९७६ के दो उल्लेखनीय नाटक हैं। 'निर्वासी' तीन अंकों का

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक सामाजिक नाटक है और उसमें देश विभाजन के पश्चात सिंध से भारत आए लोगों का जीवन निरूपित हुआ है। 'आशियानों' में दिखाया गया है कि आजकल नव-कुबेर झूठी शान की खातिर विदेशी सभ्यता का अंधानुकरण कर रहे हैं, मानवी रिश्तों-नातों को भुलाकर सांस्कृतिक शून्य में जीवन-यापन कर रहे हैं। उसका नायक निर्मल अनेक देशों में भटकता रहा है और अपने देश में वापस आकर इस नतीजे पर पहुँचा है कि घर की दीवारों और छतों का निर्माण करना आसान है, परन्तु उसके भीतर प्यार का आशियाना बनाना कठिन है। यही नहीं, मानव को बाहर से नहीं, बल्कि भीतर से ही वास्तविक भोज्य मिलता है। इस नाटक में उसका संदेश काफी वाचाल हो उठा है।

पर सब मिलाकर कहना यही होगा कि सिन्धी नाट्य साहित्य में आधुनिक भावबोध की भारी कमी है।

आज यह समीक्षात्मक सर्वेक्षण करते समय मुझे अनायास ही सिन्धी के लब्ध-प्रतिष्ठ कवि श्री नारायण श्याम की निम्नलिखित दो पंक्तियां स्मरण हो आई हैं—

"अला इअं न थिए जो किताबनि में पढिजे
त हुई सिंधु एं सिंध वारनि जी बोली।"

अर्थात, ऐसा न हो कि आगे चलकर हम (केवल) पुस्तकों में पढें कि कभी सिन्धु देश था और उसकी भाषा सिन्धी थी।

अब जिस तरह के हालात में से सिन्धी जन-समुदाय गुजर रहा है, उनसे लगता है कि सिन्धी प्रकाशन का भविष्य अंधकारमय है। भारत में सिंधियों का कोई एक प्रांत न होने से, या उनके कई प्रान्तों में बिखर जाने से, वे सिन्धी भाषा और साहित्य से विलग हो रहे हैं: जहां-जहां वे रह रहे हैं. वहां-वहाँ की प्रांतीय भाषाओं को अपना रहे हैं ओर कहीं-कहीं देखा देखी अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में पढ़ा रहे हैं। स्यात् इन्हीं प्रतिकूल परिस्थितियों से दुःखी होकर श्री श्याम के उद्गार उपर्युक्त पंक्तियों में प्रगट हुए थे।

चूंकि सिन्धी पाठक लगातार कम होते जा रहे हैं, इसीलिए पुस्तकें कम से कम निकल रही हैं। और जो निकल रही हैं, उनका प्रायः एक ही संस्करण, प्रत्येक पाँच सौ प्रतियों का होता है। इधर जो सरकारी, अर्द्ध-सरकारी असरकारी पुरस्कार अन्यान्य भाषाओं की तरह सिन्धी को भी मिलते हैं, उनसे उत्साहित होकर सिन्धी लेखक, प्रकाशक को समझा-बुझाकर, इधर-उधर से विज्ञापन इकट्ठा कर (पत्रिकाओं की भाँति, सिन्धी-पुस्तकों में भी विज्ञापन दिये जाते हैं।) पुस्तकें प्रकाशित करते हैं। वह तो जैसे एक सनक पूरी करने वाली बात है। लेकिन इससे यह अंदाजा न लगाया जाए कि भारत में सिन्धी-लेखक नामधारी कोई जीव है ही नहीं। है, उसके पास कहने को भी बहुत कुछ मौलिक और प्रमाणिक है, परन्तु उसके पास उसके प्रकाशन के साधन नहीं हैं।

इसी बीच फिर एक दुर्भाग्यपूर्ण बहस छिड़ उठी कि भारत में पाकिस्तान से आये सिन्धी लोगों की भाषा की क्या लिपि हो- उसकी मूल लिपि देवनागागरी थी, बाद में कुछ और लिपियां जैसे अरबी-फारसी, हिन्दू-सिंधी, गुरुमुखी भी रहीं, परन्तु अंग्रेज सरकार ने १८५३ में सिन्धी पर अरबी-फारसी लिपि थोप दी, अगर्चे देवनागरी में भी सिन्धी साहित्य छपता रहा। बहुत लोगों ने नये हालात में अपनी मूल लिपि देवनागरी को अपनाया, और बहुत सारे लोग प्रचलित अरबी-फारसी लिपि को छोड़ने को तैयार नहीं हुए। जो अरबी-फारसी लिपि के पक्ष में रहे हैं उनका कहना है कि लिपि के सवाल से एक बड़ा सांस्कृतिक सवाल जुड़ा हुआ है। सरहद के उसपार, पाकिस्तान में, सिन्धी-लेखन अरबी-फारसी लिपि में होता है: उन सिन्धी लोगों से भी जुड़े रहना चाहिये। तदर्थ भारतीय सिन्धी लेखक दो गुटों में बँट गये। वस्तुस्थिति को देखकर यहाँ 'दो गुट' कहना बिल्कुल सही है, क्योंकि वे सर्जनात्मक साहित्य देने की बजाय एक दूसरे पर कीचड़ उछालने में लग गये। इससे भी सिन्धी-साहित्य में गत्यावरोध आया है।

—डॉ० मोतीलाल जोतवाणी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिन्धी की भाषा वैज्ञानिक विशेषताएँ / डॉ० मुरलीधर जेतली

भारत और पाकिस्तान में बोली जाने-वाली आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में सिन्धी भाषा का प्रमुख स्थान है। भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से उसमें ऐसी कुछ विशेषताएँ हैं जो कई अन्य आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में नहीं मिलतीं। सिन्धी की इन विशेषताओं को देखकर भाषा विज्ञानियों ने उसकी बहुत प्रशंसा की है। डॉ० अर्नेस्ट ट्रम्प का कथन है, "सिन्धी शुद्ध संस्कृत परिवार की भाषा है। यदि हम सिन्धी की तुलना उसकी भगिनी भाषाओं से करें, तो हमें व्याकरण की दृष्टि से इन भाषाओं में सिन्धी को प्रथम स्थान देना पड़ेगा। आधुनिक मराठी, हिन्दी, पंजाबी तथा बंगला की अपेक्षा सिन्धी भाषा का प्राचीन प्राकृत से घनिष्ठ सम्बन्ध है, और उसने व्याकरण के कई रूप अपने पास सुरक्षित रखे हैं, जिसके कारण उसकी बहनें भले ही उससे ईर्ष्या करती रहें।" कैप्टिन जार्ज स्टैक ने सिन्धी भाषा के व्याकरण में लिखा हैं, "मुझे विश्वास है कि सिन्धी भाषा का अध्ययन भाषा विज्ञानियों के लिए अन्य कई भारतीय भाषाओं के अध्ययन की अपेक्षा मनोरंजक सिद्ध होगा। सर्वनामों और तत्सम्बन्धी परसर्गों के स्थान पर सार्वनामिक प्रत्ययों का प्रयोग, कर्मवाच्य तथा भाववाच्य क्रिया रूपों का प्रयोग, पुनरुक्त प्रेरणार्थक क्रियाएँ और अन्य प्रवृत्तियाँ जो विद्यार्थी को अध्ययन करते समय ज्ञात होंगी, वे सिन्धी भाषा को अन्य कई भारतीय भाषाओं की तुलना में विशिष्ट सौंदर्य प्रदान करती हैं।"

जिस सिन्धी भाषा की विद्वानों ने इतनी प्रशंसा की है, उसकी प्रमुख भाषा वैज्ञानिक विशेषताओं का उल्लेख यहाँ किया जाता है।

(१) सिन्धी में चार अन्तः स्फुटित ध्वनियाँ हैं। देवनागरी में इन्हें इस प्रकार लिखा जा सकता है—ग,ज,ड,ब*। ये चारों ही ध्वनियाँ स-घोष स्पर्श व्यंजन हैं। उत्पत्ति स्थान की दृष्टि से ग कण्ठ्य, ज तालव्य, ड+ मूर्धन्य, और ब ओष्ठ्य ध्वनियाँ हैं। सिन्धी में ये चारों ही ध्वनियाँ अर्थ-भेदक होने के कारण स्वनिम हैं। उदाहरणार्थ–

/ग/ : /ग/-गिला (गाला)-गिला(निन्दा) गारो (क्षीणता) गारो (गारा)

/ज/ : /ज/-जारो (जाला)-जारो (ताको, आला) जाम-(राजा) जाम (अधिक)

/ड/ : /ड/ : /द/ : /ड़/ - प डु (आत्म-श्लाघा कर) पड़ु (मरुस्थल पदु (पद, ओहदा) पड़ु (पीर-की कब्र पर रखा वस्त्र)

/ब/ : /ब/ बिरु (बिल), बिरु (दुःखी) बारु (बालक) - बारु (भार)

(२) संस्कृत, हिन्दी तथा अन्य कई आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में /ड/

---

* टाइप की सुविधा के लिए इन ध्वनियों को इटाली टाइप में दिया गया है। वस्तुतः लेखन में इन ध्वनि–संकेतों के नीचे रेखा खींची जाती है।

+ड को सिंधी-देवनागरी लिपि में दंत्य ध्वनि 'द्' के नीचे रेखा खींच कर 'द' भी लिखा जाता है। वास्तव में ध्वनि-विज्ञान की दृष्टि से 'ड' के नीचे लकीर खींच कर ही इस ध्वनि को सूचित करना अधिक ठीक है क्योंकि इस अंतः स्फुटित ध्वनि का उत्पत्ति स्थान दंत नहीं, परंतु मूर्धा है। सिंधी में अंतः स्फुटित (ड) और (द) ध्वनियों में परस्पर अर्थ भेदक क्षमता नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और /ञ्/ अनुनासिक व्यंजन दो स्वरों के बीच में प्रयुक्त नहीं होते। उनका प्रयोग इन भाषाओं में समान वर्गीय व्यंजन के पूर्व होता है। पञ्च मञ्जुल, पङ्क, रङ्क। परन्तु सिंधी में पाँचों ही अनुनासिक व्यंजन स्वनिम हैं और वे सभी दो स्वरों के बीच भी प्रयुक्त होते हैं। जैसे —

(क)—मङी (सगाई हुई) मञी (मान कर), मणी (रत्न), मनी (वीर्य), ममी (माता)।

(ख)—मङ (मंगेतर) (स्त्रीलिंग), मञ (वधूपक्ष) मण (मन) (बहु व.), मन (मन, हृदय), मम (डायन)।

(३) आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में संभवतः सिन्धी भाषा में सबसे अधिक व्यंजन-स्वनिम मिलते हैं। इसका कारण यह है कि अन्तः स्फुटित स्वनिमों के साथ-साथ सिन्धी में अरबी-फारसी के प्रभाव से आई हुई संघर्षी ध्वनियाँ भी स्वनिम हैं। सिन्धी में निम्नलिखित ४१ व्यंजन-स्वनिम है।

क ख ग ग़ घ ङ
च छ ज झ ञ
ट ठ ड ढ ण
त थ द ध न
प भ व ब भ म
य र ल व ड़
श स ह
ख़ ग़ ज़ फ़

इनमें से /ख़ ग़ ज़ फ़/ अरबी-फारसी के प्रभाव से सिन्धी में आई हुई संघर्षी ध्वनियां हैं। इनके स्वनिम होने की सिद्धि निम्नलिखित विरोधी-युग्मों से होती है :

/ख़/ : /ख/ — ख़ामी (कमी)
— खामी (जल कर)

/ग़/ : /ग/ — ग़म (दुःख)
— गम (ज्ञान, जानकारी)

/ज़/ : /ज/ — ज़ारी (रुदन)
— जारी (प्रचलित)

/फ़/ : /फ/ — फ़िदा (मुग्ध)
— फिदा (पक्षी विशेष), बहु०

(४) सिन्धी भाषा में स्वरान्त शब्दों की बहुलता है। यह प्रवृत्ति इतनी प्रबल है कि अंग्रेजी, फारसी आदि भाषाओं से आये हुए व्यंजनान्त शब्द भी सिन्धी में स्वरान्त बन जाते हैं। उदाहरणार्थ—

अंग्रेजी	सिंधी	फारसी	सिंधी
मास्टर	मास्तरु	कोशिश	कोशिशि
बैंक्	बैंक (अकारान्त)	खुश	खुशि
कॉलेज	कालेजु	सबूत	सबूतु

संस्कृत अकारान्त शब्दों का अन्तिम स्वर जहां हिन्दी आदि कई आधुनिक आर्य भाषाओं में लुप्त हो जाता है, वहाँ यह स्वर सिन्धी भाषा में 'उ' में परिवर्तित हो जाता है—

संस्कृत	हिन्दी	सिंधी
कर्ण	कान्	कनु
हस्त	हाथ्	हथु
दन्त	दाँत	डन्दु

सिन्धी में उकारान्त शब्द प्रचुर मात्रा में मिलते हैं : जैसे—सुटु (सूत्र), भाउ (भाई), माउ (माई, माता), पुदु (पुत्र, पूत) भेणु (बहिन), रामु (राम), गोबिन्दु (गोविन्द), किशनु (किशन) लिखणु (लिखना), पढ़णु (पढ़ना), नचणु (नाचना) आदि। यह उकार की बहुलता सिन्धी भाषा में बहुत प्राचीन काल से पाई जाती है। भरत मुनि ने अपने ग्रंथ नाट्य शास्त्र (लगभग दूसरी ईस्वी शती) में लिखा है—

हिमवत्-सिन्धु-सौवीरान् ये जनाः समाश्रिताः।
उकार बहुलां तज्ज्ञ तेषु भाषां प्रयोजयेत्॥

अर्थात—हिमालय सिन्धु सौवीर प्रदेशों में जो लोग रहते हैं उनके लिये विज्ञजनों को उकार-बहुला भाषा का प्रयोग करना चाहिए। भरत मुनि ने इन प्रदेशों की तत्कालीन भाषा का ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् ही उपरिलिखित नियम का विधान किया होगा। इससे इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि सिन्धु प्रदेश में उकारबहुलता की प्रवृत्ति भरत मुनि के समय से ही पाई जाती है। पुरानी गुजराती, पुरानी मराठी में भी यह प्रवृत्ति मिलती थी, जो इन भाषाओं के आधुनिक रूप में बहुत कम हो गई है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(५) सिन्धी में उकारान्त पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग शब्दों का बहुवचन क्रमशः /-अ/ और /-ऊं/ प्रत्यय लगाने से बनाया जाता है। उदा०

एकवचन	बहुवचन
पुटु (पुत्र)	पुट (पुट्+अ)
सालु (साल)	साल (साल्+अ)
ससु (सास)	ससूं (सस्+ऊं)
ज़ाल (औरत)	ज़ालूं (जाल्+ऊं)

परन्तु इस नियम के कुछ अपवाद भी हैं—

पीउ (पिता)	पीउर
भाउ (भाई)	भाउर
माउ (माता)	माउरु
धीअ (दुहिता)	धीअरु
नुंहं (स्नुषा,बहू)	नुंहरु
भेण (बहिन)	भेनरु

बहुवचन के इन अनियमित रूपों का इतिहास देखा जाए तो मालूम होगा कि संस्कृत में पितृ (पिता) और भ्रातृ (भाई) शब्दों के बहुवचन में क्रमशः पितरः भ्रातरः हैं। प्राकृत में इन शब्दों के बहुवचन में रूप क्रमशः पिअरा और भाअरा हैं। ये ही रूप कुछ परिवर्तन के साथ सिन्धी भाषा ने अपने पास सुरक्षित रखे हैं, जो आधुनिक सिन्धी भाषा के बहुवचन रूपों की रचना में अनियमित लग रहे हैं। माउरु और धीअरु रूप भी संस्कृत के मातरः (मातृ का बहु व०) और दुहितरः (दुहितृ का बहु व०) के समान हैं। इन्हीं रूपों की तर्ज पर नुहरु (संस्कृत स्नुषा, सिन्धी नुंहं) और भेनरु (संस्कृत भगिन, सिंधी भेण) भी बन गए हैं, जो मिथ्या सादृश्य के सुंदर उदाहरण हैं।

(६) आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में संस्कृत के समान नाम-शब्दों में विभक्ति प्रत्यय लगाकर कारकों की अभिव्यक्ति नहीं की जाती। अब इसके लिए प्रायः परसर्गों का सहारा लिया जाता है। उदाहरणार्थ, हिन्दी में रामम्' के स्थान पर 'राम को' और 'रामस्य' के स्थान पर 'राम का' रूप प्रयुक्त होते हैं। परन्तु सिंधी भाषा में कुछ ऐसे रूप भी हैं जिनमें अभी तक संस्कृत के विभक्ति प्रत्यय कुछ परिवर्तन के साथ सुरक्षित हैं—

संस्कृत

गृहात् (पंचमी एक व०)
हस्तात् (" ")
गृहे (सप्तमी एक व०)
हस्ते (" ")

सिन्धी

घरां 'घर से' (घरु+आं)
हथां 'हाथ से' (हथु+आं)
घरि 'घर में' (घरु+इ)
हथि 'हाथ में' (हाथु+इ)

यहाँ संस्कृत /आत्-/ का परिवर्तन सिन्धी /-आं/ और संस्कृत /-ए/ का परिवर्तन सिंधी /-इ/ में हो गया है।

(७) सिंधी भाषा में सर्वनामों का प्रयोग प्रत्ययों के रूप में भी होता है। ऐसे प्रत्ययों को सार्वनामिक प्रत्यय कहा जाता है। इन प्रत्ययों का प्रयोग संज्ञा, परसर्ग तथा क्रिया के साथ होता है। उदाहरण—

(क) **संज्ञा**-पुटु (पुत्र)-पुटुसि (उसका पुत्र)
पुटुहि (तेरा पुत्र)
पुटुमि (मेरा पुत्र)

(ख) परसर्ग-खे 'को'-खेसि (उस को)
खेनि (उन को)

(ग) क्रिया-लिखे (वह लिखे)-लिखेसि
(वह उसे लिखे)
लिखेव (वह आपको लिखे)
लिखेमि (वह मुझे लिखे)

सकर्मक क्रियाओं के साथ भूतकाल में दो सार्वनामिक प्रत्ययों का एक साथ प्रयोग भी होता है। इस हालत में पहला प्रत्यय कर्ता तथा दूसरा कर्म की अभिव्यक्ति करता है। जैसे—

लिख्यो (लिखा)—लिख्यो मांसि (लिख्यो+मि+सि) 'मैंने उसे लिखा।'
लिख्योमांनि (लिख्यो+मि+नि) 'मैंने उन्हें लिखा।'
लिख्युइसि (लिख्यो+इ+सि) 'तूने उसे लिखा।'
लिख्युइमि (लिख्यो+इ+मि) 'तूने मुझे लिखा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(८) अधिकांश आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में कर्मणि तथा भावे प्रयोग के वाक्य मुख्य क्रिया में सहायक क्रिया को मिलाकर बनाए जाते हैं : जैसे—

कर्मणि प्रयोग हिन्दी में—चोर **पकड़ा गया।**
शत्रु **मारे गये ।**

भावे प्रयोग हिन्दी में—अब तो मुझसे **चला नहीं जाता।** अब यहीं **बैठा जाय** तो अच्छा ।

परन्तु सिंधी में इस प्रणाली के अतिरिक्त क्रिया की प्रकृति में कर्मवाच्य का प्रत्यय लगाकर भी इस प्रकार के वाक्यों की रचना की जाती है। सकर्मक क्रिया की प्रकृति में कर्मवाच्य का प्रत्यय जोड़ने से कर्मणि प्रयोग तथा अकर्मक क्रिया की प्रकृति में यही प्रत्यय जोड़ने से भावे प्रयोग के वाक्य बन जाते हैं—

कर्मणि प्रयोग—मूंखां पत्रु **लिखजे**
'मुझ से पत्र लिखा जाए।'
मूंखां पत्र लिखिजनि
'मुझसे पत्र लिखे जाएँ।'

भावे प्रयोग — **हलिजे** 'चला जाए।'
नचिजे 'नाचा जाए।'

सिंधी के इन क्रिया रूपों में/-इज्-/ (लिख्+इज्+ए, लिख्+इज्+अनि, हल्+इज्+ए, नच्+इज्+ए) संस्कृत के /-य-/ प्रत्यय का ही परिवर्तित रूप है। संस्कृत में भी धातु में /-य-/ लगाकर कर्मवाच्य तथा भाव वाच्य क्रियाओं के रूप बनाए जाते हैं—जैसे—लिख्यते, चल्यते, नृत्यते।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सिंधी भाषा ने अब तक संस्कृत भाषा के कर्मणि तथा भावे प्रयोग की रचना प्रणाली को अपने पास सुरक्षित रखा है।

(१) सिंधी में भूत कृदन्त बनाने के लिए क्रिया को प्रकृति में /-य्-/ प्रत्यय लगाया जाता है, जैसे—लिख+य्+ओ=लिख्यो (लिखा), घुम्+य्+ओ=घुम्यो (घूमा)। इन रूपों में अन्तिम 'ओ' प्रत्यय पुल्लिग एकवचन का द्योतक है। सिंधी में लगभग एक सौ भूत कृदन्तों के रूप इस नियम के अपवाद हैं। वास्तव में ये सभी अनियमित रूप संस्कृत और प्राकृत के नियमों के अनुसार बने हुए हैं जिनको सिंधी भाषा ने अपनी प्रकृति के अनुसार किंचित् परिवर्तित कर सुरक्षित रखा है। अतः ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से नियमित होते हुए भी ये रूप आधुनिक सिंधी भाषा की संरचना में अपवाद सिद्ध होते हैं—

सिन्धी	प्राकृत	संस्कृत
ततो (तपा हुआ)	तत्त	तप्त
जातो (जाना हुआ)	जाणिअ	ज्ञात
लधो (प्राप्त)	लद्ध	लब्ध
गठो (घिसा हुआ)	घट्ठ	घृष्ट
भगो (टूटा या भागा हुआ)	भग्ग	भग्न
तुठो (संतुष्ट)	तुट्ठ	तुष्ट

सिंधी में व्याकरण सम्बन्धी रूपों की कुछ विशेषताएँ वर्णन करने के पश्चात् अब यहाँ सिंधी शब्द-संग्रह की ओर भी संकेत करना अनुचित न होगा। सिंधी भाषा में संस्कृत तत्सम शब्दों की अपेक्षा उनके तद्भव रूपों की प्रचुरता है। देश-विभाजन के पश्चात् भारत की सिंधी भाषा में साहित्यिक हिंदी के अधिक प्रभाव के कारण कई संस्कृत शब्द तत्सम रूपों में भी प्रचलित होने लगे हैं। दूसरी ओर पाकिस्तान में सिंधी भाषा उर्दू के माध्यम से अरबी-फारसी शब्दों को ग्रहण कर उनके बोझ से दबी जा रही है। इन प्रवृत्तियों के होते हुए सिंधी भाषा की मूल शब्दावली में तद्भव रूपों की ही अधिकता है। उदाहरणार्थ यहाँ सिंधी के कुछ तद्भव शब्द दिए जाते हैं—

सिन्धी	संस्कृत
अणासो (निर्लज्ज)	अनासः (ऋग्वेद ५/२९/१०)
झूरू (पुराना वृद्ध)	जूर्यः (ऋग्वेद ४/२/७)
जूई (स्थान)	यूति (जैसे गव्यूति)
वलहो (प्रिय)	वल्लभ
जञ (बरात)	जन्य
सद्दु (पुकार, आवाज)	शब्द
आङारो (मंगलवार)	अंगारकवार
आचरु, आरितवारु (रविवार)	आदित्यवार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कई पारिवारिक संबंधों की अभिव्यक्ति के लिए जहाँ हिंदी में दो शब्दों का सहारा लिया जाता है, वहाँ सिंधी में उन सम्बन्धों का बोध कराने के लिए एक ही शब्द मिलता है। जैसे—

हिन्दी	सिन्धी
चचेरा भाई	सौटु
चचेरी बहन	सौटि
ममेरा भाई	मारोटु
ममेरी बहन	मारोटि
मौसेरा भाई	मासातु
मौसेरी बहन	मासाति
ननद का लड़का	निराणोटु
ननद की लड़की	निराणोटि
समधी का लड़का	सेणोटु
समधी की लड़की	सेणोटि
देवर का लड़का	डेरोटु
देवर की लड़की	डेरोटि

इसी प्रकार पशु-पक्षियों, जीव-जन्तुओं, जड़ी-बूटियों आदि से सम्बद्ध शब्द भी सिंधी भाषा में अधिक हैं जो वस्तुओं अथवा प्राणियों की विभिन्न अवस्थाओं का सूक्ष्म भेद भी बनाते हैं। किसान, माली, बढ़ई, लुहार, सुनार, कुम्हार, आदि के व्यवसायों से सम्बन्ध रखने वाले शब्द भी सिंधी में काफी मिलते हैं। सिंध (पाकिस्तान) में सिन्धी-अरबी बोर्ड की ओर से सिन्धी भाषा का बृहद शब्द कोश तैयार करने की योजना का आरम्भ हो चुका है, जिसके अन्तर्गत शब्द-कोश का पहला भाग प्रकाशित हो चुका है। इस भाग में केवल प्रथम तीन अक्षरों (अलिफ, बे, वे) के अन्तर्गत ही लगभग १६,००० प्रविष्टियाँ दी गई हैं। इस से सिन्धी भाषा के शब्द भांडार का अनुमान आसानी से लगाया जा सकता है।

यहाँ संक्षेप में सिन्धी की प्रमुख भाषा वैज्ञानिक विशेषताओं का उल्लेख किया गया है। देश-विभाजन के पश्चात् कई सिन्धी हिन्दू अपने जन्मस्थान सिन्धप्रदेश को छोड़कर भारत के विभिन्न प्रान्तों में बस गए हैं। अब भारत में सिंधी भाषा पर अलग-अलग स्थानीय भाषाओं का प्रभाव पड़ रहा है और इस कारण से सिंधी के रूप में जो द्रुत परिवर्तन हो रहा है, वह उसके साधारण ऐतिहासिक विकास-क्रम में संभवतः न होता। भाषा-परिवर्तन के सूक्ष्म विश्लेषण करने का यह सुन्दर अवसर है। सिंधी भाषा का अलग-अलग दृष्टि-कोणों से विश्लेषण करने पर भारतीय भाषा विज्ञान के क्षेत्र में अवश्य ही नए-नए तथ्य प्रकाश में आ जाएंगे, इसमें कोई संशय नहीं।

●

एक ऐतिहासिक पृष्ठ निबंध

गांधी जी के साथ सात दिन

श्री जयरामदास दौलतराम*

मैंने नहीं सोचा था कि मेरा ऐसा सौभाग्य होगा कि जेल-यात्रा में मैं कुछ दिनों के लिए महात्मा जी के साथ रहूँगा। वैसे मुझे सिंध में ही गिरफ्तार होना चाहिए था। आंदोलन के प्रारम्भ से ही सिंधी के अधिकारियों की आँखों में खटकता था। उन्हें जिन्हें जेल भेजना था, उनकी गोपनीय सूची पर मेरा नाम दर्ज था। तुरन्त छूटने के बाद मैं फिर कई बार कराची और हैदराबाद में भाषण करता रहा था और सिंध-सत्याग्रह-परिषद् के संचालन का कार्यभार भी सम्हाले हुए था। मेरा यह समझना स्वाभाविक था कि आज नहीं तो कल पकड़ा जाऊँगा और हैदराबाद या कराची की जेल में जाकर अपने मित्रों से मिलूँगा।

लेकिन उससे कहीं ज्यादा अच्छा मेरे

*जन्म सन् १८८१, सिन्धी जन-समुदाय के वयोवृद्ध नेता प्रसिद्ध गांधीवादी विचारक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग्य में लिखा था। मैं बम्बई की सड़कों पर हजारों नर-नारियों के साथ, बरसात होते, लोकमान्य तिलक की पुण्य तिथि की सारी रात मनाने के बाद कुछ और साथियों की तरह पकड़ा गया, दो जेल घूमा और आखिर में यरवदा जेल में पहुँचा दिया गया। सरदार बल्लभ भाई और अन्य सह-बंदियों के साथ मैं जब बम्बई से पूना रेलगाड़ी से ले जाया जा रहा था तो मेरा हृदय पुलकित था कि जिस जेल में बापू बंद हैं, उसी में मुझे तीन महीने रहने को मिलेगा। मुझे यह उम्मीद बिल्कुल न थी कि उन्हीं कोठरियों में उनके साथ पूरे के पूरे सात दिन बिताऊँगा।

पहले तो हमें 'ए' श्रेणी वाले क्षेत्र में रखा गया। लेकिन हम उन्हीं दिनों गिरफ्तार किये गये थे जब संधि की बातें चल रही थीं। सरदार बल्लभ भाई और मैं यरवदा जेल में अभी दो दिन ही रहे थे कि पं० मोतीलाल और पं० जवाहरलाल नेहरू, और डा० महमूद को नैनी जेल से विशेष रेलगाड़ी में चढ़ाकर महात्मा के साथ लाकर ठहराया गया ताकि वे सुलह की बातों में परामर्श के लिए मौजूद हों। दो-एक दिन में संधि के दूत सर तेजबहादुर और श्री जयकर भी आ गये। बातें जेल अधीक्षक के कार्यालय में हुईं। महात्मा, नेहरू पिता-पुत्र, और डा० महमूद के साथ सरदार बल्लभ भाई और मुझे वहीं बुलावा हुआ। महीनों के बाद वहीं महात्मा के दर्शन हुए। वे बातें एक दिन में तो तय होने वाली नहीं थीं। इसीलिए दो-तीन बार जब संधिदूत आए तो सरदार को और मुझे महात्मा के साथ रहने दिया गया। इस प्रकार उनके साथ सात दिन रहने का लाभ मिला और उन्हीं दिनों महात्मा के कारागार-वास के जीवन को निकट से देखने का मौका मिला।

महात्मा गांधी को 'राजबंदी' कहा जाता था। सरकार ने उन्हें १८२७ के—एक सौ साल पुराने—नादिरशाह के-से हुक्म के मातहत गिरफ्तार कर कैद किया था। वह हुक्म मूल में राजाओं और राजकुमारों पर लागू होता था। अंग्रेज किसी राजा को लड़ाई में हराते थे तो कभी-कभी उसे कैद कर देते थे, परन्तु उसकी शान में बहुत कमी आने नहीं देते थे। निवास, भोजन और अन्य सभी सुविधाएँ उसे प्रदान करते थे। लेकिन अंग्रेज सरकार महात्मा गांधी को तो कोई राजा या शासक मानती नहीं थी। वह पुराना कानून उनके साथ इस-लिए लगाया गया था कि उसके मातहत उनके खिलाफ न कोई फरियाद दायर की जाए, न कोई मुकदमा चलाया जाए, न कारावास की अवधि नियत की जाए; न वकील, न दलील, न अपील ही हो। उसी मूक-बधिर विधि के अंतर्गत महात्मा गांधी को यरवदा जेल में भेजा गया।

जेल का आंतरिक शासन जैसा यरवदा जेल में कठोर था, वैसा समूचे भारत के किसी जेल में न था। महात्मा को नितांत एकाकी रखा गया। जेल के अन्य भागों में जो भारतीय कैदी—राजनीतिक कैदी अथवा साधारण कैदी रहते थे, उनसे वे बिल्कुल अलग रखे गये थे। उन्हें गौर-वर्ण कैदियों वाले क्षेत्र में रखा गया था। उनके साथी काका कालेलकर के सिवा अन्य सभी कैदी गौर-वर्ण या ईसाई थे।

वह क्षेत्र जेल के एक कोने में होने से उसमें चहल-पहल बहुत कम थी। उसमें से जेल के कार्यालय की ओर जाने के लिए जो रास्ता था, वह जेल के अन्य भागों में से होकर जाता था। कहीं महात्मा को उस कार्यालय में कभी ले जाते समय साधारण कैदियों की उन पर निगाह न पड़ जाय, इसीलिए उसी क्षेत्र की एक और दीवार में से एक दूसरा दरवाजा तोड़कर निकाला गया जिसमें से बाहर-बाहर से बिना किसी की निगाह पड़े, महात्मा को जेल के कार्यालय में लिवा लिया जाता था। जो कैदी उसी क्षेत्र में रहते थे, उन्हें भी उनके साथ बातचीत करने की सख्त मनाही थी। उनका वार्डर भी एक अंग्रेज था। महात्मा दोहरे जेल में बंद थे जेल के अंदर जेल में।

गौर-वर्ण क्षेत्र में दो लम्बी बारकें थीं। हरेक बारक में बीस कोठरियां थीं—हरेक कैदी के लिए एक। महात्मा के लिए कोई अलग पाखाना नहीं था, उनकी कोठरी के पास वाली कोठरी में एक कमोड रखा था। लेकिन सफाई से रहना तो कोई महात्मा से सीखे! उस शौच-घर को वे जरा भी गंदा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने नहीं देते थे। कमोड भी वहीं था, कपास पींजने और पूनियां बनाने का काम भी वहीं होता था। एक दिन वे बैठे कपास पींज रहे थे और सरदार वल्लभ भाई और मैं खड़े-खड़े उनसे बात कर रहे थे। कोठरी में चारों ओर बड़ी सफाई थी। सब चीजें अपनी-अपनी जगह पर सलीके से रखी थीं। उसे कोई पाखाना नहीं कह सकता! उनकी दूसरी कोठरी बैठक थी, जिसमें वे बाकी सारा दिन फर्श पर बैठे गुजारते थे। नीचे एक दरी बिछी थी। कम्बल के पास उनका सुदर्शन चरखा, पास ही कुछ पुस्तकें और कातने का सामान था। एक कोने में खाने की चीजों और थाली-गिलास रखने के लिए चौकोर छोटी जाली पड़ी थी और दूसरे कोने में पानी का घड़ा भरा रहता था। बाहर बरामदे में एक कुर्सी जिस पर प्रायः बैठकर वे खाना खाते थे और एक चारपाई जिस पर वे रात को सोते थे, पड़ी थीं। यही थी उनके रहने की सारी सामग्री उनका पूरा माल-असबाब!

महात्मा को दुनिया से अलग-थलग रखा गया था। सह-कारावासियों से मेल-जोल का प्रत्येक कारावासी को अधिकार है। अकेली कोठरी में उसे ही रखा जाता था जिसने जेल के ही किसी नियम का उल्लंघन किया हो, जो जेल-व्यवस्था का ही दोषी हुआ हो। लेकिन महात्मा के साथ शुरू से ही कोई सह-कारावासी न था, जिससे वे कोई बात कर सकें। वे स्वयं और उनका चरखा, उनका चरखा और वे स्वयं। इतना ही। आखिर में देश-भर में इस बात की कटु आलोचना होने के कारण उन्हें एक साथी मिला था। गुजरात विद्यापीठ के आचार्य साबरमती जेल में बंद थे। उन्हें उनके पास ले जाया गया। वैसे बंदी से मिलने के लिए उनके रिश्ते-नातेदार, जान-पहचान के लोग आते हैं, इससे भी उस बंदी के लिए जेल का अकेलापन कम होता है। लेकिन सरकार ने महात्मा को ऐसी मुलाकातों के मौके भी नहीं दिये। इसी घोटाले के कारण महात्मा पिछले लगभग छः महीनों से संधि के दूतों के अलावा एक भी बाहरी आदमी का मुंह न देख सके थे, अपनी पत्नी, बच्चों, आश्रम-वासियों या जान-पहचान के अन्य लोगों में से किसी एक से भी मिल न पाए थे। ऐसा सख्त बर्ताव भारत के आधा लाख राजनीतिक बंदियों में से किसी एक से भी नहीं किया गया था। परन्तु महात्मा के लिए सब आनन्द था। उनके लिए 'स्व' की संगति ही यथेष्ट थी। उन्होंने जेल का नाम ही रखा था यरवदा मन्दिर। वे उस मन्दिर में सत्य की आराधना में लीन थे।

पाठक जानना चाहेंगे कि जेल में उनकी क्या दिनचर्या थी। वे प्रभात को चार बजे के लगभग उठते थे। दातुन-पानी से निवृत्त होकर वे और काका कालेलकर ठीक साढ़े चार बजे प्रार्थना पर बैठ जाते थे। काका साहब पहले आश्रम की प्रार्थना के श्लोक कहते थे और फिर महात्मा गीता के एक अध्याय का मुक्त-कंठ से पाठ करते थे। सौभाग्य से मुझे वे सातों ही दिन बड़े सवेरे और शाम को उनकी प्रार्थना में सम्मिलित होने का सुअवसर प्राप्त हुआ। पौने पाँच बजे के लगभग प्रार्थना पूरी होती। दिन को बहुत काम होने से महात्मा शरीर से थक जाते थे, इसीलिए वे घण्टा-भर और लेट जाते थे। पौने छः से पौने सात तक घूमते थे और फिर बरामदे में बैठकर जल-पान करते थे। लगभग सात बजे से लेकर दस बजे तक कपास पींजने और सूत कातने का काम करते थे। दस बजते तो वे नहाने के लिए उठते। साढ़े दस बजे के लगभग फिर थोड़ा कुछ खाते। फिर आधे घंटे के करीब अखबार पढ़ते और पन्द्रह-एक मिनट के लिए एक झपकी और ले लेते। बारह बजे फिर चरखे पर बैठ जाते और शाम के छः बजे तक चरखा चलता रहता। उसके बाद दिन का आखिरी खाना खाते और घंटा भर घूमते। ठीक साढ़े सात बजे प्रार्थना होती। संध्या को काका साहब ऊँची आवाज में प्रार्थना करते और महात्मा आंखें बन्द कर धुन में बैठ रहते। पौने आठ बजे प्रार्थना कर महात्मा अपनी डायरी लिखते थे। डायरी में वे हरेक दिन दो-चार पंक्तियां ही दर्ज करते थे। सबसे पहले उसमें वे जितनी कपास पींजते थे, या जितना सूत कातते थे, वह दाखिल करते। अन्य बातें बाद में लिखते थे। दिन में कोई विशेष घटना घटती तो उसका संक्षिप्त उल्लेख कर देते।

डायरी लिखकर वे हरेक दिन आश्रम की भजनावली में से एक भजन का अंग्रेजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में रूपान्तर करते थे। मीराबाई (मिस-स्लेड) अंग्रेजों के एक जल-सेनापति की बेटी और महात्मा की श्रद्धालु शिष्या थीं। एक बार उन्होंने महात्मा को बताया था कि उन्हें आश्रम के भजन कर्ण-प्रिय तो लगते हैं, लेकिन वे उनका अर्थ समझ नहीं पातीं। महात्मा ने उन्हें आश्वासन दिया था कि वे उनके लिए उन भजनों का अंग्रेजी में अनुवाद करेंगे। जेल के बाहर उन्हें फुर्सत नहीं मिलती थी, इसीलिए उन्होंने जेल में यह नियम-सा बना दिया था कि सोने से पहले एक भजन का अनुवाद करें। वे एक भजन का अनुवाद कर नौ बजे के लगभग सो जाते थे।

कभी-कभी तो उन्हें काफी देर हो जाती थी। एक ओर उन्होंने खाना कम कर दिया था, दूसरी ओर श्रम भी बहुत करते थे। फिर उन्हें कोठरी में ही सारा वक्त बैठना होता था। उन्हें आराम की ज्यादा जरूरत पड़ती थी। पर वे आराम या नींद की परवाह नहीं करते थे। ४ सितम्बर संध्या को हमने सुलह के कासिदों से अंतिम बातें समाप्त कर दी थीं। दूसरे दिन सुबह को साढ़े ग्यारह बजे वे वाइसराय के पत्र के उत्तर में लिखे हमारे पत्र के लिए आने-वाले थे। जब महात्मा रात-रात में उत्तर लिखें, तब सरदार बल्लभ भाई और मुझ से राय ले सकें और फिर पत्र के उस अंतिम रूप की दो नकलें सुबह तक तैयार हो सकें। इधर यह ऐसा आवश्यक कार्य, जिसका भारत के सुख-दुःख से घनिष्ठ सम्बंध था, ऐसा पत्र, जिसकी दुनिया-भर में प्रतिक्रिया होने वाली थी, उधर समय कम था, सो मैंने सोचा कि महात्मा आज और काम न कर पहले उत्तर लिखने बैठेंगे। लेकिन सदा की भाँति वे संध्या को घूमने भी गये, उन्होंने डायरी भी लिखी। मैंने सोचा अब जरूर लिखने बैठेंगे। परंतु नहीं। अभी एक भजन का तर्जुमा करना बाकी था। नियमानुसार नौ बज गये वह उनके सोने का समय था, पर वे तब जवाब लिखने बैठे।

सरदार बल्लभ भाई, काका साहब और मैं उनकी कोठरी में बैठे थे। दस बजे उन्होंने सरदार बल्लभ भाई से कहा कि वे जाकर आराम करें। काका साहब भी उनींदे लग रहे थे, सो उन्हें भी कहा कि वे जाकर सोएँ। मुझे कहा था कि मैं संधि से संबद्ध पत्र-व्यवहार में से अमुक-अमुक कागजों की उनके नोट बुक में नकल रख दूं। मैं उनके समक्ष बैठा वही काम कर रहा था। कुछ समय बाद मेरी आँखें भी भारी-भारी सी होने लगीं। भला हम सब सुबह चार बजे उठते थे। लेकिन मैं अपने को सायास चुस्त बनाकर बैठा काम कर रहा था। महात्मा तेज-तेज लिखकर पन्ने भरते जा रहे थे बारह बजे के लगभग उन्होंने उत्तर लिखकर पूरा किया। काका साहब इस बीच में उठे थे। महात्मा ने उन्हें कहा कि वे लिखे हुए उत्तर को ऊँची आवाज में पढ़ें ताकि वे सुनें और मैं भी सुनूं। जब उन्होंने वह पढ़कर पूरा किया तब महात्मा ने मुझ से पूछा कि मैं उसमें क्या-क्या तब-दीलियां करना चाहता हूँ। मैंने उन्हें दो-तीन बातों के लिए अपनी राय दी तो उन्होंने उसमें संशोधन किये। इस कार्यवाही में पौने एक बजने को आया। पौने आठ (जब वे भजन का अनुवाद करने बैठे थे) से पौने एक तक, पूरे पाँच घंटे उन्होंने दिन के श्रम और उससे हुई क्लांति के बावजूद पाल्थी मार, सीधे बैठ, लगातार काम किया था। तब वे जाकर खाट पर लेटे। सुबह को चार बजे फिर प्रार्थना में आ बैठे। जब सर तेजबहादुर और श्री जयकर से सुलह की बातें चल रही थीं तो वे दिन की नींद भी छोड़ देते थे। हम युवा लोग भी ऐसे कठोर श्रम से चूर-चूर हो जाएँ, हमारे सिर चकरा जाएँ। उनकी संकल्प-शक्ति प्रबल थी, इसीलिए उनका दिमाग कभी उलझा हुआ नहीं लगता था, वे हम से सौ बार अधिक सफाई और तेजी से बहस करते थे।

जेल के भीतर महात्मा ने अपना खाना भी सूक्ष्म कर दिया था। बाहर उनका जीवन यापन अधिकतर ताजा फलों पर होता था। संतरे, द्राक्ष, आम आदि उनके मुख्य खाद्य पदार्थ थे। परन्तु जेल में उन्होंने उन्हें भी तिलांजलि दे दी थी। सूखे जरदालू, सूखे खजूर और कच्चे दूध के मठ्ठे पर तीनों जून का खाना चलता था। उनकी पाचन-शक्ति इतनी कमजोर पड़ गयी थी कि बकरी का दूध, जिसपर उन्होंने सालों के साल जिन्दगी बितायी थी, पचा नहीं पाते थे। हमने उन्हें बहुतेरा कहा कि वे ताजा फल नारंगी आदि लें। परंतु वे नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माने। काका कालेलकर ने बताया कि जब से उन्हें ये समाचार मिले हैं कि बाहर हमारे जवानों पर लाठियों बरस रही हैं, तब से वे बड़ी चिंता में हैं। काका साहब से यह बात जानकर सरदार बल्लभ भाई और मैंने आपस में बात की। भला, सूखे जरदालुओं में क्या ताकत होगी? हमने उनसे कहा, आपका वजन घट रहा है, चेहरे का रंग भी उतरा हुआ है। आपको ताजे फल अवश्य खाने चाहिए। उन्होंने एक लम्बी, ठण्डी साँस ली और उत्तर दिया, 'नहीं, अभी मैं इस शरीर को और आजमाऊँगा। हम तो यहाँ जेल में सुखी दिन बिता रहे हैं, हम पर लाठियों की मार नहीं पड़ रही।' उन्हें बहुत कहा, लेकिन वे टस से मस नहीं हुए। लगातार दो महीने से उनका वजन घटता जा रहा था और ९९ पाऊंड पर जा गिरा था।

हमारे उनके यहाँ जाने से दो-एक दिन पहले उन्हें बुखार आया था। वैसे उनका शरीर सदा नीरोग रहता था। उस बुखार का कारण ही निराला था। पहले दिन जब उनसे मैं मिला तो मैंने देखा, उनके पाँव की अँगुली पर पट्टी की हुई थी। मैंने पूछा, 'आपको कोई चोट लगी?' उन्होंने मुस्कराकर कहा, 'नहीं, उस दिन घूमते-घूमते एक बड़ा जहरीला मकोड़ा पैर पर आ चढ़ा और काटने लगा। ऐसे मकोड़े को आदत होती है कि क्या भी हो, हम उसे हाथ से झटककर दूर करना भी चाहें तो वह अपना काटना नहीं छोड़ता। हाथ लगाते उसका धड़-सिर अलग हो जाएगा, परन्तु उसका काटता मुँह अटका रह जाता है। मैंने अगर उसे अलग करने की कोशिश की होती तो वह मर जाता। इसीलिए मैंने उसे छोड़ दिया। खून पीकर जब वह तृप्त हुआ तो वह अपने-आप मेरे पैर पर से उतर गया। इस अँगुली में जरा घाव हो गया। पर अभी ठीक हो गया है।' काका साहब से पता चला कि उस घाव की वजह से उन्हें एक दिन बुखार आया था, लेकिन उन्होंने कोई दवा नहीं की।

महात्मा का जीवन वैसे ही बहुत सादा था, परन्तु जेल में तो उन्होंने कम खर्च की हद कर दी थी। कोठरी में जिस जगह पर वे रहते थे, वहाँ पहले कुछ सीलन थी। नीचे दरी, उसके ऊपर वे जेल का कम्बल डाला करते थे, परन्तु फिर भी सीलन का असर बना रहता था। परन्तु उन्होंने कभी यह बतलाया तक नहीं। काका कालेलकर ने सोचा, उन्हें कहीं ठण्ड न लग जाए, सो उन्होंने महात्मा को बताये बिना जेल के अधीक्षक से कहा कि महात्मा के लिए एक गरम ब्लेंकेट चाहिए। जेल अधीक्षक ने बम्बई लिख भेजा और ठीक तीसरे दिन २० रुपये का एक गरम ब्लेंकेट पहुँच गया। वे महात्मा के यहाँ ले गये तो उन्होंने वह लेने से साफ इनकार कर दिया। कहा, 'मुझे दूसरे कीमती कम्बल की जरूरत ही नहीं है।' उन्हें जब पता चला कि काका साहब ने उसकी माँग की थी तो वे उनपर जरा नाराज हुए। बोले, 'तुम यदि यह सोचते हो कि मुझे ठण्ड लग जाएगी तो मैं उसके लिए कोई और इन्तजाम करूँगा।' क्या आप सोच सकते हैं कि उन्होंने किस प्रकार दूसरे कम्बल के बिना ही काम निकाला? चरखा चलाते समय कभी-कभी पूनियों में से खराब कपास के छोटे-छोटे पीले टुकड़े, या ठीक से न कते भागों के टुकड़े निकलते हैं। हम तो प्रायः ऐसे टुकड़े फेंक देते थे। परन्तु महात्मा वे सब गत्ते के एक बक्से में एकत्र करते जाते थे। उन्होंने एक पुराने अखबार पर वे टुकड़े बिछाकर तह सी लगा दी और उसके ऊपर फिर पुराना अखबार फैला दिया। उस पर वे विस्तर लगाते। अब उन्हें कपास की तह की गरमी से सीलन का अनुभव कम होता था।

दूसरे दिन सुबह को नकलें तैयार रखी थीं। संधि-दूतों को दो नकलें चाहिए थीं। वे उनमें से एक हैदराबाद और दूसरी बम्बई ले जाने वाले थे। पर आलपिने कहाँ से आएँ कि कागज एक-साथ रह सकें? महात्मा ने झट से कहा, आलपिने मुझ से ले लो। हमने देखा, उन्होंने गत्ते के उस बक्से में से एक कागज निकाला जिस पर बहुत सारी आलपिने लगी थीं। उनके पास डाक में इतने सारे खत आते थे, उत्तर देने के बाद वे गैर-जरूरी खत फाड़ देते थे और उनमें लगी आलपिनें निकाल कर अलग रखते जाते थे।

महात्मा जेल के बाहर भी महा तपस्वी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे, परन्तु जेल में तो उनकी तपस्या एक कठिन अवस्था तक जा पहुँची थी। एक दिन मैंने उन्हें दाढ़ी की हजामत कराते देखा तो भौचक्क रह गया। काहे का ब्रश, काहे का साबुन, काहे का तेल, काहे का पानी ! दाढ़ी मूड़ने वाली पाकी भी सूखी ! दाढ़ी भी सूखी नाई के पास ब्रश, साबुन वगैरह सब कुछ था, परन्तु महात्मा अपनी दाढ़ी इस तरह बनवाते थे। यह ठीक है कि उनके मुँह पर घने बाल नहीं थे, लेकिन बाल कितने भी थोड़े हों, सूखे मुँह पर सूखी पाकी हम में से कितने लोग बर्दाश्त कर सकेंगे ? संसार में सबसे अधिक शक्तिशाली साम्राज्य अंग्रेजों का था और अंग्रेजों के सबसे अधिक सशक्त विरोधी गांधीजी थे। वे राजबंदी थे। पर उनके मासिक व्यय के लिए सरकार ने एक सौ रुपये मंजूर किये थे। एक ओर वाईसराय आधे-भूखे आधे-नंगे, निर्धन भारतवासियों की मेहनत की कमाई में से २१ हजार रुपये वेतन पाता था ! दूसरी ओर महात्मा पर खींचतानकर १२ रुपये माहवार से अधिक खर्च नहीं होता था। वह अपने रहन-सहन से सरकार को दिखा रहे थे कि वह निर्धन भारत के साथ कितना बड़ा अन्याय कर रहे थे।

सुलह की बातें खत्म हुईं। हम बेबस थे। सरदार बल्लभ भाई और मुझे सरकार के आदेशानुसार फिर जेल के दूसरे हिस्से में ले जाया गया।

पीली बत्ती पर / डॉ० मोतीलाल जोतवाणी

रजनी को नहाए काफी देर हो गई थी। उसके बाल सूख गये थे। वह कमरे में आकर कंघी से बाल सँवारने लगी। बाल सँवारते-सँवारते वह फिर मनोहर के ध्यान में खो गई कि दरवाजे पर दस्तक हुई। दरवाजा खुलते ही मनोहर ने ही घर में प्रवेश किया। वह आज काफी देर से घर में आया था। लेकिन रजनी ने देखा, उसके चेहरे पर दफ्तर की थकावट के चिन्ह नहीं थे, किसी और किस्म की थकावट के चिन्ह थे। उसे महसूस हुआ, उसकी यह थकावट उसने अपने जीवन में कई बार देखी है। उसने कहा, 'तुम्हारे दफ्तर चले जाने के बाद तुम्हारी अनुपस्थिति के आठ घण्टे ही काफी बोरियत से भरे रहते हैं, शेष बचे सोलह घण्टों से कहीं अधिक लम्बे जान पड़ते हैं, और तुम हो कि आज और अधिक देर से लौटे हो। कहाँ गये थे ?'

मनोहर ने इस प्रश्न की, ऐसे शब्दों में, आशा न की थी। उसके लिए भी भावभीनी सच्चाई लौटाना जरूरी हो गया। उसने कहा, 'आज मित्रों के संग 'सफीना' में कैबरे डांस देखने चला गया।'

रजनी अवाक रह गई।

उसने कहा, 'नीटू को हल्का-सा बुखार है।'

मनोहर की आँखें अभी रजनी की आँखों में सीधा निहार न पाई थीं। अब उसने रजनी के चेहरे में देखते हुए कहा, 'तुमने उसे कोई दवा दी ? तुम्हें शायद मेरा ही इन्तजार होगा कि मैं आकर उसे कोई दवा दूँ।'

उसने कहा, 'नहीं। उसे आधी गोली दे दी है।'

सिगरेट पीकर, कपड़े बदलकर, मनोहर खाने की मेज पर जा बैठा। वह आज बाहर से 'स्नेक्स' खाकर आया था। फिर भी उसे भूख महसूस हो रही थी शायद साधारण से अधिक भूख लगी थी।

रजनी ने फ्रिज में से खाना निकाल मेज पर लगाते हुए कहा, 'आज सामने वाले खाली मकान में नए किराएदार आए हैं।'

'कौन हैं ?'

'पता नहीं।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सामने वाली किरायेदारिन सुन्दर है ? लेकिन वह तुमसे अधिक सुन्दर क्या होगी ?'

रजनी के चेहरे पर कठोर रेखाएँ उभर आईं। उसने अपने आपको एकाएक ही थका-टूटा-सा महसूस किया। बेडरूम में जाकर उसने नीटू से पूछा, 'नीटू, पानी पिओगी ?'

नीटू ने मासूम आँखें उठाकर 'हाँ' में सिर हिला दिया।

रजनी ने कहा, 'फूल-सी बिटिया को प्यास लगी है। अभी पानी लाती हूँ।'

मनोहर अवाक् रहा। उसने नीटू के मस्तक पर हाथ फेरते हुए प्यार से तोतली जबान में कहा, 'हमाली छोती-छोती बबली को बुथाल आ गया था का ? अभी उ···त ल ल गया।'

नीटू कुछ न बोली, केवल अपनी माँ के आने वाली दिशा की ओर देखती रही, देखती रही।

रजनी पानी के गिलास के साथ-साथ बिस्कुट का डिब्बा भी ले आई। 'नीटू लो बेटा, कुछ खाकर पानी पिओ।'

मनोहर को लगा, माँ-बेटी दोनों अब काफी समय तक अपने में ही व्यस्त रहेंगी। अब उसने अपने आपको अपने ही घर में पराया-पराया सा महसूस किया, घर की उस 'स्कीम' में एकदम न फब सकने वाला पाया।

उसने सिगरेट केस में से एक सिगरेट निकाली और सुलगाई। सिगरेट पीते-पीते ही आलमारी से बाहर जाने के कपड़े निकाले और बदले। अपनी 'पर्स' में से प्रेस-कार्ड और पहचान करा सकने वाले दूसरे कागज निकालकर आलमारी में पड़े इस्त्री किये कपड़ों के नीचे रख दिये। उसने उसमें से घर के अगले मुख्य दरवाजे की डुप्लीकेट चाबी भी निकाली और अपनी जेब में रख दी।

'रात को मेरा इंतजार न करना', कहकर, जैसे शून्य को सूचना देकर, वह घर का अगला दरवाजा खोल, खुद बाहर निकल, खटाक से बन्द कर चला गया।

हल्की-सी मुस्कराहट रजनी के होठों पर उभरी। मनोहर ने आखिर अपने चेहरे पर से नकाब उतारकर फेंक ही दिया। उसने अपने जीवन में उतर आए एक बड़े विरोधाभास को तोड़ने की हिम्मत आखिर कर ही दी।

× × ×

मनोहर देर रात लौटा अपने घर की बाहरी फाटक पर पहुँचकर क्षण-पल के लिये ठिठका रह गया। उसने एक लम्बा कश लिया और सिगरेट का सुलगता, अन्तिम टुकड़ा फेंककर बुझा दिया। उसने सोचा, अगर रजनी घर में न हुई तो ? वह नीटू को लेकर कहीं चली गई हो तो ? परन्तु घर छोड़कर वह कहां जाएगी ? उसके ऐसा कदम उठाने के साथ नीटू के भविष्य का प्रश्न जुड़ा हुआ है। वह जैसी है, उससे लगता है कि वह भावातिरेक में आकर की गई उसकी गलती को, इस तरह, गृहस्थी के टूटने का कारण नहीं बनायेगी।

आँगन में पहुँचकर उसने खिड़की में से झाँककर देखा। पूर्ववत जीरो बल्ब जल रहा था और उसकी मंद रोशनी में अधजगी चीजें भी सोयी-सोयी सी लग रही थीं। उसने अनुभव किया, बीच का दरवाजा खुला हुआ होने से पहले कमरे से पास वाले दूसरे कमरे में जा रही फीकी रोशनी में रजनी और नीटू सोयी हुई है। वह अब रजनी को नहीं जगाएगा। आज वह न जाने कितना समय जागने के बाद सोयी होगी। ··· लेकिन उसे किसी भी तरह यह पता लगना चाहिये कि वह घर से सारी रात गायब नहीं रहा है। उसने दरवाजे के ताले में डुप्लीकेट चाबी घुमाई और दरवाजा धीरे-धीरे खोला।

'तुमने कहा था रात को मेरा इन्तजार न करना।' यह रजनी की उनींदी आवाज थी।

'तो क्या तुम अभी सोई नहीं ?'

'आवाज पर जाग हुई है।' रजनी की आवाज में जानी-पहचानी सीमा से कहीं अधिक उदासीनता थी। मनोहर के लिये वह असह्य हो उठी।

'नाईट शो देखने गया था।' यह कहने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के बाद भी उसे लगा, आज यह बात इस तरह आसानी से नहीं छूट पाएगी। उसने फिर कहा, 'पिक्चर खत्म होने पर हाल के बाहर प्रोफेसर देशपाण्डे मिले थे। तुम्हारे लिये पूछ रहे थे।'

यह सुनकर रजनी की उदासीनता छितरने-बिखरने लगी। अब वह तंतु-तंतु पर तनाव के एहसास से अपने को हल्का-हल्का महसूस कर रही थी। मनोहर को लगा, अपने आप को किसी संभावित गलत-फहमी से शीघ्रातिशीघ्र मुक्त करने के विचार से (वह समय के सहारे यह बात छोड़कर असह्य स्थिति की अवधि को क्यों बढ़ाए ?)—विशेषकर जब इस बात में छिपाने जैसा बहुत कुछ नहीं है — किसी हल्के झूठ का आश्रय लेना ही पड़ता है। सच (और सच के सिवा और कुछ नहीं) अपनाने से यह जिन्दगी जीने लायक रहेगी ? यह जिन्दगी इतनी बड़ी तो है नहीं कि आखिर में सच की ही जीत देखी जा सके ? आगे चलकर वह हल्का झूठ जाहिर हो भी गया तो तब तक इस झूठ का कड़ुआपन गुम हो जायेगा।

'नीटू कैसी है ? उसने तुम्हें काफी देर तक जगाए रखा होगा ?' मनोहर ने दूसरे कमरे में जाकर पूछा।

अब बिल्कुल ठीक है. उसने खूब आराम किया है।' रजनी ने कहा और मनोहर की आँखों में निहार कर पूछा, 'काफी देर तक जागती रही हूँ, अब मैं सोऊँ ? हर रोज तुमसे पूछकर ही सोने की तैयारी करती हूँ न ?'

मनोहर को अपने आप पर धिक्कार महसूस हुई। उसने रजनी को टीन की चाबी द्वारा परिचालित एक खिलौना-सा बना दिया था। उसने कहा, 'सो जाओ।' उसकी आवाज में अनुमति नहीं, आत्मीयता थी। वह भी ट्यूब-लाईट बुझाकर पास के कमरे में जा लेटा—चुपचाप। उसे लगा, इन दिनों उसका ध्यान रजनी के सुन्दर तन की घटती जकड़ की ओर तो जाता रहा है, लेकिन उसके पवित्र मन की बढ़ती पकड़ की ओर शायद ही गया है। अब रजनी में पहले से कहीं अधिक एक सूक्ष्म आत्मीयता है, पहले से कहीं अधिक एक प्रौढ़ आकर्षण है। इस उम्र की एक अलग सुन्दरता, एक अलहदा जादू है और उसे गरम-गरम साँस की छाँह में न जाने कब नींद आ गई।

दूसरे दिन। ज्योंही रजनी ने कागज के उस टुकड़े पर लिखी पंक्ति पढ़ी, उसका दिल धक से रह गया। उस पर लिखा था, 'आज के मनोरंजन के लिए पचास रुपये।'

मनोहर आधी रात को लौटा था। उसने तो कहा था, वह नाईट-शो देखकर आया है। उसने मनोहर की पैंट में से निकली वह पर्ची फिर पढ़ी। पेंसिल से यही तो लिखा था। तो क्या वह कल रात किसी सिनेमा-हाऊस में नहीं, कहीं और गया था ? क्या किसी क्लब में गया था ? मनोरंजन ? कैसा मनोरंजन ? कल शाम को ही तो वह कैबरे डांस भी तो देख आया था।

वह भीतर कमरे में गई। एक अखबार लेकर उसका वह हिस्सा दुबारा पढ़ने लगी। यह आज का वह अखबार इससे पहले भी सतही निगाह से पढ चुकी थी। न जाने क्या सोचकर कैंची ले आई और उसने तीसरे पृष्ठ पर प्रकाशित वह विज्ञापन काटकर अपने पास रख लिया। सोचने लगी, यह सब शायद इसीलिए होता है, क्योंकि घर के आय-व्यय पर पुरुष का अधिकार है। या यों कहें, पुरुष के घर से बाहर रहने से और नारी के घर में बैठने से, थकावट और बोरियत महसूस करने का अधिकार पुरुष का है, और उस थकावट, बोरियत मिटाने का कर्त्तव्य नारी का। घर में या बाहर, हम चाबी द्वारा परिचालित खिलौने मात्र हैं, चाबी घुमायी नहीं कि खिलौना चलना चाहिए।

रजनी ने वह कतरन संम्हालकर अपने पर्स में रखी और फिर बाहर आकर कपड़े धोने के पाऊडर में शर्ट के साथ वह पैंट भी डाल दी। उसने प्लास्टिक की उस लाल बाल्टी में हाथ डालकर दोनों कपड़ों को अच्छी तरह भिगोया तो शीघ्र ही पाऊडर की सफेदी गुम हो गई और काला-नीला मैल जाहिर हो गया। उसने आज भी बाल्टी के उसी पाऊडर में धोने के लिए ब्लाऊज आदि एक-दो छोटे कपड़े निकाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखे थे, लेकिन आज उसने न जाने क्या सोचकर उसमें वे नहीं डाले।

उसके साथ यह सब क्या घट रहा है? अभी कल शाम को ही वह सोच रही थीं, कहीं कुछ नया नहीं हो रहा है, सब कहीं 'बोर' भोथरापन है, बासीपन है। वह भीतर कमरे में गई और उसने एक नजर गहरी नींद में पड़े मनोहर पर डाली। रजनी ने मनोहर को झकझोरकर उठाने की कोशिश की। उससे पूछा, 'चाय ले आऊँ?'

नींद-जाग की स्थिति में से मनोहर ने उत्तर दिया, 'ऊं·हूँ···तुम पी लो।'

'मैं तो एक 'कप' पी चुकी हूँ। तुम्हें पता है, अब क्या समय हो रहा है?

'...'

'तुमने रात को कहा, तुम्हें प्रो० देशपाण्डे मिले थे। तुम्हें वे सचमुच मिले थे या तुम अपने आपको उनके आदरणीय नाम की चादर में ढँककर रात को आराम से सो गए?'

अब मनोहर की नींद एकदम उड़कर गायब हो गई। वह चादर परे फेंककर उठ बैठा। उसने आँखें खोलकर रजनी की आँखों में देखा। तो क्या उसे सब कुछ मालूम हो गया है? उसने उत्तर दिया, 'हां वे सचमुच मिले थे।'

'तो क्या उन्होंने भी रात के मनोरंजन के लिए पचास रुपये खर्च किए थे।'

लगता है, उसे सब कुछ मालूम हो गया है,। दूसरे ही क्षण में उसने सोचा, जैसे भी, जितना भी उसे मालूम हुआ है, ठीक हुआ है। वैसे भी वह उसे सब कुछ बताए विना नहीं रह सकता। लेकिन उसे इतना जल्दी क्यों मालूम हो गया? इस 'क्यों' पर इन्सान का बस नहीं चलता। उसने बाहर स्नान-घर की ओर कान लगाया, नल बह रहा था। उसके नीचे टब में धोने के लिए मैले कपड़े पड़े होंगे। आज उसके कल वाले कपड़े भी धुलेंगे। उसने कहा, 'मैं जब कल रात ब्लू फिल्म देखकर बाहर आया तो प्रो० देशपाण्डे सचमुच मिले थे! वे भी वह फिल्म देखने आए थे।'

'ब्लू फिल्म?'

'हाँ, जैसे 'येलो लिटरेचर' होता है, वैसे 'ब्लू फिल्म' होती है, जिसमें सब कुछ अश्लील होता है।'

'प्रो० देशपाण्डे ऐसी जगह पर भला क्यों गए होंगे?'

'हम दोनों की दृष्टि भिन्न-भिन्न रही थी। उन्होंने सदा आधुनिक युग को समझना चाहा है और मैं...'

'तुम उनके लिए और अपने आपके लिए यह सब 'रेशनालाईज' कर रहे हो।'

मनोहर चुप हो गया। वह असमंजस में पड़ गया कि क्या वह उसे उस समय वह सब कुछ बता दे, जो ब्लू फिल्म वाले फ्लैट पर हो गुजरा था, अथवा धीरे-धीरे, फिर कभी बताए? निश्चय ही अभी तो ऐसा मौका न था।

'रज्जु, पहले चाय पिलाओ।'

रजनी चली गई। रसोई में उसने गैस के चूल्हे पर पतीली में दो 'कपों' जितना पानी रखा। गर्मी पहुँचने पर पानी में छोटे-छोटे बुलबुले पैदा होते, मिटते रहे, वे उसके मन में भी उठते-ढहते रहे··· घर और बाहर का समूचा काम एक दूसरे की स्वीकृति से होता है। उसने तो सोचा था कि दोनों बराबर-बराबर के हिस्सेदार हैं·· लेकिन यह शायद ऐसे नहीं है। लाख कोशिश करने के बावजूद समानता आकाश-फूल होकर हो रह जाती है···।

वह दोनों हाथों में चाय से भरी दो प्यालियाँ लिए अन्दर गई। पैर से टेबल को खिसकाकर और पलंग तक लाकर उस पर वे प्यालियाँ रख दीं।

'तुम कम-से-कम नीटू को 'होम वर्क' तो करा दिया करो। छोटी बच्ची है, जब तक अपने आप करने लगे, तब तक ··।'

'मैंने कहा न, तुम जो उसे कराती हो।'

'मैं न करा सकूँ तो?'

ट्यूशन के पचास रुपये खर्च करने होंगे।'

पचास रुपये? रजनी को अपना सिर भारी-भारी महसूस होने लगा।

'स्कूल से उसके लौटने पर मैं घर न रहूँ तो?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'कोई आया रहेगी, पचास रुपये और खर्च होंगे।'

पचास रुपये ? पचास रुपये ? रजनी का सिर बजने लगा।

'कपड़े न धोऊँ और घर-आँगन, चौके-चूल्हे की सफाई न करूँ तो ?'

पचास रुपये और खर्च होंगे।' मनोहर मजाक-मजाक में बात आगे बढ़ा ले गया था। उसने चाय का घूँट पिया। यह सुबह की चाय भी एक अजीब चीज है।

'रज्जु, बाहर से अखबार भी लाकर दो न। प्लीज।'

रजनी ने अपने स्थान से उठकर केवल संकेत भर कर दिया कि आज के पाँच-छः अखबार उसके सिरहाने पड़े हैं। उसने मुँह घुमाकर अखबार देखे। उनमें से एक अखबार इस तरह से तह किया पड़ा था, जिससे मनोहर को लगा कि पहले से ही वह खोलकर देखा-पढ़ा गया है। क्यों, वह इतनी देर से सोकर उठा है क्या ? क्या समय हुआ है ? घड़ी में देखा, आठ बज रहे थे ! वह चाय की चुस्की और सिगरेट के कश के साथ-साथ अखबार की सुर्खियों पर नजर फेरता गया।

'खाना न बनाऊँ, इस तरह तुम्हारे आगे सुबह की चाय पेश न करूँ ?' रजनी ने सवालों की बौछार जारी रखते हुए कहा।

मनोहर को अब लगा, कोई गम्भीर मामला है। उसने रजनी की आँखों में आँखें डालकर देखा। चेहरे में देखा, चेहरे पर से नजर हटाकर यह भी देखा कि रजनी ने अभी चाय का एक घूँट भी नहीं पिया था। वह उसे कोमल, उज्जल रजनी नहीं, कठोर, काली रात लग रही थी।

'रात को तुम्हारे साथ न सोऊँ तो ?'

'...'

'उसके लिए भी तो तुम कल रात पचास रुपये खर्च कर आए थे !'

मनोहर का माथा ठनका। वह परेशान हो उठा। उसने सिगरेट को राखदानी में बुझाते हुए कहा, 'आखिर तुम कहना क्या चाहती हो ?' इस सवाल से मानो रजनी की चढ़ाई पतीली में उबलकर, कन्नी तक ऊपर आई चाय, गैस बन्द करने से एकदम वापस अपनी जगह पर बैठ गई। उसने प्याली में से चाय का घूँट पिया और धीरज से कहा, 'मुझे घर में रहकर भी अलग-अलग काम करने पड़ते हैं, उन सबके लिए अलग-अलग लोग रखने से तुम्हारा वेतन पूरा होगा ?··· कम नहीं पड़ेगा ? घर में, घर चलाने के लिए, और भी बहुत कुछ चाहिए। आटा-दाल, नोन-तेल ··· सभी अलग-अलग काम करने से मुझ एक का ही वेतन तुम्हारे वेतन से काफी ज्यादा नहीं हो जाएगा ?'

'काफी ज्यादा कैसे हो जाएगा ? उनमें से तुम्हारी भी कई ऐसी जरूरतें है जो मेरे साथ रहकर पूरी होती हैं ···।'

'फिर तो बराबर-बराबर की साझेदारी हुई न ?'

'मैंने कब कहा कि एक कम और दूसरा अधिक है ? नीटू उसका सबूत है।'

'तुमने ऐसा कहा नहीं हैं, परन्तु किया है, करके दिखाया है, सबूत को याद करके भी भुलाया है।'

मनोहर चुप। उसके चेहरे पर परेशानी की रेखाएँ स्पष्ट दिखने लगीं। उसने एक ही घूँट में बाकी बची चाय पी ली।

वह स्नान कर बाथरूम से बाहर निकला तो देखा कि रजनी सज-सँवरकर, हाथ में पर्स उठाए खड़ी थी।

'मैं जा रही हूँ ।'

वह भौंचक देखता रह गया।

'तुम आज छुट्टी ले लो, नीटू दोपहर को आएगी।'

रजनी की आँखें नम थीं। उसकी आवाज में जजबात की लड़खड़ाहट थी।

'लेकिन तुम कहाँ जा रही हो ?'

'मैं तुम्हारी तरह यह नहीं कहती, कि रात को मेरा इन्तजार न करना। इन्तजार जरूर करना, यदि नौकरी मिल गई तो रात होने से पहले ही शाम को घर लौटूँगी। नहीं मिली तो अभी जल्द ही वापस आऊँगी।'

'लेकिन तुम कहाँ जा रही हो ? मुझे भी तो मालूम हो।'

'इंडस्ट्रीज एम्पोरियम वालों को सेल्स-लेडीज की आवश्यकता है। उन्होंने आज ही सुबह को इंटरव्यू के लिए बुलाया है।' और उसने अपनी आँखों में भर आए आँसुओं को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीचे गिरने न दिया। रुमाल से आँखे पोंछ डालीं और होंठ भींचकर उनमें से भावना का उद्वेलन निचोड़ लिया।

वह घर का अगला बाहरी दरवाजा ठेल, खुद बाहर निकलने के बाद जोर से बन्द कर चली गई। मनोहर ने देखा, वह अनायास ही रजनी के पीछे-पीछे दरवाजे तक जा पहुँचा था और वह दरवाजा जोर से आवाज कर उसके मुँह पर आ बन्द हुआ था।

मनोहर को एकाएक अपने ही, जाने-पहचाने, भरे-पूरे घर में बड़ा खाल महसूस हुआ। वह जब से दिल्ली से यहां बम्बई में नौकरी के लिए आया है, घर में इस तरह अकेला नहीं रहा है। उसे लगा, रजनी घर में होती है तो प्रायः उसे उसकी उपस्थिति या अनुपस्थिति में कोई विशेष अन्तर मालूम नहीं पड़ता है। वह उसे उस समय तक क्या घर की अन्यान्य वस्तुओं की भाँति एक वस्तु मात्र नहीं समझता रहा है ? जैसे और चीजें पड़ी हैं, वह भी घर में है। अब जब वह सचमुच घर में नहीं है तो उसकी अनुपस्थिति सचमुच अनुपस्थिति लग रही है। हरेक चीज में जैसे गैरमौजूदगी आ गई है। उसने हरेक कमरे में जाकर देखा, सभी चीजें अपनी-अपनी जगहों पर होकर भी गोया वहां न थीं। उसे घर खाली-खाली सा लगा।

उसने अखबार में इंडस्ट्रीज एम्पोरियम में रिक्त स्थान का वह विज्ञापन पढ़ना चाहा, उसने अखबार के तीसरे पृष्ठ पर देखा, वह विज्ञापन कैंची से काटकर अलग निकाल लिया गया था।

वह लोकल ट्रेन में कैसे चढ़ेगी ? इस समय स्टेशन पर काफी भीड़ होती है। न जाने वह लेडीज कम्पार्टमेंट में चढेगी या नहीं ? उसे पता है कि लेडीज कम्पार्टमेंट प्लेटफार्म पर लगभग किस जगह आकर रुकता है ? जहां और महिलाएँ खड़ी होंगी, वह भी वहां जाकर खड़ी होगी और जाकर चर्चगेट पहुँचेगी। लेकिन खार से चर्चगेट के लिये उसे फास्टगाड़ी ही पकड़नी चाहिये, अन्यथा उसे बेकार ही ज्यादा वक्त लगेगा।

अखबार मनोहर के हाथ में ही रह गया था। रजनी को चर्चगेट पर उतरकर फ्लोरा फाउन्टेन की ओर जाने के लिये, बाँई तरफ रास्ते के नीचे बने सुरंग-रास्ते से जाना चाहिये। ऊपर से, बड़े रास्ते पर से क्रास करना खतरे से खाली नहीं है। उस जगह पर काफी हादिसे हुए हैं, इसीलिये तो वह 'अण्डर वे' बनाया गया है···।

नहीं, उसे रजनी को रोकना चाहिए था। यदि वह उसे जाने ही न देता तो यह परेशानी क्योंकर पैदा हुई होती ? लेकिन क्या वह उसे अबला नारी समझता है ? नहीं, नारी अबला नहीं है। मनोहर समाज के बुद्धिजीवी वर्ग में गिना जाता है और वह नारी को इस तरह आसानी से अबला मानने के लिये तैयार नहीं था।

उसने पानी से भरी बाल्टी उठाई और वह पीछे से घर के छोटे-से आँगन में जाकर, गमलों में लगे फूलों के पौधों को पानी देने लगा। पानी देकर वह अन्दर गया और उसने एक सिगरेट सुलगाई।

उसने सोचा, रजनी की 'फिगर' में काफी कशिश है। अवश्य ही कुछ पुरुष, महिलाओं के लिये आरक्षित डिब्बे में ताक-झाँक करते उसे घूर-घूर कर देखेंगे। इंडस्ट्रीज एम्पोरियम में सेल्स लेडी होकर काम करना भी कोई खास अच्छी बात नहीं है। कितने ही लोग महज उसके शरीर की बनावट निगलने के लिए और चेहरे की खूबसूरती पीने के लिये वहां जाएँगे। ऐसे अवसरों पर वह भी अध-जाने ही अपने सीने पर साड़ी का पल्लू ठीक करने लगेगी और मुँह दूसरी ओर फेर लेगी। ·· फिर मनोहर सोचने लगा, आज उसे क्या हो गया है ? वह इतना रोमानी क्यों हो गया है ? आज वह रजनी को दूसरे लोगों की निगाहों से क्यों देख रहा है ? क्या नौकरी करने से वह इतना सुन्दर भासने लगी है ? रजनी उसकी है। दूसरे लोग उसे देखकर बेकार ही अपने जी को जलाएँगे, परन्तु वह उसे भोगता रहेगा। उसके तन-मन पर उसका अधिकार है। · दूसरे ही क्षण वह सोचने लगा, उसके मन पर भी उसका अधिकार है · ? है, तो क्या फिर भी रह सकेगा ? वह इतने सारे लोगों के सम्पर्क में आयेगी। औरत का मन ? औरत का मन आसानी से इधर-उधर नहीं भटकता। परन्तु यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी कारण से एक बार भटक गया तो कहीं भी रहकर भटक सकता है। घर में रहकर भी। नहीं तो घर में भी नहीं ·। जो पुरुष नारियों को रास्तों पर, रेल में या बस में घूर-घूर कर देखते हैं, उनके साथ छेड़खानी करते हैं, वे भी नारियों के आम नौकरी करने से और उनके प्रत्येक क्षेत्र में आगे कदम बढ़ाने से ऐसा नहीं करेंगे। औरत 'फिक्शन' से 'फैक्ट' बन जाएगी, कल्पना न रहकर हकीकत हो जाएगी ·।

और वह उठकर रसोईघर में गया उसने डबल रोटी के स्लाइसों को टोस्टर पर सेंककर मक्खन लगाया। फिर चाय का कप भी तैयार किया।

नाश्ता कर चुकने पर वह अभी पलंग पर जा लेटा ही था कि उसे ध्यान आया कि घर की सब चीजें बिखरी-बिखरी पड़ी हैं और उसे रजनी की अनुपस्थिति में वे चोजें ठीक कर अपनी-अपनी जगह पर रखनी चाहिये, और, दूसरे न सही, चीनी के बर्तन तो जरूर धो देने चाहिये। अब उसे भी घर के काम-काज में रजनी का हाथ बटाना होगा, घर के कामों में अधिक समय देना होगा। वह समय अवश्य ही कुछ अपने पेशे के लिए आवश्यक, कामों में से निकालकर देना होगा। आज उसे किसी भी तरह 'वीकली' के लिए वादा किया गया फीचर तैयार करके देना था। आज 'डेड लाईन' थी। वह पिछले दो-तीन दिनों से उस पर काम करता रहा है, उससे सम्बद्ध चित्र एकत्र कर चुका है। परन्तु वह लेख अभी टाईप होना बाकी है। अब शायद वह 'असाईनमेंट' खोना पड़ेगा....।

शीघ्र ही उसे ध्यान आया कि दफ्तर वालों को यह बताना जरूरी है कि आज वह दफ्तर नहीं पहुँच सकेगा, वह पास के ईरानी रेस्तरां में जाकर पी० सी० ओ० से फोन कर आए··· और हाँ, उसे नीटू के स्कूल होकर भी आना है। रजनी के नौकरी करने से नीटू के लिए कोई ठीक सा बंदोबस्त करना होगा। यदि नीटू भी शाम तक स्कूल वालों की जेर-निगरानी वहां उनके यहां रहे तो स्कूल वाले कितना अधिक पैसा लेंगे··· परन्तु यदि ऐसा करने से वे तीनों ही, दिन में घर से बाहर रहेंगे तो पीछे घर की सँभाल कौन करेगा ? घर अकेला न होगा ? वैसे रजनी भी तो घर में अकेली होती है···। क्या वे तीनों सारा दिन घर से बाहर रहें ? घर तो रैन-बसेरा बन जाएगा···।

उसने अपने आपको बड़ा थका-माँदा सा महसूस किया। वह बाहर से ही आकर थोड़ी देर के लिए आराम करेगा। दोपहर को तो स्कूल से नीटू आ जाएगी, वह बड़ी बातूनी है, फिर तो जरा फरागत न देगी। वह पिछली रात काफी देर से सोया था, उसके लिए जरा नींद लेना जरूरी है। उसने अन्दर के सब दरवाजे बन्द कर दिए।

× × ×

वे दिन के थके-हारे, रात की थकावट दूर करने से पहले, संध्याकाल में मिले थे। बाहर खुले आँगन की नरम-नरम खामोशी के माहोल में कुर्सियां-टेबल डालकर बैठे थे।

मनोहर ने कहा, 'संध्या को क्षितिज की मेज पर इस प्रकार चाय पीने का अब एक अलग आनन्द है। इस चाय की प्याली में चाय मेरी कमाई हुई और चीनी दूध तुम्हारा कमाया हुआ जो है !'

रजनी मुस्कराई, क्षितिज पर रक्तिम आभा फूट पड़ी। उसने आज से एम्पोरियम में नौकरी करना शुरू किया है। वह एकाएक एक अलग व्यक्तित्व बन गई है। आज एम्पोरियम में उसके बचपन के साथी रमेश से भी, संक्षिप्त भेंट की अवधि में, यह बात छिपी न रह सकी थी कि अब उसका व्यवहार जो कुछ सालों से बंद बंद था, वैसा नहीं रहा है। ··· रमेश ने मनोहर के लिए एक सुन्दर समुचित उपहार भी दिया था।

'रमेश की पसन्द बहुत अच्छी है··· ।' मनोहर की यह बात सुनकर रजनी अस्पष्ट-सी चौंक उठी। वह कह रहा था, ··· 'दरअसल मैं आज तुम्हारे और अपने रिश्ते को लेकर ऐसे ही कोई शब्द खोज रहा था, जो उस प्लास्टिक की प्लेट पर लिखे हैं।' ··· और उसने हल्की सी आवाज में वे शब्द दोहराए, मानो वे शब्द कोई कविता बन गए हों, 'मैं इस घर का स्वामी हूँ, और यह कहने के लिए मुझे अपनी श्रीमती की इजाजत मिल चुकी है।···'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजनी ने 'स्वामी' की ओर भरपूर निगाह से एकबारगी देखा।

मनोहर ने अपनी बात पूरी करते हुए कहा, 'ड्राइंग रूम में एक जगह जहाँ मेरा अकेला फोटो लगा है, तुम उस फोटो तले यह सुन्दर गिफ्ट-प्लेट लगा दो।

रजनी ने प्रसन्न होकर कहा, 'ठीक है।'

लेकिन एकाएक मनोहर को एक खयाल आया। उसने पूछा, 'अब तुम्हें इन सब बातों के लिए समय मिलेगा ? —कहाँ मिल पाएगा ? अच्छा, मैं ही लगा दूँगा।'

वह किंचित् गंभीर हो गई। बोली, मैं समझती हूँ कि आज तुम्हें काफी परेशानी उठानी पड़ी है। दोपहर के बाद सारा वक्त तुम नीटू के साथ बैठे हो। तुमने दोपहर के खाने का क्या किया ? कल से तो मैं ही अधिक कुछ बनाकर फ्रिज में डाल जाया करूँगी।'

गंभीरता संक्रामक होती है। मनोहर भी गम्भीर हो गया। वह बोला, 'नहीं, यह बात नहीं। सचमुच अब तुम्हें घर के काम-काज के लिए उतना समय नहीं मिलेगा, जितना पहले मिलता रहा है।'

'लेकिन इनकी सारी महिलाएँ बाहर काम पर जाती हैं। आखिरकार उनकी भी घर-गृहस्थी होगी।'

रजनी कुछ कहे, उससे पहले ही भीतर से नीटू आ गई। आते ही बोली, 'मम्मी, मुझे भूख लगी है।'

रजनी उठी और शीघ्र ही प्लेट में सेव और चाकू रखकर ले आई। सेव देखकर नीटू चिल्लपौं मचा जिद्द करने लगी, बोली, 'मैं सारा दिन सिर्फ सेव ही सेव नहीं खाऊँगी। मुझे सब्जी-फुल्का बनाकर दो।'

रजनी ने उसके लिए सेव काटकर प्लेट में रख दिया और मनोहर से कहा, 'उठूँ ....बच्ची को भूख लगी है, जाकर रोटी के काम में लगूँ।'

वह सब्जी काटने के लिए चाकू भी साथ ले गई। उसके पीछे-पीछे नीटू भी भागी। मनोहर बाहर ही बैठा रहा। उसने जेब से एक-साथ सिगरेट पैकेट व माचिस निकाली और सिगरेट सुलगाई।

वह सोचने लगा, यह सब यों न चलेगा। रजनी कह तो रही है कि चेम्बूरसे मौसी आएगी और सब ठीक हो जाएगा, वह घर के कामों में हाथ बटाएगी, नन्हीं नीटू की देखभाल करेंगी, लेकिन क्या उनके बदले में उन्हें अपनी छोटी-सी गृहस्थी के आजाद माहौल का एक बड़ा-सा टुकड़ा खोना न पड़ेगा ?

और वह कुछ समय के लिए अपने ही विचारों में गुमसुम बैठा रहा। अँधेरा उतर आया था। उसने सिगरेट पैकेट व माचिस लेकर जेब में डाल दी और राख-दानी को सेन्टर टेबल के निचले तब्के में रख दिया। कटे हुए सेव की प्लेट में से एक टुकड़ा उठाकर मुँह में डाला और वह प्लेट लेकर अन्दर गया। उसने देखा, नीटू खाने की मेज पर ही किताबें खोले स्कूल का काम कर रही थी। उसके आगे खाली जूठी प्लेट पड़ी थी, जिससे जाहिर था कि वह खाना खा चुकी थी।

वह भी खाने की मेज पर जा बैठा। सोचने लगा. वे लोग अपने घर में कैसे भी गुजारा करते हैं। कभी-कभी तो थोड़ा-कुछ खाकर खाने की मेज से उठ पड़ते हैं। हँसी-मजाक करते हैं। चेम्बूर वाली मौसी आएगी तो उनके होते हुए कुछ और ढंग से चलना होगा। वह अपनी मां होती तो चल जाता, केवल नौकरानी होती तो भी शायद बात बन जाती, लेकिन ··

इतने में उसे कोई बात याद आ गई और उसके चेहरे पर अनायास ही हल्की-हल्की मुस्कराहट जाहिर हो उठी।···

नीटू ने अपनी मम्मी को रसोई-घर में आवाज देते हुए कहा, 'मम्मी, पापा अपने आप न जाने किस बात पर हँस रहे हैं।'

मनोहर जरा चौंका। उसने खुद को सम्हाला, परन्तु फिर भी उसके चेहरे पर अभी मुस्कराहट थी, जब रजनी वह तमाशा देखने के लिए हँसती-मुस्कराती खाने की मेज तक आ पहुँची थी। उसने मनोहर के चेहरे में देखते हुए पूछा, 'अच्छा।··· किस सहेली को याद कर यों मन-ही-मन में लड्डू फोड़ रहे हो ?'

मनोहर ने भी शरारत से कहा, 'है एक सहेली।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उसके चेहरे पर यह कहते हुए कुछ ऐसा था कि रजनी उसे देखकर स्वयं को कृतार्थ समझने लगी। लेकिन फिर भी उसके होठों पर एक दुष्ट मुस्कान खेल रही थी, उसने नीटू से कहा, 'नीटू तुम्हारे पापा को अचानक कोई सहेली याद आ गई थी।'

नीटू ने पूछा, 'पापा, उसका नाम क्या है ?'

पापा परेशान हो उठा। अब तो बात खुलने की थी। उसने सच-सच उत्तर दिया, 'रजनी।'

और नीटू खुश होकर तालियाँ पीटने लगी। बोली, 'रजनी तो मेरी मम्मी का नाम है।'

और कृतकृत्य रजनी रसोई-घर की ओर चली गई। वह सोचने लगी, नीटू बड़ी शरीर लड़की है। लेकिन अचानक वह किसी अनजाने डर से भी भर उठी। क्या टूटे परिवारों के बच्चे भी इतने शरारती और साथ-साथ इतने समझदार होते हैं ? क्या वे डरे-डरे-से नहीं रहते ··?

अब वह मेज पर खाना लगाकर मनोहर के पास बैठी। मनोहर आज मेज पर पानी भरा हुआ न देखकर अन्दर रसोई-घर में गया। रजनी को अचानक बात याद आ गई, वह चिल्लाकर बोली, 'अरे आज तो मैं पानी भरकर रखना भूल ही गई।'

मनोहर पानी का 'जग' भरकर और खाली गिलास धोकर ले आया। वह मेज पर रखकर बोला, 'तो क्या हुआ ? ·· वैसे क्या हम मिलकर घर का काम-काज नहीं करते हैं ?'

रजनी ने मनोहर को बीच ही में काटते हुए कहा, 'वैसे की बात और है।'

मनोहर ने कहा, 'सच तो ऐसे की बात और है।'

रजनी सोचती ही रह गई कि मनोहर को न जाने उसका नौकरी पर जाना अच्छा लगता है या नहीं ?

नीटू को नींद आ रही थी। रजनी ने देखा और सोचा, यह नीटू भी खूब है। घर में उसके पापा न हों तो देर तक जागती रहेगी। कहेगी, मैं पापा के साथ सोऊँगी। और उसके पापा घर में होंगे और उसे साथ सोने की लाख मिन्नतें करेंगे तो कहेगी, मैं सदा मम्मी के साथ नहीं सोती ? सच बात तो यह है कि रात को घर में पापा और मम्मी दोनों को मौजूद देखकर ही उसके आँखों में नींद भरना शुरू हो जाती है।

उसने नीटू से कहा, 'क्यों नीटू, टेलीविजन पर प्रोग्राम देखकर नहीं सोओगी ? आज एक अच्छी कार्टून फिल्म आएगी।'

नीटू ने उत्तर दिया, 'नहीं मुझे नींद आ रही है। सुबह को जल्दी उठने के लिए रात को जल्दी नहीं सोना चाहिए ? नहीं तो, सुबह को स्कूल-बस नहीं निकल जाएगी ?'

मनोहर और रजनी होठों-होठों में हँसे। नीटू ने उनके ही, पहले कभी कहे, शब्द दोहरा दिए थे।

नीटू उठी। उसने मेज पर से किताबें कापियां उठाईं और स्कूल वाले बस्ते में डाल दी। फिर वह जाकर सोगई।

रजनी ने मनोहर की आँखों में एक हल्का संकेत ढूँढना चाहा, मनोहर को तो रजनी की आँखों में कहीं ऐसा शरारत-भरा संकेत पहले से ही दिखाई दे गया था। उसने उसे देखा-अनदेखा करते हुए कहा, 'मुझे भी बहुत नींद आ रही है। मैं पिछली रात काफी देर से सोया था। आज दिन में भी मुझे आराम नसीब नहीं हुआ। पर सोचता हूँ सोने से पहले अपना 'रफ' लिखा हुआ लेख मैं स्वयं ही आज रात घर में टाईप कर दूँ ·।'

उसने प्रश्न के लिए प्रश्न किया, 'क्यों ? कल अपनी आफिस-टाइपिस्ट से यह लेख टाईप करा लेना।'

मनोहर ने कहा, 'नहीं···। आफिस-टाईपिस्ट सुबह को शुरू कर दोपहर को टाईप करके देगी ··। यह लेख कल सुबह को जाते ही देने से काम आ सकेगा नहीं तो, नहीं।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी उसने पहला ही पृष्ठ टाईप किया था कि रजनी उसके लिए काफी का प्याला ले आई। वैसे वह भी अपना प्याला लेकर उसके पास बैठकर पीती। परन्तु एक बार लिखने या टाईप के काम में व्यस्त हो जाने के बाद मनोहर को रजनी का पास बैठना भी रुकावट-जैसा लगता है। वह उसके आगे कॉफी का प्याला रखकर, पीने की याद दिलाकर, उस कमरे से चली गई।

मनोहर रजनी को जाते-जाते देखता रहा। वह उसके स्वभाव के कण-कण से, प्रगट में छोटी लगने वाली बातों की ओर किस प्रकार ध्यान देती रही है। उसने कॉफी 'सिप' की और सिगरेट निकालकर सुलगाई। ··· रजनी को पता है कि उसे कुछ भी लिखते समम आस-पास शोर-गुल या बेइन्तजामी नहीं चाहिए। सब चीजें अपने-अपने ठिकाने पर होनी चाहिए···। क्या वह भी उसी तरह रजनी को सुख-सुविधा देने के लिए कोशिश करता रहा है ?

उसने कॉफी पीकर खत्म की, खाली प्याला एक तरफ सरका दिया और सिगरेट का आखिरी टुकड़ा राखदानी में बुझा दिया। यह ठीक है कि वह भी रजनी की सुख-सुविधा के लिए पूरी कोशिश करता रहा है। लेकिन वह सुख - सुविधा केवल बाहरी नहीं है ?

'क्यों, काफी देर से तुम क्या सोच रहे हो ?' रजनी ने बैड रूम से ही जिज्ञासा व्यक्त की : टाईप-राइटर की आवाज जो बन्द हो गई थी।

'सोच रहा हूँ ··· ।' और शायद सही शब्द न मिलने से मनोहर आधे में ही चुप हो गया।

'क्या ?'

'सोच रहा हूँ कि जीवन में सफल पुरुष के लिए उसके घर में 'फुल टाईम' स्त्री का होना शायद बहुत जरूरी है।' और वह काम छोड़कर बेड-रूम में रजनी के पास जा लेटा।

रजनी का सिर चकराने लगा। इसका मतलब है, मनोहर को उसका नौकरी पर जाना पसन्द नहीं है। अभी सन्ध्या को बाहर खुले आँगन में हुई बातों से तो ऐसा नहीं लग रहा था।

दोनों चुपचाप लेटे हुए थे। मनोहर ने कलाई-घड़ी में देखा—आठ बजे थे और उसने एक लम्बी-सी जँभाई ली। थोड़ी देर भी नहीं हुई कि रजनी ने देखा, थके-टटे मनोहर को नींद ने पूरा घेर लिया था।··· कल नौकरी का अभी दूसरा ही दिन होगा। वह कल काम पर जाए अथवा नहीं ? उसने अपने आपको अचानक ही चौराहे की पीली बत्ती पर अटकी-सी पाया। अब पता नहीं, कौन-सी—हरी या लाल—बत्ती होगी ? हरी बत्ती हुई तो न जाने कौन-सा रास्ता खुलेगा ? आगे चलकर भी तो ऐसे चौराहे कई हैं।*

*लेखक के इसी नाम के उपन्यास का संक्षेप—सम्पादक

भूल सुधार

संदर्भ भारती के अप्रैल १९७८ ओड़िया साहित्यांक में कतिपय त्रुटियाँ रह गई हैं जिनके लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं। पाठकों से निवेदन है कि वे इन्हें इस तरह सुधार कर पढ़ें :

१ पृ० ८ कालम २ पंक्ति ९ 'कुंतला कुमारी' के स्थान पर 'वसन्त कुमारी'।

२. पृ० ११ अन्धारुआ' के लेखक 'सुरेन्द्र महान्ति' के स्थान पर 'सच्चिदानन्द राउतराय'।

३. पृ० २४ 'ईश्वर' कविता के रचियता का नाम 'पराशर मिश्र'।

विषय सूची में भी इसी तरह संशोधन कर लें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जुहू के किनारे / गोविन्द माल्ही

[परदा उठने पर मंच खाली दिखाई देता है। बीच में एक बेंच पड़ा दिखता है। उसके ऊपर रास्ते की बत्ती जल रही है···

सन्तोष का प्रवेश। उसके बाल बिखरे-बिखरे और वस्त्र अस्त-व्यस्त हैं। उसके एक हाथ में एक फाइल है। वह बेंच पर बैठकर, फाउण्टेन पेन खोलकर फाइल में पड़े कागज पर लिखने लगता है। लिखकर सोचने लगता है···

मोहन का प्रवेश। वह नाईट ड्रेस में है। उसकी दाढ़ी-मूँछ बढ़ी हुई है। वह पहले जरा झिझकता है, फिर **सन्तोष** के समीप जाता है।··]

मोहन : (खड़े-खड़े) जरा सरक जाओ !....

सन्तोष : (अपने ही विचारों में खोया, चुप)

मोहन : (किंचित् ऊँची आवाज में, साधिकार) मैंने कहा, जरा सरको !

सन्तोष : (उसपर उड़ती नजर डालकर) इतनी सारी जगह पड़ी है, तुम इस ओर क्यों नहीं बैठते ?

मोहन : तुम यदि थोड़ा सरक जाओ तो क्या तुम्हारी कोई हानि होगी ?

[सन्तोष चिढ़ता-सा, भुनभुनाता-सा सरकता है।]

मोहन : तुम यदि भुन-भुन किये बिना सरक जाते तो कितना अच्छा होता।

सन्तोष : तुम्हें जगह मिल गयी न ! मैं जैसे भी सरकूँ, इससे तुम्हारा मतलब ?

मोहन : मतलब या न मतलब की बात फिर करते हैं, पहले जरा और सरको।

[वह सरकने लगता है, सन्तोष भी सरकता है।]

सन्तोष : तुम कैसे आदमी हो ?

मोहन : जैसे तुम देखते हो।

सन्तोष : मैंने समझा था कि इस समय जुहू के किनारे पर कोई न होगा, मैं आराम से बैठकर लिखूँगा।

[लिखने की कोशिश करता है]

मोहन : तुम्हें कोई पत्र लिखना है ?·· यदि तुम्हें अपनी प्रेमिका को पत्र लिखना है तो मैं उठकर जाने को तैयार हूँ। मैं किसी के प्रेम अथवा प्रेम की कल्पना में रुकावट डालना नहीं चाहता। कहो, क्या कहते हो ?

सन्तोष : बैठे रहो।

मोहन : मेरे बैठे तुम उसे पत्र लिख सकोगे ?

सन्तोष : मैं पत्र नहीं लिख रहा।

मोहन : पत्र नहीं लिख रहे ? तो फिर यहाँ क्यों बैठे हो ?

सन्तोष : क्या मतलब ?

मोहन : मतलब यह कि इतनी रात गये जुहू के किनारे यदि कोई कुछ लिखेगा तो प्रेम-पत्र ही लिखेगा। और क्या लिखेगा ?

सन्तोष : (व्यंग्य से) तुम भी क्या यहाँ प्रेम-पत्र लिखने आये हो ?

मोहन : (हलका ठहाका मारकर) मैं और प्रेम ! हँसी न उड़ाओ। (गम्भीर होकर) अभी प्रेम के दाँव-पेंच समझने की ही मेरी उम्र न हुई थी कि मेरी माँ ने मुझे विवाह-बन्धन में जकड़ दिया।

सन्तोष : तुम्हें अपनी पत्नी से प्रेम नहीं है ?

मोहन : वह क्या प्रेम-पत्र लिखने जैसा हो सकता है ? इसके अलावा प्रेम-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्र विवाह के पूर्व लिखे जाते हैं, उसके पश्चात् नहीं। (गम्भीर-होकर) मां की एक आस पूरी हुई कि दूसरी उभर आयी। बोली कि बुढ़ापे में पोता देखूँ!

सन्तोष : इसका मतलब, तुम बाप भी हो!

मोहन : एक नहीं, तीन बच्चों का बाप हूँ।

सन्तोष : हैं, तीन बच्चों का! तभी मँहगाई बढ़ रही है।...परिवार-नियोजन में तुम्हारा विश्वास नहीं है?

मोहन : मेरे विश्वास-अविश्वास से क्या है, मित्र! मेरी माँ का कहना है कि बच्चे किस्मत में लिखे होंगे तो अवश्य आयेंगे। इसके अतिरिक्त, हरेक बच्चा अपना नसीब अपने साथ ले आता है।

सन्तोष : (मुसकराकर) फिर तो तुम काफी नसीबवाले हो।

मोहन : (खफा होकर) दिल्लगी न करो, थोड़ा सरक जाओ।

सन्तोष : (थोड़ा सरककर) इतनी जगह दी है।

मोहन : कहते तो ऐसे हो जैसे यह बेंच तुम्हारी हो। (उसे जरा धकेल-कर) पराये माल पर इतराते-ऐंठते हो!

सन्तोष : (थोड़ा सरककर) बस, अब तो खुश हो?

मोहन : ऐसा समझते हो मानो मुझपर एहसान किया हो।

[सन्तोष कोई उत्तर न देकर लिखने लगता है।]

मोहन : जब तुम प्रेम-पत्र नहीं लिख रहे, तो क्या लिख रहे हो?

[**सन्तोष** चुप।]

मोहन : (जरा कन्धा हिलाकर) हे मिस्टर, तुमने मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया?

सन्तोष : उत्तर देने के लिए क्या मैं बाध्य हूँ?

मोहन : (उसकी फाइल में देखकर) कोई कहानी लिख रहे हो?

सन्तोष : तुम्हें कोई आपत्ति है?

मोहन : नहीं। अवश्य लिखो। परन्तु होगी वह प्रेम-कहानी।

सन्तोष : प्रेम कहानी ही क्यों होगी?

मोहन : (उठकर जरा आगे बढ़ते हुए) आधी रात का समय. जुहू का किनारा, चंचल लहरें और मस्त हवा बाँहें फैलाये ऐसे वातावरण में प्रेम-कहानी के अतिरिक्त और कहानी कैसे लिखी जा सकती है? (गम्भीरता से) कहानी कहानी है, वह जीवन तो नहीं है कि इस वातावरण में भी दुखी हो!

सन्तोष : तुम्हारा जीवन दुखी है?

मोहन : कुछ भाग्यशाली लोगों को छोड़-कर क्या आज अन्य सभी लोगों का जीवन दुखी नहीं है? क्या तुम्हारा जीवन दुखी नहीं है?.. नहीं, तुम्हारा जीवन दुखी नहीं होगा।

सन्तोष : (हँसकर) मुझे भी उन कुछ भाग्यशाली लोगों में गिनते हो? (सिगरेट सुलगाता है)

मोहन : (बेंच की ओर आते हुए) अगर तुम एक लेखक हो तो तुम उन भाग्यशाली लोगों में से नहीं हो सकते। सिगरेट दो।...(बैठते हुए) और जरा सरक भी जाओ।

[**सन्तोष** सरक जाता है और उसे सिगरेट निकालकर देता है। मोहन वह मुँह पर रखता है और सन्तोष दियासलाई जलाकर उसे सुलगाने में मदद करता है।]

मोहन : (सिगरेट का कश लेकर) तुम फिल्मों के लिए कहानियाँ लिखते हो?

सन्तोष : नहीं।

मोहन : फिर तो तुम निश्चित ही भाग्यशाली नहीं हो सकते। आज एक ओर फिल्मों में काम करनेवाले खुशनसीब हैं—उनमें से भी वे, जिनका नाम चोटी पर है, और दूसरी ओर वे खुशनसीब हैं, जिनका कोई बड़ा कारोबार है। यों कहें कि खुशनसीब वे लोग हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनके पास ब्लैक का (अँगूठे और तर्जनी की खास मुद्रा से मुद्रा का संकेत करते हुए) है। बाकी तुम-सा लेखक या मुझ-सा क्लर्क खुशनसीब नहीं हो सकता।

सन्तोष : इसका मतलब हुआ कि मैं दुखी हो सकता हूँ और दुख-भरी कहानी भी लिख सकता हूँ।

मोहन : (चिल्लाकर) कहा न कि ऐसे वातावरण में तुम दुख-भरी कहानी नहीं लिख सकते।

सन्तोष : आखिर क्यों नहीं ?

मोहन : तुम दुख को भुलाने के लिए इस सुन्दर वातावरण में आये हो और ऐसे वातावरण में दुख की नहीं, दुख को भुलाने की कहानी ही लिख सकोगे।

सन्तोष : तुम यहाँ क्यों आये हो ? गम को भुलाने के लिए ?

मोहन : मैं प्रतिदिन यहाँ आना चाहता हूँ। पैदल नहीं, मोटरकार में आना चाहता हूँ; अकेला नहीं, पत्नी और बच्चों के साथ आना चाहता हूँ। ···और इस मधुर वातावरण में पत्नी से प्रेम-भरी बातें करूँ और बच्चों से स्नेह से बर्ताव करूँ।

सन्तोष : क्या घर में प्रेम और स्नेह की बातें नहीं हो सकतीं ?

मोहन : आज के युग में कैसे हो सकती हैं ? सारा दिन ऑफिस में काम करने के बाद घर में आते ही सुनो कि फलाँ अपना उधार वापस लेने आया था, फलाँ चीज कम है। बच्चे पूछेंगे, फलाँ चीज़ लाये हो ? बताओ, इस उधेड़बुन में प्रेम की बातें हो सकती हैं ? ऑफिस में काम की भीड़, घर में माँगों के ढेर ··

सन्तोष : पत्नी और बच्चे तुमसे माँगें न करेंगे, तो किससे करेंगे ?

मोहन : मैं कब कह रहा हूँ मित्र, कि मुझसे न करें ? परन्तु मैं उनकी माँगें कैसे पूरी करूँ ? घर लाने के लिए तनख्वाह मिलती है दो सौ रुपये, और वही घर में लाकर अपनी बीवी को देता हूँ।

सन्तोष : तुम क्या समझते हो कि बीबी दो सौ रुपये खा जाती होगी ?

मोहन : वह क्या खायेगी ? मँहगाई खा जाती है। खा क्या, निगल जाती है। घर के किराये, मोदी, दूधवाले के हिसाब में और दूसरे उधार में चले जाते हैं एक ही दिन में।

सन्तोष : मँहगाई सचमुच बढ़ गयी है।

मोहन : बढ़ गयी है ? पीस रही है।

सन्तोष : मँहगाई - भत्ता भी तो मिलता होगा ?

मोहन : इन दस सालों में महँगाई-भत्ता है दस प्रतिशत और चीज़ों के भाव बढ़े हैं चार-सौ प्रतिशत। यह महँगाई-भत्ता नहीं मज़ाक़ है। [**मोहन** सिगरेट के कश लगाता रहता है और **सन्तोष** उसे देखता रहता है।]

सन्तोष : कितनी सिगरेट रोज पीते हो ?

मोहन : मुझे भी क्या तुमने लेखक समझ रखा है कि सिगरेट पर सिगरेट फूँकता रहूँगा और चाय पर चाय पीता रहूँगा ! (सिगरेट सुलगाकर) मैं अपनी जेब से दो-तीन बीड़ियाँ पीता हूँ। सिगरेट कभी-कभी दूसरे के पैसों से पीता हूँ, उधार को विलासिता समझकर।

सन्तोष : एक बात कहूँ, बुरा तो न मानोगे ?

मोहन : तुम्हें जो कहनी हो, कह दो। बुरा मानने न मानने का अधिकार मेरा है।

सन्तोष : तुमने इतनी जल्दी विवाह क्यों किया ? यदि किया था तो बच्चे पर बच्चा पैदा करने पर कमर क्यों कस ली ?

मोहन : मैंने तुम्हें पहले ही बताया कि मेरी माँ की इच्छा कुछ ऐसी थी। मुझे सोचने-विचारने का मौका कहाँ दिया गया ? जब सोचने-विचारने लगा तो माँ मेरी शिकायत सुनने के किए जिन्दा न थी। तब काफी देर हो चुकी थी। वह तो अपने दिन बिताकर चली गयी पर मुझे मुसीबत में डाल गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्तोष : तो तो···मुझे तुमसे सहानुभूति है।

मोहन : (मुँह बिचकाकर) मुझे तुमसे सहानुभूति है ! अपनी सहानुभूति अपने पास रखो। मुझे जरूरत नहीं है। हाँ, जरा सरककर बैठो।

सन्तोष : सरक-सरककर मैं बेंच के उस छोर से इस छोर तक आ पहुँचा हूँ। अब और कहाँ सरकूँ ?

मोहन : जहाँ तुम्हारा जी चाहे, सरको !

सन्तोष : चाहे नीचे गिरूँ ?

मोहन : हाँ, चाहे गिरो।

सन्तोष : यदि मैं न सरकूँ तो ?

मोहन : तुम्हें सरकना होगा।

सन्तोष : न सरकूँ तो ?

मोहन : न सरकोगे ? (उठकर, एकदम छुरा निकालकर) यह देखते हो !

सन्तोष : न सरकूँगा तो छुरा घोंप दोगे ?

मोहन : हाँ।

सन्तोष : जरा-सी जगह के लिए ?

मोहन : यह न भूल जाओ कि इस संसार में सारा झगड़ा जगह का है, 'पोजीशन' का है। आदमी दूसरे आदमी की 'पोजीशन' हथियाने के लिए उसकी पीठ में छुरा चलाता है। मेरा छुरा तुम्हारे सीने के सामने है।

सन्तोष : (उठकर, छुरा छीनकर) बोलो, अब यह छुरा मेरे हाथ में है। मैं इसे तुम्हारे सीने के पार कर सकता हूँ।

मोहन : तुम्हें किसने रोका है ? मारो छुरा ··

सन्तोष : मैंने तुम्हें एक शरीफ आदमी समझा था, दुःखों-यातनाओं से पीड़ित···

मोहन : अब क्या समझते हो ?

सन्तोष : मैं सोच रहा था कि इतनी रात गये, इस सुनसान स्थान पर तुम क्यों आये हो। अब मैं समझ गया कि तुम इस सूने में किसी न किसी को लूटने के लिए निकले हो। निर्धन हो तो इसका अर्थ यह नहीं कि तुम डाकू बनो ?

मोहन : तो तुम मुझे डाकू समझते हो ?

सन्तोष : हाँ।

मोहन : फिर छुरा घोंपकर मेरे डाकूपन को समाप्त कर दो।

सन्तोष : दिल में तो आता है कि यह छुरा तुम्हारे सीने के पार कर दूँ, इस तरह

[उसके सीने तक छुरा लाता है।]

मोहन : (उसके हाथ अपने दोनों हाथों में पकड़कर जोर से अपने सीने की ओर खींचते हुए) करो सीने के पार।

सन्तोष : मुझे तुम्हारी युवा पत्नी और अबोध बच्चों पर दया आती है।

मोहन : अनदेखे लोगों पर दया करने की बजाय इस देखे आदमी पर रहम करो। (जोर से खींचते हुए) मैं तुम्हारा आभारी हूँगा।

सन्तोष : (अपने हाथ छुड़ाकर) तुम तो मारने की अपेक्षा मरने के लिए अधिक उत्सुक लगते हो।

मोहन : हाँ, मरने के लिए बड़ा ही उत्सुक हूँ। तुम छुरा घोंपकर अविलम्ब गायब हो जाओ। यहाँ अब तुम्हारे और मेरे सिवा कोई नहीं। यह अपनी फाइल भी अपने साथ ले जाओ। इस ओर पड़ा रूमाल, जो हो सकता है तुम्हारी प्रेमिका का है, अपने साथ ले जाना न भूलना। लाश भी मेरी होगी, छुरा भी मेरा होगा। लोग समझेंगे कि मैंने आत्महत्या की है।

सन्तोष : मरना है तो अपने हाथों मरो। मुझे क्यों पाप में घसीटते हो ?

मोहन : मेरे हाथ काँपने लगते हैं। यहां आने से पहले, दूर अन्धेरे में मैं यह छुरा अपने सीने तक लाया था, पर हाथ शिथिल पड़ गये। कल भी आया था और सीधा उछलती लहरों की ओर गया था, परन्तु हिम्मतपस्त होकर वापस लौट गया। तुम मुझपर उपकार करो।

सन्तोष : तुम मरना क्यों चाहते हो ?

मोहन : मैं बेचैन जीवन से घबराकर मौत की गोद में चैन से सोना चाहता हूँ—सदा-सदा के लिए।

सन्तोष : क्या तुम्हें विश्वास है कि वहाँ तुम्हें अनन्त विश्राम मिलेगा ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोहन : कम-से-कम जीवन में मौत की बेचैनी से तो नजात मिलेगी ?

सन्तोष : तुम्हारी पत्नी का क्या होगा ?

मोहन : वह वैसे ही कमजोर दिल की है, शीघ्र ही मेरे साथ स्वर्ग में आन मिलेगी। वहाँ रोजमर्रा के जीवन के क्लेश की बजाय मीठी-मीठी बातें करेगी।

सन्तोष : पता है कि आत्महत्या करना महा-पाप है। महापाप करनेवाले को स्वर्ग कैसे मिलेगा ?

मोहन : लेखक होकर तुमने ये वहम कैसे पाल रखे हैं !

सन्तोष : अच्छा, तुम्हारे बाद बच्चों का क्या होगा ?

मोहन : (अति निराशा से) अपने मरने के बाद सूरज निकले या न निकले।

सन्तोष : तुम निर्दयी बाप हो !

मोहन : सचमुच मैं एक निर्दयी बाप हूँ। बच्चों के नाज-नखरे तो क्या, उनकी छोटी-छोटी माँगें भी पूरी नहीं कर सका हूँ। मैं इन अबोध बच्चों को कैसे समझाऊँ कि मैं निर्धन हूँ, लाचार हूँ, बेबस हूँ। जो बाप बच्चों के छोटे-छोटे, प्यारे-प्यारे नाज नहीं उठा सकता, उसे जीने का अधिकार नहीं है।

सन्तोष : तुम्हें उनके सिर पर से बाप का साया छीनने का भी अधिकार नहीं है। मैं कहता हूँ, तुम डरपोक हो। इसलिए नहीं कि तुम अपने को समाप्त नहीं कर सकते, बल्कि इसलिए कि तुम जीवन से जूझ नहीं सकते। पाँच मिनट, केवल पाँच मिनट के लिए हिम्मत कर चलती गाड़ी से छलाँग लगाने में या बलवती लहरों में समा जाने में या छुरा अपने सीने के आर-पार करने में क्या वीरता है ? सच्ची वीरता कदम-कदमपर कठिनाइयों से जूझने में और हालात के सामने हार न खाने में है।

मोहन : (रुआँसी आवाज में) मैंने कभी परिवार को जुहू के किनारे लाकर भेल-पूड़ी तक नहीं खिलायी है।

सन्तोष : अब तुम उनसे दाल - रोटी भी छीनना चाहते हो ? मैं समझता था कि गरीब लोग बहादुर होते हैं। तुम्हें इस तरह हारा हुआ देखकर मुझे नये सिरे से सोचना होगा।

मोहन : गरीब लोग बहादुर होते हैं ?

सन्तोष : निस्सन्देह होते हैं। तभी तो वे कठिन से कठिन स्थितियों का सामना कर सकते हैं। न केवल इतना, बल्कि वे अन्यान्य निर्धन दुखी इनसानों को सहारा भी देते हैं। न केवल कथनी से, परन्तु करनी से भी। मुझपर तो बड़ा अधिकार जमा रहे थे, अपने उच्छृंखल भावों पर ही तुम्हारा कोई अधिकार नहीं है।

मोहन : नहीं रख सकता हूँ।

संतोष : इसलिए कि तुम डरपोक हो।

मोहन : मुझे बार-बार डरपोक न कहो।

संतोष : कहूँगा। डरपोक को डरपोक ही कहना चाहिए। तुम तो डरपोक के साथ-साथ स्वार्थी भी हो।

मोहन : हां, स्वार्थी कह सकते हो, क्योंकि पत्नी और बच्चों की चिन्ता न कर अपने-आपको चिन्ता से मुक्त करना चाहता हूँ।

संतोष : और प्रत्येक स्वार्थी व्यक्ति डरपोक भी होता है।

मोहन : मैं डरपोक नहीं हूँ ···

संतोष : मेरे लिए जीवन मृत्यु से कहीं अधिक सुन्दर है और जुहू का सुन्दर वातावरण में मौत पर न्योछावर करने के लिए तैयार नहीं हूँ। यह जुहू का किनारा, चंचल लहरें, मस्त हवा और मनोहर दृश्य ··

मोहन : यह जुहू का किनारा सचमुच बड़ा मनोरम है ···· इसीलिए मैंने यहाँ मरना चाहा ··

संतोष : मरना चाहा ? अर्थात् अब मरना नहीं चाहते ?

मोहन : नहीं

[दोनों उठते हैं, हाथ में हाथ देकर जाते हैं। परदा गिरता है।]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाइकू* / श्री नारायण श्याम

धरती औ आकास;
बेचारे दरवेश का
यही तो है लिबास

बजें न घण्टे शंख;
इस बस्ती के जनों की
नींद उड़े किस पंख ?

कैसे तोड़ूं फूल;
फूला यों ही शाख पर
साईं ! करो कबूल !

तारों भरी बरात;
अभागिनें व सुहागिनें
मनाएं वही रात !

तारक कई हजार;
छत्ते पर मधुमक्खियां
टपके रोशन लार !

बिजली की चमकार;
तिमिर घन को चीर गयी
कोयल कुहू पुकार !

दिन का पहला ख्वाब;
वाह ! खिला पूरब तरफ
सोना लाल गुलाब !

---

*एक जापानी काव्य रूप

ग़ज़ल / श्री अर्जुन हासिद

नयी राह पर मेरे तुम्हारे
एक साथ हैं पाँव बढ़े ये ।

आगे चलकर देखना होगा,
कौन किस ओर है मुँह किये ।

धूप डसेगी लू भी लगेगी,
फैल-सिकुड़कर मिटेंगे साये ।

ऋतु बदलेगी, ओस पड़ेगी,
विवर्ण-विवर्ण पत्ते हरे हरे ।

रिमझिम-रिमझिम बरखा होगी,
आँखों में उठेंगे बगूले ।

चाक-चाक हो जायेगा दिल,
टूटेंगे-जुड़ेंगे रिश्ते-नाते ।

कौन भायेगा किसको कैसे,
नख-शिख होंगे बदले-बदले ।

चौराहे पर टँगे मिलेंगे,
झुर्राये बर्फीले सपने ।

जी का झरोखा / श्री लक्ष्मण कोमल

अक्षरों को यों व्यय न करो ।
अक्षरों से कुछ पंक्तियाँ जुड़ती हैं ।
पंक्ति-पंक्ति से कुछ गीत हैं गूँजते ।
गीतों में ही
दिल में सँजोये सैकड़ों दर्द सिसकते हैं;
जी के कई बंद झरोखे खुल पड़ते हैं ।
उस कवि से बोल दो ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिस्सों में जिंदगी / श्री बासुदेव मोही

मैंने कितने ही खारिज भावों को
फेंक दिया है।
मैं कवि हुआ तो क्या हुआ !
एक सच बताऊँ तुम्हें
यह हिम्मत रखो ....
तुम आओगी
मेरा चेहरा अनायास ही खिल उठेगा
परंतु मैं खुशी महसूस नहीं करूँगा;
तुम जाओगी
मैं उदास हो जाऊँगा
लेकिन ग़म महसूस नहीं करूँगा।
कुछ बिजली-बटन की तरह हालत है
कोई भी 'आन' करे, 'आफ़' करे।
तुम्हारे वियोग में
एक बार भी ख़याल न आया तुम्हारा
मैं खुश था दूसरों के साथ
जैसे तुम्हारे साथ होता हूँ
और इस तरह
इस उस से मुस्कराकर-हँसकर
मैंने हिस्सों में जीना सीख लिया है।

धृतराष्ट्र / श्री अजिज़ बेदी

भ्रष्टाचार के अंधकार से जनमे
अन्याय और स्वार्थ की किरणों में
जिसके चरित्र के नयन खुले
वे सत्य के सूर-करों में
कैसे उठ सकेंगे,
क्या देख सकेंगे ?
व्यास !
तुम्हारे इतिहास ने
मुझ नयन-सुख को अगर अंधा कहा
तो कुछ बुरा न किया, ठीक किया
मेरी अनीति ने ही एहसान किया
मैं धृतराष्ट्र
अपने राष्ट्र
के उच्च मानवीय मूल्यों से
मुँह मोड़कर
जन-गण के चरित्र-निर्माण को पीठ देकर
लापरवाही से आँखे मूँदे
विलास और कर्त्तव्य-विमुखता की
पट्टियाँ बाँधे
गान्धारी को
कामांधों की तरह भोगता रहा
हर रात सोम-रस के
चषक चढ़ाए
वासना के ज़ीने पर
चढ़ता-उतरता रहा
गान्धारी ही क्यों
कितनी ही उपजाऊ भूमियों में
अनाड़ी किसान की तरह
बीज छिटकता रहा
जिनसे
सैकड़ों अनाचारी, अत्याचारी
विवेक-हीन, घमण्डी, धृष्ठ,
हठी पौधे पैदा हो
महाभारत के रक्त में
काम-ग्रंथ की तरह
प्रवाहित हो जाएं।
जब कभी, जहां भी
पैदा हूँगा
मैं धृतराष्ट्र
वही राष्ट्र
फलेगा-फूलेगा अवश्य
परन्तु विष-वृक्ष की तरह
जिसकी छाया में
एक पल के लिए भी साँस लेकर
सारी सृष्टि
नष्ट हो जाएगी .....
व्यास !
यह राज, यह ताज
भोग नहीं
एक अखण्ड त्याग है
मैं एक नाशात, पथभ्रष्ट
अंधे युग का नायक भोगी अंधा
आगामी युगों के मार्ग-दर्शन के लिए
ऊँची आवाज़ में
आज यह
स्वीकारता हूं.....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिल का दौरा पड़ने के बाद बिस्तर पर से / श्री हरिकान्त

यमराज,
मेरे दोस्त !
मैंने देख लिया है तुम्हें
बन्द दरवाजे की गुप्त आँख से।

वारंट हाथ में लिये
विरले शरीफ पुलिस-अफ़सर की तरह
बभर बजाकर
धैर्य से खड़े हो तुम
लेकिन
तुम्हें प्रतीक्षा करनी होगी
(थोड़ी)
घर में कोई नहीं
मेरा कफ़न लाने के लिए।

पत्नी
आफिस गयी है
उसे
और उसकी सभी प्रकार की छुट्टियों को
कभी से खा चुकी है
मेरी लम्बी बीमारी....
(अ)समय की अवांछित देन।

बच्चे
मनोनीत नगरपालिका के
फटे-पुराने तंबुओं वाले स्कूल में
ठंडे नंगे फर्श पर बैठकर
रट रहें होंगे
राष्ट्र-प्रगति का कोई नया पाठ
या
अहाते में
गिन-गिन कर लगाए गए
अध-सड़े पौधों को पानी देकर
कर रहे होंगे
देश-सेवा।

मित्र
हर दूसरे रविवार को आते हैं
देने सान्त्वना
जिसकी उन्हें मुझ से
कहीं अधिक आवश्यकता है
और मैली सफेद चादर पर
फीकी गुलाबी मुस्कराहटें फेंक कर
चले जाते हैं
मन ही मन यह सोचते हुए
जाने कब लाल होगी यह सफेद चादर !
उनकी भी अपनी विवशताएँ हैं
और व्यस्तताएँ
और त्रस्तताएँ !

अपना कफन
खुद ही लाना पड़ेगा मुझे
उसी परिचित वस्त्र-विक्रेता से
जो यह जानने के बावजूद
कि मैं
एक अनाथ भाषा का
साधारण-सा कवि हूँ
और
उसके डैनिम-टेरीकॉट पीसेज की तरह
मैं या मेरी कविताएं
बिक नहीं सकतीं,
मुझे उधार देता है
हर महीने
कम से कम एक बार।

कुछ ऐसी ही उदारता
तुम्हें भी दिखानी होगी
कुछ क्षण उधार देकर
मेरी थोड़ी-सी प्रतीक्षा कर।
आई ऐम सो सॉरी !

जीवन-अस्पताल / डॉ० दयाल आशा

जीवन
अपने में ही खुद एक बड़ा अस्पताल
डाक्टर लोग स्ट्राईक पर
औ' बस, जहर गया फैलता...
लाइलाज ! लाइलाज !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन-फिट / श्री एम० जी० गुरनाणी

मैं
वह तस्वीर हूँ
जिसे
हर एक ने ख़रीद कर
'अन-फ़िट' का सर्टीफिकेट देकर
बेच डाला है।
एक जगह से
दूसरी जगह पर
भटकता रहा हूँ मैं
खोटे सिक्के की तरह।

हर एक जगह
पहले से ही तैयार किये गये फ्रेमों में
मुझे फिट करने की कोशिश की गयी है
हर एक वक्त
रंदा लगवाने से
मैंने इनकार किया है
उस दिन के इन्तजार में बैठा हूँ
जब
मेरे लायक फ्रेम तैयार किया जाएगा।

मुझे पता है
वह दिन
कभी नहीं आएगा
अगर आएगा भी
तो
तब तक मेरी लकीरें भी मिट चुकी होंगी।

आधी धूप/आधी छाँव में चेहरा / डॉ० मोतीलाल जोतवाणी

गुनगुनी धूप से भरी वादी में
मैंने कैमरा की आँख को
अपनी आँख का एहसास बख्शकर
उस मनोरम क्षण के चौखटे में बँधे
तुम्हारे चित्र को
अंकित करने के लिए
अभी घोड़ा दबाया ही था कि
इतने में सूरज के सातों घोड़े
रस्सी तुड़ाकर भाग निकले
वे तेज घोड़े तेज दौड़े
और ऐसे में कोई भी देख सकता था
उनके तले छाँव
विस्तृत वादी में
धूप को हड़पती
मनोरम क्षण को निगलती
दौड़ रही थी।

तुम्हारे चेहरे पर
बादलों की आवारागर्दी जाहिर हो उठी थी
किसी नामालूम गुनाह का
एहसास उभर आया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

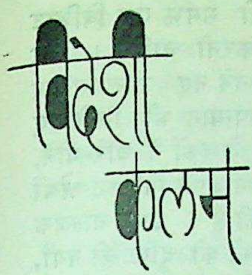

नव-उपन्यास लेखन—

ब तर्ज फ्रांस

आम शिकायत है कि नव लेखन औसत पाठक-समाज से बहुत दूर जा पड़ा है, और लेखक तथा पाठक के बीच एक समुचित संवाद की स्थिति नहीं रह गई है। सामान्यतः पढ़ा-लिखा एक व्यक्ति जो साहित्य पढ़ना तो चाहता है, पर समसामयिक साहित्य के भाव, भाषा, भंगिमा और अभिव्यक्ति को बहुत कुछ अपरिचित पाकर या तो प्राचीन सहज-ऋजु साहित्य से अपना शौक पूरा कर लेता है, या स्तरहीन सस्ता बाजारू साहित्य पढ़कर सन्तोष कर लेता है। ऐसे साहित्य से समय तो कट जाता है, पर पाठक को प्रेरणा नहीं मिलती। सत् साहित्य जो जीवन को समृद्ध करता है उस समृद्धि से तो पाठक वंचित रह ही जाता है, सस्ता बाजारू साहित्य उसकी रुचि को भी विकृत करके जीवन-क्रम को घटिया कर सकता है। यह स्थिति कमोबेश सभी युगों में, सभी भाषा के साहित्यों के साथ रही है। इस वस्तुस्थिति को समझना आवश्यक है। इसके पहले कि साहित्यकारों से कुछ कहा जाए साहित्यकार या लेखक की परिस्थितियों से इस समस्या को समझने का प्रयत्न लाभदायक होगा, क्योंकि महत्व के इस तथ्य से हम आँख नहीं मूँद सकते कि जो लेखन-कार्य में प्रवृत्त होता है या हो सकता है. उसकी सूझ और बूझ औसत पाठक की अपेक्षा गहरी होती है, अपनी संवेदना में वह पाठक से सदैव एक कदम आगे रहता है। फ्रांसीसी-साहित्य की गणना विश्व के समृद्धतम साहित्यों में की जाती है। साहित्य में किसी भी 'नई' उद्भावना का मानदण्ड स्थापित करने का गौरव उसे प्राप्त है। फ्रांस के नए उपन्यास-लेखकों में अग्रणी **श्री क्लाद मॉरिए** के 'नव-उपन्यास' के सम्बन्ध में विचारों के परिप्रेक्ष्य में हम यहाँ इस चर्चा को स्पष्ट करना चाहेंगे।

मॉरिए ने स्वयं लेखकों द्वारा अपने उपन्यासों के विक्रय के पेरिस में चलाए एक अभियान का जिक्र किया है, जिसमें एक क्रेता ने एक प्रसिद्ध लेखक का एक उपन्यास खरीदा। लेखक ने जब उस पर हस्ताक्षर करने का प्रस्ताव किया तो उसने इनकार कर दिया और लेखक के सामने ही उपन्यास को फाड़कर फेंकते हुए कहा, 'नया उपन्यास ?—उसका कोई अस्तित्व नहीं है।' हिन्दी का पाठक शायद यह न करे। भारत में तो पुस्तकमेलों को छोड़ कर न तो ऐसे विक्रय अभियान आयोजित होते हैं, न ऐसे उत्साही किन्तु रुष्ट पुस्तक-प्रेमी पाठक ही मिलते हैं। फ्रांस का कोई भी समकालीन प्रसिद्ध उपन्यासकार चाहे **नताली सरात** हो या **एलेन रोब्ब ग्रिलेत**—भारत में भी शायद किसी भी भाषा का कोई उपन्यासकार—अपने को एक औसत उपन्यासकार से भिन्न नहीं मानता, न ही वह अपने को अपने पूर्ववर्त्ती या समकालीनों से किसी कदर केवल इसलिए श्रेष्ठ समझता है कि वह उनसे कुछ भिन्न लिखने का प्रयत्न कर रहा है। यह तथ्य तो है कि साहित्य में कोरे मनोरंजन से उन्हें कोई दिलचस्पी नहीं है।

श्रेष्ठ (क्लासिकल) उपन्यास के आवश्यक साँचे सभी साहित्यकारों को इतने परिचित हैं कि उनको फिर-फिर प्रयोग करने में किसी खास योग्यता की जरूरत नहीं पड़ती। आज नए उपन्यास लेखक ऐसे आसान तरीकों को इस्तैमाल करने के पक्ष में नहीं हैं। वे यह मानते हैं कि तथ्य के किसी पहलू को सफलता के साथ अभिव्यक्त करने वाला कोई विशेष फार्मुला तब बेकार हो जाता है जबकि लेखक किसी नए क्षेत्र में प्रवेश कर रहा हो।—इस माने में आज का लेखक अनायास ही एक नए सम्प्रदाय में माना जा सकता है।— **मॉरिए** के अनुसार एक ओर **नताली सरात** अपनी कृतियों में अस्तित्व के उन अन्धेरे गहरे स्तरों तक पहुँचती है, जहाँ बाहर से उठे हुए प्रश्नों के उत्तर केवल आकार ग्रहण करने लगते हैं, निर्मित नहीं होते; जबकि दूसरी ओर **एलेन रोब्ब ग्रिलेत** अपनी कृतियों में बाह्य जगत की भौमितिक इकाइयों पर आक्रमण करते हुए वस्तुओं के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाहरी स्तर पर ही इस विश्वास के कारण रुक जाता है कि वस्तु के बाह्य का वर्णन उसके अन्तस के वर्णन की अपेक्षा अधिक गुमराह करनेवाला नहीं होता।

एक दूसरा लेखक **क्लॉद साइमन** अपने आपको मानो सर्वनियन्ता परमेश्वर के मानव-निर्माण विभाग का प्रतिनिधि मानकर प्रत्येक वस्तु के विशिष्ट गुणों और खामियों को एक-दूसरे पर, बिना किसी को मिटाए, जमा करता चलता है। **माइकेल ब्यूतर** जैसे कुछ लेखकों की महत्वाकांक्षा इसी में है कि वे मनुष्य के वैयक्तिक और सामाजिक द्वैध आयामों के संयोग से उत्पन्न समसामयिक प्रकाश-रश्मियों को आलेखित करें। कुछ आधुनिक लेखक सक्रिय जीवन या आकांक्षा-वासना के द्वारा अपने मन के स्वप्न में अविभूत होनेवाली घटनाओं, विचारों, बिम्ब या कल्पनाओं की उस तत्कालिक यथार्थता का बोध कराना चाहते हैं जो कि सचमुच तो भ्रामक ही होती है। **मॉरिए** कहता है कि हम सब नए लेखक, **जॉयस** की शिक्षाओं का सीधा पाठ पढ़ानेवाले **सेमुअल बैकेट** जैसे अपने अग्रजों के पद-चिन्हों पर चलते हुए समान रूप से एक ऐसी असफल आशा से जकड़े हुए हैं कि इस विश्व को जैसा भी यह हमें प्रतीत हो, हम समझें और इसका जितना कुछ अंश हमारी पकड़ में आ सके, सम्पूर्ण नहीं—सम्पूर्ण का तो दुर्भाग्य से प्रश्न ही नहीं उठता—उसको हम अधिक से अधिक स्पष्ट और सटीक रूप से स्वायत्त कर सकें।

मॉरिए का यह दावा कोई नया नहीं है। सब लेखकों का, समग्र सर्जनात्मक साहित्य का यही उद्देश्य रहा है। प्रत्येक लेखक सदा अपनी क्षमता के अनुसार और अपने युग के प्रत्ययों की सहायता से इसी अलभ्य लक्ष्य की ओर उन्मुख है और अग्रसर हो रहा है। प्रसिद्ध जर्मन साहित्यकार **गेटे** के अनुसार सारी साहित्यिक प्रक्रिया का आदि और अन्त एक ऐसे मौलिक और नितान्त वैयक्तिक विश्व का पुनर्निर्माण है जिसका अस्तित्व अन्तःकरण के भाव-जगत में बाहरी व्यापारों के ग्रहण, संयोजन, अनुरूपण और सर्जन द्वारा मूर्त्त होता है। **टॉमस मान** ने इस सुन्दर परिभाषा में यह जोड़ कर अभिवृद्धि की है कि सुन्दरम् के क्षेत्र में सुनिश्चितता प्राप्त करने के लिए प्रत्येक लेखक को अपनी समझ एक विशिष्ट रूपाकार पर निविष्ट करनी चाहिए। **गेटे** और **मान** के बीच जितने नए उपन्यासकार हुए हैं उतने ही नए उपन्यास भी लिखे गए हैं। इसके अतिरिक्त, लेखकों ने धीरे-धीरे, किन्तु निश्चित ही, अपने-अपने विशिष्ट क्षेत्रों में विशिष्टता अर्जित की है। इधर बाल्जक के बाद, उपन्यास लेखकों की दृष्टि ही क्यों, उनके पाठकों की, और जनसाधारण की दृष्टि भी, जिससे कि उपन्यास की परख होती है, **गेटे** के युग की नहीं हो सकती। जैसा कि **मॉरिए** का कथन है इस बाद की पीढ़ी ने **दोस्तोव्हस्की प्रूस्त, काफ्का, जॉयस** और **फॉकनर** की पीढ़ी के आविष्कारों का लाभ उठाया है, और यह नई पीढ़ी, अनावश्यक रूप से आशावादी न होकर भी, और भी आगे बढ़ने के लिए नया क्षेत्र अधिग्रहण करने के लिए प्रयत्नरत है; **नताली सरात** जैसे कुछ श्रेष्ठ लेखक इसमें सफल भी हुए हैं।

माइकेल ब्यूतर ने स्पष्ट किया है कि एक नया उपन्यासकार उपन्यासों का गहन पाठक होता है। अपने पठन के बीच उसे महसूस होता है कि किसी कृति में कुछ अभाव है, जिसकी पूर्ति नहीं की गई है। मानों कहीं पर कोई खाई है, शून्य है। अगर आप उपन्यासकार हैं तो आप उस शून्य को भरने की, खाई को धीरे-धीरे पाटने की दिशा में प्रवृत्त होते हैं। किन्तु यदि आप जिसे अभिव्यक्त करने के लिए विवश होते हैं, वह छिपा हुआ और इसीलिए दुर्बोध्य हो तो आपका अभिगम (अप्रोच) उतना ही श्रमसाध्य होगा और उसकी तत्काल पहचान के अवसर भी कम हो जाएँगे।

प्रायः कहा जाता है कि सर्जकों को उनके योग्य समालोचक उपलब्ध नहीं होते। उनकी कृतियों में उसी की पहचान की जाती है जो कि लोकविश्रुत है, लोकगम्य है। जैसे **नताली सरात** पर **विर्जिनिया वुल्फ** का प्रभाव—या हिन्दी में **रेणु** पर **प्रेमचन्द** का प्रभाव। किन्तु वस्तुतः जो नितान्त नूतन है, उसकी पहचान कोई बिरला ही कर पाता है। ये बिरले भी सचमुच समालोचकों में से नहीं प्रत्युत वे समकक्ष उपन्यास लेखक ही होते हैं, जो स्वयं भी उसी दिशा में यथाशक्य बढ़ते हुए नवीन उपलब्धि की पहचान के लिए अधिक समर्थ, उत्सुक और उद्यत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहते हैं। मॉरिए ने उदाहरण देकर बताया है कि एक समय था जब कि उनके इस कथन पर लोग हँसते थे कि **नताली सरात** उस क्षेत्र में **प्रूस्त** से आगे बढ़ी हैं, जिसको **सरात** ने अपने लिए चुना था। यह तथ्य, जो तब भी इतना स्पष्ट था, अब सर्वमान्य है।

मॉरिए का कथन है कि हमारी (नए उपन्यास लेखकों की) खोज—हमें एक परम्परावादी लेखक की अपेक्षा एक कलाकार के अधिक निकट ले जाती है, और यदि कुछ 'नया' है तो वह इसी तथ्य में है। हम एक ऐसे स्वप्न, आन्तरिक और बाह्य, दोनों को प्रतीति देना चाहते हैं, जिसकी किसी से समता, समरूपता नहीं है। हमारी कृतियों की विषय-वस्तु प्राथमिक महत्व की नहीं, वह तो एक कौशल मात्र है जिससे हम दुर्व्याख्येय को व्याख्यायित कर पाते हैं। चित्र की तरह साहित्य में भी घटना का महत्व नहीं होता। हम कहानी नहीं कहते होते, हम तो विश्व को चित्रित करते होते हैं, केवल अपने निजी विश्व को। यदि कभी हमारी रचना बहुत अधिक अमूर्त हो जाती है, तो वह इसलिए कि यथार्थ के हमारे निजी बोध को, जैसा कि वह हमें प्रतीत होता है, यथातथ्य अभिव्यक्त करने के प्रयत्न में हमें नाना रूपाकारों को आवश्यकतानुसार तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत करना होता है।

यही हमारे उपन्यासोपम निबन्धों के टेकनीक का महत्व है, जिसकी बहुधा किन्तु अनावश्यक नकल की जाती है। प्रत्येक लेखक को अपनी स्वयं की भाषा का अनुसंधान करना होता है, और जिन साधनों का वह प्रयोग करता है, वे प्रायः उसी एक ही कृति के लिए मौजूं होते हैं। एक ही लेखक की दूसरी कृति की भाषा, भाव, टेकनीक सभी कुछ उसकी अन्य कृतियों की अपेक्षा में बिलकुल नए, और जुदा हो सकते हैं। एक नए लेखक की नई रचना पढ़ते समय इन सब तथ्यों को ध्यान में रखे बिना हम न तो उसके साथ न्याय कर सकते हैं, न ही उस कृति का सम्पूर्ण आस्वाद प्राप्त कर सकते हैं।

—स० ओझा

पुस्तक समीक्षा

शिकारपुर शहर की कथा

सिन्धी दोनों लिपियों अरबी-फारसी और देवनागरी में लिखी जाती है और दोनों लिपियों में पुस्तकें निकलती हैं। अरबी-फारसी लिपि में अपेक्षाकृत अधिक। देवनागरी लिपि में प्रकाशित पुस्तकों में लोकराम डोडेजा का तीन भागों में प्रकाशित ग्रन्थ **मुंहिजो शहर, मुंहिजा माण्हूं** (मेरा-शहर, मेरे लोग) अनन्य है। उसका अरबी-फारसी लिपि का सिन्धी-संस्करण भी निकलना चाहिए ताकि जो लोग देवनागरी लिपि जानकर भी न जानने का बहाना करते हैं, उसे पढ़ सकें। शायद यही कारण है कि गोविन्द माल्ही के एक सिन्धी-पुस्तक-सर्वेक्षण लेख में उसका नामोल्लेख तक नहीं है।

यह पुस्तक अन्यान्य पुस्तकों की तरह एक पुस्तक नहीं, अपितु अपने में एक पूरा शहर है। लेखक ने अपने शहर शिकारपुर (उत्तर सिन्ध) का सांस्कृतिक, समाजशास्त्रीय अध्ययन प्रस्तुत किया है और उसके विशिष्ट रंग व रूप से वाकिफ कराया है। पुस्तक का पहला भाग और बातों के अलावा इस बात का व्यंग्यात्मक वर्णन करता है कि किस प्रकार उसके जीवनकाल में भी वहाँ (कुछ घरों में) ऐसी संयुक्त परिवार प्रणाली विद्यमान थी कि सुस्त और काहिल व्यक्ति का भी घर की सारी चीजों में साझा था, कभी-कभी 'सारी चीजों' में घर की औरत भी आ जाती थी : एक भाई एक लड़की से विवाह करता और वह सब भाइयों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाहिता स्त्री होकर रहती। परन्तु वह, जैसा कि स्वाभाविक है, सबसे छोटे भाई को सबसे ज्यादा प्रेम करती और फिर घर में झगड़े शुरू हो जाते। दहेज उस समाज का एक और दुर्गुण था। वैसे आज भी यह कम नहीं है। प्रत्येक दूल्हे पर मानो एक 'प्राईस-टेग' लगा हुआ हो, वह मैट्रिक पास है तो उसे ५,००० रुपये मिलेंगे, कला स्नातक है तो १०, ००० और डाक्टर या इन्जिनियर है तो १५, ००० वगैरह। लोग दहेज प्रथा को यह कहकर सही बताते थे कि लड़कों को पैतृक-सम्पत्ति में हिस्सा मिलता है और इसलिए लड़कियों को उनके विवाह के समय धन मिलना चाहिए जिससे वे अपने नये घर बना सकें। अब बेटियों को भी बाप की सम्पत्ति में कानून की दृष्टि से हिस्सा मिलने लगा है, जिससे इस स्थिति में सुधार हुआ है।

इसके दूसरे भाग में यह बताया गया है कि किस प्रकार यह शहर मोहन-जोदड़ो सभ्यता-काल में बसाया गया और विक्रमादित्य-द्वितीय के एक नाम 'शकारि' (आक्रमणकारी शकों का दुश्मन, जिसने शकों को हराया) से यहाँ इसी शहर में स्थापित उसकी एक छावनी शकारिपुर से उसका मौजूदा नाम शिकारपुर पड़ा। विक्रमादित्य द्वितीय ने बोलान और सोस्तान पर्वतीय प्रवेशद्वारों से आने वाले आक्रमणकारियों को रोकने के लिए शालकोट (अब स्यालकोट) और शकारिपुर (अब शिकारपुर) में भी छावनियाँ कायम की थीं। शिकारपुर अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थिति के कारण सिन्ध-हिन्द की सबसे बड़ी मंडी था। यहाँ के लोग विश्व में बैंकिंग-व्यवस्था के प्रस्थापक थे, उनकी हुंडियां अपने देश के अतिरिक्त चीन से लेकर तुर्की तक चलती थीं। यही नहीं, शिकारपुरवासियों ने १८४३ में अंग्रेजों का डटकर मुकाबला किया था। पर उन्हें सफलता नहीं मिली और तब सिन्ध राज्य अंग्रेजी सल्तनत में मिला दिया गया। इसके अतिरिक्त, सिन्ध प्रान्त में भारत का स्वातंत्र्य युद्ध शिकारपुर से ही शुरू हुआ था।

तीसरे भाग में उस शहर की शैक्षणिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं, मंदिरों-मस्जिदों, सुधार-सभाओं, मनोरंजन-गृहों का वर्णन हुआ है। साथ ही, वहाँ के सुप्रसिद्ध लोगों से भी परिचय कराया गया है।

मो० जो०

मुंहिंजो शहर, मुंहिंजा माण्हू (शिकारपुर) : लोकराम डोडेजा, १९७६, पृ० सं० भाग पहला, १-१७४, भाग दूसरा १७५-४०८, भाग तीसरा ४०९-५७६, लोक-कल्याण ट्रस्ट, शुक्रवार पेठ, पुणे-२, मूल्य (तीनों भाग) बारह रुपये।

एक ही जगह

फूल चन्द मानव की कविताओं का पहला संग्रह 'एक ही जगह' अपने में कई तरह की कविताओं को समेटे हुए है, इन में जहां मन को छूनेवाली कविताएँ हैं, वहीं कुछ दुरूह, बोझिल एवं तथाकथित बौद्धिक कविताएँ भी शामिल हैं जिनका कुछ अंश पढ़ते हुए हमें यह महसूस तो होता है कि कवि अपनी छटपटाहट को बयान करने की कोशिश कर रहा है, लेकिन प्रायः वह अन्तस् संघर्ष खुल नहीं पाता और आम पाठक की समझ से ऊपर निकल जाता है जबकि इसके विपरीत कुछ सपाटबयानी की कविताएँ और लयात्मक कविताएँ जहाँ मन को गद्-गद् करती हैं वहीं हमारी मानसिकता को गुदगुदाती भी हैं।

आज कविता बौद्धिक व्यक्ति के लिए एक हथियार है, यह आलोचकों और आचार्यों ने माना है। लेकिन इस हथियार को इस्तैमाल करते हुए कवि या पाठक (अपनी-अपनी समझ के मुताबिक) बीच-बीच में चूक जाता है तथा कुछ धुँधले से प्रभाव कविता पीछे छोड़ जाती है। फूल चन्द मानव का कवि आधुनिक नगर चण्डीगढ़ में रहते हुए अपने अड़ोस-पड़ोस और परिवेश को पहचानने में सफल हुआ है अर्थात दफ्तर या दफ्तर की जिन्दगी में डूबकर अपने जीवन या संघर्षों की कड़वाहट को अनुभव के आधार पर बयान करने में सफलता प्राप्त करता मालूम देता है वहीं हमें कविताओं के माध्यम से चण्डीगढ़ जैसे नगर से जुड़ने और नगर की कशमकश को समझने का मौका देता है। इसी तरह कुछ कविताओं में तीखा पैना व्यंग्य उभर कर सामने आता है जो परिस्थितियों पर गहरी चोट कर जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज कवि के लिए भाषा एक बड़ी चुनौती है, वह किस भाषा में अपने पाठक से मुखातिब हो, यह एक बड़ा अहम सवाल है। ठेठ हिन्दी या संस्कृतनिष्ठ भाषा जहाँ सामान्य पाठक के ऊपर से गुजर जाती है वहीं उर्दूनुमा मुहावरेदार भाषा भी हमें हिन्दी से टूटती नजर आती है, लेकिन बीच की भाषा को अपनाते हुए मानव ने अपनी कविताओं को अपनी ओर से पाठकों की समझ तक पहुँचाने का प्रयत्न किया है। सम्प्रेषणीयता में वे कहां तक सफल रहे हैं, यह पाठकीय मानसिकता पर ही निर्भर करता है।

मानव की कविताएँ भिन्न-भिन्न पत्रिकाओं में छप कर प्रतिष्ठा पा चुकी हैं। लेकिन 'एक ही जगह' इन को पढ़ते हुए मानसपटल पर जो तस्वीर उभरती है वह एक फड़फड़ाते डैनों वाले पक्षी की मानसिकता को उजागर करती है। इतिहास के प्रति जागरूकता, दार्शनिक विचारधारा और मनोविश्लेषण में व्यक्ति के रोएँ-रेशे को पहचान कर उसका स्पंदन एक साथ सहज तैरते बिन्दुओं में मुखर हो उठता है जो कभी-कभी व्यक्ति को झकझोर भी देता है। कुल मिलाकर मानव में एक आधुनिक कवि की सम्भावनाएँ हैं जो समय के साथ एक परिपक्व विचारधारा वाले चिन्तन में भी परिणत हो सकती हैं। —सत्य प्रकाश गर्ग

एक ही जगह (काव्य संग्रह) कवि, फूल चन्द मानव, प्रकाशक–पराग प्रकाशन, विश्वासनगर, दिल्ली-११० ०३२, १९७७. पृ. सं. ७२, २२ सेमी. मूल्य- १०.००

मेवाड़ गौरव

इतिहास-सम्बन्धी कृतियाँ प्रायः तब लिखी जाती हैं, जब उनमें वर्णित घटनाओं को गुजरे काफी समय बीत चुका होता है। समयान्तराल लेखक को एक ऐसी विहंगम दृष्टि प्रदान कर देता है कि न केवल तत्कालीन तथा परकालीन उपलब्ध अभिलेखों चरित्रों और अन्य सामग्री का समुचित वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन कर सके, बल्कि इतिहास के चिरन्तन प्रवाह का सर्वेक्षण भी कर ले। 'मेवाड़ के महाराणा और शाहंशाह अकबर' के लेखक श्री राजेन्द्र शंकर भट्ट को अपनी पुस्तक लिखते समय यह सुविधा पर्याप्त मात्रा में सुलभ थी। उनके विषय का समयमान सन् १५२८ से १६२० ई० है, जिसे गुजरे साढ़े तीन से अधिक शताब्दियाँ हो चुकी हैं। जिन संदर्भों और सामग्रियों का उन्होंने लाभ उठाया है, वे संख्या में उन वर्षों से अधिक ही हैं, जिनका इतिवृत वे अपने ग्रन्थ में प्रस्तुत कर रहे हैं। हर दृष्टिकोण से काल क्षेत्र की यह दूरी और उपलब्ध-सामग्री का प्राचुर्य, जहाँ लेखक के लिए सुविधा बन गया है, वहीं उसकी समीक्षात्मक तथा निर्णयात्मक सामर्थ्य की कसौटी भी है।

सहज ही प्रश्न उठता है कि इतनी प्रचुर सामग्री के बाद भी लेखक को इस पुस्तक का श्रम क्यों आवश्यक लगा? स्वयं लेखक का कथन है, 'इस तरह का प्रयत्न ऐसा नया नहीं हो सकता जिसे आविष्कार कहा जा सके। इस विषय पर कम नहीं लिखा गया है। परन्तु जो पूजनीय है उसका स्मरण जब किया जाए तभी पुण्य होता है, पुनर्वाचन से उसके मूल्यों और मान दण्डों का अभिवर्धन ही होता है, स्मरणकर्त्ता और श्रोता दोनों को शक्ति, प्रेरणा और आत्मविश्वास मिलता है।'

दूसरा संभावित कारण लेखक की यह धारणा प्रतीत होती है कि 'प्रतापसिंह की तो पूजा-सी होती है, परन्तु उसके पिता उदय सिंह और पुत्र अमर सिंह को साधारणतः उपेक्षा ही मिली है।' किन्तु लेखक का मत है कि 'विरोध का आरम्भ उदय सिंह ने किया, जिस तरह प्रताप सिंह ने उस परम्परा में अपनी ओर से कुछ उठा नहीं रखा, उसी तरह अमर सिंह ने इसके लिए किसी भी बलिदान को ज्यादा नहीं माना।' लेखक का प्रयत्न है कि तीनों के प्रयत्न को एक साथ स्पष्ट किया जाए ताकि 'अकबर आक्रमणकारी और यह तीन पीढ़ियाँ स्वाधीनता-संरक्षक' प्रमाणित हों।

एक और प्रश्न उठता है कि प्रस्तुत पुस्तक को क्या इतिहास मान कर पढ़ा जाए या जीवन चरित्र? लेखक के सुपुत्र और प्रकाशक श्री शरद शंकर भट्ट का वक्तव्य है कि 'इतिहास-क्षेत्र में लेखक का प्रवेश नहीं है'। श्री राजेन्द्र शंकर भट्ट ने दस वर्ष पूर्व महाराणा प्रताप की संक्षिप्त जीवनी लिखी थी, जो इस समय अप्राप्य है। तो क्या इस पुस्तक को उसका विशद-रूप मानकर स्थानापन्न अथच जीवन-चरित्र माना जाए? उदय सिंह और अमर सिंह का भी, यद्यपि प्रताप की तुलना में यह अधिक महत्वपूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रमाणित न हो। समग्रता में १२० पृष्ठ का विवेचन-विश्लेषण दीर्घकाय पुस्तक और तमाम वक्तव्य पढ़कर भी लेखक का उद्देश्य स्पष्ट नहीं होता, लेखक यदि पहले से इस दिशा में अपना लक्ष्य स्पष्ट कर लेता कि वह इतिहास लिखना चाहता है या जीवन-चरित्र या उपन्यास, तो वह अपने ज्ञान और श्रम का अधिक संयमित, ठोस और स्पष्ट उपयोग कर सकता था। इसके अभाव में पुस्तक, इन तीनों में से कुछ भी नहीं हो सकी है।

इसे कुछ स्पष्ट करना उचित होगा। लेखक का प्रतिपाद्य है मेवाड़ का राणा वंश अकबर के परिप्रेक्ष्य में, अर्थात् राणा-वंश प्रमुख वर्ण्य विषय और अकबर गौण-विषय। किन्तु विषय का विस्तार इसको विपरीत प्रमाणित कर देता है। अकेला अकबर एक ओर और तीन पीढ़ियाँ दूसरी ओर अनायास ही अकबर को प्रमुखता दे देती हैं। यदि बल व्यक्ति पर न होकर भावना पर होता तो पुस्तक का नामकरण हो सकता था 'मेवाड़ की स्वातंत्र्य-चेतना और शाहंशाह अकबर' और तब विषय का प्रतिपादन न इतिहास के दायरे में आता न जीवन चरित्र के, बल्कि एक विशिष्ट सामाजिक आदर्श की विवेचना का समाज-शास्त्रीय अध्ययन हो जाता। जीवन-चरित्र में भी यदि प्रमुखता किसी चरित्र विशेष को देनी हो तो अन्य चरित्र केवल पृष्ठभूमि में ही आने चाहिए वरना महत्व दूसरे ही पात्र को चला जाता है। उपन्यास में तो पात्र का बाह्य वातावरण केवल उसके अन्तर का परिवेश मात्र होता है।

कहा जा चुका है कि वर्ण्य-वस्तु को घटे साढ़े तीन शताब्दियाँ बीत चुकी हैं, इतनी दूरी किसी भी लेखक को पर्याप्त तटस्थता और खास कर एक इतिहास लेखक को वस्तुनिष्ठता का पर्याप्त अवसर दे सकती है। यदि विरोध एक बार शुरू हो गया, तो चाहे अन चाहे भी उसकी शृंखला तीन पीढ़ियों तक चल सकती है, प्रायः वंश-परंपरागत, पीढ़ी-दर-पीढ़ी भी चलती रह सकती है, जब तक कि उसका प्रतिविधान न किया जाए। वस्तुनिष्ठ दृष्टि से देखा जाए तो सक्रियता का महत्व प्रतिविधान में है। परंपरागत-प्रवाह में कृतित्व कहाँ है? इससे तो प्रताप सिंह का महत्व भी धूमिल पड़ जा सकता है। क्या उन्होंने विरोध को इसीलिए नहीं जारी रक्खा कि वह उन्हें अमर सिंह का महत्व इसी तथ्य से तो प्रमाणित करना चाहता है। उदय सिंह के चरित्र का ही एक पक्ष लीजिए उसके बचपन का, जब कि पन्ना धाय के बलिदान ने उनकी रक्षा की थी। पन्ना का यह बलिदान पन्ना को पौराणिक-सी प्रसिद्धि देता है, किन्तु उदय सिंह को? उसकी अवस्था उस समय १४-१५ वर्ष की बताई जाती है। बनवारी ने अपने राज्यत्व को निष्कंटक करने के लिए जिस हत्या और आतंक की सृष्टि की थी, क्या १५ वर्ष का राजपुत्र उससे इतना बेखबर रहता कि अपनी प्राण रक्षा के लिए कायर की तरह अपने धाय-भाई की हत्या हो जाने देता, और फिर चुपचाप एक टोकरे में बैठ पत्तों की आड़ में छिपकर भाग निकलता? लगभग इसी उम्र के अन्य राजपूत बालकों ने जो शौर्य प्रदर्शित किया है उससे राजपूताने का इतिहास गर्व से सिर ऊँचा किए हुए है।

लेकिन लेखक ने इतिहास लिखने का दावा नहीं किया है कि उससे इतिहासकार की तटस्थता अपेक्षित हो, उसने अन्य इतिहास-कारों के लम्बे-लम्बे, और भावुकता पूर्ण भी, जो उद्धरण दिए हैं, उन्हें पर्याप्त समझना चाहिए। निर्णय लेने के लिए यदि पाठक लेखक से सहमत न हों, तो वे स्वतन्त्र निर्णय भी ले सकते हैं। इन उद्धरणों से अवश्य पुस्तक में कुछ काव्यात्मक-गम्भीरता और उदात्तता आई है, यद्यपि गरिमा नहीं। भाषा कहीं-कहीं अस्पष्ट औरअव्यवस्थित भी है। जैसे 'शेरशाह द्वारा चित्तौड़ को सरकार (साम्राज्य का भाग) बनाया गया' (पृ० २६) या (पृ० २४ पर) 'तीसरा, यहाँ हम महाराणा उदयसिंह की दीर्घकालीन नीति और वर्त्तमान की कठोर आवश्यकता के बीच समन्वय और संतुलन था।' किन्तु इसके बावजूद भाषा प्रवाहमय और प्रांजल है। पुस्तक में चित्र देकर इसकी बढ़ी हुई कीमत का औचित्य प्रमाणित करने का प्रयत्न किया गया है। जो मेवाड़ के इतिहास में रुचि रखते हैं वे अवश्य पुस्तक को चाव से पढ़ेंगे।

—स० ओझा

मेवाड़ के महाराणा और शाहंशाह अकबर : लेखक, राजेन्द्र शंकर भट्ट, प्र० स्फटिक प्रकाशन, म्यूजियम मार्ग, जयपुर, १९७६. २२ सेमी. पृ० ५३१ मू० ७५.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशिष्ट-प्रकाशन

(इस स्तंभ में किसी भी विषय के श्रेष्ठ, नए दृष्टिकोण से लिखे या किसी पुस्तकालय में स्थाई रूप से स्थान पाने के अधिकारी ग्रंथ सटिप्पण प्रस्तुत हैं। प्रकाशकों और विषय-विशेष के प्रेमियों से अनुरोध है कि वे कृपया इस स्तंभ को ध्यान से देखें और महत्वपूर्ण स्तरीय प्रकाशित ग्रंथों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करें। लेखक के नाम के सामने यथासंभव जन्म और मृत्यु वर्ष दे दिया गया है। पुस्तकों के नाम के बाद प्रकाशक विवरण, पृष्ठ संख्या (भूमिका और पुस्तक के पृष्ठ) और अंत में पुस्तक की लंबाई तथा मूल्य हैं। पृष्ठ और आकार का विवरण पुस्तकालयों में सूचीकरण-कार्य में सुविधा की दृष्टि से दिया गया है। कोष्ठक में विषय का स्पष्टीकरण, विषय-सीमा या विशेषता आदि की ओर संकेत है।—संपादक)

असमिया

अतुल चन्द्र बरुवा सं०

भोलानाथ दास रचनावली, गुवाहाटी, असम प्रकाशन परिषद, १९७७. ४४६ पृ० २२ सेमी. मूल्य २४.००

अश्वघोष महाकवि

बुद्ध चरित. अनु० मनोरंजन शास्त्री, गुवाहाटी, असम प्रकाशन परिषद, १९७७. ९२ पृ०. २२ सेमी०. मूल्य-५.००

तरुण राम फुकन रचनावली

गुवाहाटी, असम प्रकाशन परिषद, १९७७. १९८ पृ० २४ सेमी. मूल्य-१५.००

नीलमणि फुकन सं०

कुरि शतिकार असमिया कविता, गुवाहाटी असम प्रकाशन परिषद, १९७७. २७३ पृ० २५ सेमी. मूल्य-२०.००

महेश्वर नेओग सं०

आधुनिक असमिया अभिधान, गुवाहाटी, असम प्रकाशन परिषद. १९७७. ५८१ पृ० २० सेमी. मूल्य-२०.००

योगेन्द्र नारायण भुइयां

रत्नेश्वर महन्त रचनावली, गुवाहाटी, असम प्रकाशन परिषद, १९७७. ३६० पृ० २५ सेमी. मूल्य-२०.००

होमर महाकवि

ओडिसी, अनु० अमूल्य कुमार चक्रवर्ती गुवाहाटी, असम प्रकाशन परिषद, १९७८. २९६ पृ० २५ सेमी. मूल्य-१२.००

अंग्रेजी

कृष्णमूर्त्ति के० १९३०—

नागार्जुनकोंडा, दिल्ली, कन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, १९७७. पृ० २८९. २४ सेमी. मूल्य-१५०.०० (नागार्जुनकोंडा के भास्कर्य-और कला के सम्बन्ध में सचित्र अध्ययन)

जुन्नारकर प्रो. पी० बी०

एन इन्ट्रोडक्शन टू पाणिनी (भाग १) बड़ौदा, शांति एस. दीघे, शिवाजी रोड, १९७७. १५७ पृ० २४ सेमी. मूल्य-३०.००

नगेन्द्र, डा० सं०

कम्पेरेटिव्ह लिटरेचर, दिल्ली, पब्लिकेशन्स डिविजन, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृ० १७१ २२ सेमी. मूल्य-३०.०० (तुलनात्मक-साहित्य विषय पर १६ विद्वानों के लेखों का संग्रह)

बार्बरा, निमरी अजीज

टिबेटन फ्रन्टिअर फेमिलीज, नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस, १९७८. पृ० २९२ २२ सेमी. मूल्य-७५.०० (तिब्बती वंशावलियों के सम्बन्ध में सचित्र अध्ययन)

एडवर्ड्स एस० एम०

बाबर, डायरिस्ट एण्ड डेस्पॉट. नई दिल्ली, हेरिटेज पब्लिशर्स, १९७७. पृ० १३८ २२ सेमी. मूल्य-४०.००

शृंगी, आर० के०, १९३०—

फिलॉसफी ऑफ जे. कृष्णमूर्त्ति. नई दिल्ली, मुन्शीराम मनोहरलाल पब्लिशर्स, १९७७. पृ० ३८६ २२ सेमी. मूल्य-८५.००

गुजराती

अडालजा वर्षा

नीलिमा मृत्यु पामी छे. बम्बई, आर. आर. सेठ १९७७, पृ० ५-२७१, १९ सेमी. मू० १२-२५ (उपन्यास)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौधरी रघुवीर

नन्दीधर. बम्बई, आर. आर. सेठनी कंपनी, १९७७, पृ० १९२, १९ सेमी. मू० १०-५० (कथा-संकलन)

देसाई घनश्याम

टोलू. बम्बई, आर. आर. शेठनी कम्पनी, १९७७ पृ० ४-१४५, १९ सेमी. मू० ८-०० (कहानी-संकलन)

मेहता, इला आरब,

आवती कालनो सूरज. मुम्बई, लोकप्रिय प्रकाशन, १९७७, पृ० २०८, १८ सेमी. मू० ११-०० (उपन्यास)

स्वामी आनन्द १८८७-१९७६

इशु भागवत. अहमदाबाद बालगोविन्द, १९७७, पृ० ११-१०२, १९ सेमी. मू० ६-०० (ईसा मसीह के चरित्र के संबंध में)

मराठी

केतकर, श्रीधर व्यंकटेश

केतकर लेख संग्रह. संपा. य. दि. फडके, नई दिल्ली, साहित्य अकादमी, १९७७, २०० पृ. २१ सेमी. मू० १८-०० (महाराष्ट्रीय ज्ञान-कोशकर्ता मनीषी के विचारों का प्रतिनिधि संकलन)

कोलारकर, राम, सम्पा०

सर्वोत्कृष्ट मराठी कथा. २रा खण्ड (१९२१-१९३४), बम्बई, पाप्पुलर, १९७७, ४४० पृ. २१ सेमी, मू० ३५-०० (प्रातिनिधिक मराठी कहानियों का चयन)

देव, मधुकर व्यंबक

पुरुष. नागपुर, वसुधा प्रकाशन, १९७७, १७३ पृ. १८ सेमी. मू० १५-०० (१७ कहानियाँ)

पाध्ये, प्रभाकर

वामन मल्हार आणि विचार सौन्दर्य. बम्बई, मुंबई मराठी साहित्य ग्रन्थ प्रकाशन, १९७८, पृ १४९. २१ सेमी. मू० १०-०० (वामन मल्हार जोशी के साहित्य का आस्वादन)

पिंगे, रवीन्द्र

पाश्रेमेचे पुत्र. पुणे, राजहंस प्रकाशन, १९७८, १८० पृ. १८ सेमी. मू० १४-०० (१३ पाश्चात्य साहित्य श्रेष्ठियों के अनूठे शब्द चित्र)

पिळगे, वसंत हरी

मीरा चरणकर. कोल्हापुर, अभिजात प्रकाशन, १९७७, १८२ पृ. २१ सेमी. मू० १५-०० (उपन्यास)

मनोहर, यशवंत

उत्थानगुंफा. औरंगाबाद, प्रबोधन प्रकाशन, १९७७, १०८ पृ. २२ सेमी. मू० १०-०० (६७ कविताएँ. दलित साहित्यिक उत्थान का शक्तिमन्त स्वर)

मुक्तिबोध, शरच्चन्द्र माधव

सृष्टि, सौन्दर्य अणि साहित्यिक मूल्य. बम्बई लोकवाङ्मय गृह. १९७७, १९८ पृ. २१ सेमी. मू० २५-०० (रसविचार का मार्क्सवादी विश्लेषण)

सरदेसाई, श्रीनिवास

भारतीय तत्वज्ञान : वैचारिक आणि सामाजिक संघर्ष. बम्बई, लोक वाङ्मय गृह, १९७८, १३२ पृ. २१ सेमी. मू० ६-०० (भारतीय दर्शन का मार्क्सीय विश्लेषण)

मलयालम

कर्टा. पी० सी०

पजंचोल प्रपंचम् द्वि. संस्करण, कोट्टायम, नेशनल बुक स्टाल, १९७७, पृ० ८३८, २१ सेमी. मू० ३५-०० (कहावत-कोश)

कथा—१९७६

मुरथु पुज्झ कथा सम्राट. १९७७, पृ १२४ १८ सेमी. मू० ५-००

कुरुप, ओ० एन० व्ही, १९३१—

करुट्टु पक्षीयुते पाट्टु. कोट्टायम, साहित्य-प्रवर्त्तक, १९७७, मू० ४-०० (काव्य-संकलन)

तरकन, के० एम० १९३०—

मलयाला नोवेल साहित्य चरितम्. त्रिचुर, केरल साहित्य अकादमी, १९७८, ३२१ पृ० १८ सेमी, मू० १०-०० (मलयालम उपन्यासों का इतिहास)

तुंचतु एलुत्तच्चन

श्री महाभारतम्-श्री एन. व्ही. कृष्ण वारियर द्वारा संपादित और उनकी भूमिका सहित. कोट्टायम, साहित्य प्रवर्त्तक, १९७७, पृ० ११३२, २२ सेमी. मू० २८-००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी

अभिमन्यु अनत १९३७—

लाल पसीना. नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, १९७७, पृ० ३४८, २२ सेमी. मू० २४-०० (उपन्यास)

अमृत राय

धुआं. इलाहाबाद, हंस प्रकाशन, १९७७, ५२८ पृ० २२ सेमी. मू० ३६-०० (उपन्यास)

दीप्ति खण्डेलवाल १९३०—

दो पल की छाँह. दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स, १९७८, पृ० ८६, १८ सेमी. मू० ८-०० (कहानी-संग्रह)

प्रतापचन्द्र चन्द्र १९१९—

अग्निशय्या. दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स, १९७८, पृ० १०३, १८ सेमी. मू० ८-०० (लेखक के बंगला उपन्यास का हंसकुमार तिवारी द्वारा अनुवाद)

फणीश्वरनाथ रेणु १९२१-१९७७

ऋणजल धनजल. नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, १९७७, पृ० १२८, १८ सेमी. मू० ८-०० (उपन्यास) (जयप्रकाश नारायण के प्राक्कथन सहित)

भगवतीचरण वर्मा १९०३—

युवराज चून्डा. नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, १९७८, पृ० १७५, १८ सेमी. मू० १५-०० (उपन्यास)

भवानीप्रसाद मिश्र १९१३—

त्रिकाल संध्या. दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स, १९७८, पृ० १४४, २२ सेमी. मू० १५-०० (काव्य-संकलन)

मुशीर - उल - हक

धर्म-निरपेक्ष भारत में इस्लाम. अनुवादक— मुनीश सक्सेना, नई दिल्ली, राधाकृष्ण, १९७७, १२९ पृ० २२ सेमी. मू० २०-००

रघुवीर सहाय १९२९—

लिखने का कारण. दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स, १९७८, पृ० १७८, २२ सेमी. मू० १८-०० (साहित्यिक निबन्ध)

रमेशचन्द्र शाह १९३७—

गोबर गणेश. इलाहाबाद, लोक भारती प्रकाशन, १९७८, पृ० ३४२, २२ सेमी. मू० २५-०० (उपन्यास)

राजवंश

स्वामी. दिल्ली, पंजाबी पुस्तक भंडार १९७८, पृ० १६८, १८ सेमी. मू० १२-०० (उपन्यास)

राजस्थान साहित्यकोश (हिन्दी-संस्कृत) उदयपुर, राजस्थान साहित्य अकादमी, १९७८, प० २०२. २२ सेमी. मू० १२-००

राजेन्द्र यादव १९२९—

प्रेमचन्द की विरासत. नई दिल्ली, अक्षर प्रकाशन, १९७८, पृ० १८९, २२ सेमी. मू० २५-०० (साहित्यिक निबन्ध)

लाला हरदयाल

क्रांतिकारी ऋषि कार्ल मार्क्स. दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स, १९७८, पृ० ६७, १८ सेमी. मू० ३-५० (जीवनी)

विजयपाल सिंह डा०

हिन्दी अनुसंधान. दिल्ली, राजपाल एन्ड सन्स. १९७८, पृ० ३०१, २२ सेमी. मू० ३०-००

वीरेन्द्रकुमार गुप्त

चार दिन दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स, १९७८, पृ० १०४, १८ सेमी. मू० ८-०० (उपन्यास)

शेषेंद्र शर्मा

गुरिल्ला. अनु. ओमप्रकाश निर्मल, हैदराबाद, इण्डियन लैंग्वेज फोरम १९७८, पृ० ५९, २२ सेमी. मू० ४-०० (मूल तेलुगु काव्य का हिन्दी अनुवाद)

सच्चिदानंद वात्स्यायन

संवत्सर. नई दिल्ली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, १९७८, पृ० १३८, २२ सेमी. मू० २०-०० (चिन्तन प्रधान निबन्ध)

सियाराम तिवारी

साहित्य शास्त्र और काव्य भाषा. साहिबाबाद, वि. भू. प्रकाशन, १९७८, पृ० १७४, २२ सेमी. मू० ३०-०० (भारतीय और पाश्चात्य काव्यशास्त्र का विश्लेषण)

स्वदेश भारती

आवाजों के कठघरे में. कलकत्ता रूपाम्बरा प्रकाशन, १९७६, पृ० ४०, २२ सेमी. मू० ५-०० (काव्य)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुसंधान

अंग्रेजी

सुब्रह्मन्यन, एस.

फोनोलॉजी पार्ट ६ व्होल्युम, १, नगरकोइल, डॉस बुक सेंटर, १९७७. पृ० १७८ २४ सेमी. मूल्य-३५.०० (टोल्काप्पियम और नन्नूल के आलोचनात्मक अध्ययन पर मद्रास यूनिवर्सिटी को समर्पित शोध प्रबन्ध पी-एच. डी. के लिए)

हिन्दी

डॉ. कृष्णमोहन सक्सेना

भारतेन्दुयुगीन नाट्य साहित्य का लोकतात्त्विक अध्ययन : इलाहाबाद, अभिनव-भारती, १९७७, पृ०. ६-१९६, २२ सेमी. मूल्य-२५ रुपये [सन् १८५० से १९०० तक के हिन्दी नाट्य साहित्य तथा रंगमंच का लोकतत्त्व की दृष्टि से अध्ययन, इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सन् १९७४ में डी. फिल्. के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध]

पुष्पा थरेजा

भारतेन्दु युगीन साहित्य में राष्ट्रीय भावना, दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स, १९७८. पृ० २१६ २२ सेमी. मूल्य-२५ ०० (पंजाब विश्वविद्यालय की पी-एच. डी. उपाधि के लिए शोध-प्रबन्ध)

साहित्य मंच

बुधवार दिनांक २६ अप्रैल १९७८ को सायंकाल ६ बजे परिषद कक्ष में साहित्य अकादमी द्वारा रूस के सुप्रसिद्ध हिन्दी विद्वान भारत-विद्या (इंडोलॉजी) विशारद श्री चेलिशेव का स्वागत किया गया। श्री चेलिशेव सम्प्रति भारत का भ्रमण कर भारतीय भाषाओं के विद्वानों और साहित्यकारों से सम्पर्क कर रहे थे। साहित्य-अकादमी के स्थानीय मंत्री श्री शुभेन्द्र शेखर मुखर्जी द्वारा श्री चेलिशेव के परिचय के बाद श्री चेलिशेव ने अपने भारत भ्रमण की अवधि में जिन जिन साहित्यकारों से सम्पर्क किया उनके बारे में बताया और फिर रूस में इन दिनों हिन्दी के बारे में विविध क्षेत्रों में यथा उपन्यास, कहानी, नाटक, अभिनय, संगीत चित्रकला के क्षेत्र में हो रहे कार्य की प्रगति से अवगत कराया। उन्होंने स्पष्ट किया कि दो देशों में मैत्री और घनिष्टता बढ़ाने का एक मात्र उपाय परस्पर उनकी संस्कृति और साहित्य को गहराई और सहानुभूति से समझने से ही संभव हो सकता है।—उनकी इस यात्रा का यही उद्देश्य है। उन्होंने हिन्दी के महाकवि सुमित्रानन्दन पन्त के अपने अध्ययन के सम्बन्ध में कई गूढ़ बातें बताईं, और इसी प्रसंग में पंत जैसे महाकवि की कविता का एक विदेशी भाषा में अनुवाद करने के प्रसंग में उपस्थित होनेवाली कठिनाइयों का उल्लेख भी किया।

एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने बताया कि महाकवि पंत वस्तुतः छायावादी कवि हैं और उनकी प्रतिभा के सहज दर्शन उत्तर-युग की तथाकथित प्रगतिवादी कविताओं में नहीं प्रत्युत् पूर्ववर्त्ती छायावादी कविताओं में ही होते हैं। एक दूसरे प्रश्न का कि भारत की गहरी दार्शनिक परम्परा में उद्भूत भावों की कविता का क्या रूस में समुचित भाव-बोध सम्भव है, श्री चेलिशेव ने उत्तर दिया कि रूस में इस दार्शनिक पीठिका को हृदयंगम करने का भी पूरा प्रयत्न किया जाता है। इस प्रसंग में उन्होंने श्री अरविन्द के महाकाव्य सावित्री का उल्लेख किया और कहा कि किस तरह उसके कतिपय अंशों को समझने के लिए अथर्व वेद के सूक्तों का पारायण आवश्यक है। उन्होंने अपना अभिभाषण अंग्रेजी में दिया, किन्तु बीच-बीच में बराबर शुद्ध हिन्दी में भी बोलते रहे। स्थान-स्थान पर रूसी कविताओं के अंश भी सुनाए।

उपस्थिति बड़ी सन्तोषप्रद थी। बंगला, गुजराती, उर्दू, हिन्दी, मलयालम के कई साहित्यकार उपस्थित थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिषद वार्त्ता

दिनांक १३ मई १९७८ को सायंकाल ६-३० बजे परिषद ने हिन्दी की मूर्धन्य कवयित्री और विशिष्ट शैलीकार श्रीमती महादेवी वर्मा को अपने सभाकक्ष में आमंत्रित किया। नगर के गणमान्य प्रतिष्ठित व्यक्ति और हिन्दी तथा अन्य भाषाओं के विद्वान बड़ी संख्या में माननीया विदुषी अतिथि के सुचिन्तित विचारों को सुनने के लिए एकत्रित थे। परिषद के अध्यक्ष श्री सीतारामजी सेकसरिया ने सभापतित्व किया और मंत्री श्री परमानन्द चूड़ीवाल ने महादेवीजी को माल्य अर्पण किया। महादेवीजी ने 'वर्त्तमान युग में साहित्यकार का वर्चस्व और दायित्व' विषय पर प्रांजल-भाषा में बड़ा ही सारगर्भित और मार्मिक प्रवचन दिया, जिसे श्रोता मंत्रमुग्ध होकर सुनते रहे।

अपने भाषण में श्रीमती महादेवीजी ने कहा कि आज का साहित्यकार अपने समसामयिक काल-खण्ड से बुरी तरह जकड़ा हुआ है, और इसे ही वह अपनी उपलब्धि मानता है। यथार्थ की व्याख्या करते हुए उन्होंने बताया कि वह सत्य से एक प्रथक तत्व है। एक व्यक्ति का कोई यथार्थ दूसरे व्यक्ति के लिए भिन्न हो सकता है, किन्तु 'सत्य' सभी व्यक्तियों के लिए समान होगा। इस सत्य का सम्बन्ध मानव-मूल्यों से जुड़ा हुआ है। भय-आहार-निद्रा आदि तत्व प्राणि-मात्र से जुड़े हुए हैं, किन्तु मनुष्य अपनी बुद्धि, विवेक और संस्कृति के कारण विशिष्ट है। मनुष्य मत्स्य-न्याय से नहीं प्रशासित होता। सुख पाने और जीवित रहने का अधिकार प्राणि मात्र का है, किन्तु मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो साथ ही दूसरों के सुख पाने और जीवित रहने के अधिकार को मान्यता देता है। मनुष्य ही भविष्य के सुनहरे स्वप्न देख सकता है, और तदनुकूल संकल्प कर सकता है। संकल्प ही कर्म के लिए प्रेरित करता है, और कर्म के द्वारा ही उसने अपनी संस्कृति का निर्माण किया है।

संस्कृति के निर्माण में साहित्यकार और वैज्ञानिक का बराबर योगदान है, किंतु दोनों के योगदान में मौलिक अन्तर भी है। वैज्ञानिक का कार्यक्षेत्र प्रयोग है, जिसका कहीं अन्त नहीं होता। प्रयोग में भावुकता या भावना का कोई महत्व नहीं है। उसके निकट नीति-अनीति, अच्छा-बुरा सुन्दर-असुन्दर आदि का प्रश्न ही नहीं उठता। इन तत्वों का वास्ता साहित्यकर से ही होता है। अतः किसी देश की संस्कृति की पहचान कराने वाला एक साहित्यकार ही हो सकता है।

साहित्यकार का दायित्व बहुत बड़ा है। उसके सामने बड़ी-बड़ी चुनौतियाँ हैं, राजनीति, प्रशासन, विज्ञान, और अन्य कई स्थापित स्वार्थ उसे अपने मार्ग से विचलित कर सकते हैं। उसका गौरव और महत्व इसमें है कि वह इन चुनौतियों को स्वीकार करे, आवश्यकतानुसार प्रलोभनों का त्याग करे, और अपने गंभीर चिन्तन-मनन से सत्साहित्य का निर्माण कर समाज में ऐसे मूल्य स्थापित करे जो काल की कसौटी पर स्थाई हो सकें।

महादेवीजी ने वर्त्तमान युग का विश्लेषण करते हुए कहा कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमने अपनी संस्कृति के अनुकूल कोई नई उपलब्धि नहीं प्राप्त की। जबतक स्वतंत्रता नहीं मिली थी तबतक तो हमारे सामने स्वतंत्रता प्राप्ति का एक मूल्य था, जिसके लिए हमसब एकजुट होकर प्रयत्नशील हुए थे। लेकिन स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद, मानों थक कर हम आराम करने बैठ गए, और अभी तक आराम ही कर रहे हैं। हमने स्वतंत्र होने का कोई प्रमाण नहीं दिया, यहाँ तक कि हमने अभी तक अपनी भाषा तक को स्वीकार नहीं किया। यह जो आज इतनी समस्याएँ हमारे चारों ओर फैली हुई हैं, वह हमारी गलत शिक्षा-नीति ही का परिणाम है। उन्होंने इस युग को वणिक-युग बताया और कहा कि आज जगत का सारा व्यवहार हानि और लाभ के आधार पर चल रहा है, त्याग-क्षमा-दया-उदारता आदि मानवी-गुणों के आधार पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं। सौदेबाजी के इस वातावरण में श्रम, बुद्धि प्रतिभा सभी कुछ बिक रहे हैं। श्रम बेच कर मनुष्य फिर भी मानवता की रक्षा कर लेता है, किन्तु बुद्धि और प्रतिभा बेच कर तो व्यक्ति अपनी मानवता की भी रक्षा नहीं कर सकता। और इस तरह मानवता के सहज मूल्य नष्ट होते चले जा रहे हैं। अराजकता फैल रही है, जनजीवन बड़ा एकांगी, स्वार्थपूर्ण और त्रस्त हो उठा है।

यही कारण है कि जीवन में जब छन्द और लय न रही हो तो साहित्य में गीत और लय कहाँ मिल सकती है ?—हम भटक गए हैं, हमें पुनः नए सिरे से प्रारम्भ करके नव निर्माण करना होगा, और नवनिर्माण का यह उत्तरदायित्व एक साहित्यकार ही ले सकता है, और यह भी तभी जब वह अपने वर्चस्व को पहचाने। अतीत में भी साहित्यकारों के सामने चुनौतियाँ आई हैं, जिनका उन्होंने दृढ़ता और साहस से सामना किया, और समाज तथा संस्कृति की रक्षा की है। आज फिर उन्हें इस कर्त्तव्य का पालन करना हैं। यदि वह अपने वर्चस्व और उत्तरदायित्व को समझकर प्रलोभनों का त्याग नहीं करेगा तो देश और समाज की रक्षा का कोई अन्य उपाय नहीं है।

साहित्यकार बाधाओं से नहीं घबराता। स्थापित स्वार्थ हर युग में उसके सामने बाधाएँ उपस्थित करते रहे हैं, इस समय वे बाधाएँ अधिक जटिल और भिन्न हो सकती हैं। जब देश में चरित्र और संस्कृति का संकट हो तो समाज साहित्यकार से ही अपेक्षा करता है कि वह अपने दायित्व को समझकर समष्टि के हित में चिरंतन और कल्याणकारी मूल्यों की पुनर्स्थापना करे। विज्ञान की नई नई खोजों से इस समय सब ओर भोगवाद का बोलबाला हो रहा है। साहित्यकार के सामने बड़े प्रलोभन हैं। राजनीति, अर्थनीति, विज्ञान सब उसे खरीदने को तुले बैठे हैं। ऐसे समय में साहित्यकार का सावित कदम रहना बड़ा कठिन हो सकता है किन्तु महादेवीजी ने कहा कि तब भी निराशा का कोई कारण नहीं है। साहित्यकार अब भी सजग है और उन्होंने विश्वास प्रकट किया कि वह अपने वर्चस्व और कर्त्तव्य को पहचान कर समाज के चरित्र और संस्कृति के संकट को मिटाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अवश्य निभाएगा।

अपने आपको परिषद-परिवार की ही सदस्य मानकर अन्त में महादेवीजी ने बड़े ही भावभीने स्वर में परिषद से अपनी आत्मीयता प्रदर्शित की और परिषद की प्रवृत्तियों की सराहना की। पं० विष्णुकांत शास्त्री ने परिषद की ओर से महादेवीजी को एवं समागत सज्जनों को धन्यवाद अर्पित किया।

श्रद्धांजलि :

सुदर्शन चोपड़ा

अविभाजित पंजाब की राजधानी लाहौर में जन्मे हिन्दी के कथाकार और उपन्यासकार श्री सुदर्शन चोपड़ा का ४८ वर्ष की अवस्था में दिल्ली में १२ अप्रैल १९७८ को अकस्मात हृदयगति रुक जाने से देहान्त हो गया। विभाजन के बाद श्री चोपड़ा भारत आ गए और रेलवे विभाग में नियुक्त हो गए थे। तभी उन्होंने कहानी लिखना शुरू किया। १९७४ में रेलवे की नौकरी छोड़कर वे भारतीय ज्ञानपीठ में कलकत्ता चले आए। कुछ ही दिनों में वापस दिल्ली लौट कर हिन्द पॉकेट बुक्स और सरस्वती बिहार प्रकाशन-संस्था में वे सम्पादक हो गए, जहाँ वे अन्तिम समय तक बने रहे। उनके अबतक तीन कहानी संग्रह-हल्दी के दाग, सड़क दुर्घटना और जाले—तथा सम्मोहन, प्रतिनायिका, षड्यंत्र, मैं और हम, स्वीकारांत, सीमान्त, सन्नाटा, काला पहाड़, एक कैबरे-डांसर की आत्मकथा आदि उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालिकानन्द अवधूत

बृहस्पतिवार दिनांक १३/४/७८ को चिन्सुरा, (हुगली) में बंगला के 'मरुतीर्थ-हिंगलाज' नामक पुस्तक के प्रख्यात लेखक श्री कालिकानन्द अवधूत का ६८ वर्ष की अवस्था में देहान्त हो गया। उनकी यह पुस्तक बलूचिस्तान के मरुस्थल में स्थित एक देवालय की तीर्थयात्रा का फल थी, और अपनी इस प्रथम कृति से ही वे ख्याति के शिखर पर पहुँच गए। उन्होंने सारे भारत की यात्रा की और अपने यात्रा-वृत्तांत से पाठकों को अभिभूत किया। उन्होंने कथा-क्षेत्र में भी प्रयत्न किया था, किन्तु उनकी ख्याति एक साधु या तांत्रिक के यात्रा-वृत्तांत के लेखक के रूप में ही अधिक है। उनका मूल नाम दुलाल चन्द्र मुकर्जी था, किन्तु प्रसवकाल में अपनी पत्नी के देहान्त के बाद वे सन्यासी हो गए थे। बाद में तंत्र-शास्त्र की ओर आकर्षित होकर वे अवधूत हो गए और चिन्सुरा में अपना आश्रम बनाकर रहने लगे। जिस समय मरुतीर्थ हिंगलाज पर फिल्म बन रही थी, तब उनके भाई ने उन्हें पहचान लिया और अपने पुत्र के साथ उन्होंने मेल कर लिया।

उनकी अन्य कृतियाँ हैं 'उद्धारनपुरेर घाट', 'कालीतीर्थ-कालीघाट', 'वशीकरण' और कहानियाँ का एक संग्रह 'क्रीम क्रेकर'।

डॉ० एफ० आर० लीविस

१४ जुलाई १८९५ में कैम्ब्रिज में जन्मे श्री फ्रैंक रैमण्ड लीविस का १७ अप्रैल १९७८ को ८२ वर्ष की अवस्था में देहान्त हो गया। वे इस सदी के अंग्रेजी साहित्य के अन्यतम आलोचक माने जाते थे। उनकी मृत्यु से अंग्रेजी आलोचना साहित्य का एक युग समाप्त हो गया समझा जाता है। वे एक नैतिकतावादी समालोचक थे। कला को वे जीवन से अलग करके नहीं देखते थे, खासकर उपन्यास को वे एक ऐसा माध्यम मानते थे जिससे तत्कालीन समाज के नैतिकता-बोध का अवरेखन और परीक्षण संभव होता है। आचार शास्त्र पर उनका बल नहीं था, बल था नैतिकता पर जो कि मनुष्य का मनुष्य के प्रति व्यवहार का पैमाना है और जिससे कला का मूल्यांकण किया जाना चाहिए। इस दिशा में वे बड़े कट्टर थे और किसी के मतामत की परवाह नहीं करते थे। उन्हें पॉप संस्कृति से घृणा थी। वे प्रथम विश्व युद्ध के बाद टी० एस० एलियट और डी० एच० लारेन्स को बहुत बड़ा साहित्यकार मानते थे। १९३२ में उनके द्वारा प्रवर्त्तित साहित्यिक पत्रिका 'स्क्रूटिनी' का ३० वर्षों तक उन्होंने सम्पादन किया, इस पत्रिका की साहित्यिक जगत में अभूतपूर्व ख्याति और धाक रही। वे साहित्य में गंम्भीरता के पक्षधर थे, मनोरंजन को बड़ी नीची दृष्टि से देखते थे। उन्होंने सदा प्रथम श्रेणी के साहित्य ही का विचार किया, और युवा तथा समसामयिक लेखकों के प्रति उपेक्षा दिखाई, किन्तु वे उदात्त साहित्य के प्रति सर्वान्तः करण से समर्पित रहे। उनकी मृत्यु से ऐसा समझा जाता है कि अब अंग्रेजी साहित्य-समीक्षा पर अमरीकी समालोचकों के हावी हो जाने की संभावना है।

सुकमल कांति घोष

बुधवार दिनांक १९ अप्रेल १९७८ को प्रातःकाल बंगला दैनिक पत्र जुगान्तर के ६६ वर्षीय सम्पादक श्री सुकमल़कान्ति घोष का कलकत्ता में निधन हो गया।

उनकी साहित्य, कला, संगीत, पत्रकारिता और सामाजिक कल्याण के क्षेत्र के अलावा, व्यवसाय-व्यवस्था, विज्ञापन-विकास आदि में भी गहरी रुचि थी। वे अतीत में इंडियन चेम्बर ऑफ कामर्स तथा रोटरी क्लब कलकत्ता के भी अध्यक्ष रह चुके थे। उन्होंने सन् १९६६ के अखिल भारतीय बंगला साहित्य सम्मेलन के नागपुर अधिवेशन की भी अध्यक्षता की थी।

पत्रकारिता के क्षेत्र में उन्होंने १९३५ में स्नातक परीक्षा पास करने के बाद अमृत बाजार पत्रिका में एक अभ्यर्थी के रूप में प्रवेश किया था, जहाँ दो वर्ष बाद वे सहायक सम्पादक बने। सन् १९५३ में वे जुगान्तर के सम्पादक बने। उन्होंने ५ वर्ष तक रोटरी क्लब के मुखपत्र 'चाका' का सम्पादन किया। वे अपने पीछे परिवार में अपनी पत्नी के अतिरिक्त एक पुत्र और तीन कन्याएँ छोड़ गए हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रा० मोहन सिंह

प्रसिद्ध पंजाबी कवि प्रा० मोहन सिंह का बुधवार दिनांक ३ मई १९७८ को लुधियाना में दिल का दौरा पड़ने से स्वर्गवास हो गया। वे ७५ वर्ष के थे। उन्हें सोवियत भूमि का नेहरू अन्तरराष्ट्रीय पुरस्कार, राष्ट्रीय साहित्य अकादमी पुरस्कार एव पंजाब सरकार का साहित्य शिरोमणी पुरस्कार प्राप्त हो चुका था।

वे दस वर्ष तक दिल्ली की पंजाबी साहित्य अकादमी के संयोजक, राष्ट्रीय साहित्य अकादमी के सदस्य और सात वर्ष तक पंजाबी कृषि विश्वविद्यालय लुधियाना के सेवामुक्त प्रोफेसर रहे।

उनकी पंजाबी में लिखी लगभग ३ दर्जन पुस्तक बताई जाती हैं। उनकी एक कविता पर पंजाब सरकार द्वारा एक वृत्त-चित्र भी बनाया गया था।

विट्ठल दत्तात्रय घाटे

मराठी के प्रसिद्ध लेखक और कवि श्री विट्ठल दत्तात्रय घाटे का पूना के एक नर्सिंग होम में बुधवार दिनांक ३ मई १९७८ को ८४ वर्ष की अवस्था में देहान्त हो गया। वे कुछ समय से अस्वस्थ थे और उन्हें मधुमेह की भी शिकायत थी। वे मराठी के दिवंगत प्रसिद्ध कवि माधव जूलियन के समकालीन थे, और उनके सहयोग से श्री घाटे ने मराठी कविताओं का एक संकलन 'मध-माधव' के नाम से तैयार किया था। वे मराठी साहित्यकारों की प्रसिद्ध संस्था रविकिरण मण्डल' के सस्थापक सदस्य थे। बहुत पहले उन्होंने आचार्य अत्रे के साथ 'मराठी वचन माला' नाम से एक धारावाहिक साहित्यिक प्रवृत्ति भी प्रारम्भ की थी। तिलक रोड पूना पर अवस्थित महाराष्ट्र साहित्य परिषद भवन में 'जूलियन सभागृह' के निर्माण कार्य में भी उन्होंने पहल की थी।

श्री घाटे एक शिक्षा शास्त्री थे। उन्होंने राज्य के शिक्षा उप निदेशक के पद पर भी कार्य किया था। वे भूतपूर्व बम्बई विधान परिषद के सदस्य और १९५३ में अहमदाबाद में हुए ३६वें मराठी साहित्य सम्मेलन के सभापति थे।

उनकी कुछ कृतियां हैं : कहीं म्हातारे, एक म्हातारी, पान्ध्रे केश, विचार विलासिते, दिवस असे होते, यशवंतराव होलकर, तांबला फुटला, नाना देशाचे नाना लोक, नाट्य रूप महाराष्ट्र आदि।

परिवार में उनके पीछे तीन पुत्र और एक पुत्री हैं।

जगदीश चन्द्र माथुर

हिन्दी के लब्ध प्रतिष्ठ नाटककार श्री जगदीश चन्द्र माथुर का रविवार दिनांक १४ मई १९७८ को प्रातः काल नई दिल्ली के डॉ० राम मनोहर लोहिया अस्पताल में हृदयगति रुक जाने से देहान्त हो गया। उनका जन्म १६ जुलाई १९१७ को हुआ था। उनकी उच्च शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय में हुई थी और इण्डियन सिविल सर्विस की परीक्षा में उन्हें चौथा स्थान प्राप्त हुआ था। सन् १९५५ से १९६२ तक वे आकाशवाणी के महा-निदेशक रहे। बाद में वे और भी ऊँचे प्रशासनिक पदों पर काम करते रहे। इतनी व्यस्तता के बावजूद हिन्दी के नाट्य साहित्य में उनका योगदान अविस्मरणीय रहेगा। उनकी हिन्दी कृतियों में 'कोणार्क' 'शारदीया' 'पहला राजा' 'ओ मेरे सपने' 'भोर का तारा' आदि नाटक उल्लेखनीय हैं। उन्होंने संक्षिप्त जीवनियाँ और निबन्ध भी लिखे हैं। अंग्रेजी में भी उनके कतिपय ग्रन्थ उपलब्ध हैं। नाटक के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए सन् १९५४ में उन्हें बिहार राष्ट्र भाषा पुरस्कार और १९६१ में कालिदास पुरस्कार भी प्राप्त हुआ था। उनके शोक संतप्त परिवार में उनकी पत्नी, तीन पुत्र, और एक पुत्री हैं।

080499
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभिन्न भाषा-भाषियों के बीच एक सहज सेतु और

भावनात्मक एकता तथा सांस्कृतिक अभिन्नता की प्रतीक

भारतीय भाषा परिषद् की

द्वैमासिक पत्रिका

संदर्भ भारती

प्रत्येक अंक किसी एक भाषा के स्वातंत्र्योत्तर साहित्य की

प्रमुख प्रवृत्तियों का स-विवेचन दिग्दर्शक,

अबतक प्रकाशित साहित्यांक

गुजराती, बंगला, हिन्दी, कन्नड़, मराठी, असमिया, तेलुगु

और **ओड़िया** उपलब्ध हैं

प्रत्येक अंक २)

वार्षिक मूल्य १२) मात्र

आज ही आदेश भेजिए

व्यवस्थापक : संदर्भ भारती

भारतीय भाषा परिषद, ९, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-७०० ०१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पंजीयन—आर० एन० २७१४६/७५

भारतीय भाषा परिषद

भारतीय भाषा परिषद, ९, कैमक स्ट्रीट, कलकत्ता-१७
के लिये श्री परमानन्द चूड़ीवाल द्वारा प्रकाशित एवं
एसकेज, ८, शोभाराम बैशाख स्ट्रीट, कलकत्ता-७० से मुद्रित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri